

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_I 186463

UNIVERSAL
LIBRARY

H581/D23V H2954
दत्त, पुं. श्री. तथा सम्बन्धना, पुं. श्री.
वज्ररूपति - २५२५ - ११५४

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No H 581/P 23V

Accession No H 2954

Author दत्त, ए. सी., तथा सक्सेना, प्र. ना. १०१ २

Title वनस्पति-शास्त्र / १९५४

This book should be returned on or before the date last marked below

वंनस्पति-शास्त्रे

वनस्पति-शास्त्र

प्रथम भाग

[इण्टरमीडिएट और प्री-मेडिकल के छात्रों के लिए]

ए० सी० दत्त

एम० एस-सी०

वनस्पति-शास्त्र तथा जीव-शास्त्र के प्रधानाध्यापक
फॉटन कॉलेज, गौहाटी

चित्र

प्रकाश नारायण सक्सेना

एम० एस-सी०

बीरबल साहनी मेमोरिअल गोल्ड मेडलिस्ट
राष्ट्रीय वनस्पति उद्यान,
लखनऊ

सम्पादक

नरोत्तम भार्गव

लखनऊ

दि अपर इण्डिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड

१९५६

सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रक

दि अपर इण्डिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड
लखनऊ

भूमिका

प्रकृति का अध्ययन इस संसार में सबसे अधिक गूढ़ और रहस्यमय है। जीवन क्या है? इस एक प्रश्न में संसार का अस्तित्व छिपा हुआ है, यह प्रश्न जटिल अवश्य है परन्तु इसके अनुसन्धान में एक अनाखी ही तृप्ति है क्योंकि हम जीवित हैं और अपने रहस्यों की खोज में एक अजीब आनन्द आता है। जीवन ही का जीवन में प्यार होता है और टॉल्स्टॉय ने सत्य ही लिखा है “To love life is to love God” (जीवन से प्यार करना ईश्वर से प्यार करना है)।

आज के संसार में वनस्पति शास्त्र का अध्ययन जटिल होने लगे भी बहुत अधिक आर्थिक महत्त्व रखता है। हम यह जानते हैं कि पौधों की हरी पत्तियाँ, कार्बन डाइऑक्साइड और पानी को मिलाकर सूर्य के प्रकाश में अपना भोजन अर्थात् स्टार्च बनाती हैं। आजकल जब कि पृथ्वी पर जनसंख्या इतनी तेजी से बढ़ रही है कि कुछ ही सौ वर्षों के पश्चात् खाने की बहुत कमी हो जायगी; तब हमारा ध्यान उन लाखों-करोड़ों पौधों की ओर जाता है जो सामान्य पदार्थों (CO_2 और पानी) से अपना भोजन निर्माण करते हैं। CO_2 , पानी और सूर्य के प्रकाश की तो इस दुनिया में कोई कमी है नहीं तो फिर मनुष्य भी इनकी सहायता से स्टार्च क्यों नहीं बना सकता? यही प्रश्न आज के वनस्पति शास्त्रियों की खोज का विषय बना हुआ है। अब वह दिन दूर नहीं जब आटा और चावल फैक्ट्रियों में निर्मित होने लगेंगे और अन्न की समस्याएँ सुलझ जायँगी—कहीं अकाल न होगा, कोई भूखा न रहेगा।

वनस्पति-शास्त्र का यह हिन्दी संस्करण विद्यार्थियों की सेवा में उपस्थित करने में मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। श्री दत्त ने पुस्तक बहुत ही सुन्दर लिखी है। जितना परिश्रम उन्होंने किया है और विषय को जितनी सरलता से उन्होंने समझाया है उसको दूसरे लेखक आसानी से नहीं पा सकते।

पारिभाषिक शब्दावली के विषय में वैज्ञानिक अभी एकमत नहीं है। प्रस्तुत संस्करण में हिन्दी शब्दों के साथ-साथ अंग्रेजी शब्द भी दिये गये हैं। छात्र जिस प्रकार की हिन्दी समझ सकते हैं ठीक उसी प्रकार की मिली-जुली भाषा का इस अनुवाद में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर हिन्दी के अनुकूल शब्द न मिल सकें वहाँ अंग्रेजी शब्दों का ही प्रयोग उचित समझा गया है इससे हिन्दी क्लिष्ट नहीं होने पाई है। इस पुस्तक को वर्तमान रूप देने में श्री नरोत्तम भार्गव का सम्पादन बहुत महत्त्व रखता है।

चित्र सब मैंने नये बनाये या बनवाये हैं। अधिकतर चित्र प्राकृतिक हैं और स्वयं सामग्री इकट्ठा करके बनवाये गये हैं। परन्तु उत्तमता के कारण मैंने कुछ चित्र दूसरी पुस्तकों से भी लिए हैं।

यह अनुवाद अंग्रेजी के १९४५ संस्करण पर आधारित है।

लखनऊ के चित्रकार श्री अशफ़ी लाल गुप्ता का मैं अत्यन्त आभारी हूँ क्योंकि उन्होंने चित्रों को अन्तिम रूप देने में तथा वनस्पति इकट्ठा करने में मुझे बहुत सहायता दी है।

पुस्तक के कलेवर में चित्रों के नीचे लेखकों का नाम दे दिया गया है। मैं उन सब लेखकों और प्रकाशकों का अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने अपनी पुस्तकों से चित्र लेने की अनुमति दी है।

—प्रकाश नारायण सक्सेना

ACKNOWLEDGEMENTS

Diagrams 6.48 (1, 2, 3, 4), 9 1 and 9 2 by permission from *An Introduction to the Embryology of Angiosperms* by Maheshwari. Copyright (1950). McGraw-Hill Book Co., Inc, New York.

Diagrams 12.3, 12.7, 12.12, 13.23, 13 24, 13.25, 13 26, 16.5 (क) by permission from *Botany* by Hill, Overholts and Popp. Copyright (1950). McGraw-Hill Book Co., Inc., New York.

Diagram 12.5 by permission from *Fundamentals of Biology* by Haupt. Copyright (1940). McGraw-Hill Book Co., Inc, New York.

Diagrams 2.3, 4.48, 10 2, 12.21, 12 34, 12 37, 13.18, 14.5, 14 6 and 17.1 by permission from Brown, *The Plant Kingdom* Ginn and Company Boston.

Diagrams 4.35, 12.27 and 18 2 by permission from Brimble, *Intermediate Botany* Macmillan and Co., Ltd., London.

Diagram 4 57 by permission from Lowson and Sahni, *Textbook of Botany* University Tutorial Press, London.

Diagrams 3.25, 10.8, 11.1 by permission from Maud Jepson, *Biological Drawings*. John Murray Ltd, London

Diagram 3 17 (ख) by permission from Rendle, *The Classification of Flowering Plants*, Voll. II. Cambridge University Press. (After R Brown).

Diagrams 3.24, 12.20, 12 40, 13 21, 14.2, 16 5 (ख), 18.3 by permission from Holman and Robbins, *A Textbook of General Botany*, 1939 John Wiley and Sons, Inc., New York.

Diagrams 6 68 and 6.69 by permission from Lawrence, *An Introduction to Plant Taxonomy*. The Macmillan Company, New York.

Diagrams 1 6 (ख), 2.6, 3.1, 6.23, 12 1, 12.4, 12.33 by permission from Hylander and Stanley, *College Botany*. The Macmillan Company, New York.

Diagrams 12 6, 12.39, 13.15, 13.16, 15.1 (क), 16.2 by permission from Smith, Gilbert, Bryan, Evans and Stauffer, *A Textbook of General Botany*. The Macmillan Company, New York.

Diagrams 1.11, 1 13, 2 4, 2.18, 10 10, 10.11, 12.30, 15 2, 15.4, 15 5, 15 6, 15.7, 16.1, 16.3, 18.3 by permission from Mukherji and Ganguly, *General Botany*. New Book Stall, Calcutta.

विषय-सूची

अध्याय	पृष्ठ
परिचय	... १

भाग १. आकारिकी (मॉर्फोलॉजी, Morphology)

१ बीज (The Seed)	१३
२ जड़ या मूल (The Root)	२९
३ तना या स्तम्भ (The Stem)	.. ४२
४ पत्ती या पर्ण (The Leaf)	७२
५ पौधों में प्रतिरक्षक यंत्र-रचना (Defensive Mechanisms in Plants)	१०५
६ फूल या पुष्प (The Flower)	१०९
७ परागण (Pollination)	१५७
८ निषेचन (Fertilization)	१६७
९ बीज (The Seed)	१७१
१० फल (The Fruit)	१७४
११ बीजों और फलों का विकिरण (Dispersal of Seeds and Fruits)	. १८६

भाग २. औतिकी (हिस्टॉलॉजी, Histology)

१२ कोशिका (The Cell)	१९३
१३ ऊतिका (The Tissue)	२३८
१४ ऊतिका सहित (The Tissue System)	२५७
१५. स्तम्भ की आन्तरिक रचना (Internal Structure of the Stem)	२७०

१६. जड़ की आन्तरिक रचना (Internal Structure of the Root,	.. २८१
१७ पत्ती की आन्तरिक रचना (Internal Structure of the Leaf)	... २८९
१८ मोटाई के लिए पर्वर्ती-वृद्धि (Secondary Growth in Thickness	. २९२
१९. घावों का भरना और पत्तियों का झड़ना (Healing of Wounds and Fall of Leaves)	... ३०२
प्रश्न	.. ३०५

परिचय

जीवित-वस्तुओं के अध्ययन से सम्बन्धित विज्ञान जीव-शास्त्र (बायोलॉजी, **Biology**; *bios*—जीव, *logos*—शास्त्र या विज्ञान) कहलाता है। जीव-शास्त्र दो शाखाओं में विभक्त है। (क) वनस्पति-शास्त्र (बॉटनी, **Botany**; *botane*—पौधे) जिसमें पौधों का वर्णन होता है और (ख) जन्तु-शास्त्र (जुआलॉजी, **Zoology**; *zoo*—जानवर) जन्तुओं से सम्बन्धित है।

वनस्पति-शास्त्र में पौधों का अध्ययन कई दृष्टिकोणों से किया जाता है। यह विज्ञान पौधों की आन्तरिक (भीतरी, internal) तथा बाह्य (बाहरी, external) रचना की खोज करता है। और इसमें उनकी वृद्धि, भोजन और उत्पादन की क्रियाओं, वातारण की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तन, समय तथा स्थान में वितरण (distribution), एक दूसरे में सम्बन्ध, जीवन-इतिहास, उनकी नीची श्रेणी और सरल आकार में उच्च तथा पेचीदा आकृति के विकास में प्रयुक्त नियमों, तथा पौधों के अनेक उपयोगों और 'किन तरीकों से वे मनुष्य के लिए हितकारी बनाये जा सकते हैं' आदि का अध्ययन किया जाता है।

जीवधारियों के विशेष लक्षण (Characteristics of Living Objects).

हम नहीं जानते कि वास्तव में जीवन (life) क्या है। यह एक रहस्य है और हम ठीक-ठीक इसकी व्याख्या नहीं कर सकते। फिर भी जीवधारियों में कुछ ऐसी लाक्षणिक-विशेषताएँ होती हैं जिनके द्वारा वे अजीवित (non-living) वस्तुओं से पृथक् पहचाने जा सकते हैं। ये विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं

१. जीवन-चक्र (Life-cycle) प्रत्येक जीवधारी की उत्पत्ति, वृद्धि, सन्तानोत्पत्ति और मृत्यु का एक निश्चित जीवन-चक्र होता है। जानवर या पौधा एक नन्हे भ्रूण (एम्ब्रियो, *embryo*) से उत्पन्न होता है जो धीरे-धीरे बढ़कर जानवर या पौधे का रूप धारण कर लेता है। समय की गति के अनुसार, अपनी जाति को बराबर बनाये रखने और साथ ही सख्या में वृद्धि करने के हेतु यह पुनरुत्पादन (reproduction) करता है। अन्त में जीवधारी वृद्धावस्था को प्राप्त होता है और मर जाता है।

२. प्रस (प्रोटोप्लाज्म, **Protoplasm**). प्रस के बिना जीवन नहीं रह सकता। पौधों और जानवरों, दोनों में ही यही वास्तव में जीवित पदार्थ (living substance) होता है। इसी के द्वारा जीवन सम्बन्धी सभी कार्य (vital functions) सम्पन्न होते हैं। यह विविध प्रकार की गतियाँ (movements) दिखलाता है और सभी प्रकार के उद्दीपनों (स्टिमुलाई *stimuli*) जैसे प्रकाश, ताप, रासायनिक पदार्थ (chemical substances) व बिजली का झटका आदि के लिए संवेदनशील (sensitive) होता है। यह एक बहुत ही कोमल और जटिल

पदार्थ (complex substance) है और इसके विश्लेषण का कोई भी प्रयत्न इसके जीवनदायक देनेवाले गुणों को नष्ट कर देता है। भौतिक दृष्टि से यह एक श्यान (viscous, viscous) और बिना रंग का (हीमैलिन, hyaline) पदार्थ है तथा सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप, microscope) में दानेदार (granular) दिखाई देता है। रासायनिक दृष्टि से प्ररस (प्रोटोप्लाज्म), कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और गन्धक (sulphur) का बना हुआ एक जटिल प्रोटीन (complex protein) है। किन्तु कोई विश्लेषण (analysis), प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) की सबसे प्रमुख विशेषता अर्थात् उसकी अद्भुत बनावट और संगठन (peculiar organisation), पर कोई प्रकाश नहीं डालता। इसके अन्तर्गत प्ररस निरन्तर-परिवर्तन (continual change) की स्थिति (state) में रहता है और जिस गुण को हम जीवन कहते हैं वह इसी बराबर परिवर्तन की स्थिति के ऊपर ही निर्भर है।

३. श्वासन (रेस्पिरेशन, **Respiration**). श्वास की क्रिया जीवन का एक चिह्न है। सभी प्राणी मात्र—क्या पौधे क्या जानवर—निरन्तर रात-दिन सास लेते रहते हैं। इस श्वास की क्रिया के लिए वे ऑक्सीजन गैस वायुमण्डल से लेते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड गैस बाहर निकालते रहते हैं। सास लेने की क्रिया में वह ऊर्जा (energy), जो भोजन और अन्य पदार्थों में संचित होती है, मुक्त (release) होती है और फिर प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) द्वारा इसके विविध कार्यों के लिए काम में लायी जाती है।

४. चयापचय (मेटाबोलिज्म, **Metabolism**). यह जीवन की वह क्रिया है जिसमें प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) का लगातार बनने रहना (रचनात्मक या ऐनाबोलिक परिवर्तन, anabolic changes) और नष्ट होते रहना (नाशात्मक या कैटाबोलिक परिवर्तन, katabolic changes) सम्मिलित हैं। रचनात्मक (anabolic) परिवर्तनों से भोजन के पदार्थ बनते हैं और अन्त में प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) बनता है जबकि नाशात्मक (katabolic) परिवर्तनों से प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) नष्ट होकर भिन्न-भिन्न रासायनिक-पदार्थों में परिवर्तित हो जाता है।

५. पोषाहार (न्यूट्रिशन, **Nutrition**). प्रत्येक जीवधारी को भोजन की आवश्यकता होती है। पौधों के भोजन में रासायनिक अवयव (chemical constituents) लगभग वही है जो कि जानवर के भोजन में होते हैं। अन्ततोगत्वा (ultimately) प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) द्वारा ये पदार्थ पचा लिये (पाचित और स्वीकृत, digested and assimilated) जाते हैं और इसी (प्ररस) के पोषण एवं वृद्धि के काम आते हैं। अतः भोजन का नियमित रूप में प्राप्त होना, जीवधारी के लिए अनिवार्य है।

६. वृद्धि (**Growth**) सभी जीवधारी, क्या पौधे क्या जानवर, बढ़ते हैं। अजीवित वस्तुएँ भी कुछ दशाओं में बढ़ सकती हैं जैसे रवा (crystal), किन्तु उनका बढ़ना जीवधारियों के बढ़ने से कई प्रकार से भिन्न है। अजीवित वस्तुओं की वृद्धि बाह्य (external) होती है, अर्थात् उस माध्यम (medium) में से जो कि उस वस्तु को घेरे हुए है, ऐसे नये कण (particles) या अणु (molecules) उस (अजीवित) वस्तु की बाहरी सतह पर इकट्ठे हो जाते हैं, जिनके रासायनिक और भौतिक गुण उस अजीवित वस्तु के समान होते हैं। इस प्रकार उनकी वृद्धि होती है। इसके विपरीत जीवधारियों में आन्तरिक (internal) वृद्धि होती है, अर्थात्

यह अन्दर से प्रारम्भ होती है। उनके शरीर के अन्दर प्ररस विभिन्न गुण रखनेवाले कण और अणु स्रावित (secrete) करता रहता है। वृद्धि केवल बाहर से दिखाई देती है। जीवधारियों में वृद्धि रचनात्मक (anabolic) तथा नाशात्मक (katabolic) परिवर्तनों अर्थात् मेटाबोलिज्म (metabolism) के द्वारा ही होती है।

७. गति (मूवमेण्ट्स, **Movements**). आमतौर पर चलना-फिरना, हिलना-डुलना जीवन का एक चिह्न माना गया है। भूमि पर स्थित होने के कारण, अधिकतर पौधों की गतियों (movements) में रुकावट पड़ती है, जबकि अधिकतर जानवर स्वतंत्रतापूर्वक हरकत कर सकते हैं। पौधों और जानवरों की गतियाँ स्वतः (स्पॉन्टेनियस, spontaneous) या प्रभावित (इन्ड्यूस्ड, induced) होती हैं।

(क) स्वतः गति (स्पॉन्टेनियस मूवमेण्ट, **Spontaneous movement**). यह किसी जीवधारी की या किसी पौधे अथवा जानवर के अंग की वह गति है जिसे वह अपनी इच्छा से अर्थात् बगैर किसी बाहरी प्रभाव के करे। इस प्रकार की हरकत जीवन का विशेष चिह्न मानी गई है। स्वतः गति जानवरों में बिल्कुल साफ दिखाई देती है और पौधों में यह बहुत-सी एक-कोशिय आप्यका (unicellular algae) में प्रकट होती है, जैसे यूग्लिना (*Euglena*); या कुछ अंशवत् आप्यका (filamentous algae), जैसे ऑसीलेटोरिया (*Oscillatoria*) में। फूलवाले पौधों (flowering plants) में बन-चण्डल या इण्डियन टेलीग्राफ प्लाण्ट (Indian telegraph plant) सबसे उत्तम उदाहरण है। इसके अतिरिक्त पौधे के शरीर में प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) की प्रवाहि-गति (streaming movement) सूक्ष्मदर्शी से साफ दिखाई देती है।

(ख) प्रभावित गति (इन्ड्यूस्ड मूवमेण्ट, **Induced movement**) या उद्दीप्यता (इरिटेबिलिटी, **Irritability**). यह जीवधारी या उनके अंगों की वह गति है जो कि वे बाह्य उद्दीपनों (external stimuli) के कारण करते हैं। अतः जब कोई जानवर जल जाता है तो वह फौरन गर्मी के प्रभव (source of heat) से दूर हट जाता है। जब किसी हरे पौधे को एक बन्द कमरे में, जिसके एक ओर की खिड़की खुली हो, उगाते हैं तो वह बढ़ता है तथा प्रकाश के प्रभाव (source of light) की ओर मुड़ जाता है। इन दो दशाओं में गर्मी और प्रकाश उद्दीपन (stimulus) का कार्य करते हैं तथा जीवधारी उसका जवाब अपने को उमी के मुताबिक बनाकर देता है। अजीवित वस्तुओं के साथ इस प्रकार का कोई परिणाम नहीं पाया जाता, जैसे किसी लकड़ी के टुकड़े या किसी धातु की छड़ के साथ। छुई-मुई (sensitive plant) और बन-नारंग (sensitive word sorrel) के पत्रक, जो छूते ही बन्द हो जाते हैं, अच्छे उदाहरण हैं। जब कोई कीड़ा, कीटभक्षक पौधे (insectivorous plant), सनड्यू या ड्रॉसैरा (sundew या *Drosera*) के पत्ते पर गिरता है तो सनड्यू के अंगक (टेण्टेकिल्स, tentacles) चारों तरफ से कीटाणु के ऊपर मुड़ते हैं तथा उसे घेर लेते हैं। इसी प्रकार वीनस फ्लाई ट्रैप (Venus' fly trap), जो एक दूसरा कीट-भक्षक पौधा है, के पर्ण-फलक (leaf blade) को जब कोई कीड़ा छूता है, तो वह तुरन्त बन्द हो जाता है। बहुत-से पेड़ों की पत्तियाँ शाम को प्रकाश लुप्त होने पर बन्द हो जाती हैं और सुबह फिर खुल जाती हैं। यह उद्दीप्यता (irritability) जानवरों में पौधों से अधिक प्रत्यक्ष होती है।

८. प्रजनन (रिप्रोडक्शन, **Reproduction**). जीवधारी, चाहे वे जानवर हों या पेड़-पौधे, अपने जैसे बाल जीवधारी उत्पन्न करने की शक्ति रखते हैं। अजीवित

वस्तुओं में यह शक्ति नहीं होती; वे काच की तरह बहुत-से टुकड़ों में टूट सकते हैं। किन्तु जीवधारी कुछ निश्चित आवर्तीय रीतियों से प्रजनन (certain definite periodic modes of reproduction) करते हैं।

जीवित और अजीवित में अन्तर (Differences Between the Living and the Non-living).

यह पता लगाना बहुत कठिन है कि जीवित और अजीवित में निरपेक्ष भिन्नताएँ (absolute differences) क्या हैं। फिर भी दोनों के सामान्य अन्तर (general differences) के लिए कुछ बातें लिखी जा सकती हैं। प्ररस (protoplasm) जीवन का भौतिक आधार है, अतः वे वस्तुएँ, जिनमें प्ररस है, जीवित कही जाती हैं। अजीवित वस्तुओं में यह नहीं होता। अतः प्ररस की उपस्थिति या अनुपस्थिति चेतन (animate) और जड़ (inanimate) पदार्थों में मौलिक भिन्नता दर्शित करती है और प्ररस द्वारा किये जानेवाली भिन्न-भिन्न जीवन की क्रियाएँ जैसे श्वसन (respiration), चयापचय (metabolism), पोषण (nutrition), वृद्धि (growth), गति (movements) और प्रजनन (reproduction) केवल जीवधारियों ही के लक्षण हैं। कुछ अर्थों में अजीवित वस्तुएँ भी गति और वृद्धि दिखाती हैं जैसे मशीन चलती हुई दिखाई देती है मगर तभी, जब बाहरी बल (external forces) उन पर लगाये जाते हैं। किसी द्रव में पड़े हुए बहुत छोटे कण भी बहुत तेजी से कम्पन (vibrate) करते दिखाई देते हैं। इस कम्पन या चलाव-फिराव (वाइब्रेशन, vibration) को कणिकापि-गति (ब्राउनियन मूवमेण्ट, **Brownian movement**) कहते हैं। अजीवित वस्तुएँ, जैसे रवे (crystals) और प्रवाल (कोरल्स, corals) भी वृद्धि कर सकते हैं; किन्तु जैसा पहले बताया जा चुका है, जीवित और अजीवित वस्तुओं की वृद्धि के विधियों (modes of growth) में अन्तर होता है। बार-बार के उद्दीपनों (repeated stimulation) के होने के कारण सारी स्नायु (नर्व्स, nerves) और ऊतिया (tissues) थक जाती हैं और कुछ समय के आराम के बाद अपनी पहली दशा में आती हैं। अजीवित वस्तुएँ, जैसे धातुएँ भी बहुत समय तक काम में लाने के बाद थक (fatigue) जाती हैं। इस प्रकार जीवित और अजीवित में कोई निश्चित और नियमित अन्तर नहीं बताया जा सकता।

पौधों और जानवरों में अन्तर (Distinction Between Plants and Animals).

उच्च श्रेणी के पौधे तथा उच्च श्रेणी के जन्तु बहुत आसानी से एक दूसरे से पहचाने जाते हैं क्योंकि इनमें कुछ विशेष अंग होते हैं जो कि विशेष कार्य करते हैं, जैसे जन्तुओं में चलने-फिरने के अंग; किन्तु जब हम निम्न श्रेणी की वनस्पति और जन्तु जैसे एककोशीय पौधों और जन्तुओं पर ध्यान देते हैं तो कठिनाई होती है। और सचमुच कोई ऐसी सीमा (line of distinction) नहीं निर्धारित की जा सकती जो इन दोनों को अलग (distinguish) कर सके। अगले पृष्ठ पर उद्धृत गुणों से साधारण तौर पर इन दोनों समूहों को पहचाना जा सकता है।

१. वृद्धि (Growth). पौधे के बढ़ने के स्थान (regions of growth) लगभग निश्चित होते हैं। ये वृद्धि-प्रदेश (regions of growth) मुख्यतया सिरों (extremities) पर स्थित होते हैं; जैसे मूल शीर्ष (root-apex) और स्तम्भ शीर्ष (stem-apex)। इसके अतिरिक्त यह प्रदेश भीतर (interior) भी होता है अर्थात् वृद्धि सिरों की (एपीकल, apical) तथा आन्तरिक अथवा अन्तर्विष्ट (इन्टर-कैलेरी, intercalary) दोनों प्रकार की होती है। किन्तु जन्तुओं की वृद्धि किसी निश्चित स्थान पर नहीं होती; अर्थात् सब भाग साथ ही बढ़ते हैं। इसके अतिरिक्त पौधों में वृद्धि मृत्यु होने तक होती रहती है, जबकि जानवरों में वृद्धि मरने के बहुत पहले ही समाप्त हो जाती है।

२. पर्णहरिम (क्लोरोफिल, Chlorophyll). कवकानि (fungi) तथा पूर्ण परजीवी (total parasites) पौधों को छोड़ कर बाकी सब पौधों की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि उनकी पत्तियों और कोमल तनों (shoots) में हरे रंग का पदार्थ या पर्णहरिम (chlorophyll) होता है। किन्तु जन्तुओं में इसका सर्वथा अभाव होता है।

३. कोशा-भित्ति या कोशा-दीवार (सेल-वाल, Cell-wall). पौधे का शरीर केवल सूक्ष्मदर्शी से ही दिखाई देनेवाले (microscopic) बहुत-से कमरों (chambers) का बना होता है जिन्हें कोशाएँ (cells) कहते हैं। प्रत्येक सेल एक दीवार से घिरी रहती है जिसे कोशा-भित्ति कहते हैं। कोशा-भित्ति प्रत्येक पौधे में उपस्थित रहती है; अतः यह उनकी एक मुख्य विशेषता है। जन्तुओं का शरीर भी कोशाओं से बना होता है, किन्तु उनमें कोशा-भित्ति (cell-wall) नहीं होता।

४. कोशाधु (सेल्यूलोज, Cellulose). पौधे की कोशा-भित्ति एक रासायनिक पदार्थ की बनी होती है जिसे कोशाधु (cellulose) कहते हैं। कवकानि में शुद्ध कोशाधु (pure cellulose) नहीं होता; किन्तु जन्तुओं के शरीर में तो यह बिल्कुल ही नहीं होता।

५. भोजन (फूड, Food). हरे पौधे बाहर से भोजन के कच्चे (raw) पदार्थों को सोखते (absorb) रहते हैं—पानी तथा अकार्बनिक लवण (inorganic salts) भूमि से और कार्बन डाइऑक्साइड हवा से प्राप्त करते हैं—और पर्णहरिम (chlorophyll) तथा सूर्य के प्रकाश की सहायता से मुख्यतया पत्ती में कार्बनिक खाद्य पदार्थ (organic food substances) तैयार करते हैं। जन्तुओं में पर्णहरिम (क्लोरोफिल) न होने के कारण अपने भोजन को स्वयं बनाने की शक्ति नहीं होती। इस मुख्य आवश्यकता के लिए उनको पूर्णतया पौधों पर निर्भर रहना पड़ता है। यह भी नोट करने की बात है कि पौधे केवल घोल (solution) के ही रूप में भोजन ग्रहण कर सकते हैं जबकि जन्तु ठोस भोजन भी अन्तर्ग्रहण (ingest) कर सकते हैं।

६. कार्बन डाइऑक्साइड का विच्छेदन (Decomposition of carbon dioxide). पौधे वायुमण्डल की कार्बन डाइऑक्साइड का विच्छेदित (decomposition) करने की शक्ति रखते हैं। यह शक्ति केवल हरी कोशाओं में ही होती है। अतः दिन के समय पत्तियों की हरी कोशाएँ वायुमण्डल की कार्बन डाइ-ऑक्साइड सोख लेती हैं; उसमें का कार्बन तो शकर (sugar), मण्ड (स्टार्च, starch) इत्यादि बनाने के लिए अपने अन्दर ही रख लेती हैं और लगभग समान आयतन में

ऑक्सीजन बाहर निकाल देती है। जन्तुओं में यह शक्ति नहीं होती कि कार्बन डाइ-ऑक्साइड का विच्छेदन कर सके या उसके कार्बन को काम में ला सकें।

पौधों और जन्तुओं का विकास (Evolution of Plants and Animals).

विकास (Evolution) का अर्थ पूर्ववर्ती (pre-existing) रूप से क्रमशः एक नये रूप का अवतरित (gradual descent) होना है। जीव-विज्ञान के ज्ञाता भी अन्त में सृष्टि-सिद्धान्त (doctrine of creation) के बजाय **चार्ल्स डार्विन (Charles Darwin)** के क्रान्तिकारी नतीजों के ऊपर १८५९ में दिये गये **विकास के सिद्धान्त (doctrine of evolution)** में विश्वास करने लगे हैं। अब सब लोग यह मानने लगे हैं कि सारे उच्च श्रेणी तथा जटिल रूप के जन्तु तथा वनस्पति बहुत सरल और निम्न श्रेणियों के जीवधारियों से विकसित होने-होते इस रूप में आ पहुँचे हैं। इस प्रकार जब हम विकास मार्ग (line of evolution) को खोजते हुए पीछे जाते हैं, यद्यपि ऐसा करना कुछ आसान नहीं है, तो हम पौधों तथा जानवरों के सबसे पहले के रूप (earliest form) पर पहुँचते हैं। इस स्तर (stage) पर पौधों तथा जन्तुओं में कोई अन्तर नहीं मिलता। अतः यह विश्वास किया जाता है कि जन्तु और वनस्पति का मूल एक ही था। किन्तु किन्हीं कारणों से तब, विकास की प्रारम्भिक अवस्था में ही इन मूल प्राणियों का विकास दो दिशाओं में हुआ जिससे वनस्पति-जगत् तथा जन्तु-जगत् का निर्माण हुआ। अधिक विकसित (उच्च श्रेणी के) जन्तुओं और वनस्पतियों में भी कुछ कार्यों तथा गुणों में काफी समानता पायी जाती है। (इस पुस्तक के आठवें भाग में विकास का वर्णन बृहत् रूप से किया गया है)।

वनस्पति-शास्त्र की शाखाएँ (Branches of Botany).

दूसरे शास्त्रों की भाँति वनस्पति-शास्त्र का अध्ययन भी हम दो दृष्टिकोणों से कर सकते हैं; एक तो विशुद्ध (pure) ज्ञान प्राप्त करने, दूसरा उस ज्ञान को मनुष्य के काम में लाने (applied or economic use) के लिए। पौधे प्रकृति में जिस रूप में होते हैं उनका अध्ययन विशुद्ध वनस्पति-शास्त्र (pure botany) में उसी रूप में किया जाता है। इस ज्ञान को मनुष्य के लाभ में लाने का अध्ययन उपयोगी वनस्पति-शास्त्र (applied botany) में किया जाता है। पहले का विस्तृत ज्ञान दूसरे के पढ़ने और समझने के लिए अत्यावश्यक है। इस छोटी-सी पुस्तक में हम केवल विशुद्ध वनस्पति शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने का ही लक्ष्य सामने रखेंगे। विशुद्ध वनस्पति-शास्त्र को हम निम्नलिखित शाखाओं में बाँट सकते हैं:

१. आकारिकी (मॉर्फोलॉजी, **Morphology**; *Morphe*—आकार, *logy*—विवेचन या विज्ञान). इसमें पौधों के बाहरी आकार या रूप का वर्णन होता है।

२. औतिकी (हिस्टोलॉजी, **Histology**; *histos*—महीन जाल). पौधों की आन्तरिक बनावट (आन्तर रचना) के अध्ययन को औतिकी (histology) कहते हैं। इसको अवयव-रचना अथवा शारीर (एनाटॉमी, *Anatomy*; *ana*—पृथक्, *tamnein*—काटना) भी कहते हैं, क्योंकि आन्तर-रचना केवल सूक्ष्म (महीन) कतलों (fine sections) को काट कर ही समझी जा सकती है।

पौधों के बाहरी भागों का अध्ययन **बाह्य-आकारिकी (external morphology)** कहलाता है और भीतरी भागों का अध्ययन **आन्तरिक आकारिकी (internal morphology)** या **औतिकी (हिस्टॉलॉजी)** अथवा शारीर एनाटॉमी कहलाता है। अतः आकारिकी में बाह्य आकारिकी तथा आन्तरिक आकारिकी दोनों सम्मिलित हैं।

३. **कार्यिकी (फिजियोलॉजी, Physiology; physis—जीवन की प्रकृति)**. यह विभाग पौधों के विभिन्न कार्यों का अध्ययन करता है। ये कार्य जीवनावश्यक (vital) अथवा यांत्रिक (मेकैनिकल, mechanical) हो सकते हैं। जीवित पदार्थ अर्थात् प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) जीवनावश्यक कार्य करता है, और कुछ मृत ऊतिया (dead tissues) बिना प्ररस की विघ्नता (intervention) के ही यांत्रिक कार्य करती हैं, उदाहरणार्थ पौधों के कुछ भागों में उपस्थित सख मृत ऊतिया गेड के शरीर को मजबूत बनाने का कार्य करती हैं।

४. **पारिस्थितिकी (इकोलाजी, Ecology; oikos—घर)**. किसी एक पौधे या पौधों के समूह का अपने वातावरण से जो सम्बन्ध होता है उसके अध्ययन को पारिस्थितिकी (ecology) कहते हैं।

५. **वर्गीकरण या वर्गीकर वनस्पति विज्ञान (टैक्सोनामी या सिस्टेमैटिक बॉटनी, Taxonomy या Systematic Botany)**. पौधों का वर्णन (description), उनकी पहचान (identification) तथा आकारिकीय समानताएँ और भिन्नताएँ (morphological resemblances and differences) ध्यान में रखते हुए उनका वनस्पति समूहों में विभाजन करने के विज्ञान को वर्गीकरण या वर्गीकर वनस्पति विज्ञान (taxonomy या systematic botany) कहते हैं।

वनस्पति जगत् के विभाग (Divisions of the Plant Kingdom).

वनस्पति जगत् को दो मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है; एक **अपुष्पोद्भिद् (क्रिप्टोगैम्स, cryptogams; kryptos—छिपा हुआ, gamos—विवाह)** और दूसरा **सपुष्पोद्भिद् (फैनैरोगैम्स, phanerogams; phaneros—दिखाई देनेवाला)**। अपुष्पोद्भिद् (cryptogams) निम्न श्रेणी के पौधे होते हैं, जो न तो कभी बीज ही धारण करते हैं और न ही प्रत्यक्ष फूल (देखिये भाग ६); जब कि सपुष्पोद्भिद् (phanerogams) उच्च श्रेणी के पौधे होते हैं जो हमेशा प्रारूपिक (typical) फूल तथा बीज धारण करते हैं। इस प्रकार से क्रिप्टोगैम्स को 'बीज-रहित' (seedless) या 'फूल-रहित' (flowerless) पौधे कहा जा सकता है और फैनैरोगैम्स को 'बीजयुक्त' (seeded) या 'फूलनेवाले' (flowering) पौधे कहा जा सकता है।

अपुष्पोद्भिद् के प्रमुख वर्ग (Main Groups of Cryptogams).

१. **सूत्रोद्भिद् (थैलोफाइटा, Thallophyta)**. अपुष्पोद्भिद् (cryptogams) का प्रथम वर्ग निम्नतम श्रेणी के पौधों का होता है जिसमें न तो तने ही होते हैं और न ही जड़ या पत्तियाँ। इस प्रकार के अभिन्नित (undifferentiated) पौधों के शरीर को **सूकाय (थैलस, thallus)** कहते हैं। फाइटॉन (phyton) शब्द का अर्थ होता है पौधा और इस प्रकार पूरे शब्द को थैलोफाइट (thallophyte)

कहते हैं। सूत्रोद्भिद् के दो मुख्य वर्ग हैं—आप्यका या शैवाल (एल्गी, *algae*) तथा कवकानि (फंजाई, *fungi*) ।

(क) आप्यका (एल्गी, *Algae*). (एकवचन, आप्यका या एल्गा—*alga*). यह निम्न श्रेणी के अपुष्पोद्भिद् का एक वर्ग है। इनमें साधारणतया पर्णहरिम क्लोरोफिल होता है और ये हरे रंग के होते हैं। ये अधिकतर पानी में उगते हैं और कई प्रकार के होते हैं। साधारण आप्यका (*algae*) हैं—श्याला या पौंड-स्कम (*shaola* या *pond-scum*), रोड-स्लाइम (*road-slime*), सी-वीड (*sea-weed*) इत्यादि।

(ख) कवकानि (फंजाई, *Fungi*). (एक वचन, कवक अथवा फंगस, *fungus*). अपुष्पोद्भिद् के निम्न श्रेणी के पोषों का यह दूसरा वर्ग है। ये पर्णहरिम-रहित होने के कारण हरे रंग के नहीं होते, और ज्यादातर पृथ्वी पर एक परजीवी (*parasite*) अथवा मृतोपजीवी (*saprophyte*) के रूप में उगते हैं। शैवाल अथवा आप्यका (*algae*) की भाँति वे कई प्रकार के हो सकते हैं। फंजाई के सामान्य उदाहरण हैं—फफूँदी या छत्ता (मोल्ड, *mould* या *chhata*), छत्रक (मशरूम, *mushroom*), कुरकुरमुत्ता (टोड-स्टूल, *toad-stool*), पफ़-बाल (*puff-ball*) आदि।

२. हरितोद्भिद् (ब्रायोफाइटा, *Bryophyta*). यह उच्च श्रेणी के अपुष्पोद्भिद् के पोषों का एक वर्ग है। इसमें हरिता (माँसेज, *mosses*) और प्रहरिता लिवर वर्ट्स, (*liver-worts*) सम्मिलित हैं। ये पुरानी नम दीवारों तथा गीली जमीन इत्यादि पर उगते हैं और पेड़ों की छालों पर सुन्दर हरे रंग की मलमल जैसे दिखाई देते हैं। ये रचना में सूत्रोद्भिद् (*thallophyta*) से अधिक जटिल (*complicated*) होते हैं।

(क) प्रहरिता (लिवर-वर्ट्स, *Liver-worts*). यह निम्न श्रेणी के हरितोद्भिद् (*lower bryophyta*) का एक वर्ग है। इनका शरीर चपटा, हरे रंग का युग्म-भुजी सूकाय (*dichotomously branched thallus*) होता है। इनके नीचे की सतह (*under-surface*) पर जड़ की तरह की कुछ रचनाएँ होती हैं। ये सूकायिक हरितोद्भिद् (*thalloid bryophyta*) कहे जा सकते हैं। इनके सामान्य उदाहरण हैं—रिक्सिया (*Riccia*) और मार्कैन्शिया (*Marchantia*) ।

(ख) हरिता (माँसेज, *Mosses*). यह उच्च श्रेणी के सूत्रोद्भिद् (*higher bryophyta*) का एक वर्ग है। इनका शरीर अक्ष या स्तम्भ (*axis or stem*), पत्तियों तथा कुछ जड़स्वरूप रचनाओं में भिन्नत (*differentiated*) होता है। फ्यूनेरिया (*Funaria*) और पॉलीट्राइकम (*Polytrichum*) इत्यादि इनके साधारण उदाहरण हैं।

३. पर्णागदिका (टेरिडोफाइटा, *Pteridophyta*). यह उच्च श्रेणी के अपुष्पोद्भिद् (*cryptogams*) का एक वर्ग है जिसमें पर्णाग (फर्न्स, *ferns*) तथा उनके समरूप (*allies*) सम्मिलित हैं। पोषे का शरीर सुविकसित (*well-developed*) तना, पत्ती तथा जड़ों में अच्छी प्रकार भिन्नत किया जा सकता है। ये हरितोद्भिद् (*bryophyta*) से बहुत अधिक जटिल (*complicated*) होते हैं और पुष्प-युक्त (*flowering*) पोषों से भिन्न होते हैं क्योंकि ये (पर्णागदिका, *pteridophyta*) फूल, फल या बीज नहीं धारण करते; बल्कि बीजाणु (स्पोर्स, *spores*) जिनके द्वारा ये

संख्या में वृद्धि (multiply) करते हैं, अपनी पत्तियों में धारण करते हैं। ये अधिकतर नम तथा छायादार जगहों (moist and shady places) में उगते हैं। पर्णागदिका (टेरिडोफाइट) के साधारण उदाहरण तथा वर्ग निम्नलिखित है:

(क) पर्णाग (फर्न्स, **Ferns**). इनकी नयी पत्तियाँ (young leaves) कुत्ते की दुम की तरह लिपटी हुई होती हैं और इनकी परिपक्व पत्तियाँ (mature leaves) अपने नीचे की सतह (under surface) पर बीजाणु (spores) धारण करती हैं। टेरिस (*Pteris*), ऐस्पीडियम (*Aspidium*) तथा एडियान्टम (*Adiantum*) इत्यादि इसके सामान्य उदाहरण हैं।

(ख) अश्ववार (**Horsetails**) जैसे अश्व वारति (इक्वीसिटम्, *Equisetum*)।

(ग) मुगदर हरिता (**Club-mosses**) जैसे मुगदर हरिताति (लाइकोपोडियम, *Lycopodium*)।

(घ) चतुःपर्णपालिति (सिलैजिनेला, *Selaginella*)।

सपुष्पोद्भिद् (फ़ैनिरोगैम्स, *Phanerogams*) के विभाग (Sub-divisions of *Phanerogams*)।

१. नग्नबीजा (जिम्नोस्पर्मस्, *Gymnosperms*; *gymnos*—नंगे, *sperma*—बीज)। ये नंगे बीजवाले पौधे होते हैं, अर्थात् इनमें बीज, फल में ढके नहीं रहते। नग्नबीजा (*gymnosperms*) के निम्नलिखित मुख्य उदाहरण हैं:

(क) कंगुताला (साइकेडस्, **Cycads**). जैसे कंगुतालति (साइकस, *Cycas*)।

(ख) शंकुधरा (कॉनीफर्स, **Conifers**). जैसे चीड़ (पाइनस, *Pinus*)।

२. संवृत बीजा (ऐन्जियोस्पर्मस्, **Angiosperms**, *angeion*—बन्द)। ये बन्द बीजवाले पौधे होते हैं, अर्थात् इनमें बीज फल में ढके (enclosed) रहते हैं। संवृत बीजा (*angiosperms*), फूलनेवाले पौधों (flowering plants) में सबसे उच्च श्रेणी के हैं; तथा इनमें भली प्रकार विकसित (well developed) तने, पत्तियाँ, जड़ और प्रारूपिक फूल (typical flowers) होते हैं। ऐन्जियोस्पर्मस् के दो मुख्य वर्ग होते हैं।

(क) द्वि-बीज-पत्री (डाइकॉटीलीडन्स्, *Dicotyledons*)।

(ख) एक-बीज-पत्री (मॉनोकॉटीलीडन्स्, *Monocotyledons*)।

ज्ञात जातियों की संख्या (Number of Species on Record).

१. आप्यका (Algae)	...	...	...	१४,०००
२. कवकानि (Fungi)	...	...	...	७०,०००
३. हरिता और इनके समरूप (Mosses & allies)			...	२२,७२०
४. पर्णांग और इनके समरूप (Ferns & allies)	...			८,२००
५. नग्नबीजा (Gymnosperms)				५००
६. सवृतबीजा (Angiosperms १,३३,०००)				
(क) द्वि-बीज-पत्री (Dicotyledons)				१,०९,०००
(ख) एक-बीज-पत्री (Monocotyledons)	...			२४,०००

योग = २,४८,४२० जातिया

भाग १

आकारिकी

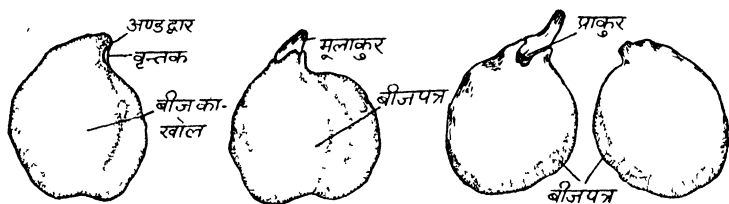
(माफ़ॉलॉजी, **Morphology**)

बीज (The Seed)

बीज की प्रकृति का ध्यान रखते हुए उसे एक या अधिक दिन तक पानी में भिगोकर बीज के भिन्न-भिन्न भागों का आसानी से अध्ययन किया जा सकता है। जब वह पानी में काफी मुलायम हो जाता है और फूल जाता है तो वह अध्ययन के योग्य समझा जा सकता है।

चने के बीज (Gram Seed) के भाग (चित्र १.१).

१. बीज का खोल (Seed-coat). बीज एक भूरे रंग के खोल से ढका रहता है। यह दो पर्तों (layers) या खोलों (इन्टैगुमेण्ट्स, integuments) का बना होता है। बाहरी खोल बीज-चोल (टेस्टा, testa) और अन्दरूनी अन्तःकवच (टेग्मेन, tegmen) कहलाता है। बीज-चोल का रंग भूरा होता है और यह अपेक्षा-कृत मोटा होता है; जबकि अन्तःकवच (tegmen) सफेद, झिल्लीनुमा होता है और बीज-चोल से चिपटा रहता है। ये दोनों खोल बीज के कोमल आन्तरिक भागों की रक्षा करते हैं। बीज के एक ओर उसके नुकीले सिरे के नीचे एक अण्डाकार गड्ढा



चित्र १.१ चने का बीज।

दिखाई पड़ता है जिसको वृन्तक (हाइलम, hilum) कहते हैं। यही वह बिन्दु है जहाँ पर बीज अपने डण्ठल (stalk) से जुड़ा रहता है। वृन्तक (हाइलम) के ठीक ऊपर एक बारीक दरार (minute slit) दिखाई देती है; यह बारीक दरार या छेद, अण्डद्वार (माइक्रोपाइल, micropyle; micro—छोटा, pyle—दरवाजा) कहलाता है। जब भिगोया हुआ बीज हल्के से दबाया जाता है तो इस छिद्र में से पानी और हवा के बुलबुले निकलते दिखाई देते हैं।

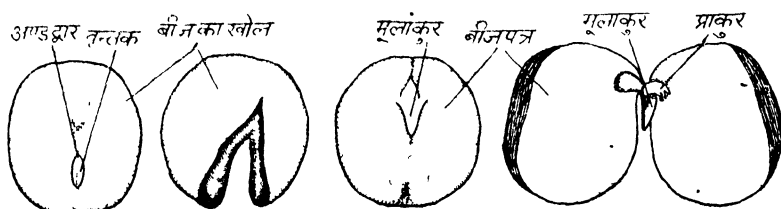
२. भ्रूण (एम्ब्रियो, Embryo). बीज का खोल हटाने पर जो पीला भाग दिखाई देता है वह भ्रूण या पौधे का बच्चा होता है। बीज के अंकुरण करने पर यह

नवजात पौधे (सीडलिंग, seedling) को जन्म देता है जो अन्त में चने का पौधा बन जाता है। भ्रूण में दो सफेद गुदेदार आकृतियाँ (fleshy bodies) होती हैं जो कि (क) बीजपत्र (कांटोलीडन्स, cotyledons) या बीज पत्तियाँ (seed-leaves) कहलाती हैं और (ख) एक छोटा अक्ष या धुरी (ऐक्सिस, axis) होता है जिससे बीजपत्र (कांटोलीडन्स) जुड़े रहते हैं। अक्ष (axis) का वह भाग जो बीज के नुकीले सिरे की ओर होता है मूलांकुर (रेडिकल, radicle) या एक छोटी जड़ कहलाता है, और दूसरा भाग जो बीजपत्रों के बीच में होता है, प्रांकुर (प्लुम्यूल, plumule; plumula—एक छोटा 'पर') कहलाता है। प्रांकुर सिरे पर बहुत नन्ही-नन्ही पत्तियों से घिरा रहता है और इस प्रकार वह देखने में चिड़िया के 'पर' जैसा लगता है। जब बीज अंकुरित (germinate) होता है तो मूलांकुर बढ़ कर जड़ बन जाता है और प्रांकुर तना तथा पत्तियाँ (अथवा प्ररोह, shoot) बनाता है। बीजपत्रों (cotyledons) में भोज्य-पदार्थ इकट्ठा रहता है।

मटर के बीज (Pea Seed) के भाग (चित्र १.२).

१. बीज का खोल. बनावट में बीज कुछ-कुछ गोल होता है। इसका बाहरी सफेद छिलका बीज का खोल या बीज-चोल (seed-coat या testa) होता है। जब बीज पानी अवशोषित करके फूल जाता है तो यह आसानी से अलग हो जाता है। बीज चोल से ढकी हुई एक ढीली, पतली, रंगहीन तथा झिल्लीदार पर्त होती है जिसे अन्तःकवच (टेग्मेन, tegmen) कहते हैं। बीज-चोल (testa) के एक ओर एक महीन लम्बा निशान (scar) स्पष्ट दिखाई देता है जो वृन्तक (हाइलम) होता है। वृन्तक के एक सिरे पर अण्डद्वार (माइक्रोपाइल) स्थित होता है जिसमें से होकर मूलांकुर (रेडिकल) बाहर आता है।

२. भ्रूण (एम्ब्रियो). बीज के खोल को अलग करने पर भ्रूण दिखाई देता है। इसमें (क) दो गुदेले बीजपत्र (cotyledons) होते हैं और (ख) एक छोटा अक्ष या धुरी (axis) होता है, जिससे दोनों बीजपत्र जुड़े होते हैं। अक्ष का वह भाग जो बीजपत्रों के बाहर होता है, अन्दर की ओर मुड़ा होता है और अण्डद्वार

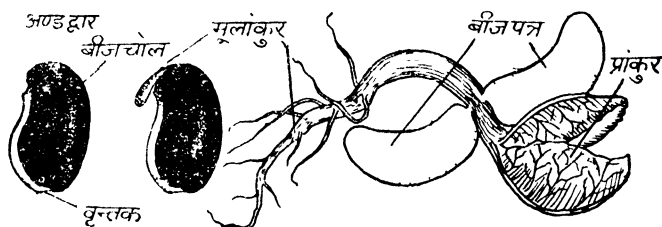


चित्र १.२ मटर का बीज।

माइक्रोपाइल की ओर निर्दिष्ट (directed) होता है, मूलांकुर (रेडिकल) होता है और ऐक्सिस का दूसरा भाग जो बीजपत्रों के बीच में होता है प्रांकुर (प्लुम्यूल) होता है। प्रांकुर का सिरा कुछ नन्ही पत्तियों द्वारा ढका रहता है।

सेम के बीज (Bean Seed) के भाग (चित्र १.३)

१. बीज का खोल. सेम (डॉलीकोज लैबलब, *Dolichos lablab*) का बीज लगभग अण्डाकार होता है और एक काले या लाल सख्त बीज-चोल (या खोल) से ढका हुआ होता है। बीज के खोल के एक किनारे पर एक सफेद लम्बी लकीर (elongated scar) होती है जिसका आधार-भाग वृन्तक (हाइलम) होता है।



चित्र १.३ सेम का बीज

लकीर के ऊपरी सिरे के बहुत समीप ही एक सूक्ष्म किन्तु स्पष्ट छद्म होता है; यह अण्डाकार (माइक्रोपाइल) कहलाता है। यदि भिगोया हुआ बीज हल्के से दबाया जाय तो पानी इससे बाहर निकलता दिखाई देता है।

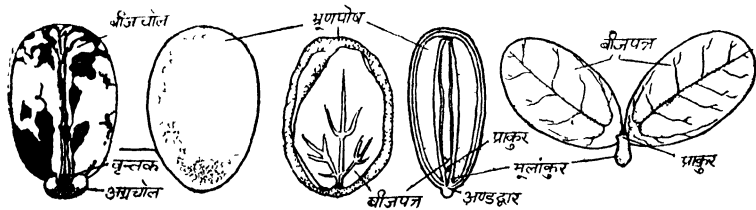
२. भ्रूण. बीज के खोल को छीलने के बाद एक स्पष्ट सफेद भाग दिखाई देता है जो खोल के भीतर की मारी जगह घेरे रहता है; यही भ्रूण होता है। इसमें (क) दो गुदले बीजपत्र (कोटिलीड्स) और (ख) एक ऐबिसस (अक्ष), जिससे बीजपत्र जुड़े रहते हैं, सम्मिलित है। अक्ष का वह भाग जो अपनी नोक अण्डाकार (माइक्रोपाइल) की ओर किये रहता है, (१) मूलांकुर (रैडिकल) होता है और अक्ष का दूसरा भाग प्रांकुर (प्लम्यूल) होता है जो दोनों बीजों के बीजपत्रों में होता है और बहुत छोटी-छोटी नयी पत्तियों का बना होता है।

रेंडी के बीज (Castor-oil Seed) के भाग (चित्र १.४).

१. बीज के खोल (Seed-coats). काला और सख्त चिल्ला बीज का बाहरी खोल होता है। खोल के एक सिरे पर एक सफेद चीज होनी है जो अण्डाकार (माइक्रोपाइल) पर उत्पन्न एक उद्बर्ध (outgrowth) होती है। इसे अग्रचोल (कैरंकल, *caruncle*) कहते हैं। कैरंकल से करीब-करीब छिपा हुआ बीज के खोल पर एक छोटा निशान होता है, जो कि वृन्तक (हाइलम) होता है। बीज के बाहरी सख्त खोल को अलग करने पर एक पतला झिल्लीदार खोल साफ दिखाई देने लगता है; यह भ्रूणपोष (एलब्यूमेन, *albumen*) को चारों ओर से ढके रहता है। बीज के दोनों खोलों में से बाहरी खोल को बीज-चोल (*testa*) और भीतरी खोल को अन्तःकवच (*tegmen*) कहते हैं।

२. भ्रूणपोष (एलब्यूमेन या एण्डोस्पर्म, *Albumen* या *Endosperm*; *endon*—आन्तरिक या भीतर, *sperm*—बीज). बीज के खोलों को अलग करिए और

देखिये कि उनके भीतर एक सफेद गुदला भाग होता है, यह **भ्रूणपोष** (एलव्यूमेन या एण्डोस्पर्म) कहलाता है। यह सचित भोज्य-पदार्थ (reserve food material)



चित्र १.४ रेंडी का बीज।

और विशेषकर तेल का भण्डार-घर है। यह पदार्थ **भ्रूण** द्वारा अंकुरण-काल में उपयोग में लाया जाता है।

३. **भ्रूण**. यह भ्रूणपोष के अन्दर दबा रहता है। एण्डोस्पर्म को तोड़कर देखिये कि भ्रूण में (क) दो पतले, चारटे और कागज के समान **बीजपत्र** (काँटीलीडन्स) होते हैं, जिनमें नाडियाँ (veins) भी लगभग साफ दिखाई देनी हैं; और (ख) एक बहुत छोटा **अक्ष** (एक्सिस, axis) होता है। अक्ष के दो भाग होते हैं (१) **मूलांकुर** जो कैरंकल (अग्रचोल) की ओर थोड़ा उठा हुआ भाग होता है और (२) **प्रांकुर** जो दोनों बीजपत्रों के बीच में रहता है। सिरे पर प्रांकुर बहुत छोटी-छोटी पत्तियों से घिरा रहता है। मूलांकुर (रेडिकल) सदैव जड़ बनाता है और प्रांकुर (प्लुम्यूल) हमेशा **प्ररोह** (shoot) बनाता है। बीजपत्र भ्रूणपोष में धसे (embedded) रहते हैं; और इनका कार्य भ्रूणपोष में भरे हुए भोज्य-पदार्थ को चूम (absorb) कर मूलांकुर और प्रांकुर को भेजना है।

चावल के दाने (Rice Grain) के भाग (चित्र १.५).

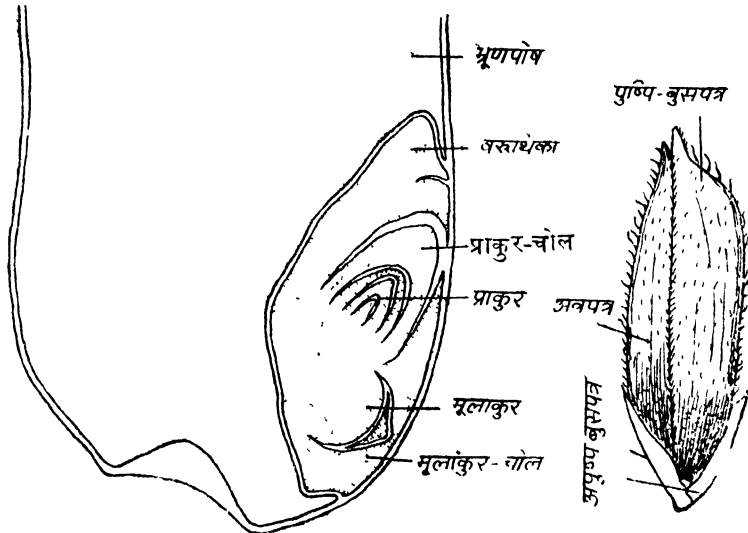
चावल का दाना एक छोटा, एक-बीजवाला (one-seeded) फल है। प्रत्येक दाना एक भूरे रंग के छिलके द्वारा ढका रहता है, जिसके दो भाग होते हैं जो एक दूसरे को अपूर्ण रूप से ढके रहते हैं। बाहरी और बड़ा भाग पुष्पिबुस-पत्र (flowering glume) तथा भीतरी और छोटा भाग अवपत्र (पेलिया, palea) कहलाता है। दाने के आधार (base) पर दो छोटे सफेद शल्क (scales) होते हैं जिन्हें अपुष्पिबुस-पत्र (empty glumes) कहते हैं। छिलका सहित चावल के दाने को धान का दाना (paddy grain) कहते हैं।

१. **बीज का छोल**. छिलके के हटाने पर दाने से चिपकी हुई एक भूरी झिल्लीदार पर्त दिखाई देती है। यह बीज के खोल (seed-coat) और फल की दीवार या पेरीकार्प (pericarp) के जुड़ने से बनती है।

२. **भ्रूणपोष (Endosperm)**. यह दाने का अधिकतम भाग बनाता है और भोज्य-पदार्थ से भरा होता है। अनुलम्ब काट (longitudinal section, लम्बाई के सेक्शन) में यह एक ढाल के आकार के (shield-shaped) बनावट द्वारा,

भ्रूण से स्पष्ट अलग दिखाई देता है। इस बनावट (structure) को वरूथिका (स्क्युटेलम, *scutellum*—एक छोटी ढाल) कहते हैं।

३. भ्रूण. यह बहुत छोटा होता है और भ्रूणपोष के एक सिरे पर के गड्ढे में रहता है। इसके दो भाग होते हैं, (क) पहला भाग केवल एक बीजपत्र का होता है जिसे वरूथिका (स्क्युटेलम) कहते हैं; और दूसरा (ख) एक छोटा अक्ष (एक्सिस) होता है जिसके ऊपरी भाग को प्रांकुर और नीचे के भाग को मूलांकुर कहते हैं। प्रांकुर



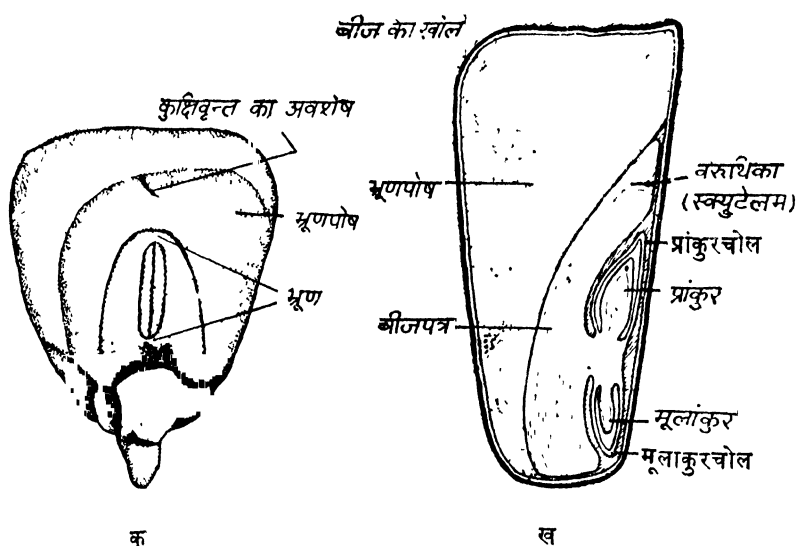
चित्र १.५ अनुलम्ब काट (longitudinal section) में चावल के दाने का एक भाग।

छोटी-छोटी पत्तियों द्वारा घिरा होता है और मूलांकुर एक मूलछद (root-cap) से सुरक्षित होता है। सम्पूर्ण प्रांकुर (वृद्धि करनेवाला बिन्दु और सत्य-पत्र अथवा foliage leaves) एक पत्र छद (leaf-sheath) द्वारा घिरा रहता है जिसे प्रांकुर-चोल (कोलिऑप्टाइल, *coleoptile*) कहते हैं। इसी प्रकार मूलांकुर भी मूल-छद (root-sheath) द्वारा घिरा होता है जिसे मूलांकुर चोल (कोलिओराइजा, *coleorhiza*) कहते हैं। वरूथिका (स्क्युटेलम) की विपरीत दिशा में एक छोटा उठाव (projection) होता है जिसको बहिर्स्तर (एपिब्लास्ट, *epiblast*) कहते हैं। इस बनावट को एक दूसरा अविकसित बीजपत्र (suppressed cotyledon) होने का सुझाव दिया गया है। भ्रूणपोष को छूती हुई बीजपत्र की सतह एक अवशोषण करनेवाली ऊति (absorbing tissue) या ऐपिथीलियम (epithelium) में परिवर्तित हो जाती है।

मक्का के दाने (Maize Grain) के भाग (चित्र १.६).

चावल के दाने की भाँति मक्के का दाना भी एक छोटा एक-बीजी फल है। बीज फल की दीवार से जुड़ा रहता है और इससे पृथक् नहीं किया जा सकता। दाने की एक ओर एक छोटा, अपारदर्शक, सफेद, त्रिकोना (deltoid) भाग होता है, जो दाने के शेष भाग से बिल्कुल भिन्नित (marked out) दिखाई देता है। भ्रूण (embryo) इस भाग के भीतर दबा रहता है। इस भाग से होते हुए एक अनुलम्ब काट (longitudinal section) में निम्नलिखित भाग दिखाई देते हैं:

१. बीज का खोल. यह पूरे दाने को घेरे हुए एक पतली परत है। यह परत बीज के खोल और फल की दीवार या पेरीकार्प (pericarp) के जुड़ने से बनती है।



[After Hylander & Stanley]

चित्र १.६ मक्के का दाना। (क) सम्पूर्ण दाना; (ख) दाने का अनुलम्ब काट।

२. भ्रूणपोष. एक ढाल के आकार की बनावट के द्वारा दाना दो असमान भागों में बँटा हुआ होता है; इस बनावट को स्कुटेलम (scutellum) कहते हैं। दाने का बड़ा भाग भोज्य-पदार्थ का भण्डार-घर या भ्रूणपोष (endosperm) होता है और छोटा भाग—भ्रूण। यदि दाने की कटी सतह पर थोड़ा-सा आयोडीन का घोल डाला जाय तो तमाम भ्रूणपोष काला हो जाता है और भ्रूण भूरे रंग का हो जाता है। इस प्रकार दोनों भाग स्पष्ट अलग मालूम होने लगते हैं।

३. भ्रूण. इसमें दो भाग सम्मिलित हैं; पहला (क) एक-बीजपत्र जिसको चावल के दाने की भाँति वसुधिका (स्कुटेलम) कहते हैं और दूसरा (ख) अण्ड

(एविसस)। अक्ष का उपरी भाग (१) प्रांकुर होता है, जिसके सिरे पर छोटी-छोटी पत्तियाँ होती हैं; और नीचे का भाग (२) मूलांकुर होता है जिसमें मूलछाद (रूट-कैप, root-cap) होता है। प्रांकुर, पत्र-छाद या प्रांकुर-चोल (coleoptile) से और मूलांकुर, मूल-छाद या मूलांकुर-चोल (coleorhiza) से घिरा हुआ होता है। स्क्यूटेलम के पीछे की सतह जो कि भ्रूणपोष को स्पर्श करती है, एक अवशोषण करने वाली ऊति (absorbing tissue या epithelium) में परिवर्तित हो जाती है।

नोट. अन्नो {जैसे चावल, गेहूँ, मक्का, जौ (barley) और जई (oat)} बाजरा और घास के कुल के दूसरे पीघों में बीजपत्र (cotyledon) को वरूधिका (स्क्यूटेलम, scutellum) कहते हैं। यह 'एपिथीलियम' की सहायता से भ्रूणपोष के भीतर संचित भोज्य-पदार्थ को अवशोषण करके उगते हुए भ्रूण (growing embryo) को भेजता है।

द्वि-बीजपत्री और एक-बीजपत्री (Dicotyledons and Monocotyledons).

फूलवाले पौधे दो बड़े भागों में विभाजित किये गये हैं—द्वि-बीजपत्री (dicotyledons; di—दो) और एक-बीजपत्री (monocotyledons; monos—अकेला)। सभी द्वि-बीजपत्रियों में बीज का भ्रूण दो बीजपत्र रखता है और सब एक-बीजपत्रियों में भ्रूण केवल एक बीजपत्र ही रखता है। इमली, लोकी, कपास, नारंगी, सूरजमुखी, दालें, अमरूद, कटहल, चना, आम, मटर, रेंडी (castor), पोस्ता (poppy), पपीता (papaw) और गुल-अम्बास या कृष्णा कोली (four o'clock plant) आदि पौधे द्वि-बीजपत्रियों के साधारण उदाहरण हैं। और चावल, गेहूँ, मक्का, घासों (grasses), ताड़, केला, एरोएड्स (aroids), प्याज और पीनशिफ्रे (ऑर्किड्स, orchids) आदि एक-पत्रियों के उदाहरण हैं। द्वि-बीजपत्रियों, एक-बीजपत्रियों से संख्या में बहुत अधिक हैं। द्वि-बीजपत्रियों और एक-बीजपत्रियों की जातियाँ (species) क्रमशः लगभग १०९,००० और २४,००० हैं।

[बहुत कम पौधों में बीजपत्रों की संख्या में अन्तर पाया जाता है। उदाहरण के तौर पर भुई-केश (Corydalis) में केवल एक ही बीजपत्र होता है। यह पोस्ता-कुल (poppy family) का एक पतला संजनी-आरोही शाकीय पौधा (tendrill climbing herb) है। ऐब्रोनिया (Abronia) में भी केवल एक ही बीजपत्र होता है। बहुत-से परजीवियों (parasites) में एक भी बीजपत्र नहीं होता, जैसे स्वर्णलता (dodder) में; या उनकी संख्या २ से ६ तक या कभी-कभी उससे भी अधिक होती है जैसे लोरैथेसी (Loranthaceae) में। बीजपत्र छोटे-बड़े भी हो सकते हैं; एक, दूसरे से काफी बड़ा हो सकता है, जैसे पानी-फल या सिंघाड़ा (chestnut या Trapa) और कटहल (jack या Artocarpus) में। इस सम्बन्ध में यह भी जानना आवश्यक है कि नग्न बीजों (gymnosperms) में, विशेष कर साइकेड्स (cycads) में दो बीजपत्र होते हैं। किन्तु शंकुधरों (conifers) में इनकी संख्या २ से १५ तक पायी जाती है।]

भ्रूणपोषी और अभ्रूणपोषी बीज (Albuminous and Ex-albuminous Seeds).

१. वे बीज भ्रूणपोषी (albuminous या endospermic) कहलाते हैं

जिनमें भ्रूणपोष (एलब्यूमेन या एण्डोस्पर्म) होता है। यह विशेष प्रकार की ऊतियों का समूह (special mass of tissue) है जो भ्रूण के लिए भोज्य-पदार्थ का भण्डार-घर होता है। जिन बीजों में भोजन एकत्रित रखने के लिए यह विशेष प्रकार की ऊति (टिशू) नहीं होती, उन्हें अभ्रूणपोषी (ex-albuminous या non-endospermic) कहते हैं। द्वि-बीजपत्री बीजों में भ्रूणपोष भ्रूण को घेरे हुए रहता है। इसके विपरीत एक-बीजपत्री बीजों में भ्रूणपोष एक ओर हो सकता है, जैसे अन्नो में, या भ्रूण, भ्रूणपोष के अन्दर दबा रह सकता है, जैसे ताड़ों में। एक बीजपत्री बीज अधिकतर भ्रूणपोषी होते हैं। इसके विपरीत द्वि-बीजपत्रियों में भ्रूणपोषी बीजों की अपेक्षा अभ्रूणपोषी अधिक पाये जाते हैं।

२. बहुत से द्वि-बीजपत्रियों की भाँति, भ्रूणपोष की अनुपस्थिति में बीज के बीजपत्र ही भोज्य-पदार्थ एकत्रित कर लेते हैं और मोटे तथा गुदले हो जाते हैं। परन्तु जब भ्रूणपोष उपस्थित है तो भोज्य-पदार्थ सदैव इसी में एकत्रित होता है और तब बीजपत्र (cotyledon या cotyledons) पतले और छोटे होते हैं, और उनका कार्य बीज का अंकुरण (germination) आरम्भ होने पर भ्रूणपोष से भोजन अवशोषण करना है; और अवशोषित किये हुए भोजन को प्राकुर (plumule) और मूलांकुर (radicle) को भेजना है। इनके साधारण उदाहरण निम्नलिखित हैं:

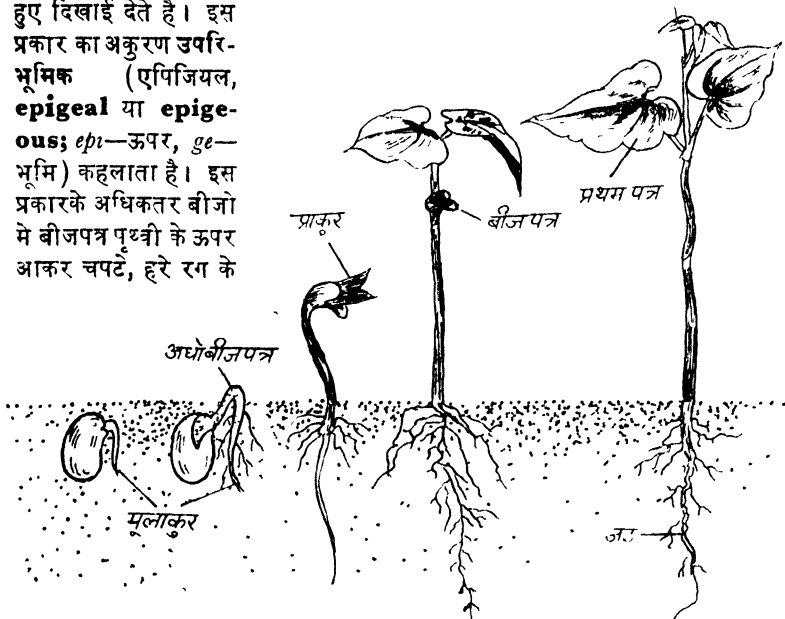
- | | | |
|-------------------|---|---|
| द्वि-बीजपत्री बीज | — | —अभ्रूणपोषी. जैसे:—चना, मटर, सेम, लौकी, इमली, आम, कपास, दाले, सूरज-मुखी, अमरूद आदि। (ex-albuminous) |
| द्वि-बीजपत्री बीज | — | —भ्रूणपोषी. जैसे.—रेडी (castor), पोस्ता (poppy), पपीता (papaw), शरीफ़ा, गुल-अब्बास या कृष्णा कोली (four o'clock plant), आदि। (albuminous) |
| एक-बीजपत्री बीज | — | —अभ्रूणपोषी. जैसे:—पीनशिफ (orchids), जल कदली (water plaintain), जल-रम्भिका (arrow-head) और नैयास (Naias)। |
| एक-बीजपत्री बीज | — | —भ्रूणपोषी. जैसे.—अन्न (जैसे चावल, गेहूँ, मक्का, जई और जौ) तथा ज्वार, बाजरा, घासे (गन्ना और बाँस सम्मिलित करते हुए), ताड़, लिलीज (lilies), एरंड्स (aroids) आदि। |

अंकुरण (Germination)

बीज के अन्दर भ्रूण सुषुप्तावस्था (dormant stage) में रहता है, किन्तु जब बीज को नमी प्राप्त होती है तो भ्रूण क्रियाशील हो जाता है और उगने (अंकुरित होने) तथा एक छोटे नवजात पौधे (seedling) में विकसित होने लगता है। 'भ्रूण के सुषुप्तावस्था से जागने तथा उगना प्रारम्भ करने की क्रिया को अंकुरण (germination) कहते हैं।' भ्रूण बीजपत्रों में अथवा भ्रूणपोष की मौजूदगी में भ्रूणपोष (endosperm) में एकत्रित भोज्य-पदार्थ को अवशोषित करके वृद्धि करता है। प्रारम्भ में बीज नमी सोखता है और बहुत काफ़ी फूल जाता है। तब मूलांकुर

लम्बाई में बढ़ता है और अण्डद्वार (माइक्रोपाइल) में से होकर बाहर निकल आता है और जड़ (मूल) को जन्म देता है। भूमि में बीज को किसी भी स्थिति में रखा जाय, मूलांकुर सदैव नीचे की ओर वृद्धि करता है और मूल-संहति (root-system) या जड़ उत्पन्न करता है। इसकी वृद्धि प्रांकुर (प्लुम्बूल) की अपेक्षा काफी तेजी से होती है। बीज के फूटने के कारण बीज का खोल फट जाता है और बीजपत्र थोड़े या पूर्णतया एक दूसरे से अलग हो जाते हैं, जिससे अन्दर रहनेवाले प्रांकुर को रास्ता मिलता है। अधिकतर बीजों में बीजपत्र प्रकाश प्राप्त करने पर हरे रंग के हो जाते हैं और पत्तियों के समान दिखाई पड़ने लगते हैं तथा थोड़े या बहुत समय तक जीवित रहते हैं। फिर भी थोड़े बीजों में, जब जड़ जमीन में काफी गहराई तक पहुँच जाती है तथा बीज पीथे की दशा प्राप्त कर लेता है, ये बीजपत्र सूखकर सिकुड़ते और भूमि पर गिरते दिखाई देते हैं। प्रांकुर बीजपत्रों के बीज में छिपा हुआ रहता है और जब मूलांकुर लम्बाई में थोड़ा बढ़ता है तो प्रांकुर (प्लुम्बूल) बीजपत्रों से बाहर निकल आता है और ऊपर की ओर वृद्धि करने लगता है। धीरे-धीरे यह वृद्धि करके तने तथा पत्तियों (प्ररोह, shoot) को जन्म देता है। अंकुरण दो प्रकार के होते हैं—उपरिभूमिक (एपिजियल, epigeal) और अधोभूमिक (हाइपोजियल, hypogeal)।

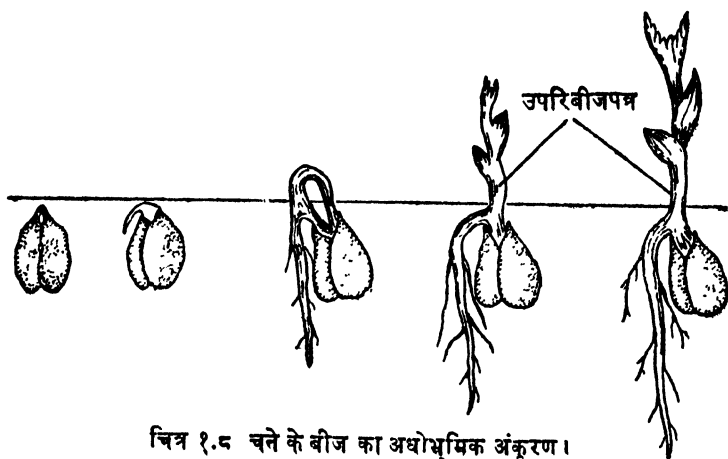
१. उपरिभूमिक अंकुरण (Epigeal germination). इसली, खीरा, कपास, लौकी, खरेंडी, पपीता (papaw) आदि कुछ बीजों में अधोबीजपत्र (हाइपोकोटिल, **hypocotyl**; *hypo*—नीचे). अर्थात् बीजपत्रों से सटे नीचे रहनेवाला भाग, लम्बाई में तेजी से वृद्धि करता है, जिसके कारण बीजपत्र ऊपर की ओर उठे हुए दिखाई देते हैं। इस प्रकार का अंकुरण उपरिभूमिक (एपिजियल, **epigeal** या **epigeous**; *epi*—ऊपर, *ge*—भूमि) कहलाता है। इस प्रकारके अधिकतर बीजों में बीजपत्र पृथ्वी के ऊपर आकर चपटे, हरे रंग के



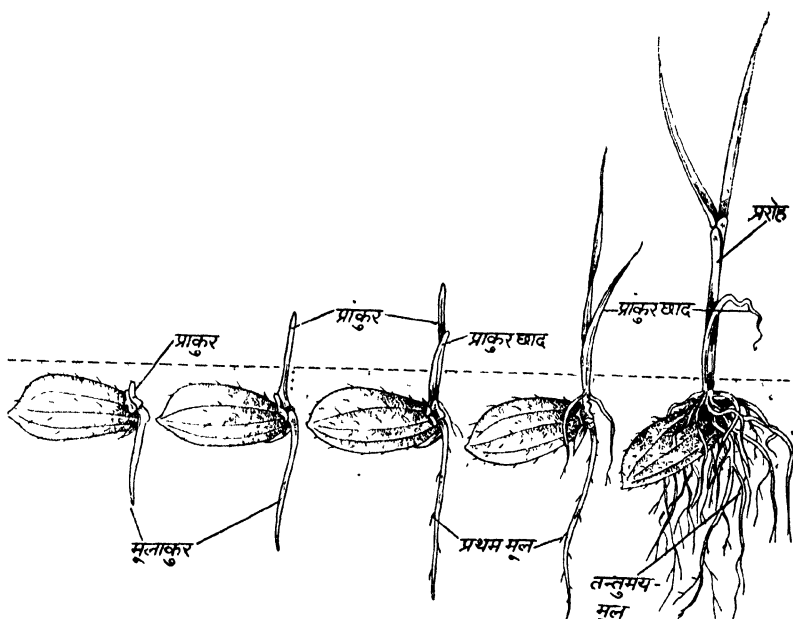
चित्र १.७ सेम के बीज का उपरिभूमिक अंकुरण।

और पत्तियों के समान दिखाई देने लगते हैं। इसके विपरीत दूसरे बीजों में, विशेष कर जब बीजपत्र (काँटीलीडन्स) बहुत मोटे होते हैं जैसे इमली, बड़ी सेम, आदि में, तब वे पत्तियों में नहीं बदलते, बल्कि धीरे-धीरे सिकुड़ कर गिर जाते हैं।

२. अधोभूमिक अंकुरण (Hypogeal germination). चना, मटर,



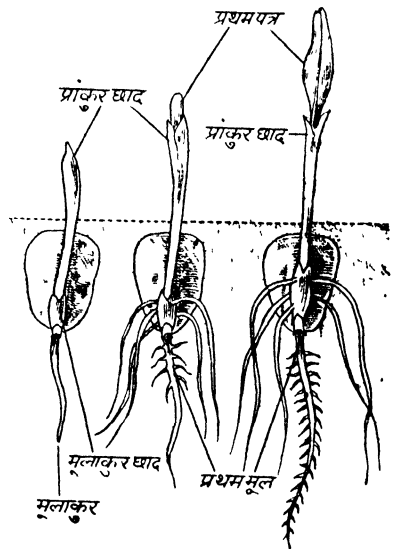
चित्र १.८ चने के बीज का अधोभूमिक अंकुरण।



चित्र १.९ चावल के दाने का अधोभूमिक अंकुरण।

बाकला या चौड़ी सेम, आम, मूंगफली आदि बीजों में बीजपत्र पृथ्वी के अन्दर या ठीक उसके धरातल पर ही रह जाते हैं। इनमें बीज पत्रों के ठीक ऊपर पासवाला ऐक्सिस का भाग अर्थात् **उपरिबीजपत्र** (एपिकॉटिल, *epicotyl*) लम्बाई में बढ़ता है और प्रांकुर को ऊपर को धक्का देता है। बीजपत्र हरा रंग नहीं प्राप्त करते बल्कि धीरे-धीरे सूख जाते हैं और गिर जाते हैं। ऐसे अंकुरण को **अधोभूमिक** (हाइपोजियल, *hypogeal* या *hypogeous*; *hypo*—नीचे, *ge*—भूमि या पृथ्वी) अंकुरण कहते हैं।

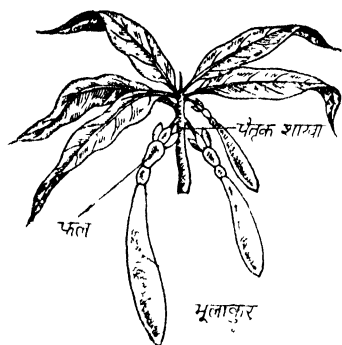
एक-बीजपत्री बीजों का अधोभूमिक अंकुरण (Hypogeal germination of monocotyledonous seeds). एक-बीजपत्री बीज अधिकतर भ्रूणपोषी होते हैं और इनके अंकुरण के समय बीजपत्र तथा भ्रूणपोष (endosperm) भूमि के अन्दर दबे रह जाते हैं। अतः इनका (प्याज को छोड़ कर) अंकुरण अधोभूमिक होता है। एक-बीजपत्री बीजों (जैसे चावल, मक्का आदि) के अधोभूमिक अंकुरण में बीजपत्र या स्क्वेटेलम, भ्रूणपोष (endosperm) में एकत्रित भोज्य-पदार्थ का अवशोषण करता है। अंकुरित होने पर मूलांकुर अपना रास्ता मूल-छाद (root sheath) अथवा **मूलांकुर-चोल** (कोलियोराइजा, *coleorhiza*) के निचले छोटे कॉलर (collar) के समान भाग से होकर बना लेता है और प्रांकुर (plumule), प्रांकुर छाद (plumule-sheath) या प्रांकुर चोल (coleoptile) के उपरी बेलनाकार भाग में से होकर फूट निकलता है। मूलांकुर (रैडिकल), नीचे की ओर बढ़ता है और प्रारम्भ में यह **प्रथम मूल** (**primary root**) बनाता है। अधिकतर यह प्राथमिक जड़ शीघ्र नष्ट हो जाती है और आधार में से तन्तुमय मूलों (फाइब्रस जड़ों, *fibrous roots*) का एक गुच्छा निकल आता है। प्रांकुर ऊपर की ओर वृद्धि करता है। शीघ्र ही प्रांकुर से पहली पत्ती बाहर निकल आती है और बाद में दूसरी पत्तियाँ निकलने लगती हैं। अधिकतर ताड़ों (*palms*) के बीजों के अंकुरण में बीजपत्र का एक भाग छाद (sheath) के समान बनावट धारण कर लेता है जो कि लम्बाई में काफी बढ़ जाता है और भ्रूण के अक्ष (*axis*) को जमीन में कुछ गहराई तक ले जाता है (देखिये चित्र १.१३)।



चित्र १.१० मक्का के दाने का अधोभूमिक अंकुरण।

विशेष प्रकार का अंकुरण. समुद्र के किनारों पर और नमकीन झीलों (*salt lakes*) में जगनेवाले बहुत से पौधों के बीजों का अंकुरण एक विशेष प्रकार का होता

है जिसे पितृस्थ उद्भेदन (विविपेरी, **vivipary**) कहते हैं। बीज फल के अन्दर ही



[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १.११ पितृस्थ (viviparous) अंकुरण।

अन्दर अंकुरित होने लगता है, जब कि फल अभी पितृ-वृक्ष (parent-tree) पर ही लगा रहता है तथा उसीसे भोजन प्राप्त करता रहता है। मूलांकुर लम्बाई में वृद्धि करता है (elongates) और नीचे के भाग में कुछ फूल जाता है तथा पहले से अधिक मजबूत हो जाता है। अन्त में यह नया पौधा अपने बढ़ते हुए भार के कारण पैतृक पौधे से अलग हो जाता है; और ठीक सीधा नीचे गिर कर मुलायम कीचड़ में धँस जाता है। मूलांकुर पृथ्वी की ओर घुसता है और शीघ्र ही बगली जड़े या पार्श्वमूल (lateral roots) बनाकर पौधे का जमीन में लगर की भाँति ठीक से स्थित कर देता है। इसके उदाहरण वायुशिफ (राइज़ोफोरा,

Rhizophora), केओरा (*Sonneratia*), सुन्दरी (*Heritiera*) आदि है।

अंकुरण के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ (Conditions necessary for germination). यदि कीड़े-मकोड़े अथवा कवकानि (fungi) बीज के भ्रूण को कोई हानि न पहुँचा पावें तो सूखे बीज अपनी प्रकृति के अनुसार महानों क्या कई वर्षों तक नये पौधों को उत्पन्न करने योग्य रहने है। यदि बीज का भ्रूण ठीक अवस्था में है तो इसके अंकुरण के लिए निम्नलिखित बाहरी परिस्थितियों की आवश्यकता होती है:—(१) पानी या नमी (२) साधारण ताप (३) हवा या ऑक्सीजन।

१. नमी. बीज के अंकुरण और विकास के लिए प्ररस (प्रोटोप्लाज़्म) का पानी से सतृप्त (saturated) होना अत्यावश्यक है। हवा में सुखाये हुए बीजों में १० से १५ प्रतिशत तक पानी रहता है। इतने कम पानी की मात्रा में कोई भी जीवनावश्यक क्रिया (vital activity) सम्भव नहीं है। इस प्रकार सुषुप्त भ्रूण (dormant embryo) के क्रियाशील होने के लिए बीज पत्रों या भ्रूणपोष में सचित विभिन्न लवणों और कार्बनिक पदार्थों (organic substances) को घोलने के लिए, आवश्यक रासायनिक क्रियाओं की सहायता के लिए, और बीज के खोल को मुलायम बनाकर भ्रूण के बाहर निकलने में सहायता देने के लिए, पानी आवश्यक है।

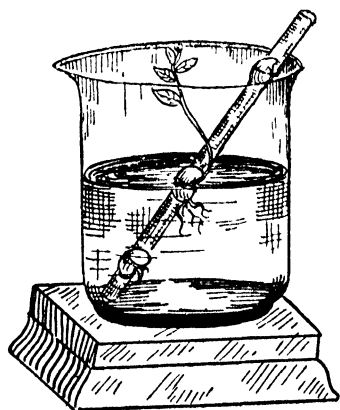
२. ताप. बीज के अंकुरण के लिए उपयुक्त ताप आवश्यक है। प्ररस (प्रोटोप्लाज़्म) साधारणतया ताप के एक विशेष दायरे में ही कार्य करता है। यह दायरा बीज की प्रकृति के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। इस दायरे के अन्दर जितना ताप अधिक होगा उतनी ही तेज़ी से बीज का अंकुरण होगा।

३. हवा. अंकुरित होते हुए बीज के श्वसन (रेस्पिरेशन) के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता है, जो कि हवा का एक अवयव है। इस क्रिया से अत्यधिक मात्रा में ऊर्जा (energy) प्राप्त होती है। अंकुरित होनेवाले बीज में श्वसन बहुत तेज़ी से होता है क्योंकि क्रियाशील प्ररस (प्रोटोप्लाज़्म) को ऑक्सीजन की निरन्तर

आवश्यकता रहती है। इसीलिए जो बीज जमीन में गहराई पर बोया जाता है वह या तो अंकुरित ही नहीं होता या बहुत कम होता है।

इस सम्बन्ध में यह नोट कर लेना आवश्यक है कि अंकुरण के लिए प्रकाश एक आवश्यक परिस्थिति नहीं है। वास्तव में बीज अंधेरे में अधिक तेजी से अंकुरित होते हैं। कुछ बीज, जैसे टमाटर के बिना अंधेरे में रखे अंकुरित ही नहीं होंगे। किन्तु अंकुरण के बाद की वृद्धि के लिए प्रकाश अनिवार्य है। जो पौधे लगानार अंधेरे में उगते हैं, वे तेजी से लम्बाई में वृद्धि करते हैं, किन्तु शक्तिहीन होते हैं। ये पर्णहरिम (क्लोरोफिल, chlorophyll) नहीं बना पाते और केवल पीली तथा अविकसित पत्तियाँ रखने हैं। ऐसी दशा के पौधे को पाण्डुरित (इटोलेटेड, etiolated) कहते हैं।

सेम के तीन बीजों का प्रयोग (चित्र १.१२). एक बहुत साधारण प्रयोग द्वारा यह दिखाया जा सकता है कि अंकुरण के लिए उपर्युक्त सब परिस्थितियाँ आवश्यक हैं। इस प्रयोग को **सेम के तीन बीजों का प्रयोग** कहते हैं। लकड़ी के एक टुकड़े पर हवा में सुखाये हुए तीन बीज इस प्रकार लगा दिये जाते हैं कि उनमें से दो तो लकड़ी के दोनों किनारों पर रहते हैं और तीसरा मध्य में। इस लकड़ी को एक बीकर में रख दिया जाता है, और उसमें इतना पानी भरा जाता है जिससे मध्य का बीज पानी में आधा डूबा रहे। इस प्रकार बीजों को कुछ दिन के लिए मामूली गर्म (warm) स्थान में रख देते हैं। समय-समय पर बीकर में पानी डालते रहते हैं ताकि पानी अपने पहले तल पर रहे। यह देखा जाता है कि बीचवाला बीज



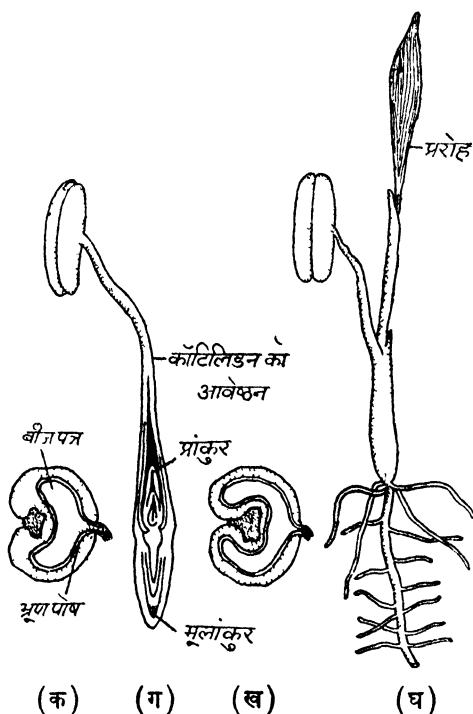
चित्र १.१२ सेम के तीन बीजों का प्रयोग।

ठीक प्रकार से उग गया है क्योंकि इसको पर्याप्त नमी, ऑक्सीजन और गर्मी प्राप्त है। नीचेवाले बीज को नमी और गर्मी तो काफी मिलती है, किन्तु ऑक्सीजन नहीं मिलती। इसमें यह देखा जाता है कि इसका मूलान्कुर (radicle) तो निकल आया है किन्तु ऑक्सीजन न मिलने के कारण बाद की वृद्धि रुक गई है। ऊपरवाला बीज अंकुरण के कोई चिह्न नहीं प्रकट करता क्योंकि उसको गर्मी और ऑक्सीजन तो काफी प्राप्त हो गयी है किन्तु नमी नहीं मिल सकी।

इस प्रयोग से यह विदित होता है कि नमी और ऑक्सीजन अंकुरण के लिए अनिवार्य हैं। ताप का प्रभाव केवल अप्रत्यक्ष रूप से (indirectly) सिद्ध होता है। फिर भी यह सीधी रीति से (directly) निम्नलिखित प्रकार से सिद्ध हो सकता है: यदि बीजों सहित बीकर को हिमीकरण मिश्रण (freezing mixture) में या ऊँचे 'समान' ताप रखनेवाले ऊष्मक (bath) में रखकर ताप को काफी घटा या बढ़ा दिया जाय और दूसरी परिस्थितियाँ वही रहे तो यह देखा जायगा कि कोई भी बीज अंकुरित नहीं होता। अतः सामान्य ताप भी अंकुरण के लिए आवश्यक परिस्थिति है।

खजूर के बीज (Date-palm Seed) की बनावट और अंकुरण (चित्र १.१३).

बीज के ऊपर काले रंग का तथा पत्थर के समान सख्त खोल बीज का खोल कहलाता है। देखो ! यह बीज से चिपका रहता है और इसके एक तरफ गहरी नाली होती है। जब बीज को बीच में काटा जाता है तो एक सफेद पदार्थ दिखाई देता है जो



चित्र १.१३ खजूर का बीज। (क) (ख) अनुप्रस्थ काट, (ग) अंकुरण करते हुए, (घ) नवजात पौधे की दशा में।

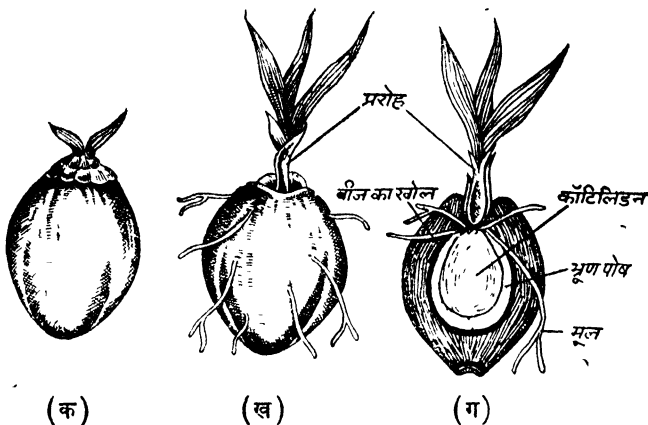
खाली जगह या विवर (cavity) को भरे रहता है। यह सफेद पदार्थ अण्ड (करनेल, kernel) या भ्रूणपोष (endosperm) होता है। बीज के खोल की भाँति यह भी सख्त और लकड़ी जैसा होता है। इसकी कोशा-भित्ति संचित कोशाधु (reserve cellulose) के अत्यधिक जमा (deposit) हो जाने के कारण बहुत मोटी होती है। भ्रूण नाली से दूर बाहरी परिधि के पास भ्रूणपोष में स्थित रहता है।

जब अंकुरण प्रारम्भ होता है तो अकेला बीजाणु बढ़ता है। यह एक पाचक रस स्रावित (secrete) करता है जो कि संचित कोशाधु पर क्रिया करता है और उसको घुलनशील बना देता है (संचित कोशाधु चीनी में परिवर्तित हो

जाता है)। बीजपत्र चीनी का अवशोषण करता है और भ्रूणपोष को खर्च करके स्वयं वृद्धि करता है। बीजपत्र का कुछ भाग छ़ाद की शक्ल में (जिसके अन्दर भ्रूण की ऐक्सिस होती है) बीज के खोल को तोड़ कर बाहर निकल आता है। बीजपत्र का छ़ाद (cotyledonary sheath) लम्बाई में वृद्धि करता है और अपने साथ भ्रूण की ऐक्सिस भी नीचे ले जाता है। जब यह जमीन में घुस जाता है तो अक्ष का मूलांकुर, मूलांकुर-चोल (coleorhiza) को छ़ेद करके बाहर निकलता है, और नीचे की ओर वृद्धि करता है तथा जड़ बनाता है। अन्त में प्राकुर (plumule), प्रांकुर-चोल (coleoptile) को फोड़ देता है और हवा में बढ़ता है तथा प्ररोह (शूट) बनाता है।

नारियल के बीज (Coconut-palm Seed) की बनावट और अंकुरण (चित्र १.१४).

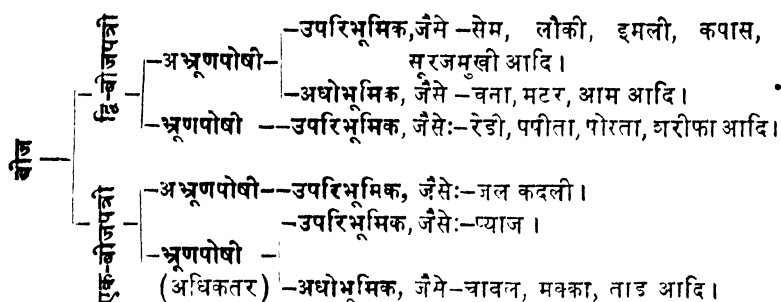
इसका सख्त छिलका (shell) या अष्ठि (stone) फल का भाग होता है। इस छिलके को तोड़ देने पर एक काला खोल—एक पतली परत—अष्ठि (kernel) से



चित्र १.१४ नारियल का बीज। (क) (ख) अंकुरण करता हुआ फल; (ग) अंकुरित फल (ख) का अनुलम्ब काट (L.S.)।

चिपका हुआ दिखाई देता है; यही बीज का खोल है। सफेद मोटी अष्ठि, भ्रूणपोष (endosperm) है, तीनो 'आखो' में से किसी एक पर भ्रूण एक छोटी अभिन्नित (undifferentiated) वस्तु की भाँति रहता है। नारियल के बीज के अंकुरण में बाकायदे छ़ाद (sheath) नहीं बनता जैसा कि दूसरे ताडो (palms) में बनता है और अभिन्नित भ्रूण अपनी पहली स्थिति में ही उगता है। इसके नीचे का सिरा बढ़ता है और केवल एक बीजपत्र बनाता है। जो धीरे-धीरे एक गोलाकार, स्पन्जी (spongy) वस्तु में वृद्धि कर लेता है और बीज की सम्पूर्ण खाली जगह को भर देता है। भ्रूण का ऊपरी सिरा एक छोटे प्ररोह में वृद्धि करता है, जिसके आधार पर बहुत-सी

तन्तुमय जड़ें पैदा हो जाती हैं। ये जड़ें फल के मोटे तथा फाइब्रस खोल में से छेद करके बाहर भिन्न-भिन्न दिशाओं में निकल आती है।



बीजपत्रों के कार्य.

१. अभ्रूणपोषी बीजों के बीजपत्रों में भोज्य-पदार्थ एकत्रित होता है जो कि अंकुरित होते समय भ्रूण के काम आता है।

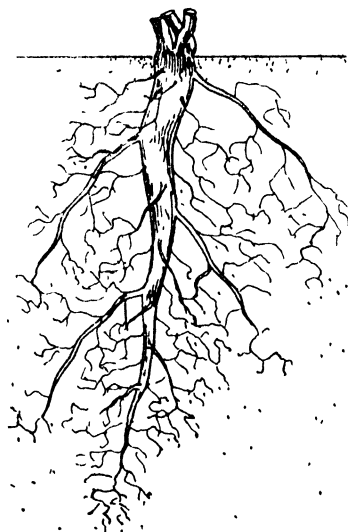
२. भ्रूणपोषी बीजों में बीजपत्र पाचक पदार्थ स्रावित (secrete) करते हैं जो भ्रूणपोष में एकत्रित अवलनशील भोज्य-पदार्थ पर क्रिया करके उनको घुलनशील बना देते हैं। तब बीजपत्र घुलनशील भोज्य-पदार्थों को अवशोषित करते हैं और अन्त में मूलांकुर और प्रांकुर को देते हैं।

३. जब बीजपत्र पृथ्वी पर ऊपर ढकेल दिये जाते हैं, जैसा कि उपरिभूमिक अंकुरण में होता है, तो वे आमतौर पर हरे रंग के हो जाते हैं और साधारण पत्तियों की भाँति कार्य करते हैं, अर्थात् वे सूर्य के प्रकाश में भोजन बनाते हैं।

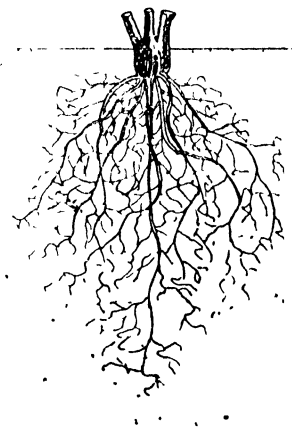
४. एक-बीजपत्री बीजों में बीजपत्र भ्रूणपोष से भोजन खींचता है और बाद में एक छद्म के रूप में बढ़ता है और अंकुरण के समय मूलांकुर (radicle) और प्रांकुर (plumule) को धक्का देकर बाहर निकालता है। घास की जाति के बीजों में वरुथिका (स्क्वेटेलम) की इपिथीलियल परत (epithelial layer) द्वारा भोजन के अवशोषण में सहायता मिलती है।

जड़ या मूल (The Root)

पौधे के अक्ष (ऐक्सिस) का वह भाग जो नीचे पृथ्वी की ओर जाता है और मूलांकुर (रैडिकल) से उत्पन्न होता है, जड़ या मूल (root) कहलाता है। मूलांकुर का



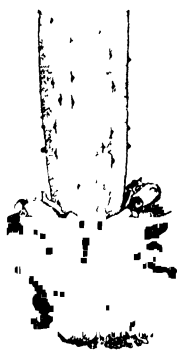
चित्र २.१ द्वि-बीजपत्री जड़े।



चित्र २.२ एक-बीजपत्री
फाइब्रस जड़े।

सीधा बढ़ता हुआ भाग **प्राथमिक मूल (primary root)** कहलाता है। यदि वह जीवित रहता है और बढ़ता रहता है तो **मूसला जड़ (tap root)** कहलाता है। मूसला जड़ साधारणतया द्वि-बीजपत्रियों में बनती है। यह बगली शाखें या पार्श्व शाखाएँ (lateral branches) पैदा करती है। जो परवर्ती मूल (secondary roots) कहलाती है। यह द्वितीय मूल फिर तृतीय मूल (tertiary roots) पैदा करती है। इसी प्रकार यह क्रम जारी रहता है। ये सब पार्श्व शाखाएँ अग्रभिर्वर्धी-क्रम (acropetal succession) में उत्पन्न होती हैं, अर्थात् पुरानी और लम्बी जड़े नोक से दूर और नयी तथा छोटी, नोक की तरफ होती है। एक-बीजपत्रियों में मूलांकुर प्रथम मूल भी उत्पन्न करता है, किन्तु यह शीघ्र ही समाप्त हो जाती है और उसकी जगह पर पतली जड़ों का एक गुच्छा तने के निचले भाग या आधार से निकल आता है जिसको **तन्तुमय मूल**

(**fibrous roots**) कहते हैं। कुछ एक-बीजपत्रियों में प्राथमिक मूल थोड़े या बहुत दिनों तक रहती है।



चित्र २.३



चित्र २.४ (क) (ख)

चित्र २.३ एक हवाई जड़ में झुण्डदार (multiple) मूल छद्। चित्र २.४ (क) रूट पॉकेट सहित जड़ें; (ख) एक रूट पॉकेट का बड़ा रूप।

जड़ के प्रदेश (Regions of the root). जड़ में सिरे से ऊपर की ओर जाते हुए निम्नलिखित प्रदेश पहचाने जा सकते हैं :

(क) **मूलछद् (Root-cap)** प्रत्येक जड़ सिरे पर एक टोपी (thimble) से ढकी रहती है जिसे मूलछद् कहते हैं। यह जड़ के उस कोमल सिरे की रक्षा करती है जो मिट्टी के भीतर की ओर बढ़ता है। जैसे-जैसे मूलछद् का बाहरी भाग नष्ट होता जाता है, वैसे-वैसे ही उसके नीचे की वर्धी-ऊति (growing tissue) द्वारा बनायी हुई नवीन कोशाएं नष्ट भाग का स्थान ले लेती हैं। आमतौर पर पानी के पोषो में मूलछद् नहीं होता।

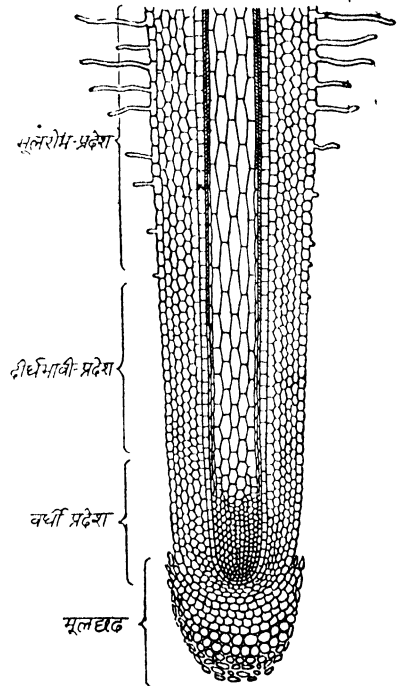
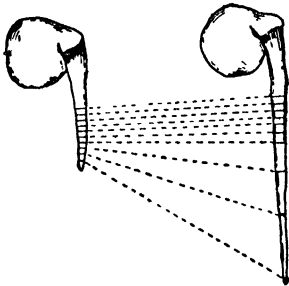
(ख) **बढ़नेवाला या वर्धी (Growing) प्रदेश.** यह प्रदेश मूलछद् के पीछे होता है और लम्बान में लगभग एक मिलीमीटर तक का होता है। कोशा-भाजन (cell-divisions) इसी प्रदेश में होते हैं।

(ग) **लम्बाई में बढ़नेवाले या वर्धी भावी प्रदेश (Region of elongation).** यह वर्धी प्रदेश के ऊपर होता है और लम्बाई में २ से ५ मिलीमीटर तक होता है। इस प्रदेश में कोशाएं लम्बाई में बड़ी तेजी से बढ़ती हैं। जड़ की लम्बाई में वृद्धि मुख्यतया इसी प्रदेश की कोशाओं की लम्बाई में बढ़ के कारण होती है।

(घ) **मूल रोम प्रदेश (Region of root-hairs).** जरा ऊँचे तल पर जड़ में पतले डोरे के समान बहुत सारे बालों का गुच्छा होता है। इनको **मूल रोम (root-hairs)** कहते हैं। यह भूमि से खनिज लवण और पानी अवशोषित करते हैं। इसी प्रदेश में ऊतियों के भिन्न (differentiations) होते हैं। इससे भी जरा ऊपर प्रौढ़ प्रदेश (mature region) में पार्श्व मूल अथवा बगली जड़ें (lateral roots), अन्नाभिवर्धी क्रम (acropetal succession) में उत्पन्न होती हैं।

जड़ की लाक्षणिक विशेषताएं (Characteristics of the root). जड़ों में कुछ ऐसे लक्षण होते हैं जिनके द्वारा ये तनों से अलग पहचानी जा सकती है। ये लक्षण निम्नलिखित हैं:

१. भ्रूण के अक्ष (एक्सिस) का पृथ्वी के अन्दर की ओर जानेवाला भाग जड़ (root) होता है, और सूर्य के प्रकाश की विपरीत दिशा में वृद्धि करता है, जबकि अक्ष का पृथ्वी से ऊपर की ओर जानेवाला भाग तना (stem) कहलाता है, और यह प्रकाश की ओर वृद्धि करता है। इसके अलावा जड़ आमतौर पर हरे रंग की नहीं होती; जबकि प्रारम्भ में तना हरा होता है। हालाँकि कुछ विशेष पौधों में, जब जड़ बहुत समय तक सूर्य के प्रकाश में रहती है, तो हरी हो जाती है, उपरिरोही जैसे पीनशिफों (epiphytic orchids), गुरुच (टिनोस्पोरा, *Tinospora*) और



[After Hylander & Stanley]

चित्र २.५ जड़ के प्रदेश।

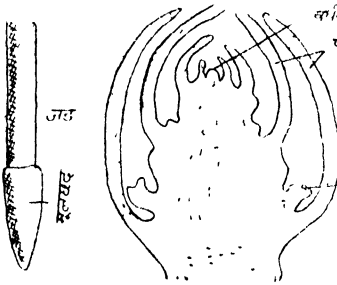
चित्र २.६ अनुलम्ब काट में जड़ के छोर के प्रदेश।

सिंघाड़े (water chestnut, *Trapa*) में। सिंघाड़े की खण्डित जड़ें, जो पानी में डूबी रहती हैं, हरी होती हैं।

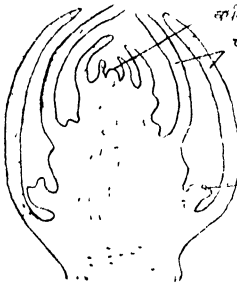
२. **पर्ण-कलिकाएं और पुष्प-कलिकाएं (Leaf-buds and flower-buds).** ये जड़ में साधारणतया पैदा नहीं होती किन्तु तने का यह साधारण काम है कि वह वर्धी वृद्धि और प्रजनन (vegetative growth and reproduction) के लिए इनको उत्पन्न करे। हालाँकि कुछ ऐसे उदाहरण भी हैं जिनमें वर्धी प्रजनन (vegetative propagation) के लिए जड़ें पर्ण-कलिकाएं (किन्तु पुष्प-कलिकाएं नहीं) धारण करती हुई पायी जाती हैं। ये कलिकाएं बढ़ कर नये पौधे बन जाती हैं, जैसा कि बेल (wood apple, *Aegle*), परवल (*Trichosanthes*), शीशम, शकरकन्द (sweet potato), नींबू, गुलाब आदि पौधों में होता है। कुछ उदाहरणों

में ऐसे पीधे, कभी-कभी, जड़ के कटे हुए टुकड़े को बो देने से प्रजनित (propagate) हो जाते हैं।

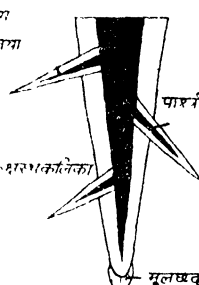
३. जड़ के अन्न में अगुस्ताने या टोंपी के समान की एक बनावट होती है जो कि जड़ की रक्षा करती है, इसे मूलछद (root-cap) कहते हैं (चित्र २.७) जब कि तने के अन्न में एक कली, जिसे अग्रस्थ कलिका कहते हैं, होती है जिसमें तने का वर्धी अग्रस्थ (growing apex of stem), जो कि उगती हुई पत्तियों से घिरा होता है,



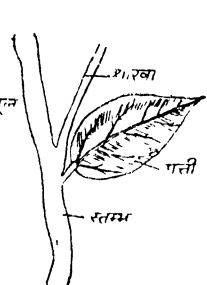
चित्र २.७



चित्र २.८



चित्र २.९



चित्र २.१०

चित्र २.७ मूलाग्र (root-tip)। चित्र २.८ स्तम्भ शीर्ष (stem-apex)।

चित्र २.९ पार्श्वमूल, (आन्तरजात, endogenous)। चित्र २.१० शाखा (बहिर्जात, exogenous)।

सम्मिलित है (चित्र २.८)। केवडा (screw pine) की हवाई जड़ों में झुण्डदार मूलछद (multiple root-cap) स्पष्ट दिखाई देता है (चित्र २.३)।

पानी के पीधो जैसे खुदापीना (duck-weed), पानी या वाटर कैबेज (water cabbage), वाटर हायसिन्थ (water hyacinth), आदि में प्रत्येक जड़ के सिरे पर एक ढीला छद (loose sheath) साफ दिखाई देता है। यह एक विचित्र मूलछद है और इसे जड़ की जेब या रूट पॉकेट (root pocket) कहते हैं (चित्र २.६)। रूट पॉकेट की उत्पत्ति मूलछद की उत्पत्ति से बिल्कुल भिन्न है।

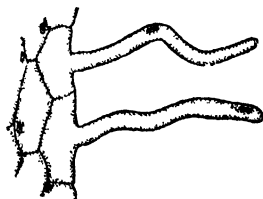
४. जड़ पर एक-कोशिय रोम (unicellular hairs) होते हैं (चित्र २.१२) किन्तु तने या प्ररोह (shoot) पर अधिकतर बहु-कोशिय रोम (multicellular hairs) होने हैं (चित्र २.१३), हालाँकि प्ररोह पर एक-कोशिय रोम भी मिलते हैं। मूलरोम (रूट हेयरस) जड़ के सिरे से जरा पीछे की ओर उसके कोमल भाग में एक झुण्ड में पाये जाते हैं। पीधे की प्रारम्भ की अवस्था (seedling stage) में ये तमाम जड़ पर विकसित होते हैं। बाद की जैसे-जैसे जड़ वृद्धि करती है, पुराने मूल-रोम नष्ट होते रहते हैं और सिरे की ओर नये पैदा होते जाते हैं। इसके विपरीत तने के रोम (शूट हेयरस, shoot hairs) कई प्रकार के होते हैं और वे तमाम प्ररोह पर फैले रहते हैं। मूलरोमों में कोशाधु (cellulose) की बनी हुई बहुत पतली दीवार होती है; किन्तु प्ररोह-रोम कुछ मोटे होते हैं तथा उनमें क्यूटिन (cutin) की तह जमी रहती है। मूलरोम थोड़े समय तक जीवित रहते हैं (साधारणतया कुछ दिन

या कुछ सप्ताह तक ही); किन्तु प्ररोह-रोम काफी समय तक जीवित रहते हैं। मूल-रोम भूमि से पानी और खनिज लवण सोखते हैं और प्ररोह-रोम पौधे के शरीर की सतह से पानी के वाष्पन को रोकते हैं और उसकी रक्षा करते हैं।

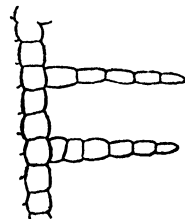
५. पार्श्व मूल (lateral roots) सदैव अन्दरूनी परत (inner layer) से विकसित होती हैं (चित्र २.१), इसलिए वे आन्तरजात (एन्डोजीनस, **endo-**



चित्र २.११



चित्र २.१२



चित्र २.१३

चित्र २.११ मूल-रोम। चित्र २.१२ विशालित (magnified) मूल-रोम—एक-कोशीय। चित्र २.१३ विशालित प्ररोह-रोम—बहु-कोशीय।

genous; endo—आन्तरिक, **genes**—बनाना) कहलाती है। इसके विपरीत, शाखाएँ बाहर की कुछ परतों से विकसित होती हैं (चित्र २.१०), इसलिए वे बहिर्जात (एक्सोजीनस, **exogenous; exo**—बाहरी) कहलाती हैं।

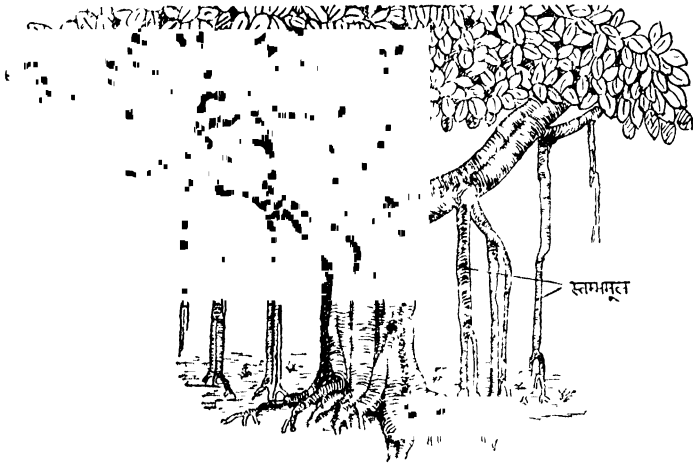
६. तने में पर्व-सन्धियाँ (nodes) और पर्व (internodes) सदैव उपस्थित रहते हैं, यद्यपि वे सदा स्पष्ट दिखाई नहीं देते; किन्तु जड़ों में इनका सर्वथा अभाव होता है (पर्व-सन्धि और पर्व के लिए पृष्ठ ४४ देखो)।

अस्थानिक मूल (Adventitious Roots)

प्राथमिक मूल और उसकी शाखाएँ सामान्य मूल (normal roots) कहलाती हैं और इसके अलावा पौधे के किसी अन्य भाग से निकली हुई जड़ें अस्थानिक मूल (adventitious roots) कहलाती हैं। ये तने या शाखा के किसी भाग से, और यहाँ तक कि पत्ती से भी विकसित हो सकती हैं। इनकी बहुत-सी किस्में होती हैं और ये भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य करती हैं।

१. स्तम्भ मूल (Prop roots). बरगद (चित्र २.१४), इण्डिया रबर आदि पौधों की शाखाओं में बहुत-सी जड़ें पैदा हो जाती हैं जो नीचे की ओर वृद्धि करती हैं और मिट्टी में घुस जाती हैं। धीरे-धीरे ये बहुत मजबूत हो जाती हैं और तने की क्षैतिज बढ़ती हुई शाखाओं (horizontally growing branches) के सभालने में स्तम्भ (pillars) का कार्य करती हैं। ऐसी जड़ें स्तम्भ मूल कहलाती हैं। कलकत्ता के पास स्थित रॉयल बोटैनिक गार्डेंस के बड़े बरगद के पेड़ में उसकी शाखाओं

से ६०० स्तम्भिक जड़ें पैदा हो गई हैं, और लगभग ३,५०० वर्ग फीट के क्षेत्रफल में फैली हुई है। इस वृक्ष की आयु १६० वर्ष से अधिक आंकी जाती है।

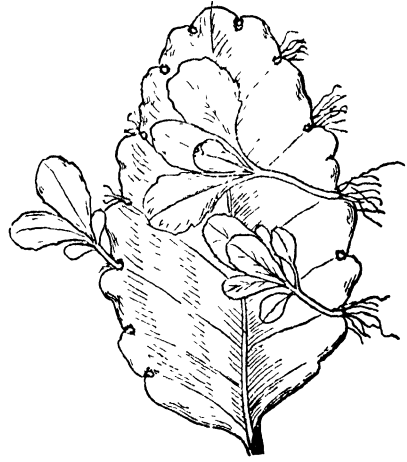


अस्थानिक मूल: चित्र २.१४ वरगद की स्तम्भ मूल।

२. जटा मूल (Stilt roots). केतकी या केवड़ा (स्कूपपाइन, screwpine,



चित्र २.१५

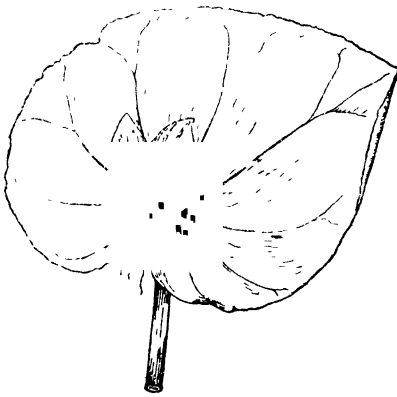


चित्र २.१६

अस्थानिक मूल: चित्र २.१५ केवड़ा की जटामूल। चित्र २.१६ पथरचट्टा (Bryophyllum) की पर्णमूल।

Pandanus) में प्रमुख तना सब ओर से भिन्न-भिन्न ऊँचाइयों पर से बहुत-सी मजबूत अस्थानिक जड़ें पैदा करती हैं, जो सीधी नीचे की ओर बढ़ती हैं, और पृथ्वी पर पहुँच कर तने को सहारा प्रदान करती हैं (चित्र २.१५)। इस प्रकार की जड़ें जटामूल या स्टिल्ट रूट कहलाती हैं।

३. पर्णमूल (**Leaf roots**). जखमेहयात या पथरचटा (*Bryophyllum*) की पत्ती (चित्र २.१६) के किनारों पर बहुत-सी कलियाँ पैदा हो जाती हैं। इन कलियों से पतली अस्थानिक जड़ों का गुच्छा निकलता है। ये जड़ें निकल कर जमीन में चली जाती हैं और कलियों को या सम्पूर्ण पत्ती को जमीन में जमा देती हैं। इसी



चित्र २.१७



चित्र २.१८

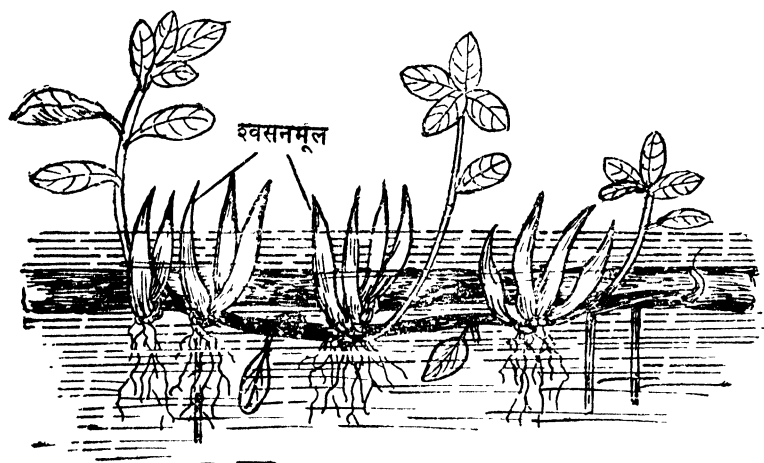
[After Mukherji & Ganguly]

अस्थानिक मूल : चित्र २.१७ विगोनिया (*Begonia*) की पर्णमूल :
चित्र २.१८ पान की आरोहीमूल।

प्रकार हिमसागर (*Kalanchoë*) की पत्तियाँ अपने किनारों पर अस्थानिक जड़ें और कलियाँ उत्पन्न करती हैं। शोभापर्ण (elephant ear plant, *Begonia*) में पत्ती (चित्र २.१७) के तमाम धरातल पर नाड़ियों (veins) और पर्ण वृन्त (petiole) से इसी प्रकार की कलियाँ निकलती हैं।

४. आरोही मूल (**Climbing roots**). पान (*Piper betle*), लम्बी मिर्च (*Piper longum*), गोल मिर्च या काली मिर्च (*Piper nigrum*), पाँथोस (*Pothos*), आदि कुछ आरोही पौधों में ऐसी जड़ें पैदा होती हैं जिनके द्वारा वे अपने को आधार (supports) पर जमा लेते हैं और उनके ऊपर चढ़ते चले जाते हैं। आधार से मजबूती से चिपकने के लिए ऐसी जड़ें एक प्रकार का चिपकनेवाला रस स्रावित (secrete) करती हैं, जो कि हवा में शीघ्र सूख जाता है। ऐसा इण्डियन आइवी (Indian ivy) में देखा जाता है। अक्सर वे अपने सिरों पर जड़ों का एक मण्डलक (disc) या 'पजा' सा बनाती हैं।

५. श्वसन मूल (**Respiratory roots.**) पानी में उगने वाले पौधों, जैसे केसरा (*Jussiaea*) (चित्र २.१९) में तैरने वाली शाखाओं से कुछ अस्थानिक जड़ें



अस्थानिक मूल: चित्र २.१९ केसरा (*Jussiaea*) की श्वसन मूल।

(adventitious roots) निकलती हैं जो हल्की, मुलायम, रगहीन और स्पंजी (spongy) होती हैं। वे आम तौर पर पानी की सतह के ऊपर हवा में विकसित होती हैं और हवा एकत्रित करती हैं। अतः वे श्वसन (respiration) में सहायक होती हैं।

दलदल या खारी झीलें (salt lakes) में उगनेवाले बहुत-से पौधे ज्वार भाटा के कारण कभी-कभी जल में डूब जाते हैं, जैसा सुन्दरवन में होता है। ऐसे पौधे श्वसन में सहायता के लिए एक विशेष प्रकार की जड़ें पैदा करते हैं जिन्हें श्वसन मूल (**respiratory roots**) या **प्यूमेटोफोर्स (pneumatophores)** कहते हैं। ऐसी जड़ें भूमि के अन्दर रहने वाली साधारण जड़ों से पैदा होती हैं और पानी के धरातल से सीधे (vertically) ऊपर उठ जाती हैं। वे सख्या में बहुत होती हैं, और प्रत्येक के ऊपरी सिरे की ओर बहुत-से छोटे-छोटे छेद या श्वसन-स्थान (respiratory-spaces) होते हैं जिनसे श्वसन के लिए हवा अन्दर ले जाई जाती है। इसके उदाहरण, राइजोफोरा (*Rhizophora*), सुन्दरी (*Heritiera*) आदि हैं।

६. परजीवी चूषक-मूल (**Haustoria or Sucking roots**). परजीवी पौधों (चित्र ३.१५) में विशेष प्रकार की जड़ें होती हैं जिनको 'सकिंग जड़ें' या 'परजीवी चूषक मूल' (हॉस्टोरिया, haustoria; एक वचन—haustorium) कहते हैं। ये जड़ें पोषिता (host) पौधे की ऊतियों (tissues) में घुस जाती हैं और इससे भोजन अवशोषित करती हैं। इनके उदाहरण अमरबेल (dodder), बनिया बाऊ (broomrape), बण्डा (मिसिल्टो, mistletoe), लोरेन्थस (*Loranthus*) आदि हैं।

७. हवाई जड़ें (**Aerial roots**). कुछ पौधे दूसरे पौधों पर वृद्धि करते

है; किन्तु परजीवियों के विपरीत उनसे भोजन अवशोषित नहीं करते। ऐसे पौधे उपरिरोही (एपिफाइट्स, *epiphytes*; *epi*—ऊपर, *phyta*—पौधे) कहलाते हैं। ये हवाई जड़े पैदा करते हैं जो कि हवा में लटकती रहती हैं और हवा से नमी चूसने का कार्य करती हैं। इसके उदाहरण बहुत से उपरिरोही पोनिशफों (*epiphytic orchids*) में मिलते हैं।

८. **स्वीकर्त्री मूल (Assimilatory roots)**. बहुत-से उपरिरोही (एपिफिटिक) पौधों तथा तैरनेवाले पानी के पौधों की जड़ें अपनी कोशाओं में हरिम-कणक (क्लोरोप्लास्ट, *chloroplast*) रखने के कारण हरे रंग की हो जाती हैं और इस प्रकार स्वीकरण (*assimilation*) का कार्य करती हैं। स्वीकर्त्री मूल गर्च (*Tinospora*), कुछ ऑकिड्स, सिघाडा (water chestnut) आदि में पायी जाती हैं।

९. **तन्तुमय मूल (फाइब्रस जड़े, Fibrous roots)**. एक-बीजपत्रियों की तन्तुमय (फाइब्रस) जड़ें भी सभी अस्थानिक (एड्वेन्टिशस) जड़ें होती हैं। उनमें वास्तविक जड़ एक भी नहीं होती। ये तन्तुमय (फाइब्रस) जड़ें तने के आधार से या जमीन पर फैलती हुई शाखाओं की पर्वसन्धियों (nodes) से कोमल जड़ों के गुन्धों के रूप में निकलती हैं। ये घासों (*grasses*) में साफ दिखाई देती हैं।

१०. **दूसरी अस्थानिक मूल**. जमीन पर फैलने हुए बहुत-से पौधों की पर्व-सन्धियों (nodes) से दूसरे प्रकार की अस्थानिक जड़ें निकलती हैं, जैसे घासों, लौकी, थूलकरो (इण्डियन पेनीवर्ट, *Indian pennywort*), अमरुल साक (बूड सॉरेल, *wood-sorrel*) आदि में। ये जड़ें, शाखाएँ काटकर जमीन में लगा देने पर भी निकलती हैं, जैसे गुलाब, गेंदा, टैपियोका (*tapioca*), चीनी गुलाब (*China rose*), सैजन (*horse radish*), दुरन्त काँटा (*Duranta*) आदि में। आम, लीची अमरुद और बहुत-से फलों के पेड़ों में कलम बांध कर (*grafting*) अस्थानिक जड़ें पैदा की जा सकती हैं, जैसे अदरक, आलू, प्याज और जमीकन्द (*Amorphophallus*) में। गन्ना, बाँस और मक्का में नीचे की पर्व-सन्धियों से अस्थानिक जड़ों का एक घेरा निकलता है।

संपरिवर्तित मूल (Modified Roots)

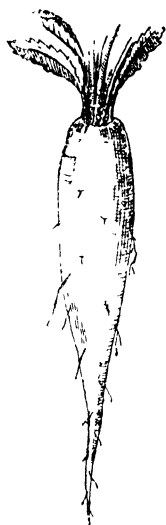
प्रथम मूल (*primary roots*) और उनकी शाखाएँ अक्सर विभिन्न रूपों में रूपान्तरित हो जाती हैं और बड़ी तथा गूदेदार हो जाती हैं। ये पौधे को जमीन के अन्दर स्थिर रखने के साधारण कार्य के अतिरिक्त भोज्य-पदार्थ के भण्डारण का काम करती हैं। ऐसी जड़ों की बहुत-सी क्रिस्में हैं।

१. **तर्कुरूप मूल (प्यूजीफॉर्म जड़, Fusiform root)**. जब जड़ (हाइपोकोटिल) बीच में फूली और ऊपर तथा नीचे की ओर धीरे-धीरे पतली होती जाती है, अर्थात् शक्ल में कुछ कुछ धरे (*spindle*) जैसी लगती है, तो उसको तर्कुरूप मूल कहते हैं, जैसे मूली (चित्र २.२०)। मूली में अधोबीजपत्र (हाइपोकोटिल) और तने का आधार वास्तव में फूलते हैं, केवल पतला होता हुआ सिरा प्रमुख जड़ होता है।

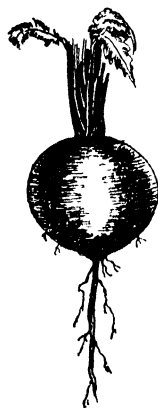
२. **कुम्भीरूप मूल (नेपीफॉर्म जड़, Napiform root)**. जब जड़ के ऊपर का भाग (आमतौर पर हाइपोकोटिल) बहुत काफी फूल जाना है, और लगभग

गोलाकार हो जाता है तथा नीचे का भाग एकदम पतला हो जाता है, तो यह कुम्भी रूप (napiform) जड़ कहलाती हैं; उदाहरणार्थ, शलजम (चित्र २.२१) और चुकन्दर। शलजम में हाइपोकोटिल (अधोबीजपत्र) फूलता है और गोलाकार हो जाता है, किन्तु चुकन्दर में अधोबीजपत्र और जड़ दोनों फूल जाते हैं।

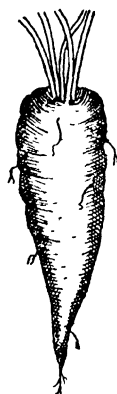
३. शंकु-आकार मूल (Conical root). जब जड़ धीरे-धीरे आधार से



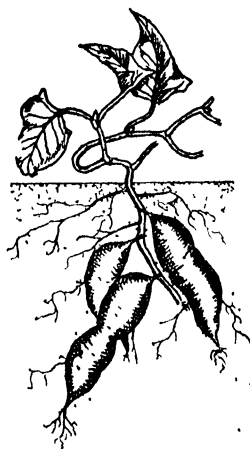
चित्र २.२०



चित्र २.२१



चित्र २.२२



चित्र २.२३

संपरिवर्तित जड़ें। चित्र २.२० मूली की तर्कुरूप जड़। चित्र २.२१ शलजम की कुम्भी रूप जड़। चित्र २.२२ गाजर की शंकु-आकार जड़।

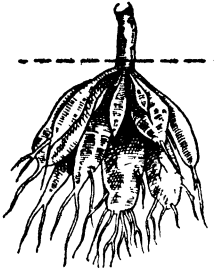
चित्र २.२३ शकरकंद की साकन्द जड़ें।

सिरे की ओर एक शंकु (cone) की भाँति पतली होती जानी है, तो इसको शंकु-आकार कहते हैं, जैसे गाजर (चित्र २.२२)। गाजर में प्रमुख जड़ ही फूलती है।

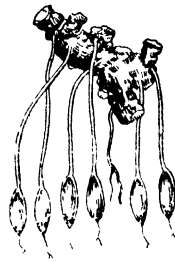
४. साकन्द मूल (Tuberous or Tubercular roots). जब जड़ बिना किसी निश्चित शक्ल के फूल जाती है, तो उसको साकन्द मूल कहते हैं, जैसे शकरकन्द (sweet potato, *Batatas*) (चित्र २.२३), शक आलू (*Pachyrhizus*) और गुल अम्बास (four o'clock plant, *Mirabilis*)।

५. पूलवत् मूल (फैसीकुलेटेड जड़े, **Fasciculated roots**; चित्र २.२४). जब बहुत-सी साकन्द जड़ें तने के आधार पर एक गुच्छे में होती हैं अथवा एक गट्ठर-सा बना देती हैं, तो उनको पूलवत् मूल कहते हैं जैसे सतमूली या सतावर (*Asparagus*), डेहलिया (*Dahlia*) और रुएलिया (*Ruellia*)।

६. ग्रंथामय मूल (नोडुलोज जड़, **Nodulose root**). जब जड़ सिरे के पास एक दम से फल जाती है, जैसे आमदा या मैंगो जिजर (**mango ginger**) में (चित्र २.२५), तो वह नोडुलोज जड़ कहलाती है।



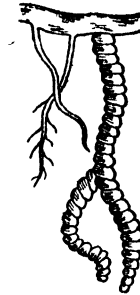
चित्र २.२४



चित्र २.२५



चित्र २.२६



चित्र २.२७

सपरिवर्तित जड़ें। चित्र २.२४ डेहलिया की पुलवत् (फैसीकुलेटेड) जड़ें।

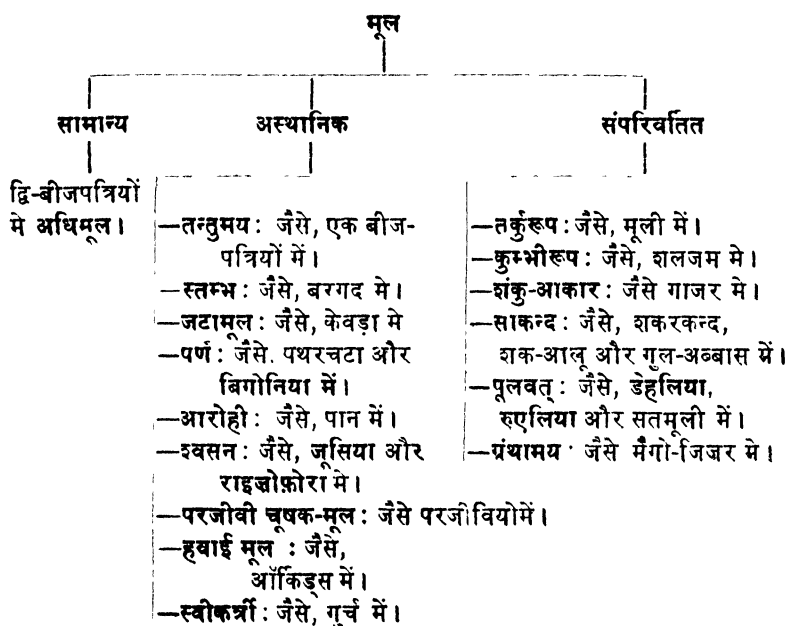
चित्र २.२५ मैंगो जिजर की ग्रंथामय (नोडुलोज) जड़ें। चित्र २.२६

अमल-लता की मणिकामय (मॉनीलीफॉर्म या बीडेड) जड़ें।

चित्र २.२७ इपिकैकुअना की वलयित (एनूलेटेड) जड़ें।

जड़ों के कुछ और भी असाधारण रूप होते हैं, किन्तु वे बहुत कम पाये जाते हैं। ये जड़ें **मणिकामय** (मॉनीलीफॉर्म या बीडेड, **moniliform or beaded**) कहलाती हैं, जबकि कुछ-कुछ दूर पर ये थोड़ी-थोड़ी फूली होती है, जैसे अमल-लता (*Vitis trifolia*) में (चित्र २.२६)। जब जड़ें घेरे के समान फूली माला रूपी (series of ring-like swellings) होती हैं तो इनको **वलयित** (एनूलेटेड, **annulated**) कहते हैं, जैसे इपिकैकुअना (*Ipecacuana*)* में (चित्र २.२७)।

* इपिकैकुअना, दवाइयोंमें काम आनेवाला एक पौधा है जो दार्जीलिंग जिले में सिनकोना (*Chinchona*) के साथ पैदा किया जाता है।



जड़ के कार्य और उपयोजन (Functions and Adaptations of the Root).

जड़ें कई प्रकार के कार्य करती हैं—यांत्रिक (mechanical), जैसे स्थिरीकरण (fixation); और कार्यात्मक (physiological), जैसे अवशोषण (absorption), संवाहन (conduction) और संग्रहण (storage)। ये जड़ों के सामान्य कार्य हैं। इनके अतिरिक्त जड़ें कुछ विशेष कार्य भी करती हैं जो कि अस्थानिक जड़ों के साथ ठीक प्रकार से समझा दिये गये हैं।

१. स्थिरीकरण (Fixation). जड़ का यांत्रिक (mechanical) कार्य पौधे को मजबूती से जमीन में स्थिर करना है। प्रमुख जड़ (main root) जमीन में गहराई तक घुस जाती है और भिन्न-भिन्न दिशाओं में पार्श्व-मूल या बगली जड़ें (lateral roots) फैला देती हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण मूल-सहति (root system) पौधे को मजबूती से जमा देती है। एक-बीजपत्रियों में यह स्थिर रखने का कार्य तन्तुमय (फ़ाइब्रस) जड़ें करती हैं।

२. अवशोषण (Absorption). पानी और कच्चे भोज्य-पदार्थों को जमीन से अवशोषित (absorb) करना, सबसे महत्वपूर्ण फिजिओलॉजिकल कार्य है। यह मूल-रोमों (root hairs) की सहायता से किया जाता है जो कि मूलछद्म के ज़रा पीछे से गुच्छे में विकसित होते हैं। ये मूल-रोम (रूट हेयर्स) मिट्टी के कणों से चिपक जाते हैं और उनसे घुलनशील लवण तथा पानी अवशोषित करते हैं।

आपसे अनुरोध है कि,

इस पुस्तक को और अधिक लाभप्रद बनाने के लिए अपने सुझाव भेजें। हो सकना है कुछ स्थल ऐसे हों जो सरलता से न समझ में आते हों, या कुछ विषय ऐसे हों जिन पर, आपकी राय में, और अधिक सामग्री देनी चाहिए, या कुछ बातें ऐसी हों जो आपकी राय में दोषपूर्ण हों। इसके अतिरिक्त यह भी सम्भव है कि कोई विषय आप पुस्तक में दिये गये ढंग से अधिक अच्छा लिख सकें। कृपया ऐसे स्थलों की खोज बराबर करते रहिये और उन्हें आदर्श रूप में लिखकर निम्नलिखित पते पर भेजिये। प्रत्येक ऐसे पाठक को, जिसके सुझाव हमें मान्य होंगे, कुछ पुस्तकें उपहार स्वरूप भेजी जावेंगी।

भवदीय

नरोत्तम भार्गव,

द्वारा दि अपर इण्डिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड

अमीनुद्दौला पार्क, लखनऊ

३. **संवाहन (Conduction).** पौधों में पानी तथा खनिज लवणों का ऊपर की ओर तने तथा अन्त में पत्तियों तक संवाहन करने में भी जड़ें भाग लेती हैं।

४. **संग्रहण (Storage).** बहुत-सी जड़ें विशेषकर संपरिवर्तित मूल, प्रमुख तौर पर तैयार किये हुए भोजन को इकट्ठा रखने के लिए होती हैं। भोजन संग्रहण भविष्य में किसी अवसर पर पौधे द्वारा उपयोग में लाने के लिए होता है।

सारांश यह है कि स्थिरीकरण, संवाहन, और संग्रहण के कार्य साधारण तथा मूल-संहति (root system) के प्रौढ़ भागों द्वारा सम्पन्न होते हैं, और अवशोषण, मूल-रोमों तथा कोमल भागों द्वारा होता है।

तना या स्तम्भ (The Stem)

पौधों का शरीर जड़ और प्ररोह (shoot) का बना हुआ होता है। प्ररोह (shoot) में शाखाओं सहित तना, पत्तियाँ और फूल सम्मिलित हैं। पौधे में जड़ तथा पत्तियों और शाखाओं समेन तना वर्धी अर्थात् बढ़नेवाले अंग (vegetative organs) होते हैं, और फूल जननेन्द्रियाँ अर्थात् सन्तान उत्पत्ति के अंग (reproductive organs) होते हैं।

तने के विशेष लक्षण. पौधे के अक्ष (axis) का ऊपर की ओर जानेवाला भाग तना या स्तम्भ (stem) कहलाता है। यह सीधे प्राकुर (plumule) से विकसित होता है तथा शाखाएँ, पत्तियाँ और फूल उत्पन्न करता है। प्रारम्भ में तना सारणतया हरे रंग का होता है। वर्धी अग्र (growing apex) बहुत-सी नन्ही-नन्ही पत्तियों द्वारा सुरक्षित होता है। तने में अक्सर कई तरह के बहु-कोशीय रोम (multicellular hairs) होते हैं। तने की शाखाएँ बहिर्जात (exogenous) होती हैं और इनमें पर्व-सन्धिया (nodes) तथा पर्व (inter-nodes) होते हैं जो कुछ तनों में स्पष्ट नहीं होते। साधारणतया पत्तियाँ और शाखाएँ पर्ण-सन्धियों से विकसित होती हैं। जब तने या उसकी शाखा का अन्त एक पर्ण-कलिका (leaf-bud) में होता है (देखिये पृ० ४४) तो यह ऊपर की ओर या बगल में बढ़ना जारी रखती है। किन्तु यदि इसका अन्त एक पुष्प-कलिका (flower-bud) में होता है तो वृद्धि रुक जाती है।

कुछ वर्णनात्मक शब्द (Descriptive terms). तना अधिकतर बेलनाकार (cylindrical) होता है; किन्तु दलदल में पैदा होनेवाली घासों (sedges) में यह त्रिकोणीय (triangular) होता है। तुलसी (sacred basil, *Ocimum*) और अन्य कुछ पौधों में यह चोपहल या चतुर्कोणीय (quadrangular) पाया जाता है। कैक्टस जाति (cacti) के पौधों में यह विभिन्न रूपों में देखने को मिलता है। कुछ दूधिया रसवाले पौधों (*Euphorbia* जाति) में तना गदेदार और रसदार हो जाता है। कुछ तनों में, **पसुलियों (ribs)** की भाँति कूटक (ridges) और सीताएँ (furrows) भी क्रम से एक के बाद दूसरी दीख पड़ती हैं। जैसे लौकी में, या कुछ तनों में **गाँठे (joints)** साफ-साफ दिखाई पड़ती हैं, जैसे गन्ने में। जब तना अन्दर से खोखला होता है तो उस तने को **पोला तना (फिस्चुलर, fistular)** कहते हैं, जैसे धनिया (coriander) में। तने कुछ विशेष रूपों में सपरिवर्तित भी हो सकते हैं।

तनों के रूप (Forms of Stems)

विभिन्न कामों को करने के लिए विभिन्न प्रकार की स्तम्भ-रचनाएँ (stem-

structures) होती है। तने हवाई (aerial), या भूमिगत (underground) हो सकते हैं। हवाई तने बिल्कुल सीधे (उच्छीर्ष, erect) और मजबूत हो सकते हैं जिसके द्वारा वे अपने को बिल्कुल सीधी स्थिति (upright position) में रख सकते हैं, जबकि कुछ इनने कमजोर होते हैं कि वे इस तरह अपने को खड़ा नहीं रख सकते। वे या तो जमीन के ऊपर फैलते हैं या समीपवर्ती पेड़ों या अन्य वस्तुओं पर चढ़ जाते हैं। कुछ तने हमेशा ही भूमिगत (underground) रहते हैं और अनुकूल परिस्थितियों (favourable conditions) में वही से समय पाकर हवाई प्ररोह (aerial shoots) निकालते हैं। इस प्रकार के तने भोजन संग्रहण (food storage) तथा बहुवर्षिता (perennation) के लिए होते हैं (देखो पृष्ठ ५६-६०)।

१. उच्छीर्ष या मजबूत तने (Erect or Strong stems). बिना शाखावाले, सीधे (उच्छीर्ष), बेलनाकार, और मजबूत तने, जिन पर गिरी हुई पत्तियों के निशान बाकी होते हैं, काँडक्स (caudex) कहलाते हैं, जैसे ताड़ में। ठोस पर्वसन्धियों और खोखले पर्व (इण्टरनोड्स) रखनेवाले गाँठदार तने सन्धि-स्तम्भ (कल्म, culm) कहलाते हैं, जैसे घास में। कुछ शाकीय पौधे (herbaceous plants), विशेषकर एक-बीजपत्री, हवाई तने नहीं रखते। अधिकतर इनके तने दबे हुए और भूमिके अन्दर रहते हैं तथा पत्तियों के गुच्छे पैदा करते हैं जो ऐसी प्रतीत होती हैं जैसे जड़ में से निकल रही हों। पुष्पन (flowering) के समय भूमि के अन्दर रहनेवाला तना एक सीधा हवाई प्ररोह (shoot) निकालता है, जिसमें एक फूल या फूलों का गुच्छा निकलता है। ऐसा फूलवाला प्ररोह पुष्पन-ध्वज (स्केप, scape) कहलाता है और पौधा हीनाक्ष (एकॉलेसेण्ट, acaulescent; a-बिना, Caulis-तना) या 'देखने में बिना तनेवाला' कहलाता है। फूलों की ऋतु समाप्त होने पर पुष्पन-ध्वज (scape) सूख जाता है। साधारण उदाहरण, रजनीगन्धा या इण्डियन ट्यूबरोज (Indian tuberoses), प्याज, एरोण्डस (aroids) आदि हैं।

जब प्रमुख तना अग्रभिबर्धो क्रम (ऐक्रोपीटल सक्सेशन, acropetal succession) में बढ़ता ही जाता है और स्तूप (पिरामिड, pyramid) जैसा लगने लगता है तो इसको शंकुशाखी (एक्सकरेंट, excurrent) कहते हैं, जैसे मराल या देवदार (Polyalthia), झाऊ (beef wood tree, Casuarina), आदि में। और जब मुख्य अक्ष की वाढ़ मन्द पड़ जाती है और अधर-उपर में निकली शाखाएँ खूब बढ़ कर चारों ओर फैल जाती हैं, तो पेड़ की शबल गुम्बद (dome-shaped) जैसी हो जाती है, तो उसको छावशाखी (deliquescent) कहते हैं, जैसे बरगद।

२. कमजोर तने (Weak stems). भूमि पर फैलनेवाले कमजोर तने जो पर्व-सन्धियों (nodes) पर जड़े नहीं पैदा करते, साधारणतया (क) अनुसर्पी (ट्रेलिंग, trailing) कहे जाते हैं। अनुसर्पी तने जो भूमि पर साष्टांग (prostrate) पड़े रहते हैं, धराशायी (प्रॉस्ट्रेट, prostrate) या प्रोकम्बेण्ट (procumbent) कहलाते हैं। जब धराशायी तना पृथ्वी पर कुछ दूर चलने के बाद सिर पर उठने की कोशिश करता है, तो उसको डोकम्बेण्ट (decumbent) कहते हैं। यह डिफ्यूज (diffuse) कहलाता है जबकि इसमें बहुत-सी शाखाएँ होती हैं और ये शाखाएँ पृथ्वी पर सब दिशाओं में फैली रहती हैं, जैसे पुनरुत्पन्ना या सत (Boerhaavia)

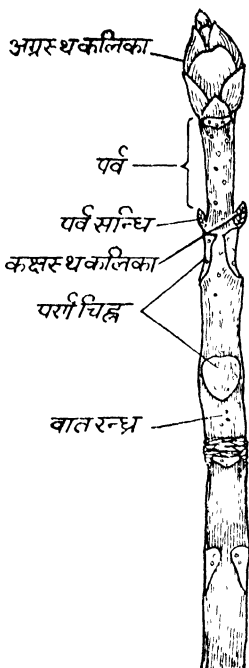
मे। कमजोर तना (ख) विसर्पी (क्रीपिंग, **creeping**) कहलाता है जबकि यह जमीन पर रेगा करता है और पर्व-सन्धियों पर जड़े देता है। अपनी भिन्न प्रकृतियों के अनुसार विसर्पी (क्रीपिंग) तना भूस्तारी (runner), विरोह (stolon), भूस्तारिका (offset) या अधोभूस्तारी (sucker) हो सकता है। जब कमजोर तने कुछ विशेष उपायो द्वारा पास की वस्तुओं से लग कर ऊपर चढ़ने हैं, जैसे मटर, लोकी, पैसन प्लावर, अगूर आदि, तो ये आरोही कहलाते हैं।

३. पर्व-सन्धि और पर्व (Node and internodes). जिस बिन्दु पर तने में पत्ती या पत्तियाँ लगी होती हैं उसे पर्व-सन्धि (नोड, **node**) कहते हैं, और दो पर्व-सन्धियों के बीच की जगह को पर्व (इण्टरनोड, **internode**) कहते हैं। कभी-कभी पर्व-सन्धियाँ (नोड्स) और पर्व (इण्टरनोड्स) बहुत साफ दिखाई देने हैं, जैसे बांस और घासों में; दूसरों में वे सदैव साफ दिखाई नहीं देते।

कली या कलिका (The Bud)

प्ररोह (shoot) का सघनित (condensed) या अविकसित भाग जिसमें पर्व (इण्टरनोड्स) लम्बाई में अभी तक नहीं बढ़ पाये हों, कली या कलिका (bud) कहलाता है (चित्र ३.१, सबसे ऊपरी हिस्सा)। वृद्धि करनेवाली प्रारम्भ की छोटी-छोटी पत्तियाँ बहुत पास-पास रहती हैं और पूरी आकृति एक गूँथे हुए रूप धारण करती हैं। कली की नीचे की पत्तियाँ ऊपर की अपेक्षा पुरानी और आकार में बड़ी होती हैं। लम्बान में कटी हुई बन्द गोभी (cabbage) के द्वारा कली ठीक समझ में आ जायगी—इसमें अग्रभि-वर्धिक्रम (acropetal succession) में पत्तियों का विकास और सघनित प्ररोह तथा वर्धित अग्र (condensed shoot and growing apex) रहना है। कलियाँ साधारणतया शाखा या तने के सिरे पर और पत्ती के कक्ष (एग्जिल, axil) में स्थित रहती हैं। पहली हालत में कली को अग्रस्थ कलिका (terminal or apical bud) और बाद की दशा में कक्षस्थ कलिका (axillary bud) कहते हैं। अग्रस्थ कलिका के बढ़ने से तना लम्बाई में बढ़ता है और कक्ष कलिका बढ़ कर शाखा बनाती है। पत्तियों सहित शाखाओं को या फूलों का जन्म देने के अनुसार कलिकाएँ दो प्रकार की होती हैं:

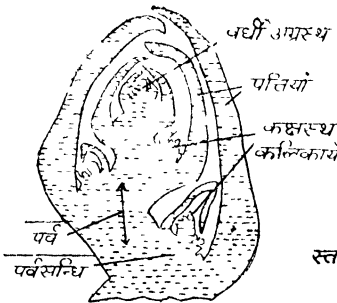
पर्वकलिकाएँ (leaf buds) या पुष्पकलिकाएँ (flower buds)। पत्ती के



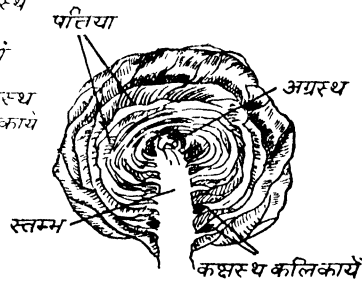
[After Hylander & Stanley]

चित्र ३.१ कलिकाएँ।

कक्ष में जब एक से अधिक कलिया उत्पन्न होती है तो इन कलियों को उप-कलिकाएँ (accessory buds) कहते हैं। ऊपर बताया जा चुका है कि तने का भिरा और पत्ती का कक्ष, कलियों की साधारण स्थितियाँ होती हैं, किन्तु कभी-कभी ये कलियाँ अपनी साधारण स्थिति छोड़ कर अनियमित रूप से पीधे के दूसरे भागों पर भी निकल आती हैं, उदाहरण के लिए जड़ पर मूल-कलिकाएँ (radical buds), जैसे बेज, या पत्ती पर उपरिपत्रिय कलिकाएँ (एपीफाइलस बड्स, epiphyllous buds), जैसे पयरचटा (Bryophyllum) में, या तने और शाखाओं के भिन्न-भिन्न स्थानों पर स्तम्भीय कलिकाएँ (कॉलाइन, cauline buds)। अपनी अनाधारण स्थिति के कारण ये अस्थानिक-कलिकाएँ (adventitious buds) कहलाती हैं। जब कोई पेड़ ठूठ बना दिया जाता है तो कटी हुई सतह के चारों ओर अस्थानिक कलियाँ निकलती हुई दिखाई देती हैं। इन सब कलियों में नई शाखाओं और कुछ दशाओं में स्वतंत्र पेड़ों में विकसित होने की शक्ति होती है। कलियाँ 'क्रियाशील अवस्था' में अथवा 'सुपुष्पावस्था' में हो सकती हैं। क्रियाशील अवस्था में जो ही वे तने से निकलती हैं त्या ही बढ़ना प्रारम्भ कर देती हैं। सुपुष्पावस्था में निश्चित काल तक वे क्रियाहीन (inactive) रहती हैं और उसके बाद



चित्र ३२



चित्र ३३

कलिकाएँ चित्र ३.२ स्तम्भशीर्ष का अनुलम्ब काट। चित्र ३.३ पात गोभी का अनुलम्ब काट।

उगने और बढ़ने लगती हैं। यह उनकी क्रियाहीन या सुपुष्पावस्था (dormant or sleeping condition) होती है। कुछ पौधों की कलियाँ, शुरू में बहुत-से शल्क पत्रों (scaly leaves) से ढकी होती हैं जो सूर्य की धूप और वर्षा से कलियों की रक्षा करती हैं। ऐसी कलियाँ शल्कीय कलिकाएँ (scaly buds) कहलाती हैं। जब उनके ऊपर ऐसा कोई छद्म नहीं होना तो उनको नग्न (naked) कहते हैं।

कली की रक्षा (Protection of the bud). चूँकि कलियों से फूल, पत्तियाँ और शाखाएँ पैदा होती हैं अतः इनको बाहरी प्रहानियों (सूर्य की धूप, वर्षा, फजई, कीड़ा आदि) से सुरक्षित होना अनिवार्य है। यह रक्षा कई प्रकार से होती है।

(१) साधारणतया कली की नन्ही पत्तियाँ एक दूसरे को ढके रहती हैं और

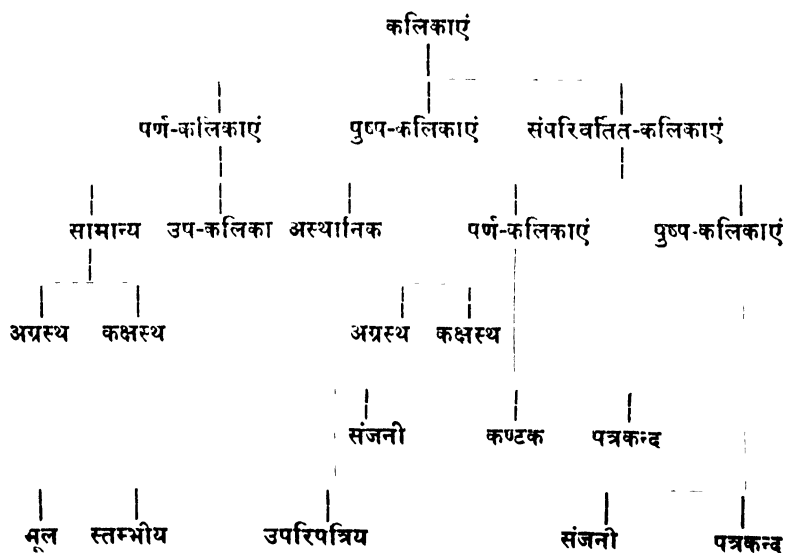
कई प्रकार मे लिपटी या गयी हुई रहकर धूप और वर्षा से अपनी रक्षा करती है।

(२) वे बालों से ढकी हो सकती है या कुछ दशाओं मे वे चिपचिपे (resinous) या गोद की तरह के पदार्थों से सनी रहती है।

(३) वे कुछ सूखी और कली बाहरी पत्तियों से ढकी रह सकती है। इन बाहरी पत्तियों को कलिका शल्क (bud scales) कहते हैं, जैसे बरगद, कटहन, दुली चम्पा (*Magnolia*), नागेश्वर या नागकेसर (*Mesua*) आदि मे।

(४) पत्ती की सतह पर मोम या क्यूटिन (cutin) की परत हो सकती है जिससे पानी का वाष्पन रुक जाय और पत्तियाँ गीली होने से भी बच जायें।

कली का संपरिवर्तन (Modification of the bud). पण-कलिकाएं सजनी (tendrils) मे रूपान्तरित हो सकती है (देखो चित्र ३९). जैसे कृष्ण-कमल या झमका (passion-flower) और अगूर मे, या काटो मे हो सकती है (देखो चित्र ३३०), जैसे दुरन्त (*Duranta*), बेल, आदि मे। कभी-कभी ये विशेष प्रकार के प्रजननांगों (reproductive bodies) मे रूपान्तरित हो जाती है, जिनको पत्रकन्द (वलबिल, bulbils) कहते हैं जैसे खट्टी बूटी या अमरुत साक (wood sorrel), टायोसकोरिया बलबीफेरा (*Dioscorea bulbifera*), आदि मे। पुष्प-कलिकाएं भी इसी प्रकार सजनी (टेण्ड्रिल, tendrils) (चित्र ३२८) मे रूपान्तरित हो जाती है, जैसे सैंडविच आइलैण्ड क्लाइम्बर (sandwich island climber) और कपालफुटकी (balloon vine) मे, या प्रजनन के लिए पत्रकन्दों (bulbils) मे, जैसे ग्लोबा बलबीफेरा (*Globba bulbifera*), विलायती कैत (American aloe, *Agave*) आदि मे। ये सब बुनबिलसन ये स्वतंत्र पौधो मे वृद्धि कर जाते हैं।



प्ररोह के उद्बर्ध या बाहरी वृद्धियाँ (Outgrowths of the Shoot).

१. बाल या रोम (Hairs). ये पौधे के धरातल पर निकलते हैं और इनकी बहुत-सी किस्में हैं (मूल-रोमों से तुलना करिए—पृष्ठ ३२)।

(क) साधारण बहुकोशिय रोम (Ordinary multicellular hairs). जो कई प्रकार के होते हैं और तने, पत्तियों और पुष्पों पर निकलते हैं।

(ख) दंशरोम (Stinging hairs) जो एक अम्लीय विष बनाते हैं, जैसे बिचूटी या नेटिल्स (nettles) में (चित्र ५.१)।

(ग) ग्रन्थिल रोम (Glandular hairs). जिनसे एक चिपचिपा पदार्थ निकलता है, जो तम्बाकू, चित्रक (Plumbago), पुनरनवा (Boerhaavia) आदि में पाये जाते हैं।

(घ) विशिष्ट संवेदनशील रोम (Special sensitive hairs). जो वीनस फ्लाई-ट्रैप (Venus' fly-trap) की पत्तियों पर होते हैं।

(ङ) दृढ़रोम (Bristles). ये छोटे नुकीले बाल होते हैं, जिनकी कोशाभित्तियाँ मिलिका या कैल्सियम कार्बोनेट के जमा हो जाने से मोटी हो जाती हैं, जैसे अटिका डायोडका (Urtica dioica) में।

२. उपोद्बर्ध (एमर्जेन्सेज, Emergences). यह रोमों से अधिक कड़े उद्बर्ध हैं और अधिक गहराई में से उगे होते हैं, बाहरी कुछ परतें इनके बनने में भाग लेती हैं और बालों की तरह ये भी पौधे पर इधर-उधर बिखरे रहते हैं।

(क) शिताग्र (प्रिकिल्स, Prickles). ये तीखे, नुकीले और साधारणतया मुड़ी हुई बनावट के होते हैं। ये अधिकतर जरा से दबाव से ही तने पर से बगैर उमको हानि पहुँचाये हुए हटाये जा सकते हैं; क्योंकि ये बाहरी धरातल से ही उत्पन्न होते हैं। इनके उत्पन्न होने का कोई निश्चिन् स्थान नहीं है, अर्थात् वे तने, शाखा और पत्ती पर भी फैले रहते हैं। प्रिकिल्स गुलाब (चित्र ३८), पत्रोरा (Erythrina) और सिल्क कॉटन ट्री (silk cotton tree) में पाये जाते हैं। उनका मुख्य कार्य रक्षा करना है, किन्तु कभी-कभी उनका उपयोग चढ़ने के लिए भी होता है।

(ख) शल्क (स्केल्स, Scales). ये पतली, सूखी, झिल्लीदार संरचनाएँ (structures) होती हैं जो रंग में भरी होती हैं, तथा पौधे पर इधर-उधर पायी जाती हैं।

(ग) लिग्यूलस (Ligules). यह बालदार या झिल्लीदार उद्बर्ध होते हैं और पर्णफलक (leaf-blade) तथा उसके छादीय आधार (sheathing base) के जोड़ पर पैदा होते हैं, जैसे घासों में।

(घ) अंगक (टेण्टेकिल्स, Tentacles). सन्ड्यू के अंगक भी उपोद्बर्ध होते हैं।

पौधे का स्वरूप (Habit of the Plant)

तने की प्रकृति, पौधे की ऊँचाई और उसके जीने की अवधि तथा रहन-सहन से ही पौधे के स्वरूप का निश्चय होता है।

१. शाक (Herbs). ये मुलायम तनो वाले छोटे पौधे हैं। उनके जीवन-काल के अनुसार उनका निम्नलिखित विभागों में बाँटा जा सकता है:

(क) एक वर्षी (Annuals). जब वे कुछ महीनों या अधिक से अधिक एक वर्ष तक जीवित रहते हैं, जैसे सरसों, चावल, जूट आदि, 'मौसमी' पौधे। साधारण बाड़स (weeds) भी अधिकतर एक वर्षी होते हैं।

(ख) द्विवर्षी (Biennials). जब वे दो वर्ष तक जीवित रहते हैं, उदाहरणार्थ मूली, पातगोभी, चुकन्दर, शलजम, गाजर आदि (गर्म जलवायु में वे एक वर्षी पौधों की भाँति व्यवहार करते हैं), और

(ग) बहुवर्षी (Perennials). जब वे कई साल तक जीवित रहते हैं, इन पौधों के हवा में रहनेवाले भाग जाड़ों में प्रतिवर्ष मर सकते हैं, किन्तु कुछ वर्षा होने से ही जमीन में रहनेवाले तने से नये प्ररोह विकसित हो जाते हैं। उदाहरण के लिए सर्वजया (Canna), अदरक, केला, अरारोट (arrowroot), तारा (Alpinia) आदि गिने जा सकते हैं।

२. शृंग या झाड़ियाँ (Shrubs). ये मामूली लम्बाई-चौड़ाई और काठ जैसे सख्त तने के पौधे होते हैं। इनमें जमीन के पास ही बहुत-सी शाखाएँ निकल आती हैं जिससे पौधे अक्सर झाड़ीदार (bushy) हो जाते हैं और तने स्पष्ट नहीं होते। ये शाकों से बड़े होते हैं किन्तु वृक्षों से बहुत छोटे होते हैं, जैसे जाबा (China rose), पतझहार या गार्डन क्रोटोन (garden croton), हरसिगार (night jasmine), कपास, डुरैण्टा (Duranta) आदि।

३. वृक्ष (Trees). ये बहुत बड़े पौधे होते हैं और इसका तना साफ दिखाई देता है तथा इनके तने और शाखाएँ सख्त और काठ जैसी होती हैं, जैसे आम, सागौन, जामुन, झाऊ या बीफ वुड ट्री (Casuarina), देशी बादाम (country almond) आदि। झाड़ियाँ और वृक्ष बहुवर्षी होते हैं।

४. आरोही (Climbers). इनके तने लम्बे तथा शाखाएँ विस्तीर्ण (diffuse) होती हैं। आचारों (supports) पर लिपटने के लिए या उन पर अपने को मजबूती से जमाने के लिए इनमें कई प्रकार के विशिष्ट अंग उत्पन्न होते हैं। आरोही पौधे अपने चढ़ने की विधियों के अनुसार कई विभागों में बाँटे गये हैं:

(क) मूलिका-आरोही (Rootlet climbers). ये वे पौधे हैं जो छोटी अस्थानिक जड़ों द्वारा ऊपर चढ़ते हैं, जैसे पान (चित्र २१८)। यह जड़ें इन पौधों के अन्दर से अथवा इनकी पर्व-पन्धियों में किसी पौधे या किसी वस्तु का सहारा पाने पर निकलती हैं। ऐसी जड़ें छोटी चिमटनेवाले मण्डलक (discs) या पंजे बनाती हैं जो 'मजबूत पकड़' साबित होती हैं, या वे एक चिपकनेवाला रस स्रावित (secrete) करती हैं जो हवा में सूख जाता है। इसके उदाहरण, पान (Piper betle), लम्बी मिर्च (Piper longum), चाब (Piper chaba), गजपीपल (Scindapsus), वैक्सप्लाण्ट (Hoya), आदि में मिलते हैं। वलयित परजीवी (twining parasites) विशेष प्रकार की जड़ें पैदा करते हैं जिनको परजीवी चूषक मूल (haustoria) कहते हैं। यह पोषिता (host) से केवल भोजन ही नहीं लेती बरन् परजीवी पौधे को पोषिता पर मजबूती से जमाने में मदद करती हैं और इस प्रकार उनके ऊपर चढ़ने में सहायता करती हैं जैसे अमरबेल (Cuscuta) में।

(ख) अंकुश आरोही (Hook climbers). कटेली-चम्पा (Artabotrys)

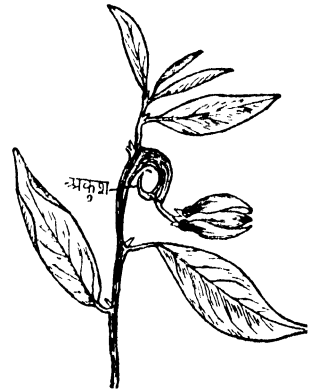
के फूल का डण्डल एक वक्र अंकुश (curved hook) पैदा करता है (चित्र ३.६), जो शाखाओं के चढ़ने में कुछ हद तक मदद देता है। शिताग्र (prickles) और काटे अक्सर कुछ पौधों में वक्र (curved) तथा अंकुश रूप के होते हैं। बेंत (कैलेमस, *Calamus*) में एक लम्बी शाखा, पर्ण छाद (leaf sheath) से पैदा होती है (चित्र ३.७), जिसमें बहुत-से वक्र अंकुश होते हैं। यह डण्डल शाखाओं और झाड़ियों के भीतर घुस जाता है और उनसे चिपक जाता है जिससे वे पौधों के शरीर का भार-



चित्र ३.४



चित्र ३.५



चित्र ३.६

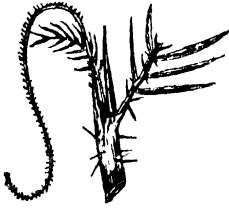
अंकुश और अंकुश प्रतानी : चित्र ३.४ बगनविलास (*Bougainvillea*)।

चित्र ३.५ अंकेरिया (*Uncaria*)। चित्र ३.६ कटेली

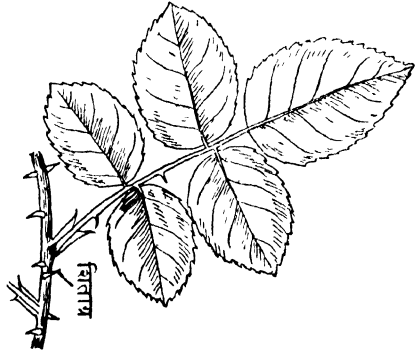
चम्पा (*Artabotrys*)।

वहन करें। इसी प्रकार बहुत-से बेंत जैसे 'रतन बेंत', पड़ोसी झाड़ियों और वृक्षों पर चढ़ते तथा ५००-६०० फीट लम्बाई में बढ़ते देखे गये हैं। आरोही गुलाब (climbing rose) और बाघ-अंचरा (*Pisonia*) में आरोहण (और साथ ही प्रतिरक्षा) के लिए बहुत-से वक्र-शिताग्र (curved prickles) होते हैं। बगन-विलास या ग्लोरी ऑफ गाडन (*Bougainvillea*) (चित्र ३.४) भी वक्र कण्टक (curved-thorns) उत्पन्न करता है जो आरोहण में सधारण-अंग (organ of support) का कार्य करते हैं। अंकेरिया (*Uncaria*), जो एक बड़ा आरोही क्षुप (climbing shrub) होता है, (चित्र ३.५), भी वक्र अंकुश (काटे) द्वारा आरोहण करता है। किसी वस्तु से चिपकने के बाद ये अंकुश वृद्धि करते रहते हैं और सख्त तथा लकड़ीनुमा हो जाते हैं।

(ग) संजनी आरोही (Tendrils climbers). ये पौधे कोमल पत्ती-रहित, सर्पिल-वलित (spirally coiled) आकार की संजनी (tendrils) पंदा करते हैं



चित्र ३.७



चित्र ३.८

शिताग्र आरोही (prickle climbers) : चित्र ३.७ बेल। चित्र ३.८ गुलाब।

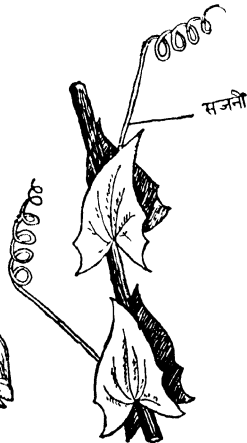
और इनकी मदद से वस्तुओं के ऊपर चढ़ते हैं। टेण्ड्रिल किसी आधार के चारों तरफ लिपट जाते हैं, और पौधे को अपना भार रोकने में तथा आसानी से ऊपर चढ़ने में सहायता प्रदान करते हैं। संजनी (tendrils) तने की संपरिवर्तित रूप हो सकती है



चित्र ३.९



चित्र ३.१०

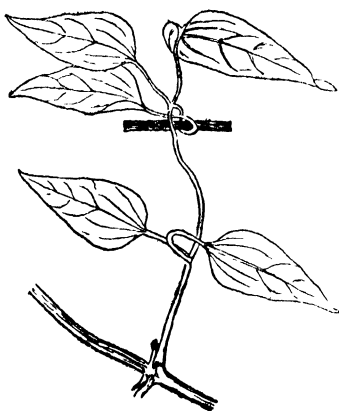


चित्र ३.११

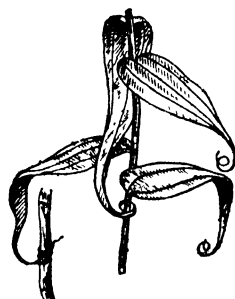
संजनी आरोही चित्र ३.९ झुमका (passion-flower)।
चित्र ३.१० मटर। चित्र ३.११ वन मटर (Lathyrus)।

(देखो चित्र ३.९), जैसे झूमका या कृष्ण कमल (passion-flower), अगूर, सैण्डविच आइलैण्ड क्लाइम्बर (*Antigonon*), आदि में होते हैं; ये पत्तियों के रूपान्तर हो सकते हैं (चित्र ३.१० और ३.११), जैसे मटर, वन मटर (*Lathyrus*) आदि में; या ये अनुपत्रों (stipules) के रूपान्तर हो सकते हैं, जैसे चोब चीनी (*Smilax*) में (चित्र ४.९)।

(घ) पर्ण-आरोही (Leaf climbers). वर्जिन्स बाँवर (virgin's bower, *Clematis*) और गार्डन नैस्टर्शियम (garden nasturtium) में (चित्र ३.१२) पर्णवृन्त (petiole) दूसरी वस्तु के सम्पर्क के लिए संवेदनशील (sensitive) होते हैं। जब पर्णवृन्त पड़ोसी वस्तुओं के सम्पर्क में आता है तो उसके चारों ओर



चित्र ३.१२



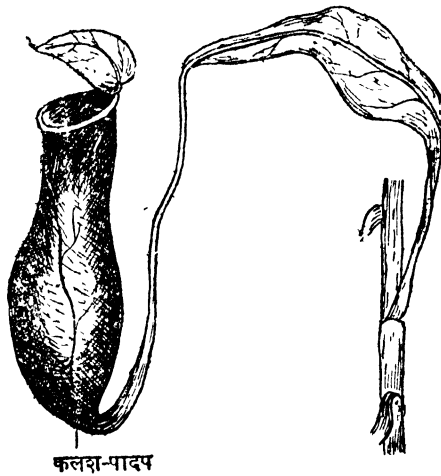
चित्र ३.१३

पर्ण प्रतानी चित्र ३.१२ वर्जिन्स बावर (*Clematis*)। चित्र ३.१३ ग्लोरी लिली (*Gloriosa*)।

लिपट जाता है और इस प्रकार पेड़ की ऊपर चढ़ने में सहायता देता है। उलट-चन्दल (glory lily) में पर्णशीर्ष (leaf-apex) टेण्ड्रिल के समान गुण्डेरी बना लेती है, (चित्र ३.१३)। कनश-पादप (pitcher plant, *Nepenthes*) में जो मांसाहारी होता है, पिचर (घड़े) का डण्ठल सहायक वस्तु के चारों ओर लिपट जाता है और पिचर या घड़े की सीध में सँभाले रखता है (चित्र ३.१४)।

(ङ) स्तम्भ प्रतानी या बलयिता (Stem climbers or twiners). इन पौधों के तने और शाखाएँ पतली और लम्बी होती हैं। यह अपने शरीर को बड़े-बड़े पेड़ों या झाड़ियों या टट्टियों (hedges) के चारों ओर लपेट लेते हैं; जैसे अपराजिता या मसेल-शेल क्रीपर (mussel-shell creeper), रंगून क्रीपर (Rangoon creeper), रेलवे क्रीपर (railway creeper), कुंजलता या कामलता, रती

(*Abrus*) आदि। इन एंठे हुए या ट्वाइनर पौधों में मुख्य आरोहियों के समान चिपकने के विशेष जग नहीं होते। इनमें से कुछ दक्षिणावर्त (clockwise—



कलश-पादप

चित्र ३.१४ कलश पादप (*Nepenthes*)।

dextrorse) और कुछ वामावर्त (anti-clockwise—sinistrorse) लिपटते हैं जब कि दूसरे ऐसे हैं जिनके लिपटने की दिशा कोई निश्चित नहीं होती।

(च) लाएन्स (**Lianes**). यह बहुत मोटे और लकड़ीनुमा बारहमासी आरोही (perennial climbers) होते हैं जो प्रायः जंगलों में पाये जाते हैं। प्रकाश की खोज में यह अपने आपको लम्बे-लम्बे पेड़ों के चारों ओर लपेट लेते हैं और अन्त में पेड़ों की चोटी तक पहुँच जाते हैं। वहाँ इनको प्रकाश अधिक मात्रा में मिलता है और वे पत्तियों के गुच्छों का एक आच्छादन (canopy) बना लेते हैं। साधारण उदाहरण माधवीलता (*Hiptage*), लता कचन (climbing mountain—*Bauhinia vahili*) और अजीर (*Ficus*) वर्ग के विभिन्न पौधों में मिलते हैं।

विशेष प्रकार के पौधे (Special Type of Plants).

बहुत-से ऐसे पौधे हैं जिनकी पोषण-विधिया (modes of nutrition) सामान्य (normal) नहीं है। ऐसे पौधे विभिन्न तरीकों से अपना भोजन प्राप्त करते हैं। वे निम्न प्रकार के हो सकते हैं:

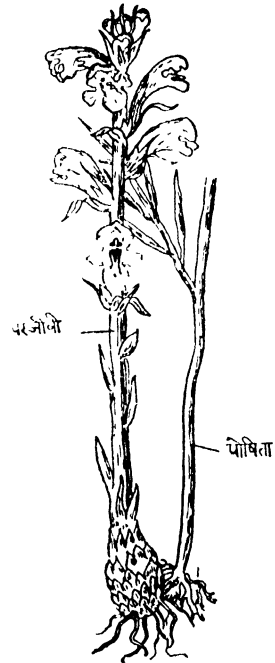
१. परजीवी (पैरासाइट्स, **Parasites**). ये वे पौधे हैं जो दूसरे जीवित पौधों पर निर्भर रहते हैं और उनसे भोजन सामग्री अवशोषित करते हैं। अवशोषण करने की क्रिया के लिए परजीवी पौधे विशेष प्रकार की जड़े उत्पन्न कर लेते हैं जिन्हें चूसनेवाली जड़े (sucking roots) या परजीवी चूषक-मूल (हॉस्टोरिया, **haustoria**) कहते हैं जो पोषिता (host plant) पौधे के शरीर क्रम में घुस जाती

है और उससे पुष्टिकर आहार प्राप्त करती है। परजीविता की भी विभिन्न मात्राएं होती हैं। कुछ पूर्ण परजीवी (total parasites) होते हैं और कुछ अपूर्ण परजीवी (partial parasites) होते हैं। पूर्ण परजीवी कभी हरे नहीं होते, क्योंकि ये अपना सारा भोजन पोषिता पौधे से लेते हैं। परन्तु अपूर्ण परजीवी या अर्ध परजीवी कभी-कभी पर्णहरिम (chlorophyll) युक्त होते हैं और स्वयं भी थोड़ा या अधिक भोजन बनाने में समर्थ होते हैं। यह तनों, शाखाओं या जड़ों पर परजीवी हो सकते हैं और



चित्र ३.१५

परजीवी। चित्र ३.१५ अमरबेल (*Cuscuta*)—एक पूर्ण स्तम्भ-परजीवी।



चित्र ३.१६

चित्र ३.१६ गेहूँ का मामा (*Orobanchae*)—एक पूर्ण जड़-परजीवी।

क्रम से उन्हें स्तम्भ परजीवी (stem parasites) या जड़ परजीवी (root-parasites) कहते हैं। विभिन्न प्रकारके परजीवियों के कुछ साधारण उदाहरण नीचे दिये गये हैं:

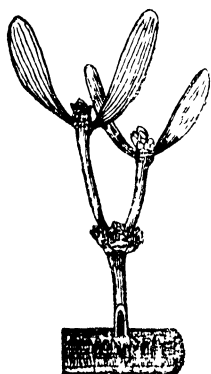
(१) पूर्ण स्तम्भ-परजीवी (total stem parasites), जैसे अमरबेल (*dodder, Cuscuta*), और आकाश बेल (*Cassytha*) आदि।

(२) अपूर्ण स्तम्भ-परजीवी (partial stem parasites), जैसे मिसिल्टो (*mistletoe, Viscum*) और मान्दा (*Loranthus*) आदि।

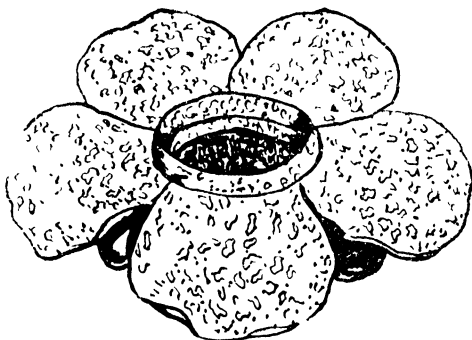
(३) पूर्ण जड़-परजीवी (total root-parasites), जैसे 'गेहूँ का मामा' या ब्रूमरेप (*Orobanchae*)—जो आलू, टमाटर, बैंगन, सरसो, तम्बाकू, आदि की जड़ों पर परजीवी होता है और कभी-कभी इनकी फसल को भी काफी हानि पहुँचाता है, बेलनोफोरा (*Balanophora*)—जो पेड़ों की जड़ों पर परजीवी होता है, आसाम में ६.५०० फीट की ऊँचाई पर पाया जाता है, और रैफ़्लूसिया (*Rafflesia*)—जो अगर (*Vitis*) की जड़ों पर परजीवी होता है, जावा और सुमात्रा में पाया जाता है।

(४) अपूर्ण जड़-परजीवी (partial root-parasites), जैसे चन्दन (sandalwood, *Santalum*)—मैसूर में बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है।

[रैफ़्लेसिया (*Rafflesia*) एक बहुत रोचक पौधा है (चित्र ३.१७ ख), क्योंकि इसके फूल सप्ताह भर में सबसे बड़े होते हैं जिनका व्यास १८ इंच और भार १८ पाउंड होता है। यह अंगूर (*Vitis*), अजीर (*Figs*) आदि की जड़ों पर परजीवी होता है। इस पेड़ का विशिष्ट लक्षण यह होता है कि इसका तना घट कर धागे के समान पतला हो जाता है और पोषिता पौधे की जड़ में से होकर गुजरता है और इसमें धरती के ऊपर यहाँ-वहाँ बड़े-बड़े फल लगते हैं। यह पौधा सर्वप्रथम



(क)



[After Lendle]

(ख)

चित्र ३.१७ (क) मिसिल्टो—एक अपूर्ण स्तम्भ-परजीवी (ख) रैफ़्लेसिया (*Rafflesia*)—एक पूर्ण जड़-परजीवी।

१८१८ ई० में सर स्टैम्फोर्ड रैफ़्लेस (Sir Stamford Raffles) द्वारा खोजा गया था, जब वे सुमात्रा के भीतरी भाग में यात्रा कर रहे थे और इस प्रकार इस पेड़ का नाम रैफ़्लेसिया भी उन्हीं के नाम पर रखा गया। कुल मिला कर इसकी छः जातियाँ जावा और सुमात्रा और पड़ोसी द्वीपों में से ढूँढी गई हैं। इसका फूल गूदेदार नीले रंग का होता है और इसकी गंध सड़े हुए मांस की तरह होती है।]

परजीवी फ़ंजाई (Fungi) और बैक्टीरिया (Bacteria). निम्न श्रेणी के पौधों, विशेष कर फ़ंजाई (कवकानि) और बैक्टीरिया (शाकाणु), में बहुत-से ऐसे परजीवी हैं जो पौधों अथवा जानवरों को सक्रामण (infect) करते हैं। ऐसे परजीवी बहुधा बहुत-से लाभप्रद पौधों और खेती की फसलों के ऊपर आक्रमण करते हैं और उन्हें काफी हानि पहुँचाते हैं, जैसे गेहूँ का 'रस्ट' (wheat rust), आलू की 'ब्लाइट' (potato blight), अनाज का 'स्मट' (corn smut), पत्ती की मिल्ड्यू (leaf mildew) आदि। अक्सर ये जानवरों पर भी आक्रमण करते हैं, जैसे पानी का 'मोल्ड' (water mould, *Saprolegnia*) मछलियों पर आक्रमण करता है और

मैलेरियल पैरासाइट्स (*Plasmodium*) मनुष्यों पर आक्रमण करते हैं। इसी प्रकार रिंगवर्म फगस (*Microsporion*) से दाद (ring worm) की बीमारी होती है। अन्य बहुत-से परजीवी बैक्टीरिया के द्वारा विविध प्रकार की बीमारियाँ होती हैं।

२. उपरिरोही (एपिफाइट्स, **Epiphytes**; *epi*—ऊपर, *phyta*—पौधे)। ये ऐसे पौधे हैं जो दूसरे पौधों पर उगते हैं, परन्तु उनसे भोजन नहीं अवशोषित करते। प्रायः ये दो प्रकार की जड़ें उगाते हैं—चलक मूल (clinging roots) या चिपकनेवाली जड़ें और हवाई जड़ें (aerial roots) या अवलम्बित अर्थात् लटकनेवाली जड़ें (hanging roots)। चिपकनेवाली जड़ें सहायक पेड़ के छाल की चटखन या दरारों में घुसकर एपिफाइट को ठीक प्रकार से शाखाओं पर गाड़ देती हैं। दूसरी तरफ हवाई जड़ें हवा में लटकती रहती हैं और अवशोषण करने की प्रवृत्ति रखती हैं। यह एक बहुत कोमल फाइब्रस ऊति के छद्म द्वारा घिरी रहती हैं, जिस **जलपोषक त्वचा** (विलामेन, **Velamen**) कहते हैं। यह मृत और छिद्रयुक्त होती है। यह एक रपज का कार्य करती है और हवा से पानी की भाप और अन्य धुली हुई गैसें, जैसे कार्बन डाइऑक्साइड और ऑक्सीजन सोख लेती हैं। इसके उदाहरण बहुत-से पीनशिफ—प्ररोहियों (ऑर्किड्स, orchids) और कुछ फर्न्स (ferns) में पाये जाते हैं। बरगद, पीपल आदि शुरु-शुरु में खजूर और अन्य पेड़ों पर उपरिरोही (epiphytic) होते हैं।

३. मृतोपजीवी (सैप्रोफाइट्स, **Saprophytes**; *Sapros*—सड़े हुए, *phyta*—पौधे)। यह वह पौधे हैं जो ऐसी जगह उगते हैं जहाँ सड़े हुए कार्बनिक पदार्थ (organic substances) अधिकता से प्राप्त होते हैं या जहाँ सड़ी हुई तरकारियाँ और जानवर मिलते हैं जिनसे यह पौष्टिक पदार्थ खींच लेते हैं। इण्डियन पाइप (*Monotropa*), कुछ ऑर्किड्स और बहुत-से फंजाई (fungi) मृतोपजीवियों (saprophytes) के अच्छे उदाहरण हैं। पूर्ण मृतोपजीवी रंगहीन होते हैं और अपूर्ण मृतोपजीवी हरे रंग के होते हैं। उनकी जड़ें, एक फगस (fungus) के धागेदार (filamentous) पूँज में सम्मिलित हो जाती हैं और फिर यह फगस मूल-रोमों (root-hairs) का स्थान लेकर उन्हीं का कार्य करने लगती हैं, और सड़े हुए कार्बनिक पदार्थों में से, जो मिट्टी में मिले होते हैं, भोज्य-पदार्थ खींचने लगते हैं। फगस और उच्च श्रेणी के पौधे की जड़ के ऐसे साहचर्य (association) को **कवक-सहजीविता** (माइकोराइजा, **mycorrhiza**) कहते हैं।

४. सहजीवी (सिम्बिओण्ट्स, **Symbionts**; *syn*—साथ-साथ, *bios*—जीवन)। जब दो जीवधारी साथ-साथ रहते हैं और पारस्परिक रूपसे एक दूसरे को लाभदायक होते हैं तो उन्हें **सहजीवी (symbionts)** कहते हैं और इस दशा को **सहजीविता** (सिम्बिओसिस, **symbiosis**) कहते हैं। फल-युक्त पौधों में माइकोराइजा सहजीविता का अच्छा उदाहरण है। माइकोराइजा प्रायः जंगली पेड़ों, मृतोपजीवी सपुष्पाङ्गिद (saprophytic phanerogams), और ऑर्किड की जड़ों में पाया जाता है। ऑर्किड्स के नवजात पौधे उस समय तक नहीं बढ़ते जब तक उनकी जड़ें किसी विशेष फगस द्वारा संक्रामित (infected) नहीं होती हैं। लैग्यूमिनस पौधों, जैसे दाल आदि में उनकी जड़ें नाइट्रोजन स्थायी (fix) करने वाले शाकाणुओं (बैक्टीरिया, bacteria) से संयुक्त हो जाती हैं। माइकस (*Cycas*), एल्मी और बैक्टीरिया का संयोग उसकी जड़ के कॉर्टेक्स (cortex)

के भाग में मिलता है। दूसरे उदाहरण लाइकेन्स (lichens) में मिलते हैं। यह एल्गी और फंजाई के संयुक्त रूप होते हैं। कुछ साधारण लाइकेन्स पेड़ के तनों पर पतले गोल हरे धब्बे पैदा कर देते हैं।

५. मांसाहारी पौधे (Carnivorous plants). मांसाहारी पौधे वे पौधे हैं जो कीड़ों और छोटे जानवरों को पकड़ते हैं और उन पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। इसके साधारण उदाहरण सन्ड्यू (sundew), बटरवर्ट (butterwort), वीनस फ्लाई ट्रैप (Venus' fly-trap), ऐल्ड्रोवैण्डा (Aldrovanda), पिचर प्लांट (pitcher plant) (चित्र ३.१४) और ब्लैडरवर्ट (bladderwort; चित्र ४.३५) हैं।

तनों के संपरिवर्तित रूप (Modifications of Stems)

बहुत-से पेड़ों में तने या शाखाएँ, सीधे ऊपर की ओर उगने और साधारण तने के समान पत्तियाँ और फूल उत्पन्न करने के बजाय कुछ विशेष कार्य सम्पन्न करने के लिए विभिन्न रूपों में बदल जाती हैं। संपरिवर्तित तनों के मुख्य कार्य यह हैं:

(क) बहुवर्षिता (perennation), अर्थात् कई वर्षों तक प्रतिकूल ऋतु में सुषुप्त और पत्तीहीन अवस्था में रहकर जीवित रहना।

(ख) विभिन्न दिशाओं में फैलती हुई लम्बी और पतली शाखाओं द्वारा वर्धी-प्रजनन (vegetative reproduction) करना, और

(ग) रूपान्तरित अंगों (metamorphosed organs) द्वारा विशेषित कार्य। अतः ऊपर लिखे कार्यों की पूर्ति के लिए तने को कई रूपों में संपरिवर्तित होना पड़ता है। यह संपरिवर्तित रूप निम्नलिखित शीर्षकों में लिखे जा सकते हैं:

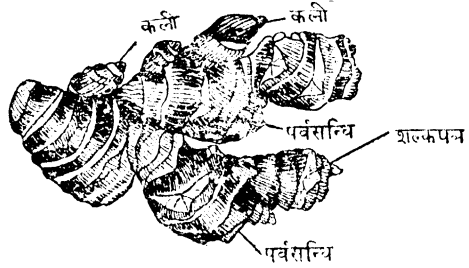
- (१) भूमिगत संपरिवर्तन (underground modifications),
- (२) भूतलीय संपरिवर्तन (sub-aerial modifications), और
- (३) हवाई संपरिवर्तन (aerial modifications) या मेटामॉर्फोजेज (metamorphoses)।

१. तने के भूमिगत संपरिवर्तन (Underground Modifications of Stems).

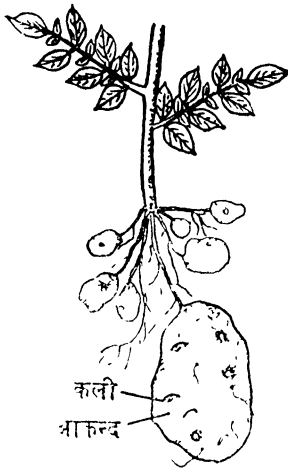
बहुवर्षिता (perennation) अर्थात् वर्षों जीवित रहने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए तने भूमि के भीतर उगते हैं और स्थायी रूप से वही रहते हैं। कुछ समय तक यह सुषुप्तावस्था में रहते हैं और प्रतिवर्ष अनुकूल परिस्थिति पाकर धरती के ऊपर शाखाएँ देने लगते हैं। यह सर्वदा मोटे और गूदेदार होते हैं और इनके अन्दर सचित भोज्य-पदार्थों का एक भारी सग्रह होता है। धरती के भीतर उगने, हरे न होने और मिट्टी में दबे रहने के कारण इनका साधारण रूप जड़ों के समान प्रतीत होता है; परन्तु शीघ्र ही हम निम्नलिखित गुणों की सहायता से इन्हें जड़ों से अलग समझ सकते हैं। (क) इन भूमिगत तनों में पर्व-सन्धिया (nodes) और पर्व (internodes) होती हैं जो जड़ों में नहीं पायी जाती। (ख) इनमें जल्क-पत्र (scale-leaves) होते हैं। (ग) कलिकाएँ (कक्षस्थ और अग्रस्थ) होती हैं। इस प्रकार के संपरिवर्तित तनों का मुख्य कार्य जैसा कि पहले कहा जा चुका है, (क) बहुवर्षिता है, परन्तु यह

(ख) भोजन सामग्री संग्रह करने और (ग) वर्धी प्रजनन के काम भी करते हैं। इस वर्ग के विविध प्रकार (types) निम्नलिखित हैं:

१. प्रकंद (राइजोम, **Rhizome**). राइजोम एक साष्टांग पड़ा हुआ मोटा तना (thickened stem) होता है जो मिट्टी के नीचे क्षैतिज रूप में बढ़ता है। यह स्पष्ट पर्व-सन्धियाँ और लम्बे या छोटे पर्व रखता है और अपनी पर्व-सन्धियों पर शल्क-पत्र (scaly leaves) धारण करता है। इन शल्कीय-पत्रों के कक्ष में कलियाँ भी होती हैं। राइजोम का अग्रस्थकलिका में अन्त हो जाता है और इसके निचले भाग में कुछ पतली अस्थानिक (adventitious) जड़ें निकलती हैं। प्रकंद में शाखाएँ नहीं भी हो सकती हैं या कभी-कभी कक्षस्थ-कलिकाएँ छोटी-छोटी, पुण्ड शाखाओं के रूप में उग जाती हैं। धरती के अन्दर यह सुषुप्तावस्था में रहता है और वर्धी ऋतु के आते ही अग्रस्थकलिका हवाई प्ररोह (aerial shoot) के रूप में वृद्धि कर जाती है। कभी-कभी शाखाएँ स्वयं ही अलग हो जाती हैं और प्रत्येक शाखा एक स्वतंत्र पौधे के रूप में उग आती है। ऋतु के समाप्त होने ही या फूल लगने के बाद प्रतिवर्ष धरती के ऊपर के भाग मर जाते हैं और आगामी वर्ष में उपज फिर पार्श्व-कलिकाओं से होती है और इस प्रकार वर्ष प्रति वर्ष वह बढ़ती ही रहती है। इसकी दिशा प्रायः धरती के समतल ही होती है, परन्तु कभी-कभी यह लम्ब रूप में भी बढ़ने लगती है (जिसे root-stock कहते हैं), जैसे मन-कन्दा (*Alocasia*) में। प्रकंद के उदाहरण अदरक (चित्र ३.१८), हल्दी, मर्चया (कैना, *Canna*), वाटर लिली (water lily), कमल, फर्न्स (ferns) और बहुत-से पराएड्म (aroids) में मिलते हैं।



भूमिगत संपरिवर्तित तना: चित्र ३.१८ अदरक का राइजोम।



भूमिगत संपरिवर्तित तना: चित्र ३.१९ आलू के आकन्द।

२. आकन्द (**Tuber**). यह एक विशेष प्रकार के भूमिगत शाखा का सूजा या फूला हुआ (swollen) सिंग होता है (ट्यूबर का अर्थ सूजन होता है)। भूमिगत शाखा एक निचली पत्ती के कक्ष से निकलती है, आगे की ओर धरती के समतल बढ़ती है और अन्त में किनारे या मिर्रे पर फूल जाती है। इसके धरातल या

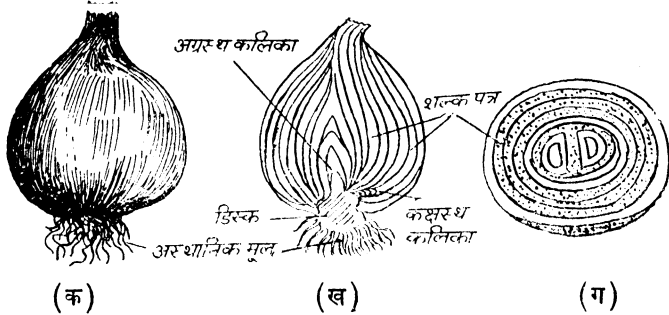
सतह पर बहुत-सी 'आँखें' या कलियाँ निकलती हैं जो एक नये पौधेको जन्म देती हैं। अस्थानिक जड़ें, जो दूसरे भूमिगत तनों में अधिकता से पैदा होती हैं, आकन्द में अक्सर नहीं होती। भोज्य-पदार्थों का भारी सग्रह होने के कारण आकन्द प्रायः काफी फूल जाता है, और कभी-कभी तो ऐसा फूल जाता है कि करीब करीब गोल हो जाता है, जैसे आलू। हाथीचक (Jerusalem artichoke) इसका एक दूसरा उदाहरण है।

आलू के आकन्द का विकास और अकारिकीय प्रकृति. आलू का आकन्द तने की ही एक सरचना (stem structure) है। तने के भूमि के अन्दरवाले भाग की एक कक्षस्थ कलिका पहले पतली शाखा बनकर फैलती है (जो वारतव में 'स्टोलन' होता है)। इस शाखा में पर्व-सन्धियाँ, पर्व, शल्कपत्र और अग्रस्थकलिका होती है। शीघ्र ही इसकी वृद्धि रुक जाती है। किन्तु अब भी हरे हवाई भागों से इस शाखा में भोजन एक-सी रफ्तार में आता रहता है जोकि इस शाखा के सिरे पर इकट्ठा होता जाता है जिसके कारण यह धीरे-धीरे बड़ा हो जाता है और अन्त में करीब-करीब गोल हो जाता है। भूमिगत शाखा का यह बड़ा हुआ सिरा ही आकन्द होता है। शाखा की ही तरह आकन्द में भी कलियाँ होती हैं जिन्हें साधारणतया 'आँखें' कहते हैं। ये आँखें शल्कपत्रों के कक्ष में उत्पन्न होती हैं। शल्कपत्र पर्व-सन्धियों पर विकसित होते हैं। इसमें एक अग्रस्थकलिका भी होती है। इसके अतिरिक्त किसी लम्बे आकन्द में तने और शाखा की भाँति कलियाँ या 'आँखें' एक सर्पिल (spiral) के आकार में आसानी से देखी जा सकती हैं। यह सभी इस बात की ओर संकेत करते हैं कि आलू का आकन्द तने की प्रकृति का है। इसकी आन्तरिक रचना भी तने जैसी होती है।

स्तम्भाकन्द और मूलाकन्द (Stem-tuber and root-tuber). ये दोनों ही भूमि के नीचे होते हैं, और एक से दीखते हैं, किन्तु (क) स्तम्भाकन्द एक शल्कपत्र के कक्ष में तने की एक पर्व-सन्धि से विकसित होता है। यह विकास बहिर्जात (exogenous) होता है। इसमें पर्व और पर्व-सन्धियाँ हाती हैं तथा वर्धों प्रजनन (vegetative propagation) के लिए कलियाँ हाती हैं जो शल्कपत्रों के कक्षों (axis) में उत्पन्न होती हैं। इसके विपरीत एक मूलाकन्द या साकन्द मूल (root-tuber or tuberous root) तने के किसी भी भाग से अस्थानिक रूप से (adventitiously) विकसित होता है, जैसे शकरकन्द में, या एक अधिमूल (tap root) के किसी सपरिवर्तित रूप में विकसित होता है, जैसे गूल-अब्बास (four o'clock plant) में, और इसमें पर्व-सन्धियाँ, पर्व, शल्कपत्र, और कलियाँ नहीं होती। शकरकन्द में फिर भी कुछ कलियाँ, जो बिना शल्कपत्रों के होती हैं, जड़ पर इधर-उधर बिखरी पायी जाती हैं; (ख) स्तम्भाकन्द की रचना और एक तने की आन्तरिक रचना एक ही होती है, जबकि एक मूलाकन्द जड़ की आन्तरिक रचना रखता है। इसलिए हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि स्तम्भाकन्द एक स्तम्भ (तना) की बनावट है जो कि तने का एक भूमिगत सपरिवर्तित रूप है, और मूलाकन्द एक जड़ की बनावट है जो एक अस्थानिक मूल (adventitious) या अधिमूल (tap root) का सपरिवर्तित रूप है।

३. **कन्द (बल्ब, Bulb).** यह काफी छोटा एक भूमिगत तना होता है। यह थोड़े उन्नतोदर या शकु-आकार (conical) नशरी या रकाबी (disc) के आकार का बना होता है, जिसकी ऊपरी सतह से शल्कपत्र (scale leaves) उत्पन्न होते हैं जो गूदेदार या सूखे होते हैं और करीब-करीब एक दूसरे को ढक लेते हैं और

अस्थानिक मूल (adventitious root) इसके आधार से निकलती हैं, जैसे कि प्याज (चित्र ३.२०), लहसुन, लिली (lilies) आदि। इसकी दिशा लम्बरूप (vertical) होती है और बल्ब (कन्द) के सिरे की कली ऊपरी हवाई भागों को जन्म देती है। गूदेदार शल्कों की कक्ष में कुछ कक्षस्थ कलिकाएँ (axillary buds) भी उत्पन्न हो



भूमिगत संपरिवर्तित तना: चित्र ३.२० (क) प्याज का बल्ब; (ख) उसी का अनुलम्ब काट; (ग) उसी का अनुप्रस्थ काट।

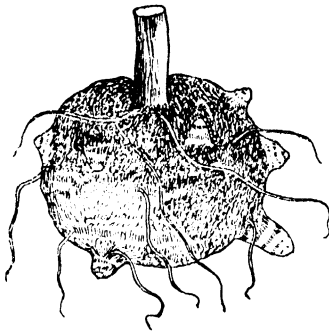
सकती है। यह हवाई प्ररोह (aerial shoots) में भी विकसित हो सकती है या पुत्री कन्द (daughter bulbs) भी बना सकती है। यह पुत्री बल्ब आगामी वर्ष में वृद्धि करती है।

कन्द सच्चोल (tunicated) भी हो सकता है, जैसा प्याज, लहसुन आदि में पाया जाता है और शल्कीय (स्केली, scaly) भी, जैसा कि लिली (lily) में पाया जाता है। पहले रूप में अन्दर के गूदेदार शल्क सकेन्द्रित (concentric) होकर एक दूसरे को ढके रहते हैं और यह स्वयं ऊपर से कुछ सूखे शल्कों द्वारा ढके रहते हैं, परन्तु दूसरे रूप में बाहर के सूखे शल्क नहीं होते और अन्दर के गूदेदार शल्क अपूर्ण रूप से एक दूसरे के केवल किनारों को ही ढके रहते हैं।

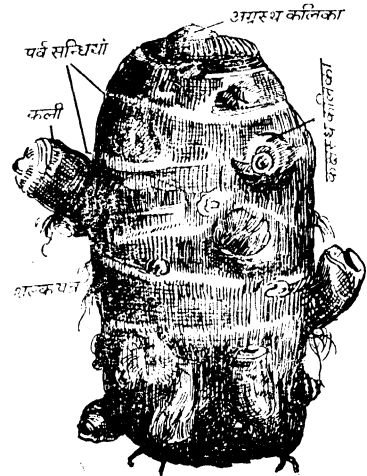
४. कन्दिका (कॉर्म, Corm). यह ठोस और गूदेदार भूमिगत तना है। यह करीब-करीब गोलाकार होता है जिसमें केवल एक ही पर्व (internode) होता है; या अक्सर नीचे से ऊपर तक कुछ चपटा होता है जिसके अन्दर भोज्य-पदार्थों का भारी सग्रह होता है। यह लम्बरूप (vertical) दिशा में उगता है। बाहर की ओर इसमें कुछ भूरे परत होते हैं और अस्थानिक जड़ें (adventitious roots) हमेशा उसके आधार से निकलती हैं। यहाँ-वहाँ कुछ शल्कपत्र कक्षस्थ-कलिकाएँ धारण करती हैं, जो पुत्री कन्दिकाओं (daughter corms) में बढ़ जाती हैं। कॉर्म के उदाहरण जमीकन्द या सूरण (Amorphophallus) में (चित्र ३.२१), बण्डा (चित्र ३.२२), कचालू केसर (सैफ्रन saffron—Crocus) और मीडोसैफ्रन (meadow saffron—Colchicum) आदि में मिलते हैं। दोनों प्रकार की केसरो की खेती काश्मीर में होती है।

[कॉर्म पूर्ण रूप उसी समय धारण करती है जब उसमें फूल लगना समाप्त हो चुकता है। प्रति वर्ष एक कॉर्म (कन्दिका) तैयार होती है और इसमें केवल एक

पर्व होती है। लगातार दो या तीन वर्षों में दो या तीन कॉर्म एक के ऊपर दूसरा तैयार होता है। पुराने कॉर्म में बहुत-सी झुर्रिया पड़ जाती है। बसन्त ऋतु में एक शिखर की कली (terminal bud) उत्पन्न होती है जो हवाई प्ररोह



चित्र ३.२१



चित्र ३.२२

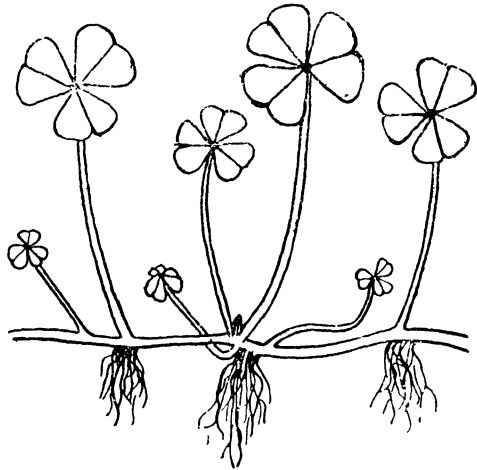
भूमिगत संपरिवर्तित तने: चित्र ३.२१ जमीकन्द या सूरण (*Amorphophallus*) का कॉर्म। चित्र ३.२२ बण्डा का कॉर्म।

(aerial-shoot) में विकसित होती है। शल्कों के कक्ष में पार्श्व-कलियाँ भी उत्पन्न हो सकती हैं, और प्रत्येक धीरे-धीरे कॉर्म में बढ़ जाती है। यह पुत्री कॉर्म तत्पश्चात् अलग होकर नये पौधों को जन्म देती है।]

२. तनों के भूतलीय संपरिवर्तन (Sub-aerial Modifications of Stems).

वर्धी-प्रजनन या वनस्पति विस्तार (vegetative propagation) के उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुछ पेड़ों में मुख्य खंडे तने की कुछ निचनी सुगुप्त कलियाँ, पतली पार्श्व-शाखाओं के रूप में वृद्धि करती हैं जिनके, उत्पत्ति, प्रकृति और वर्धी-प्रजनन की विधि पर आधारित, विभिन्न नाम हैं। उनमें से कुछ भूतलीय या सब-एरियल (sub-aerial) होती हैं और मिट्टी की सतह पर फैलती हैं और अन्य कुछ कुछ भूमि के भीतर या सबटरेनियन (subterranean) होती हैं। इनके विभिन्न रूप भ्रूस्तारी (रनर, runner); विरोहक (स्टोलन, stolon); भ्रूस्तारिका (ऑफसेट, offset) और भ्रूस्तारी (सकर, sucker) हैं। कभी-कभी इन संपरिवर्तित शाखाओं द्वारा वर्धी-प्रजनन इतनी तीव्र गति से होता है कि थोड़े ही समय में धरती का काफी भाग इनकी सन्तान द्वारा ढक जाता है।

१. भूप्रसारी (रनर, **Runner***). यह एक पतली और धराशायी (प्रॉस्ट्रेट, prostrate) शाखा होती है जिसमें लम्बे-लम्बे पर्व (internodes) होते हैं। यह धरती पर रगती है और पर्वसन्धियों (nodes) के स्थान पर से जड़े देती है (चित्र ३.२३)। यह एक कक्षस्थ-कलिका के रूप में उत्पन्न होती है और मातृ-पौधे से रंग कर कुछ दूर चली जाती है। भूप्रसारी जड़े फँकते हैं और एक नये पौधे के रूप में जम जाते हैं। ऐसे अनेको भूप्रसारी मातृ पौधों से उत्पन्न होते हैं और तब यह धरती पर चारों ओर फैल जाते हैं। ये प्रजनन के लिए होते हैं। इसके उदाहरण,



चित्र ३.२३ एक भूप्रसारी।

अमरूल साक (wood-sorrel), सुशनी साक (मार्मीलिया, *Marsilea*), थुलकुरी (Indian pennywort), स्ट्रॉबेरी (strawberry) आदि में पाये जाते हैं।

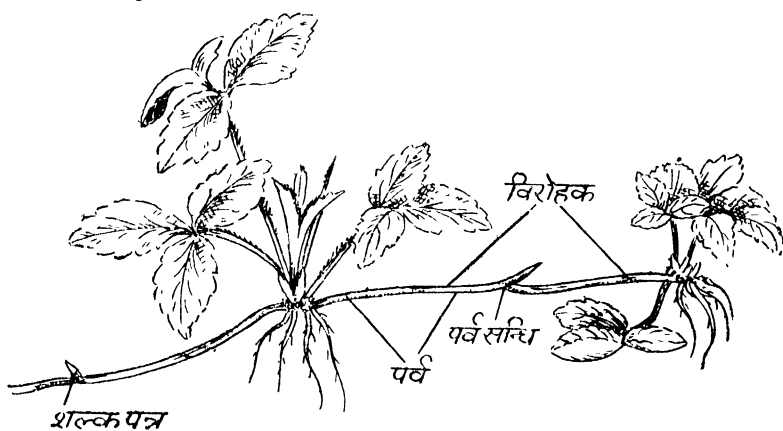
२. विरोहक (स्टोलन, **Stolon†**). यह एक ऐसा प्ररोह है जो मिट्टी में गड़े तने के आधार भाग से पैदा होता है और लम्बी या छोटी, पतली भूमिगत शाखा में वृद्धि कर जाता है। यह शाखा भूमि के अन्दर क्षैतिज रूप में बढ़ती है। यह विभिन्न दिशाओं में वृद्धि करती है और कुछ दूरी पर उनका सिरा (अग्रस्थ-कलिका, terminal bud) धरती के बाहर निकल आता है और एक नये पौधे के रूप में बढ़ जाता है। ऐसी भूमिगत शाखा को विरोहक (stolon) कहते हैं (चित्र ३.२४)। केवल इस भेद को छोड़ कर कि विरोहक भूमि के भीतर होते हैं और भूप्रसारी भूमि से ऊपर होता है, अन्य हर प्रकार में यह भूप्रसारी (runner) के समान होता है। विरोहक (stolon) के उदाहरण, कचालू (taro), अरारोट (arrowroot),

* धरती पर रंगनेवाली शाखा को रनर कहते हैं। रनर की पर्व-सन्धियों से अस्थानिक जड़े निकलती हैं और कक्षस्थ-कलिका प्ररोह में विकसित हो जाती है। इस प्रकार से पर्वसन्धि पर एक नया पौधा बन जाता है।

† स्टोलन से रनर का बहुत पास का सम्बन्ध है। स्टोलन प्राकृतिक रूप से उगने वाली शाखा है जिसकी प्रकृति रनर की तरह धरती पर रंगने की नहीं होती है किन्तु अपनी अधिक लम्बाई के कारण झुक जाती है और जमीन को छूती है। जिस स्थान पर पर्वसन्धि जमीन को छूती है वहाँ से अस्थानिक जड़े निकलती हैं और कक्षस्थ-कलिका प्ररोह बनाती है। रनर और स्टोलन में यही थोड़ा-सा अन्तर है।

बहुत-से लेखकों ने रनर और स्टोलन में अन्तर नहीं माना है। —सम्पादक

झूमका (passion flower), कुछ बेला-चमेली (jasmynes), श्वेतरंगन (*Ixora*); और चन्दन गुलाब (sandal rose) आदि में मिलते हैं।



[After Holman & Robbins]

चित्र ३.२४ एक विरोहक (स्टोलन)।

३. भूस्तारिका (ऑफसेट, **Offset**). यह छोटी और कुछ मोटी धरती पर पड़ी हुई शाखा होती है। भूस्तारी के समान यह भी पत्ती के कक्ष से उत्पन्न होती है।



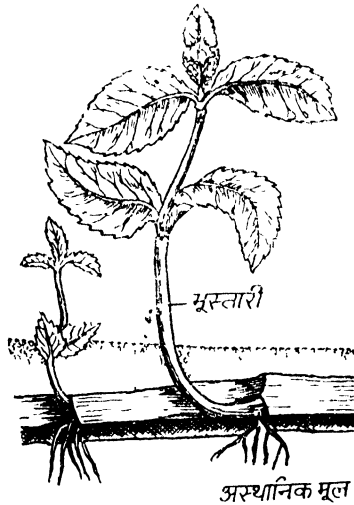
[After Maud Jenson]

चित्र ३.२५ भूस्तारिका (ऑफसेट)।

इसके सिरे पर ऊपर की ओर पत्तियों का एक झुण्ड पैदा हो जाता है और नीचे की ओर छोटी-छोटी जड़ों का गुच्छा निकलता है (चित्र ३.२५)। अक्सर भूस्तारिका मातृ-पौधे से अलग हो जाती है और तब पुत्री-पौधा अपना जीवन अलग रूप से आरम्भ करता है, जैसे पानी (वाटर कैबेज, water cabbage) और जल-कुम्भी (वाटर हायसिन्थ, water hyacinth) में। ऑफसेट भूप्रसारी से छोटा और अधिक पुष्ट होता है और ये पौधे केवल रोजेट (rosette) के प्रकार के होते हैं।

४. भूस्तारी (सकर, **Sucker**). विरोहक (stolon) के समान भूस्तारी भी पार्श्व शाखा है जो तने के भूमि के भीतरी भाग से उगता है। परन्तु यह ऊपर की ओर तिरछा उगता है और सीधे पत्तीदार तने या एक नये पौधे को जन्म देता है। कभी-कभी थोड़ी दूर तक यह धरती के समानान्तर बढ़ता है; परन्तु शीघ्र ही यह

मुड़कर ऊपर को उठ जाता है। भूस्तारी हमेशा विरोहक से काफी छोटा होता है। भूस्तारी या तो मातृ-पौधे से अलग होने के पहले ही अपने आधार पर जड़े दे देता है या फिर उससे अलग होते ही जड़े देता है। यह पौधे के वर्धी-प्रजनन (vegetative



चित्र ३.२६ एक भूस्तारी।

propagation or reproduction) के लिए होता है (चित्र ३.२६)। भूस्तारी (सकर) के उदाहरण गुलदाऊदी या चन्द्र-मालिका (*Chrysanthemum*), गुलान, पोदीना (mint), पेपरमिण्ट, डैगर प्लाण्ट या यक्का (dagger plant या *Yucca*), आदि में मिलते हैं।

३. हवाई संपरिवर्तन—रूपान्तरण (Aerial Modifications : Metamorphoses).

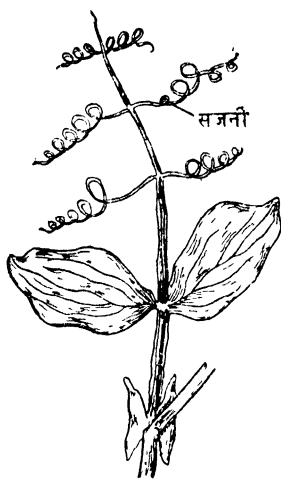
कुछ पेड़ों में पर्णकलिकाएं (leaf-buds) या पुष्पकलिकाएं (flower buds), जिन्हें साधारण रूपसे शाखाओं और फूलों के रूपमें बढ़ना चाहिए, कभी-कभी कुछ विशेष कार्य सम्पन्न करने के लिए काफी हद तक रूपान्तरित (modified or metamorphosed) हो जाती हैं। यह रूपान्तरित अंग, चढ़ने के लिए स्तम्भ-संजनी (stem-tendrils), रक्षा के लिए कांटे, भोजन उत्पत्ति के लिए पर्ण-कार्य-स्तम्भ (फिलोक्लेड, phylloclade) और वर्धी-प्रजनन के लिए पत्रकन्द (bulbils) होते हैं।

१. स्तम्भ-संजनी (Stem-tendrils). यह एक पतली, तार के समान, पत्तीरहित सर्पिलाकार ऐंठी हुई (spirally curled) शाखा होती है, जिसकी सहायता से दुर्बल तनेवाले पौधे पड़ोसी वस्तुओं से लिपट जाते हैं और उनके ऊपर

चढ़ जाते हैं। स्टेम-टेण्ड्रिल, अंगूर (*Vitis*)*, झुमका (passion-flower, *Passiflora*) में (चित्र ३.२७), मटर (चित्र ३.२८) और सैंडविच आइलैण्ड क्लाइम्बर (sandwich island climber, *Antigonon*) आदि में पाये जाते हैं। संजनी सर्वदा एक आरोही अंग होती है और इस प्रकार केवल बेलो (climbers) में ही पायी जाती है। कभी-कभी इसमें छोटे-छोटे शल्कपत्र भी होते हैं और बहुधा यह शाखा-युक्त होती है।



चित्र ३.२७



चित्र ३.२८

स्तम्भ संजनी चित्र ३.२७ पैशन फ्लावर (*Passiflora*) की संजनी।
चित्र ३.२८ स्वीट पी की संजनियाँ।

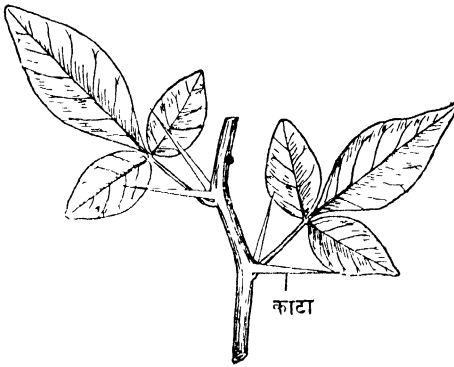
टेण्ड्रिल पत्तियों के कक्ष (axil) या शाखाओं के सिरे से निकलती है। इससे यह बात सिद्ध होती है कि स्टेम-टेण्ड्रिल तने (शाखा) का रूपान्तर है। इस प्रकार झुमका (passion-flower) में कक्षस्थ-कलिका टेण्ड्रिल में बदल जाती है। कभी-कभी, जैसे कि सैंडविच आइलैण्ड क्लाइम्बर (*Antigonon*) और कपाल-फुटकी (balloon vine, *Cardiospermum*), आदि में पुष्पकलिकाएँ टेण्ड्रिल में बदल जाती हैं। कुछ टेण्ड्रिलों को बाहरी वनावट स्पष्ट करना कठिन है, जैसे कि लौकी, खीरा, कद्दू, आदि में टेण्ड्रिल बहिर्कक्षस्थीय (extra axillary) या अभिमुख पर्ण (leaf opposed) होती है और यह बात अभी विवादास्पद (controversial) है कि यह शाखाओं (कक्षस्थ कलिकाओं, axillary buds) के रूपान्तरण है या (अभिमुख opposite) पत्तियों के।

२. काँटे (Thorns). काटा एक कठोर, अक्सर सीधा और नकीले आकार का होता है। इसे शाखा का रूपान्तर मानते हैं; क्योंकि यह पत्ती के कक्ष

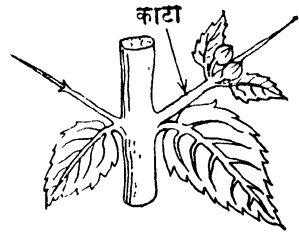
* *Vitis* प्रजाति (genus) की साधारण जातियाँ जो संजनीदार (with tendrils) होती हैं, निम्नलिखित हैं:

अमल-लता (*V. trifolia*), हरजोरा (*V. quadrangularis*), ग्वाल लता (*V. pedata*), अंगूर (vine, *V. vinifera*) आदि।

से निकलना है जो एक कक्षस्थ-कलिका का सामान्य स्थान (normal position) होता है। इसके अलावा कभी-कभी यह पत्तियों, फूलों और फलों को धारण करता देखा जाता है, जैसा कि दुरन्त काटा (*Duranta*) में, और कभी-कभी इसमें शाखाएं भी होती हैं, जैसा कि पनियाला (*Flacourtia*) में पाया जाता है। यह छाल से भी अधिक गहरी परतों से उत्पन्न होता है और इस प्रकार तने या शाखा में से आसानी से अलग नहीं किया जा सकता।



चित्र ३.२९



चित्र ३.३०

कांटे: चित्र ३.२९ बेल के काटे। चित्र ३.३० दुरन्ता (*Duranta*) के कांटे।

काटा एक रक्षक अंग होता है और काटे-युक्त पेड़ चरनेवाले जानवरों के आक्रमण से अपनी रक्षा कर सकते हैं। यह बेल (wood-apple, *Aegle*) में (चित्र ३.२९), नीबू, अनार, दुरन्ता (*Duranta*) में (चित्र ३.३०) और बेर (*Prunus*), पनियाला (*Flacourtia*), मोड़ना (*Vangueria*) आदि में पाये जाते हैं। कभी-कभी काटे भी आरोही अंगों जैसा कार्य करते हैं, जैसे कि बगन-बिलास (*glory of the garden*) में।

कांटों (thorns) और शिताग्र (prickles) में अन्तर. कांटे और शिताग्र दोनों ही नुकीले होने के कारण मुख्य तौर पर प्रतिरक्षक अंग (defensive organs) होते हैं; कभी-कभी वे आरोही अंगों (climbing organs) का भी कार्य करते हैं। उनकी आकारिकीय विभिन्नताएं (morphological differences) निम्न हैं:

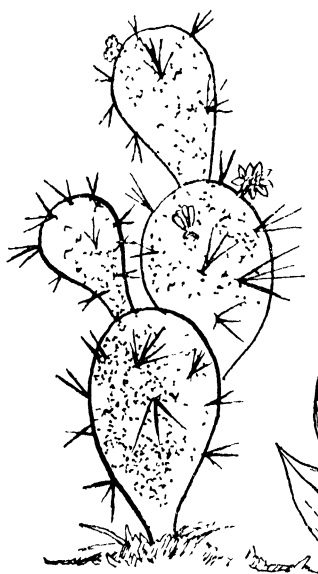
काटा एक कक्षस्थ-कलिका का संपरिवर्तित रूप है और बहुधा पत्तियाँ, फूल और फल धारण करता है और अक्सर शाखाओं में विभक्त होता है; जबकि एक शिताग्र केवल उठाव (outgrowth) होता है, कभी पत्तियाँ, फूल और फल नहीं उत्पन्न करता और यह शाखायुक्त नहीं होता।

काटा कक्ष (axil) में स्थित होता है; जबकि शिताग्र अनियमित रूप से वितरित होता है और यह तने के किसी भाग, शाखा या यहाँ तक कि पत्ती में भी उत्पन्न हो सकता है।

इसके अतिरिक्त काटा बहुत भीतर तक घुसा (deep-seated) होता है; जबकि एक शिनाग्र (प्रिकिल) की उत्पत्ति ऊपरी या सतही (superficial) होती है।

काटा (थॉर्न), वेल (wood-apple) (चित्र ३.२९) में पाया जाता है और शिनाग्र (प्रिकिल) गुलाब में (चित्र ३.८)।

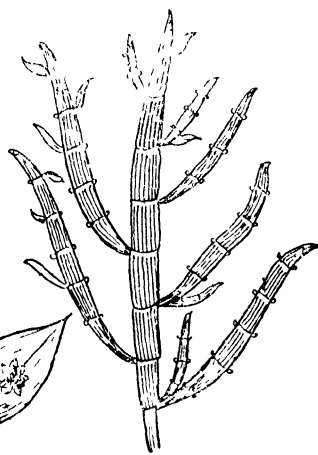
३. पर्ण-कार्य स्तम्भ या पर्णक पर्व (फिलोक्लेड या क्लैडोड, **phylloclade or cladode**)। यह हरा चपटा या गोल तना होता है। हरे होने के कारण यह पत्तियों के कार्य भी सम्पन्न करता है जो या तो बहुत क्षीण रूप (feebly developed) में होती है या रूपान्तरित होकर छोटे-छोटे काटों में बदल जाती है। इसके उदाहरण बहुत-से कैक्टस (एक वचन-कैक्टस), जैसे नागफनी या प्रिवली पियर (prickly pear, *Opuntia*) में (चित्र ३.३१) और नाइट-ब्लूमिंग कैक्टस (night-blooming



चित्र ३.३१



चित्र ३.३२



चित्र ३.३३

फिलोक्लेड: चित्र ३.३१ नागफनी (*Opuntia*) क्लैडोड; चित्र ३.३२ रसकस (*Ruscus*)। फिलोक्लेड; चित्र ३.३३ म्यूलेनबेकिया (*Muehlenbeckia*)।

cactus, *Cereus*), एपिफिलम (*Epiphyllum*) आदि में मिलते हैं। अन्य उदाहरण [म्यूलेनबेकिया—सम्पादक], झाऊ या वीफ वुड ट्री (*Casuarina*), सतमूली, खुदी पाना या डकवीड (*Lemna*) आदि भी हैं। केवल एक इण्टरनोडवाले पर्ण-कार्य स्तम्भ को पर्णक पर्व (क्लैडोड) भी कहते हैं, जैसे सतमूली (*Asparagus*)। कैक्टस और अन्य रेगिस्तानी पौधों का पर्ण-कार्य-स्तम्भ रेगिस्तानी परिस्थितियों के अनुकूल होता है। इसमें उत्सवेदीय तल (transpiratory surface) जल की अनिश्चित उपलब्धि के कारण घट कर कम से कम हो जाता है।

४. पत्रकन्द (बुलबिल, **Bulbil**). बुलबिल एक विशेष बहु-कोशीय आकृति या कली होती है जो विशेष रूप से पौधे के प्रजनन के लिए होती है। कभी-कभी, जैसा कि बन-आलू (डायोस्कोरिया, *Dioscorea*) में दिखाई देता है। यह एक कक्ष में स्थित गोल वस्तु होती है जो कक्षस्थ-कलिका का रूपान्तर होती है। ग्लोबा (*Globba*) में पुष्पक्रम (इन्फ्लोरेसेन्स, *inflorescence*) के कुछ निचले फूल ऐसे प्रजनन समुदाय या पत्रकन्दों (बुलबिल्स) में रूपान्तरित हो जाते हैं। विलायती कैन में इप्लोरेसेन्स के बहुत-से फूलों के स्थान पर बुलबिल ही उत्पन्न होते हैं। अमरूल साक में ऐसे प्रजनन-समुदाय में से काफी कलियाँ या बुलबिल साकन्द मूल (*tuberous root*) के शिखर पर लगती हैं।

तनों के रूपान्तर

भूमिगत	भूतलीय	हवाई
—प्रकन्द—जैसे, अदरक	—भूप्रसारी—जैसे, अमरूल साक	—संजनी—जैसे, झुमका और अगर
—आकन्द—जैसे, आलू	—विरोहक—जैसे, कचालू	—कांटा—जैसे, कचालू
—कन्द—शल्कीय—जैसे, लिलीज	—भूस्तारिका—जैसे, जलकुम्भी	—पर्ण, कार्य-स्तम्भ—जैसे, नागफनी
—संचोल—जैसे, प्याज	—भूस्तारिका—जैसे, गुलदाऊदी	—पर्णक पर्व—जैसे, सतमूली
—कन्दिका—जैसे, जमीकन्द		—पत्रकन्द—जैसे, ग्लोबा और डायोस्कोरिया

शाखा-विन्यास (Branching)

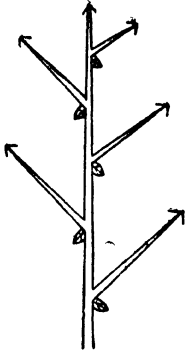
तने पर शाखाओं के लगे रहने के क्रम को शाखा-विन्यास (*branching*) कहते हैं। शाखा-विन्यास दो प्रकार का होता है, पार्श्व (*lateral*) और युग्मभुज (डाइकॉटोमस, *dichotomous*)।

(क) पार्श्व शाखा-विन्यास (*Lateral Branching*).

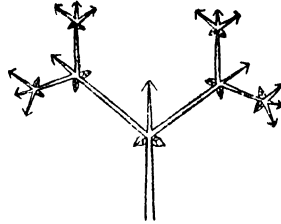
जब शाखाएँ पार्श्व रूप में निकलती हैं अर्थात् मुख्य तने के अगल-बगल से तो ऐसे शाखा-विन्यास को पार्श्व (*lateral*) कहते हैं। पार्श्व शाखा-विन्यास एक-वर्ध्वक्षीय (*racemose*) या अनिश्चित या एकाक्षीय (*monopodial*; *monos*—एक, *podos*—पैर या अक्ष) हो सकती है और बहुवर्ध्वक्षीय (*cymose*) या निश्चित भी।

(१) एकवर्ध्वक्षीय प्रकार (रेसीमोज टाइप, **Racemose type**). इस रूप में मुख्य तने की बहुत अनिश्चित होती है, यानी वह अग्रस्थ-कलिका द्वारा अनिश्चित

रूप से बढ़ता ही जाता है और पार्श्व-शाखाएं अग्रभिर्वर्धी क्रम (acropetal succession) में देता है, अर्थात् निचली शाखाएं ऊपरी शाखाओं से बड़ी और लम्बी होती है। इस प्रकार के शाखा-विन्यास को **एकाक्षीय** (मोनोपोडियल,



चित्र ३.३४



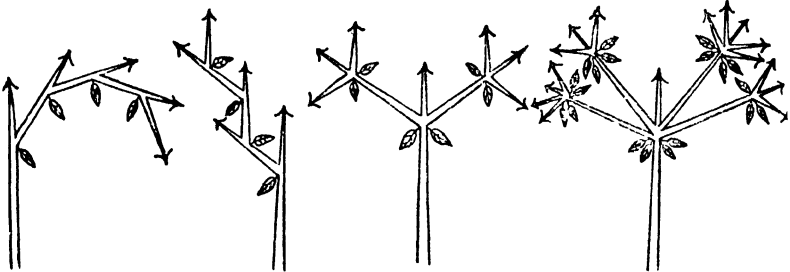
चित्र ३.३५

पार्श्व शाखा-विन्यास. चित्र ३.३४ एकवर्धक्षीय (रेसीमोज) प्रकार।

चित्र ३.३५ बहुवर्धक्षीय (साइमोज) प्रकार।

monopodial) भी कहते हैं; क्योंकि इसमें केवल एक लम्बा मुख्य अक्ष होता है, जैसे झाऊ या बीफ-वुड-ट्री (beef-wood-tree, *Casuarina*), देवदारु या मास्ट ट्री (*Polyalthia*) आदि में।

(२) **बहुवर्धक्षीय प्रकार** (साइमोज टाइप, **Cymose type**). इस रूप में मुख्य तने की वृद्धि निश्चित होती है, अर्थात् अग्रस्थ-कलिका (terminal bud)



चित्र ३.३६

चित्र ३.३७

चित्र ३.३८

चित्र ३.३९

साइमोज शाखा-विन्यास: चित्र ३.३६ कुण्डलाकार बहुवर्धक्ष। चित्र ३.३७ बाच्छिक बहुवर्धक्ष। चित्र ३.३८ सत्य बहुवर्धक्ष (true cyme)। चित्र ३.३९ बहुशाखीय बहुवर्धक्ष (multiparous cyme)।

बढ़ना जारी नहीं रखती लेकिन तनेके निचले भाग में पार्श्व-शाखाएं निकलती हैं, जो शिखरवाली शाखाकी अपेक्षा अधिक तीव्र गति से बढ़ती है। कभी-कभी ऐसा होता है कि अग्रस्थ-कलिका शीघ्र ही मर जाती है या उसकी वृद्धि रुक जाती है और तब तीव्र गति से दो पार्श्व-शाखाएं निकलती हैं जो अग्रस्थ-कलिका के विभाजन द्वारा उत्पादित-सी प्रतीत होती हैं और तब यह युग्म-भुजिता (युग्म=दो, **dichotomy**, *dicha*—दो में, *temnein*—काटना या विभाजन करना) जैसी मालूम पड़ती हैं। इस शाखा-प्रणाली को कृत्रिम युग्म-भुजिता (**false dichotomy**) कहते हैं। यह गुल-अंबास (four o'clock plant, *Mirabilis*), मिसिल्टो (mistletoe) करौदा (*Carissa*) और कट-चम्पा (*Plumeria*), आदि में पायी जाती है। बहुवर्ध्यक्षीय शाखा-विन्यास निम्नलिखित प्रकार का हो सकता है :

१. एकशाखी शाखा-विन्यास (**Uniparous branching**). बहुवर्ध्यक्षीय (cymose) रूप में यदि एक समय पर केवल एक पार्श्व-शाखा निकलती है, तो इस प्रकार के शाखा-विन्यास को एकशाखी (uniparous; *unus*—एक, *parere*—उत्पन्न करना) कहते हैं। इसके दो स्पष्ट रूप होते हैं :

(क) कुण्डलाकार (हेलीकॉइड, **helicoid**) या एक तरफवाला बहुवर्ध्यक्ष (one-sided cyme) (चित्र ३.३६) कहते हैं, जब एक के बाद दूसरी पार्श्व शाखाएं केवल एक ही तरफ विकसित होती हैं, जिससे एक प्रकार का 'हेनिक्स (helix)' बन जाता है, और

(ख) बार्न्चिड (स्कॉपिऑइड, **scorpioid**) या एकान्तर-क्रमवाला बहुवर्ध्यक्ष (alternate-sided cyme) (चित्र ३.३७) कहते हैं, जबकि एक के बाद दूसरी शाखाएं दोनों तरफ बारी-बारी से विकसित होती हैं, जिससे एक टेढ़-मेढ़ा या पेंचदार आकार बनाती है, जैसे कि अंगूर (*Vitis vinifera*), हरजोरा (*Vitis quadrangularis*), अमल-लता (*Vitis trifolia*), आदि में। उनमें प्रत्यक्ष (apparent) या असत्य अक्ष (संयुक्ताक्ष, **sympodium**) बहुत-से पार्श्व अक्षों (lateral axes) को मिलाकर बनता है, और सज्जनियाँ पत्तियों की अग्रस्थ-कलिकाओं की रूपान्तर होती हैं।

एकशाखी शाखा-विन्यास (uniparous branching) को संयुक्ताक्षीय (**sympodial**; *syn*—साथ या संयुक्त, *podos*—पैर) कहते हैं; क्योंकि पौधे के विकास के दरमियान में बहुत-से पुत्री-अक्ष या असत्य-अक्ष (daughter axes or false axes) एक दूसरे में संयुक्त होते हैं।

२. द्विशाखी शाखा-विन्यास (**Biparous branching**). बहुवर्ध्यक्षीय (साइमोज) में यदि एक समय पर दो पार्श्व-अक्ष (lateral axes) विकसित होते हैं तो इसको द्विशाखी कहते हैं।

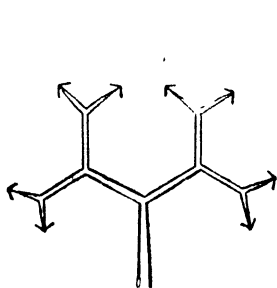
३. बहुशाखी शाखा-विन्यास (**Multiparous branching**). एक समय पर यदि दो से अधिक शाखाएं विकसित होती हैं तो इस प्रकार के शाखा-विन्यास को बहुशाखी कहते हैं।

(ख) युग्मभजी शाखा-विन्यास (**Dichotomous Branching**).

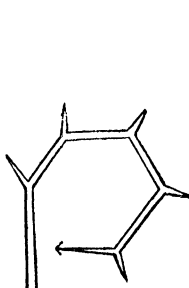
जब अग्रस्थ-कलिका दो भागों में विभाजित (bifurcate) होकर दो शाखाएं छुरी-कांटे वाली 'फॉक' (fork) के रूप में देती है तब इस प्रकार के शाखा-विन्यास को

युग्मभुजी (dichotomous) कहते हैं। डाइकॉटोमस शाखा-विन्यास फूलरहित (flowerless) पेड़ों में बहुधा पाया जाता है। यह निम्नलिखित प्रकार का हो सकता है:

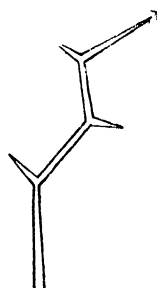
१. **सत्य युग्मभुजिता (True dichotomy)**. जब अग्रस्थ-कलिका दो भागों में विभाजित हो जाती है और दो समान स्वस्थ शाखाएँ बनाती है, जो स्वयं भी इसी प्रकार विभाजित हो सकती है, तो इस प्रकार के शाखा-विन्यास को **सत्य युग्मभुजिता (true dichotomy)** कहते हैं। डाइकॉटोमस शाखा-विन्यास प्रायः अपुष्पोद्भव (क्रिप्टोगैम्स, cryptogams) में पाया जाता है। फूलदार पेड़ों में इसके उदाहरण एक प्रकार के ताड़ 'हाइफैनी' (Hyphane), केवड़ा (screw pine, Pandanus), कसकोरा (Conscora, एक प्रकार की पतवार), आदि में मिल सकते हैं।



चित्र ३.४०



चित्र ३.४१

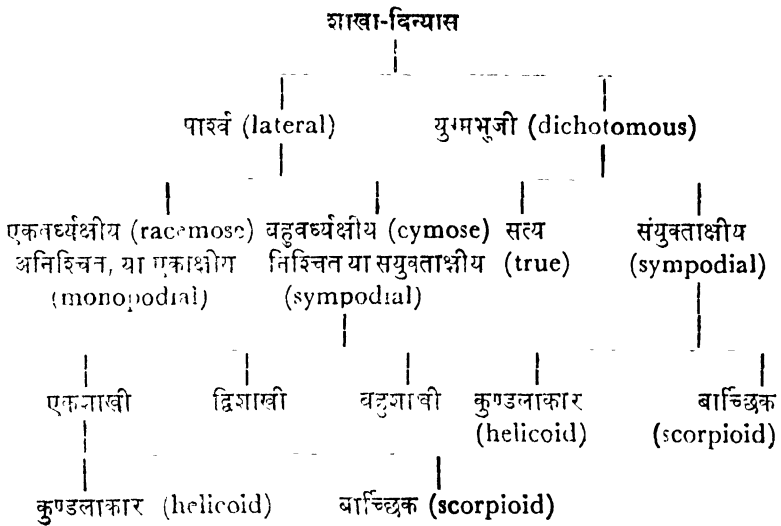


चित्र ३.४२

शाखा-विन्यास के प्रकार (क्रमशः)। चित्र ३.४० सत्य युग्मभुजिता (true dichotomy)। चित्र ३.४१ कुण्डलाकार युग्मभुजिता (helicoid dichotomy)।

चित्र ३.४२ बाच्छिक युग्मभुजिता (scorpioid dichotomy)।

२. **संयुक्ताक्षीय युग्मभुजिता (सिम्पोडियल डाइकॉटोमी, Sympodial dichotomy)**. जब डाइकॉटोमस शाखाएँ क्रम से एक ही ओर या एक के बाद दूसरी में मुड़ी होती है तो शाखा-प्रणाली को **संयुक्ताक्षीय युग्मभुजिता (sympodial dichotomy)** कहते हैं। संयुक्ताक्षीय बहुवर्धक (सिम्पोडियल साइम) के समान इसके भी दो रूप होते हैं—(क) **कुण्डलाकार युग्मभुजिता (helicoid dichotomy)**, और (ख) **बाच्छिक युग्मभुजिता (scorpioid dichotomy)**। पहले रूप में 'फॉर्क' के समान विभाजित शाखा की एक भुजा हमेशा एक ही तरफ दबी रहती है परन्तु दूसरे रूप में विभाजित शाखाएँ बारी-बारी से दोनों तरफ दबती हैं।



तने के कार्य (Functions of the Stem).

(१) **संवाहन (Conduction)**. यह पानी और धुले हुए खनिज पदार्थों को जड़ से पत्ती तक पहुंचाता है और तैयार भोजन पत्तियों से लेकर पौधों के अन्य भागों को पहुंचाता है, विशेष रूप से संग्रह-अंग (storage organs) और वर्धी-प्रदेशों (growing regions) को।

(२) **संधारण (Support)**. मुख्य तना एक प्रकार के खम्भे का काम करता है और शाखाओं को, जो विभिन्न दिशाओं में उगती हैं, सीधा रखता है।

(३) **पत्तियाँ इत्यादि धारण करना (Bearing leaves etc.)**. तना और शाखाएँ पत्तियों से युक्त होते हैं और पत्तियों को सब ओर इस प्रकार वितरित करते हैं ताकि उन्हें भोज्य-पदार्थ बनाने के लिए अधिक से अधिक सूर्य का प्रकाश मिल सके। पौधे की प्रजनन-क्रिया के लिए ये फूल भी धारण करते हैं।

(४) **संग्रह (Storage)**. तना भोजन-सामग्री के संग्रहालय का भी कार्य करता है। ऐसा विशेष रूप से भूमिगत सपरिवर्तित तनों में (चित्र ३.१९) होता है जो विशेष रूप से भोजन संग्रह के लिए उत्पन्न होते हैं, जैसे अदरक, आलू, प्याज और जमीकन्द या सूरण (*Amorphophallus*) आदि में।

(५) **भोजननिर्माण (Food manufacture)**. छोटा तना जब हरा होता है तो सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में अपने अन्दर भरे हुए हरिमकणक (क्लोरोप्लास्ट) की सहायता से भोजन निर्माण करता है।

ऊपर लिखे हुए कार्यों के अतिरिक्त रूपान्तरित तने कुछ विशेष कार्य भी करते हैं, जैसे टेण्ड्रल पेड को चढ़ने में, और काटे चरनेवाले जानवरों के आक्रमण से रक्षा करने में सहायता करते हैं।

पत्ती या पर्ण (The Leaf)

पत्ती को तने या शाखा का चपटा, पार्श्व उद्बर्ध (lateral outgrowth) माना जा सकता है। यह एक पर्व-सन्धि (node) से विकसित होती है और इसके कक्ष में एक कली होती है। साधारणतया यह हरे रंग की होती है और इसे पौधे का सबसे महत्वपूर्ण वर्धो-अंग (vegetative organ) माना जाता है, क्योंकि भोज्य-पदार्थ इसी में बनता है। पत्तियों का विकास हमेशा अग्रभिर्वर्धी क्रम (acropetal succession) के अनुसार होता है और इसकी उत्पत्ति बहिर्जन (exogenous) होती है।

पत्ती के भाग (चित्र ४.१).

एक साधारण पत्ती में निम्नलिखित भाग होते हैं :



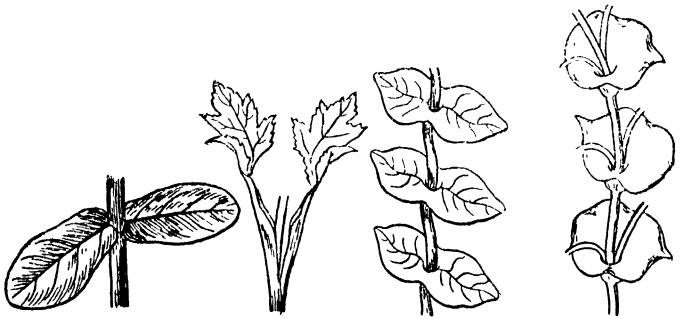
चित्र ४.१ पत्ती के भाग।

(१) पर्णाधार (Leaf-base). यह वह भाग है जिसके द्वारा पत्ती तने से जुड़ी रहती है। कई पौधों में आधार फैलकर एक खोल या छाद (sheath) बन जाता है जो तने से अधूरी या पूरी तरह चिपटा रहता है। छाद वाले आधार एक-बीजपत्रियों में बहुधा पाये जाते हैं, और केला तथा घासों में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। दूसरी ओर द्विबीजपत्रियों में आधार पर आम तौर से दो अतिवृद्धियाँ (उद्बर्ध) उपजी रहती हैं जिनको अनुपत्र (स्टिप्यल, stipule) कहते हैं। कुछ पत्तियों का आधार सूजा या फला हुआ होता है, जैसे चना, मटर, इमली छुईमुई, रेन ट्री

(rain tree), गुलमोहर, अपराजिता (Clitoria), आदि में, ऐसी दशा में इसको पीनाधार (पल्वाइनस, pulvinus) कहते हैं।

(२) **पर्णवृन्त (पेटिओल, Petiole)**. यह पत्ती का डण्ठल होता है। जब यह अनुपस्थित होता है तो ऐसी पत्ती को अवृन्त (सेसाइल, **sessile**) कहते हैं और जब मौजूद होता है तो पत्ती को डण्ठल-सहित या **सवृन्त (पेटिओलेट, petiolate)** कहते हैं। सेसाइल पत्ती के पर्णफलक (leaf blade) का आधार दो पालियों (lobes) में बँटा हो सकता है जो अधूरी या पूरी तौर से तने को ढके रहती हैं।

जब ये पालियाँ अधूरी तौर से तने को घेरे रहती हैं तो ऐसी पत्ती, **कर्णकार (auriculate)** कान जैसी शक्ल की कहलाती है (चित्र ४.२)। इसके उदाहरण आक या मदार (*Calotropis*), सोकसा (*Sonchus*) आदि हैं। जब पूरी तौर से घेरे होती है तब पत्ती **स्तम्भाइलेयी (ऐम्प्लेक्सिकॉल, amplexicaul; amplexus—छाती से लगाना, caulis—तना कहलाती है)** (चित्र ४.३), जैसे एमीलिया (*Emilia*) की कुछ स्तम्भी-पत्तियाँ (cauline leaves)। जब यह पालिया तने को घेरे भी होती हैं और आगस में जुड़ी भी होती हैं तब ऐसा जान पड़ता है कि तना पर्णफलक को छेद



चित्र ४.२

चित्र ४.३

चित्र ४.४

चित्र ४.५

अवृन्त (**sessile**) पत्तियाँ। चित्र ४.२ कर्णकार (**auriculate**) पत्तियाँ।
चित्र ४.३ परिस्तम्भ (**amplexicaul**) पत्ती। चित्र ४.४ जनियुक्त (**connate**)
पत्तियाँ। चित्र ४.५ परिपर्ण (**perfoliate**) पत्तियाँ।

कर निकल रहा है। ऐसी पत्ती को **परिपर्ण (परफोलिएट, perfoliate; per—मे से होकर, folium—पत्ती)** कहते हैं (चित्र ४.५), जैसे कसकोरा परफोलिएटा (*Canscora perfoliata*), घी कुंवार (*Aloe perfoliata*), आदि में। जब दो सेसाइल (अवृन्त) और अभिमुख (opposite) पत्तियाँ तने की ओर जुड़ी होती हैं तब उन पत्तियों को **जनियुक्त (कोनेट, connate)** पत्तियाँ कहते हैं (चित्र ४.५), जैसे दुकुनी (*Canscora diffusa*) और जगली हनीसकिल (honeysuckle, *Lonicera flava*) में। कुछ नमूनों में, जैसे लगेरा टेरोडोन्टा (*Laggera pterodonta*), कसकोरा डीकरेन्स (*Canscora decurrens*), क्रोटालेरिया अलाटा (*Crotalaria alata*) और कुछ अन्य में पर्णवृन्त और पर्णाधार पखदार हो जाते हैं। यह पख तने तक फैला होता है जिसके कारण तना भी पखदार लगने लगता है। इस प्रकार की पत्ती को **अधोगामी (डीकरेन्ट, decurrent)** पत्ती कहते हैं।

३. **पर्णफलक (Leaf-blade or lamina)**. यह हरा और फैला भाग है। इसका अध्ययन निम्नलिखित विशेषताओं पर ध्यान देने हुए किया जा सकता है: सिरों और किनारों की आकृति, पत्ती का धारान्त, पत्ती की सामान्य तोर से बनावट, नाड़ियों का वितरण, सम्पूर्ण पत्ती की प्रकृति—अर्थात् सरल (simple) है या संयुक्त (compound) या उसका कोई रूपान्तर (modification) है। एक मोटी नाड़ी जो **मध्य-नाड़ी (मिड रिब, mid-rib)** कहलाती है, पत्ती के बीच में नीचे से शीर्ष तक दौड़ी रहती है। इसमें पार्श्व नाड़ियाँ निकलती हैं और इनमें फिर छोटी नाड़िकाएँ निकली होती हैं।

अनुपत्र (स्टिप्यूल, Stipule)

पत्ती के आधार पर उनके दाये-बाये उगी हुई अतिवृद्धियों (appendages) को **अनुपत्र** कहते हैं। ये अक्सर हरे होते हैं परन्तु कभी-कभी मुरझाये हुए दिखाई पड़ते हैं। कुछ अनुपत्र ऐसे होते हैं जो पर्णफलक (lamina) के जीवनकाल भर जीवित रहते हैं (**चिरलग्न, persistent**) या कुछ पत्ती के खुलने के बाद ही झड़ जाते हैं (**पर्णपाती, deciduous**), और कुछ ऐसे होते हैं जो पत्ती के खुलने (unfolding) के पूर्व ही झड़ जाते हैं (**शीघ्रपाती, caducous**)। इनका कार्य है कि ये बिना खिली दशा में रहने तक नई पत्तियों की रक्षा करें और जब हरे रहे तो पत्तियों की भाँति भोजन बनावें। वह पत्ती जिसमें अनुपत्र होते हैं **अनुपत्री (स्टिप्युलेट, stipulate)** कहलाती है और जिसमें नहीं होते **अननुपत्री (एक्स-स्टिप्युलेट, ex-stipulate)** कहलाती है। कभी-कभी हर पर्णक (leaflet) के आधार पर एक छोटा-सा स्टिप्यूल निकला होता है जैसे अपगजिता (*Clitoria*) में। ऐसे स्टिप्यूल को **अनुपत्रक (स्टिपेल stipel)** कहते हैं।

अनुपत्रों के प्रकार (Kinds of stipules). अपनी बनावट, स्थिति, रंग और आकार (size) के अनुसार अनुपत्र निम्नलिखित प्रकार के होते हैं

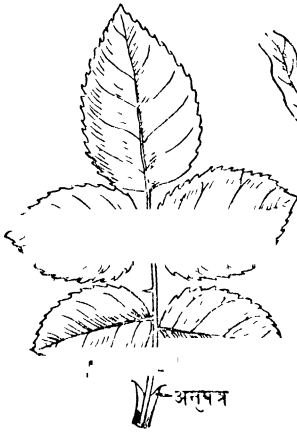
(१) **स्वतंत्र पार्श्व अनुपत्र (Free lateral stipules)**. दो स्वतंत्र स्टिप्यूल (stipule) जो बहुधा छोटे और हरे रंग के होते हैं, पत्ती के आधार के दोनों ओर पाये जाते हैं (चित्र ४.१), जैसे चीनी गुलाब (China rose), कपास, इत्यादि में।

(२) **अभिलग्न अनुपत्र (Adnate stipule)**. ये दो पार्श्व अनुपत्र हैं जो फिटिओल के साथ कुछ ऊँचाई तक बड़ने हैं और इसके साथ जुड़ जाते हैं जिससे फिटिओल पंखदार मालूम होने लगता है, जैसे गुलाब (चित्र ४.६), मूँगफली, स्ट्राबेरी (strawberry) और लूपिन (lupin) में।

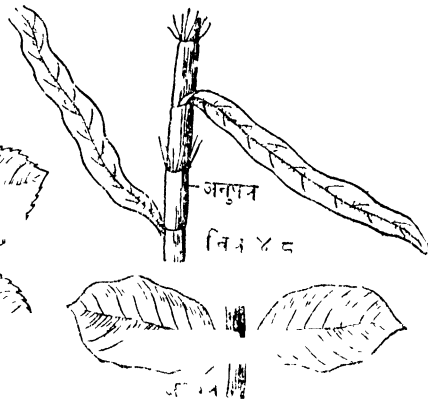
(३) **वृन्त-मध्यक अनुपत्र (Interpetiolar stipules)** ये दो अनुपत्र अभिमुख (opposite) या चक्रीय (whorled) पत्तियों के पर्णवृन्तों के बीच स्थित होते हैं और इस प्रकार पत्तियों के एकान्तर क्रम (alternate) में होते हैं (चित्र ४.७), जैसे रगन (*Ivora*), कदम (*Anthocephalus*), मोएना (*Vangueria*) इत्यादि में।

(४) **नालचोली अनुपत्र (ऑक्रेट स्टिप्यूलस, Ochreate stipules)**. ये एक प्रकार की खोखली नली बनाते हैं जो तने को, फिटिओल के सामने एक पर्व-सन्धि

(node) से लेकर पर्व (internode) पर कुछ ऊँचाई तक धरे रहने है (चित्र ४.८), जैसे खट्टा-मीठा (sorrel, *Rumex*), पानी-मिर्च (*Polygonum*) आदि में।



चित्र ४.६

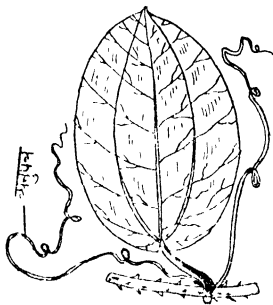


चित्र ४.७

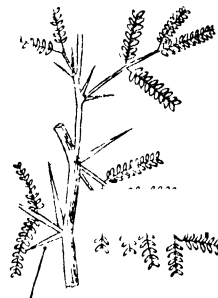
अनुपत्रों के प्रकार : चित्र ४.६ गुलाब का अभिलग्न अनुपत्र। चित्र ४.७ वृत्त-मध्यक अनुपत्र। चित्र ४.८ नावचोली अनुपत्र।

(५) पत्रवत् अनुपत्र (फोलिएशस स्टिप्युल्स, **Foliaceous stipules**). ये दो बड़े हरी पत्ती के आकार के होते हैं, जैसे, मटर (चित्र ४.२८), वन-मटर (*Lathyrus*) में (चित्र ४.२९) और पैयल पत्रावर की कुछ किस्मों में।

(६) कलिका-शल्क (**Bud-scales**). ये गलहीय पत्तियाँ होती हैं जो



चित्र ४.९



शल्यमय-अनुपत्र

चित्र ४.१०

रूपान्तरित अनुपत्र। चित्र ४.९ संजनी का रूप अनुपत्र। चित्र ४.१० शल्यमय अनुपत्र।

पर्ण कलिकाओं को घेरे और सुरक्षित किये रहती हैं, और पत्तियों के खुलते ही (unfolding) झड़ जाती हैं। ये बरगद, कटहल, दुली-चम्पा (*Magnolia*), नागेश्वर या नागकेसर (*Mesua*), आदि में देखने को मिलता है।

अनुपत्रों के संपरिवर्तित रूप (**Modified forms of stipules**). अनुपत्र कभी-कभी संजनी और शल्यो (**spines**) में रूपान्तरित हो जाते हैं और फिर इनके ही समान कार्य करते हैं:

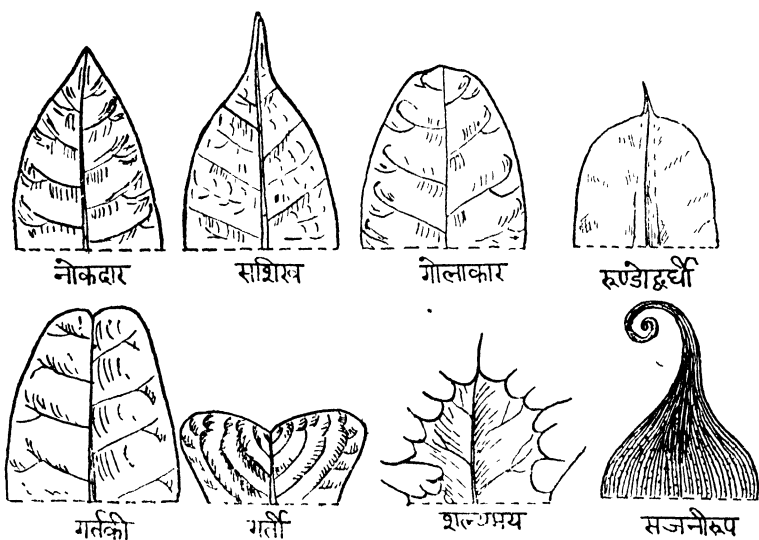
(क) संजनिरूप अनुपत्र (**Tendrillar stipules**). जब ये पतले और तार के आकार में परिवर्तित हो जाते हैं तो इन्हें संजनी कहते हैं। संजनिरूप स्टिप्पूल का काम पौधे को चढ़ने में सहायता देना है, जैसे कुमारिका (*sarsaparilla*, *Smilax*) में (चित्र ४९)।

(ख) शल्यमय अनुपत्र (**Spinous stipules**). जब स्टिप्पूल तेज नोकदार आकृति में बदल जाते हैं, जो शल्य (**spines**) कहलाते हैं (चित्र ४१०)। कटीले स्टिप्पूल बबूल (*gum tree*, *Acacia*), बेर (*Indian plum*, *Zizyphus*), छई-मुई या लाजवन्ती (*Mimosa*), काटा गुरकमाई (कैपरिस, *Capparis*), इत्यादि में होते हैं।

पर्ण-फलक (Leaf-blade)

पर्णग्र या पर्णशोर्ष (**Apex of the leaf**). पत्ती का ऊपरी सिरा निम्न-लिखित किस्मों का होता है (चित्र ४.११):

(१) नोकदार (एक्यूट, **Acute**). जबकि यह नुकीला और न्यूनकोणीय तो होता है किन्तु कठोर नहीं, जैसा कि चीनी गुलाब (*China rose*) में।



चित्र ४.११ पर्णग्र।

(२) सशिख (एक्युमिनेट, **Acuminate**). जबकि यह एक लम्बी नोक वाला होता है, जैसा पीपल (*Ficus religiosa*) में।

(३) गोलाकार (ऑब्टयूज, **Obtuse**). जबकि यह गोल होता है, जैसे बरगद (*Ficus benghalensis*) में।

(४) रुण्डोद्वर्धी (म्युक्रोनेट, **Mucronate**). जबकि गोल सिरा एकाएक छोटे नुकीले भाग में समाप्त होता है, जैसे रगन (*Ixora*) में।

(५) गर्तकी (रेट्यूज, **Retuse**). जबकि सिर पर एक छोटा गर्त-सा होता है, जैसे पाना (*Pistia*) में।

(६) गर्ती (एमारजिनेट, **Emarginate**). जबकि सिर पर स्थित गर्त ज्यादा गहरा और स्पष्ट होता है, जैसे कचनार (*Bauhinia*) और चूका या खट्टी पत्ती (*Oxalis*) में।

(७) शल्यमय (स्पाइनस, **Spinous**). जबकि सिर का अन्त एक नुकीली और तेज आकृति में होता है, जैसा कि खजूर, केबड़ा और अनन्नास (pine-apple) आदि में।

(८) संजनीरूप (टेण्ड्रिलर, **Tendrillar**). जबकि सिरा एक संजनी में परिवर्तित हो जाता है, जैसा उलट चन्दल (glory lily, *Gloriosa*) में।

पत्ती का किनारा (Margin of the leaf). पत्ती का किनारा निम्न प्रकार का हो सकता है (चित्र ४.१२) :

(१) अभिन्न (एण्टायर, **Entire**). अर्थात् एक-सा और चिकना जैसे आम, कटहल, बरगद, कुमारिका (*Smilax*), इत्यादि में।

(२) तरंगित (रिपैण्ड, **Repand**). अर्थात् लहरदार, जैसे देवदारू (*Polyalthia*) में।

(३) आरावत् (सिर्रेट, **Serrate**). अर्थात् आरी के दाँतों के समान और दाँते ऊपर की ओर मुँह किये हुए, जैसे गुलाब, चीनी गुलाब, नीम (*margosa*, *Melia*), आदि में।

(४) दन्तुर (डेण्टेट, **Dentate**). अर्थात् दाँते बाहर की ओर किये हुए और पत्ती के किनारे से समकोण बनाते हुए, जैसे खरबूजा और वाटर लिली में।

(५) गोलछिन्न (क्रिनेट, **Crenate**). अर्थात् गोलाकार दाँतोवाला, जैसे ब्रायोफिलम ब्राह्मीबूटी, (Indian pennywort) आदि में।

(६) शल्यमय (स्पाइनस, **Spinous**). जबकि उसमें कई नुकीले बिन्दु हों, जैसे पीला धतूरा (prickly poppy, *Argemone*) आदि में।

पत्ती का धरातल (Surface of the leaf). पत्ती को निम्न नाम दिये जाते हैं :

(१) चिक्कण (ग्लैब्रस, **Glabrous**). जब उसके फलक का धरातल चिकना और रोमों तथा किसी अन्य प्रकार की अतिवृद्धियों से रहित है।

(२) खुरदरा (रफ, **Rough**). जब पत्ती को छूने पर थोड़ा-बहुत खुरदरा-पन महसूस हो।

(३) रोमयुक्त (हेयरी, **Hairy**). जब उस पर छितरे या घने रोम हों।

(४) आश्लिषिमत (ग्लूटिनस, **Glutinous**). जब पत्ती के धरातल पर चिपचिपे पदार्थ का स्राव जमा रहता है, जैसे तम्बाकू की पत्ती में।



चित्र ४.१२ पत्ती का किनारा। १. अभिन्न; २. तरंगित, ३. आरावत्, ४. दन्तुर, ५. गोलछिन्न, ६. शल्यमय।

(५) नीलहोस्त (ग्लॉकस, **Glaucous**)। जबकि पत्ती का धरातल हरा और चमकीला हो, और

(६) शल्यमय (स्पाइनी, **Spiny**)। जब धरातल पर शल्य (spines) हों।

नाड़ी-विन्यास (Venation)

नाड़ियाँ (veins) वाहिशाखाएँ (vascular ramifications) होती हैं जो पर्णवृन्त और मध्य-नाड़ी से आकर पर्णफलक पर चारों ओर फैल जाती हैं। यह सवाहक (conducting) और यांत्रिक ऊतकों (mechanical tissues) की बनी होती हैं और फलक में चारों ओर पानी और घुलनशील खनिज-लवणों को वितरित करने और तैयार भोजन को यहाँ से ले जाने का कार्य करती हैं। इसके अतिरिक्त यह फलक को आवश्यक दृढ़ता भी प्रदान करती हैं।

पर्णफलक में नाड़ियों और नाड़िकाओं के विन्यास (arrangement) को **नाड़ी-विन्यास (venation)** कहते हैं। नाड़ी-विन्यास मुख्य दो प्रकार का होता है:

(१) **जालिकावत् नाड़ी-विन्यास (Reticulate venation)**। जबकि नाड़िकाएँ अनियमित रूप से चारों ओर फैली रहती हैं और एक जाली की आकृति बनाती हैं तथा

(२) **समानान्तर नाड़ी-विन्यास (Parallel venation)**। जब कि वे एक दूसरे के समानान्तर दौड़ती हैं।

पहले प्रकार का नाड़ी-विन्यास द्वि-बीजपत्रियों (dicotyledons) की पत्तियों का विशेष लक्षण है, जब कि दूसरा एक-बीजपत्रियों (monocotyledons) का।

अपवाद (Exceptions)। एक बीजपत्रियों में कुमरिका या सारसापरिला (Smilax), एरांडस (aroids), और रतालू (yams, Dioscorea), जैसे चुपरी-

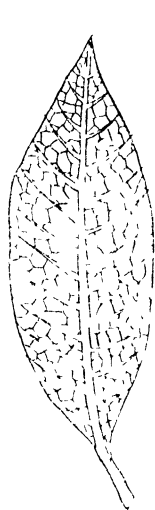
आलू (white yam, *Dioscorea alata*), इत्यादि में जालिकावत् (reticulate) नाडी-विन्यास पाया जाता है, और द्वि-वीजपत्रियो, जैसे सुन्दान लम्पा (Alexandrian laurel, *Calophyllum*) तथा कुछ अन्य पौधों की पत्तियों में समानान्तर नाडी-विन्यास पाया जाता है।

१. जालिकावत् नाडी-विन्यास (Reticulate Venation).

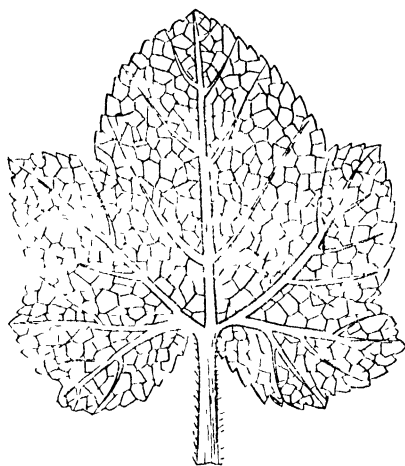
(क) पक्षवत् या एक प्रनाडीक प्रकार (Pinnate or Unicostate type; *unus*—एक, *costa*—प्रनाडी). इस प्रकार के नाडी-विन्यास में पत्ती के बीच में एक शक्तिशाली मध्य-नाडी होती है, उससे बायें-बायें नाड़ियाँ निकली होती हैं जो पत्ती के किनारे या सिरे की ओर जाती हैं, जैसे किसी चिड़िया के पर में बाल होते हैं (चित्र ४.१३)। ये बगली नाड़ियाँ आपस में नन्ही-नन्ही नाड़ियों द्वारा मिली रहती हैं, जो हरेक दिशा में पहुँचती रहती हैं और नाड़ियों का जाल-सा चित्र देती हैं, जैसे पीपल, आम और अमरुद, आदि में।

(ख) पाणिवत् या बहुप्रनाडीक प्रकार (Palmate or Multicostate type; *multi*—बहुत से, *costa*—प्रनाडी). इस प्रकार के नाडी-विन्यास में कई लगभग बराबर शक्तिवाली नाड़ियाँ पेटिओल के सिरे (tip) से बाहर की तरफ या पत्ती के मारे की तरफ जाती हैं। उन्हीं का रूप मिलने से

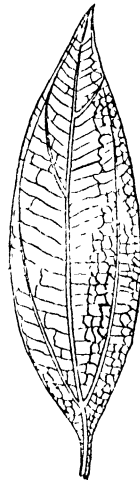
(१) एक वह जिसमें बहुत-सी मजबूत नाड़ियाँ पत्ती के आधार से निकलती हैं



चित्र ४.१३



चित्र ४.१४



चित्र ४.१५

जालिकावत् नाडी-विन्यास के प्रकार। चित्र ४.१३ पक्षवत् (पिनेट) प्रकार।

चित्र ४.१४ पाणिवत् अपसारी (पामेट-डाइवर्जेंट) प्रकार। चित्र ४.१५

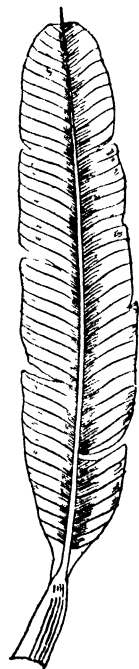
पाणिवत्-अभिसारी (पामेट-कन्वर्जेंट) प्रकार।

और एक दूसरे से दूर ही चलकर (diverge) पत्ती के किनारे की ओर जाती है, जैसे हथेली में उगलियों (अपसारी रूप, **divergent type**)। ये फिर छोटी नाड़ियों के जाल के द्वारा एक दूसरे से मिली रहती है (चित्र ४.१४), जैसे पपीता, खीरा, रेंडी, चीनी गुलाब (China rose) इत्यादि में।

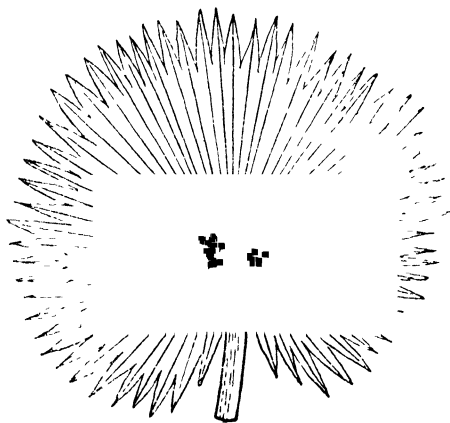
(२) दूसरा रूप वह है जिसमें नसे बजाय अपसारी (divergent) होने, अर्थात् अलग होकर जाने के, फलक के आधार से फैलकर सिरे पर एकत्रित होने लगती हैं, इनको अभिसारी रूप (**convergent type**) कहते हैं (चित्र ४.१५)। इस प्रकार की पत्ती को मुड़ी हुई नाड़ियोंवाली (curve-veined) कहते हैं। इसके उदाहरण बेर (Indian plum, *Zizyphus*), तेजपात (bay leaf), दालचीनी (cinnamon), कपूर (camphor), कुचला (nux vomica) और निर्मली आदि हैं।

२. समानान्तर नाड़ी-विन्यास (Parallel Venation).

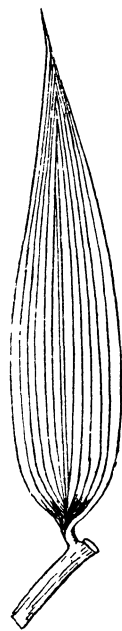
(क) पक्षवत् या एकप्रनाडीक प्रकार (**Pinnate or Unicostate type**). इस प्रकार के नाड़ी-विन्यासवाली पत्ती में एक स्पष्ट मध्यनाड़ी होती है, और इसके दोनों ओर नाड़ियाँ निकली होती हैं जो एक दूसरे के समानान्तर और पत्ती के निकारे (margin) की ओर या शीर्ष (apex) की ओर जाती हैं (चित्र ४.१६), जैसे केला, अदरक, कौन (Canna) और हल्दी (turmeric), इत्यादि में।



चित्र ४.१६



चित्र ४.१७



चित्र ४.१८

समानान्तर नाड़ी-विन्यास के प्रकार: चित्र ४.१६ पक्षवत् (पिनेट) प्रकार।

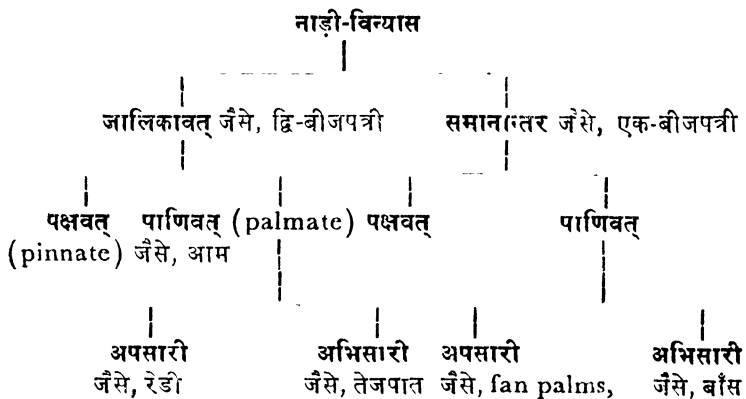
चित्र ४.१७ पाणिवत्-अपसारी (पामेट-डाइवर्जेंट) प्रकार। चित्र

४.१८ पाणिवत्-अभिसारी (पामेट-कन्वर्जेंट) प्रकार।

(ख) पाणिवत् प्रकार (**Palmate type**). इसके भी दो रूप पाये जाते हैं :

(१) सिरे की ओर जाने के बजाय नाड़ियाँ एक दूसरे से दूर (diverge) होकर पत्ती की परिधि की ओर जाती हैं (अपसारी प्रकार, divergent type) जैसे कि पखेवाले ताड़ो (fan palms) में (चित्र ४१७)।

(२) लगभग बराबर मजबूती की नाड़ियाँ काफी सख्या में पत्ती के आधार से समानान्तर चलकर सिरे की ओर पहुँचती हैं; यह अभिसारी प्रकार (कन्वर्जेंट, **convergent type**) कहलाती है (चित्र ४.१८)। इनके उदाहरण जलकुम्भी (water hyacinth), घासें, चावल, बाँस, आदि हैं।



नाड़ियों के कार्य (Functions of Veins).

(१) नाड़ियाँ पर्णफलक (leaf blade) का ढाँचा बनाती हैं और उसको मजबूती देती हैं जिससे यह तेज हवा से फट या टूट न जाय।

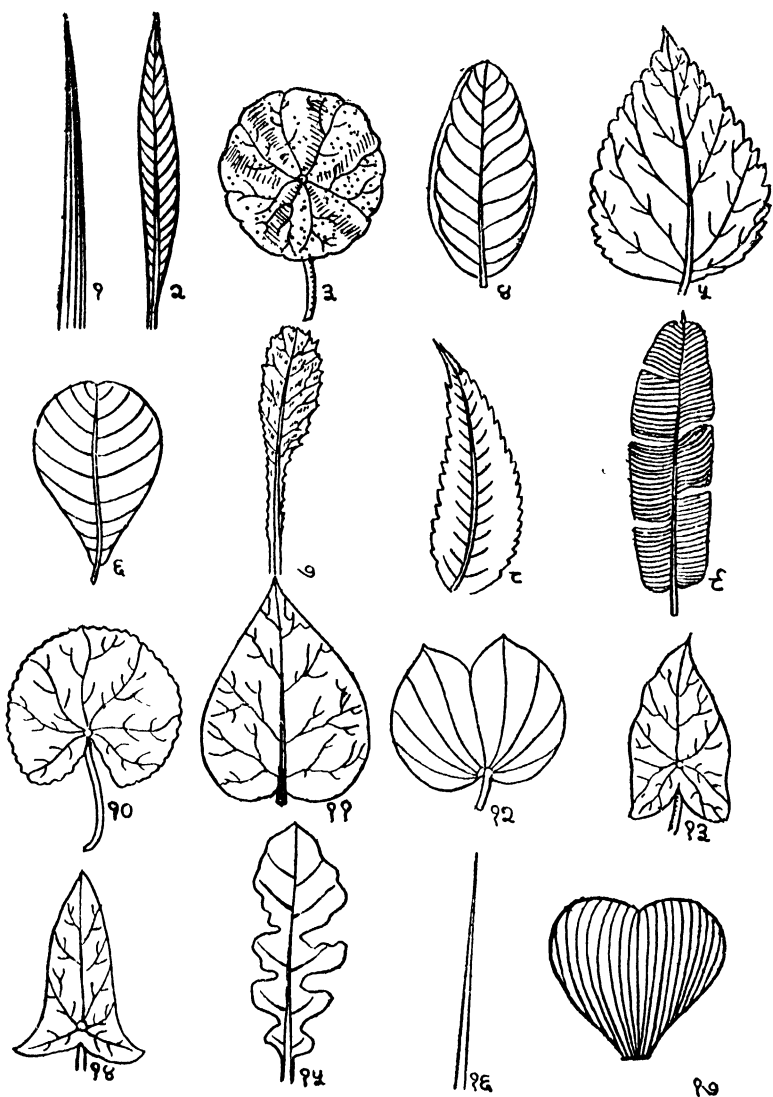
(२) नाड़ियाँ फलक को चपटा रखने में सहायता देती हैं, जिससे यह सूर्य से समान रूप से रोशनी पा सके।

(३) नाड़ियाँ तने से पानी और खनिज तत्वों को प्राप्त करके पूरे फलक को बाँट देती हैं और फलक द्वारा तैयार किये हुए भोजन को जमा करके तने तक पहुँचा देती हैं, जहाँ से वह भोजन संग्रह करनेवाले अंगों (storage organs) में और बढ़नेवाले भागों (growing regions) में पहुँच जाना है।

पत्ती का आकार (Shape of the Leaf)

(१) रेखाकार (लीनियर, **Linear**). जब पत्ती लम्बी और संकीर्ण (narrow) होती है, जैसे बहुत-सी घासों में।

(२) प्रासवत् (लैसियालेट, **Lanceolate**). इस प्रकार की पत्ती भाले की शकल की होती है, जैसे बाँस, कनेर (*Nerium*) इत्यादि में।



चित्र ४.१९ पत्ती का आकार। १. रेखाकार। २. प्रासवत्। ३. चक्राकार। ४. अण्डाकार। ५. लट्वाकार। ६. अभिलट्वाकार। ७. चम्मचाकार। ८. तिर्यक। ९. दीर्घवत्। १०. वृक्काकार। ११. हृदयाकार। १२. अभिहृदयाकार। १३. बाणाकार। १४. कुन्ताकार। १५. वीणाकार। १६. सूच्याकार। १७. स्फानाकार।

(३) चक्राकार (रोटण्ड, **Rotund**). इसमें पत्ती का फलक गोलाकार होता है, जैसे कमल, गार्डन नैस्टरशियम (*garden nasturtium*) इत्यादि में।

(४) अण्डाकार (**Elliptical or Oval**). जब पत्ती का आकार कुछ-कुछ इलिप्स (*ellips*) का सा होता है, जैसे जामुन (*rose apple, Eugenia*), अमरूद और कटहल आदि में।

(५) लट्वाकार या अण्डवत् (ओवेट, **Ovate**). जब पत्ती का आकार लट्टू का सा होता है अर्थात् सिरे की अपेक्षा निचला भाग अधिक चौड़ा होता है, जैसा बरगद में।

(६) अभिलट्वाकार (ऑबोवेट, **Obovate**). जब पत्ती उलट्टे रूप से लट्टू के आकार की होती है, तो उसे अभिलट्वाकार कहते हैं, जैसा कि देशी बादाम में।

(७) चम्मचाकार (स्पैथ्युलेट, **Spathulate**). जब पत्ती की शकल स्पैचुला (*spatula*) अर्थात् विलायती चम्मच की सी हो, यानी सिरे पर चौड़ी और गोल और आधार पर पतली होती जाय, जैसे, (*sundew, Drosera*)—एक कीटाणुभक्षक पौधा में।

(८) तिर्यक (ऑब्लीक, **Oblique**). जब पत्ती की मध्य-नाड़ी के दोनों तरफ के हिस्से बराबर नहीं होते, जैसे शोभापर्ण (*Begonia*) में। नीम, आकाश नीम (*Indian cork tree*), आदि में पत्रक (*leaflets*) तिरछे होते हैं।

(९) दीर्घवत् (ऑब्लॉंग, **Oblong**). जब फलक लम्बा और चौड़ा होता है और उसके सिरे गोलाकार होते हैं, जैसे केले में।

(१०) वृक्काकार (रेनीफॉर्म, **Reniform**). जब पत्ती गर्दे के शकल की होती है, जैसे कि ब्राह्मी बूटी (*Indian pennywort*) में।

(११) हृदयाकार (कॉर्डेट, **Cordate**). जब फलक हृदय के आकार का होता है, जैसे पान में।

(१२) अभिहृदयाकार (ऑबकॉर्डेट, **Obcordate**). जब पत्ती हृदयाकार की उलटी शकल की होती है, जैसे खट्टी बूटी (*wood sorrel*) में, तब यह अभिहृदयाकार कहलाती है।

(१३) बाणाकार (सैजिटेट, **Sagittate**). जब पत्ती एक तीर के आकार की होती है, जैसा कि ऐरोहेड (*arrowhead*) और कुछ ऐरॉइड्स (*aroids*) में।

(१४) कुन्ताकार (हैस्टेट, **Hastate**). जब किसी सैजिटेट पत्ती की दोनों पालियाँ (*lobes*) बाहर की ओर इशारा कर रही हों, जैसे कलमी-साक या नारी (*water bindweed*), टैफोनियम (*Typhonium*) में।

(१५) वीणाकार (लाइरेट, **Lyrate**). जब शकल वीणा (*lyre*) की भाँति होती है, अर्थात् सिरेवाले बड़े फलक के साथ-साथ और भी कुछ छोटे-छोटे फलक नीचे की तरफ अगल-बगल रहते हैं, जैसे मूनी, सरसों आदि में।

(१६) सूच्यकार (ऐसीकुलर, **Acicular**). जब पत्ती लम्बी, संकीर्ण (*narrow*) तथा बेलनाकार होती है, अर्थात् सूई से मिलनी-जुलती, जैसे चीड़ (*pine*) में।

(१७) स्फानाकार (क्यूनिट, **Cuneate**). जब पत्ती मेख (*wedge*) की शकल की हो, जैसे कि जल गोभी (*water cabbage*) में।

पर्णफलक का कटाव (Incision of the Leaf-blade).

पक्षवत् नाड़ी-विन्यासवाली पत्ती (pinnately veined leaf) में कटन (इन्सीजन, incision) या फलक का कटाव मध्य-नाड़ी की ओर बढ़ता है (पक्षवत् प्रकार, **pinnate type**), और पाणिवत् नाड़ी-विन्यासवाली पत्ती में कटाव पर्णफलक (leaf blade) के आधार की ओर बढ़ता है (पाणिवत् रूप, **palmate type**) ।

प्रथम श्रेणी (First Series). पक्षवत् प्रकार (**Pinnate type**).

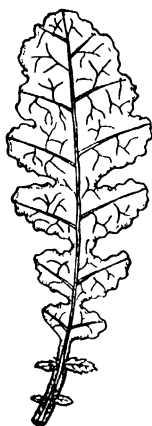
(१) पक्षवत्-दर (पिनेटीफिड, **Pinnatifid**). जब कटाव मध्य-नाड़ी की ओर आधी या करीब-करीब आधी दूर तक बढ़ा हो, जैसे पोस्ता में ।

(२) पक्षवत्-विबर (पिनेटीपारटाइट, **Pinnatipartite**). जबकि कटाव मध्य-नाड़ी की ओर आधे से ज्यादा दूर तक गया हो, जैसे, सरसो, मूली, इत्यादि में ।

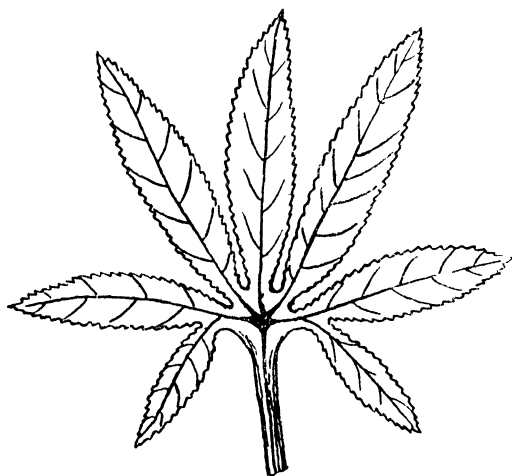
(३) पक्षवत्-निबर (पिनेटीसेक्ट, **Pinnatisect**). जब कि कटाव मध्य-नाड़ी के निकट तक पहुँच जाता है, जैसे कि कुछ फर्न्स (ferns), कामलता (*Quamoclit*), कॉसमॉस (*Cosmos*) इत्यादि में ।

(४) पक्षवत्-संयुक्त (पिनेट कम्पाउण्ड, **Pinnate compound**). जबकि 'किनारे' का कटन मध्य-नाड़ी (mid-rib) तक पहुँच जाता है और इस प्रकार पत्ती को कई खण्डों अर्थात् पत्रको (leaflets) में बाँट देता है, (चित्र ४.२३), जैसे मटर, चना. इत्यादि में ।

द्वितीय श्रेणी (Second Series). पाणिवत् प्रकार (**Palmate type**)



चित्र ४.२०



चित्र ४.२१

चित्र ४.२० मूली की वीणाकार पत्ती । चित्र ४.२१ ग्वाल लता (*Vitis pedata*) की दीर्णपाली (पेडेट) पत्ती ।

(१) पाणिवत्-वर (पामेटोफिड, **Palmatifid**). जैसे झुमका (passion-flower), कपास इत्यादि में।

(२) पाणिवत्-विदर (पामेटोपारटाइट, **Palmatipartite**). जैसे रेडी, पपीता, इत्यादि में।

(३) पाणिवत्-निदर (पामेटोसेक्ट, **Palmatisect**). जैसे टैपिओका (tapioca) और कुछ एरोएंडस में।

(४) पाणिवत्-संयुक्त (पामेट-कम्पासंड, **Palmate compound**). जबकि कटन पर्णफलक के आधार तक आ जाता है (चित्र ४.२६), जैसे सेमल के पेड़ में।

पक्षवत् प्रकार में जबकि पत्ती की पालियाँ (lobes) समान आकार की न हों, सिरे पर की पाली बगली पालियों से आकार में बड़ी हो और साथ ही साथ ये पार्श्व पालियाँ आधार की ओर धीरे-धीरे छोटी होती जायें तो ऐसी पत्ती को **वीणाकार (lyrate)** पत्ती कहते हैं (चित्र ४.२०), जैसे सरसो, मूली इत्यादि में पाणिवत् प्रकार में। जब पत्ती कई एक पालियों में बँट जाती है, जो कि एक चिडिया के पंजे की भाँति फैली रहती है और केवल आधार पर एक दूसरे से मिली रहती है, तब पत्ती को **दोणंपाली (पेडेट, pedate)** कहते हैं (चित्र ४.२१), जैसे ग्वाल लता (*Vitis pedata*) में।

संयुक्त-पत्तियाँ : पक्षवत् और पाणिवत् (Compound Leaves : Pinnate and Palmate)

साधारण और संयुक्त-पत्तियाँ (Simple and compound leaves). साधारण पत्ती वह होती है जिसमें एक फलक होता है, फलक चाहे समूचा हो या कटा-पिटा (और इसलिए पालियोंवाला); परन्तु यदि फलक खण्डित हो तो पत्ती की कटान मध्य-नाड़ी अथवा पर्णवृन्त (petiole) तक न हो। पत्ती **संयुक्त** तब कहलाती है जब उसके फलक का कटन मध्य-नाड़ी (mid-rib या rachis) अथवा पर्णवृन्त तक गया हो, जिससे पत्ती कई खण्डों में बँट जाती है। इन खण्डों को **पर्णक (leaflet)** कहते हैं। पर्णक एक दूसरे से स्वतंत्र होते हैं, अर्थात् उनके बीच में कोई भी बानस्पतिक भाग नहीं होता। यह पर्ण फलक के आधार पर आकर करीब-करीब जुड़े होते हैं। पत्ती के कक्ष (axil) में, चाहे पत्ती साधारण हो या संयुक्त, एक कली (कक्षस्थ-कलिका) मौजूद होती है, परन्तु जटिल पत्ती के पर्णक की काँख में कली कभी नहीं होती। संयुक्त पत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं—**पक्षवत् (pinnate)** और **पाणिवत् (palmate, पाणि=हाथ)**।

संयुक्त-पत्ती और शाखा. निम्नलिखित भेदों के द्वारा संयुक्त-पत्ती एक शाखा से भिन्न पहचानी जा सकती है :

(१) संयुक्त-पत्ती के शिखर पर कभी अग्रस्थ-कलिका (terminal bud) नहीं होती, जबकि शाखा के शिखर पर सदा ही होती है,

(२) साधारण पत्ती की तरह संयुक्त-पत्ती की काँख में भी एक कक्षस्थ-कलिका (axillary bud) होती है, परन्तु वह स्वयं किसी दूसरी पत्ती के काँख में कभी नहीं निकलती; जबकि शाखा के कक्ष में कक्षस्थ-कलिका नहीं होती, बल्कि वह किसी

साधारण अथवा संयुक्त-पत्ती की कांख में होती है; क्योंकि उसी कांख की कक्षस्थ-कलिका में वह उत्पन्न होती है।

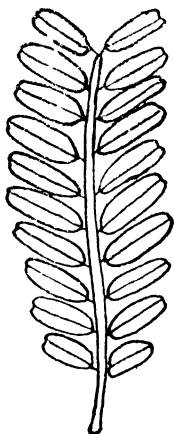
(३) संयुक्त-पत्ती के पर्णकों की कांख में कोई कक्षस्थ-कलिका नहीं होती; जबकि एक शाखा की प्रत्येक पत्तियों (साधारण) की कांख में एक-एक कली होती है। और

(४) शाखा में सदैव पर्व-सन्धि तथा पर्व (नोड और इण्टरनोड) होते हैं जबकि संयुक्त-पत्ती की मध्य-नाड़ी (rachis) इनमें रहित होती है।

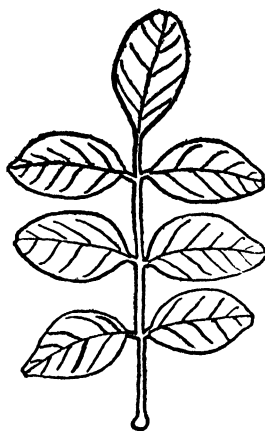
१. पक्षवत् संयुक्त-पर्ण (Pinnate Compound Leaf).

पक्षवत् संयुक्त पत्ती उस पत्ती को कहते हैं जिसमें मध्य-नाड़ी, जिसको अंग्रेजी में रेकिस (rachis) कहते हैं, दायाँ-बायाँ कई पर्णक एकान्तर क्रम से (alternately) अथवा अभिमुख रूप से (opposite) धारण करती है, जैसे इमली चना, गुलमोहर, रेत ट्री, छुई-मुई, बबूल (*Acacia*), अमलतास (*Cassia*) आदि में होते हैं। यह निम्न प्रकार की हो सकती है:

(१) एक-पक्षवत् (Unipinnate). जब पक्षवत् संयुक्त पत्ती की मध्य-नाड़ी के दोनों ओर पर्णक सीधे उसी में लगे होते हैं तो उसे एक-पक्षवत् कहते हैं, जैसे गुलाब, नीम आदि में। जब पर्णकों की संख्या दो से विभाज्य अथवा सम (even)



चित्र ४.२२



चित्र ४.२३

पक्षवत् संयुक्त (pinnate compound) पत्तियाँ। चित्र ४.२२ सम-पक्षवत् (paripinnate)। चित्र ४.२३ विषम-पक्षवत् (imparipinnate)

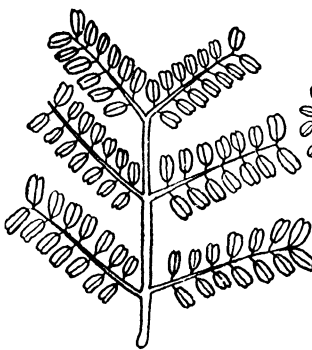
होती है, तो पत्ती सम-पक्षवत् (पैरीपिनेट, **paripinnate**) कहलाती है (चित्र ४.२२), जैसे इमली, गुलमोहर, छुई-मुई, अमलतास (*Cassia*), आदि में। जब पर्णकों की संख्या दो से अविभाज्य अथवा विषम (odd) होती है, तो पत्ती को असम

पक्षवत् (इम्पैरिपिनेट, **imparipinnate**) कहते हैं (चित्र ४.२३), जैसे गुलाब, नीम, कामिनी, अपराजिता (*Clitoria*) आदि में।

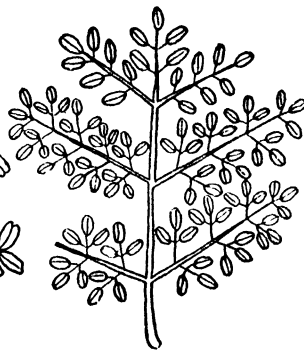
पत्ती में जब केवल एक पर्णक होता है तो उसे एक-पत्रक (यूनीफोलिएट, **unifoliate**) कहते हैं, जैसे कि सालपान (*Desmodium gangeticum*) में; जब दो पर्णक होते हैं तो द्वि-पत्रक (**bifoliate**) या यूनीजुगेट (**unijugate**—एक जोड़ा) कहते हैं, जैसा कि हिंगोल (*Balanites*) में, और भेकल (*Prinsepia*) तथा कभी-कभी गुलाब में। जब तीन पर्णक होते हैं तो उसे त्रि-पत्रक (**trifoliate** या **ternate**) कहते हैं, जैसे कि सेम, कोरल (coral tree) तथा अमल-लता (*Vitis trifolia*) में। इसी प्रकार पत्ती चतुर्पत्रक (**quadrifoliate**), पंचपत्रक (**pentafoliate**) व बहुपत्रक (**multifoliate**) कहलाती है जब उसमें क्रमशः चार, पाँच या अधिक पर्णक होते हैं।

एक ही पौधे में पर्णको की संख्या विभिन्न हो सकती है। उदाहरणार्थ बन-चन्दल (Indian telegraph plant) में पर्णको की संख्या एक से तीन तक होती है; गुलाब में एक से सात तक होती है; तथा पथर-चटा (sprout leaf plant) में एक से पाँच तक होती है।

(२) द्वि-पक्षवत् (**Bipinnate**). जब संयुक्त पत्ती दो बार पिनेट (पक्षवत्) होती है, अर्थात् मध्य-नाड़ी पर दूसरे क्रम के अक्ष (secondary axes) पैदा हो जाते हैं जिन पर पर्णक लगे हों, तो उसे द्वि-पक्षवत् कहते हैं (चित्र ४.२४), जैसे कि बबूल, लाजवस्ती या छुई-मुई, बुकैन (Persian lilac), आकाश-नीम (Indian cork tree) तथा सिरौस (*Albizia*) में।



चित्र ४.२४



चित्र ४.२५

पक्षवत् संयुक्त पत्तियाँ (क्रमशः)। चित्र ४.२४ द्वि-पक्षवत् (**bipinnate**)।
चित्र ४.२५ त्रि-पक्षवत् (**tripinnate**)।

(३) त्रि-पक्षवत् (**Tripinnate**). जब संयुक्त पत्ती तीन बार पिनेट (पक्षवत्) होती है, अर्थात् दूसरे क्रम के अक्षों पर तीसरे क्रम के अक्ष (tertiary axes) पैदा हो जाते हैं, जिन पर पर्णक लगे हों, तो उसे त्रि-पक्षवत् कहते हैं।

(चित्र ३.२५), जैसे सहजन (horse radish) तथा ऑरोज़ाइलम (*Oroxylum*) में।

(४) बहुपक्षवत् (Decomound). जब पत्ती तीन से अधिक बार पिनैट होती है, तो उसे बहु-पक्षवत् अथवा डीकम्पाउण्ड (decompound) कहते हैं, जैसे पन-मौरी (anise), गाजर, थैलिकट्रम (*Thalictrum*) तथा पैनैक्स (*Panax*) में।

२. पाणिवत् संयुक्त-पर्ण (Palmate Compound Leaf).

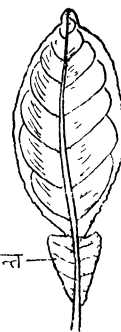
पाणिवत् संयुक्त-पत्ती उस पत्ती को कहते हैं जिसमें पेटिओल (पर्णवृन्त) के सिरे पर उससे जुड़े हुए कई पर्णक लगे होते हैं जो एक केन्द्र बिन्दु से चारों ओर निकले हुए से लगते हैं, जैसे हथेली से उगलियाँ। इसके उदाहरण हैं, सेमल (चित्र ४.२६), ल्यूपिन (lupin) गाँजा या भाँग (कैनेबिस, *Cannabis*), श्वेत गुरगुर (*Gynandropsis*) तथा हल्द हुरगुर (*Cleome*)।

पर्णकों की संख्या के अनुसार पत्ती कई नामों से जानी जाती है, पेटिओल के सिरे पर एक पर्णक लगा हो तो एक-पत्रक (unifoliate), जैसे चकोतरा (चित्र ४.२७), नीबू, नारंगी आदि में; पेटिओल के सिरे पर दो पर्णक लगे हो तो द्वि-पत्रक (bifoliate), तीन पर्णक लगे हों तो त्रि-पत्रक (trifoliate), जैसे बेल और खट्टी बूटी या तिपतिया (wood sorrel) में, चार हो तो चतुर्पत्रक (quadri-foliate) जैसे गुशनी-शाक (*Marsilea*) में; और हथेली की उगलियों की तरह पाँच या अधिक पर्ण हों तो बहु-पत्रक, जैसे कि सेमल, ल्यूपिन तथा श्वेत गुरगुर (*Gynandropsis*) में।

नारंगी की कुछ जातियों (species) में और कभी-कभी चकोतरे (shaddock) में, विशेषकर उनकी प्रारम्भिक अवस्था में, तीन पत्रक होते हैं, इससे पत्ती की पामेट प्रकृति का पता चलता है।



चित्र ४.२६



चित्र ४.२७

पाणिवत् संयुक्त (palmate compound) पत्तियाँ। चित्र ४.२६ एक बहुपत्रक (multifoliate) पत्ती। चित्र ४.२७ चकोतरे की एक-पत्रक संयुक्त पत्ती।

नोट. त्रि-पत्रक पक्षवत् संयुक्त पत्ती (trifoliate pinnate compound leaf) जिसे imparipinnate unjugate compound leaf भी कहते हैं) एक त्रि-पत्रक पाणिवत् संयुक्त से निम्नलिखित बातों से अलग (distinguish) पहचानी जा सकती है, पहली दशा में पेटिओल (पर्णवृन्त) सिरों से आगे मध्य-नाडी में बदल जाता है तथा केवल एक पर्णक ही इस मध्य-नाडी के शिखर से जुड़ा होता है, बाक़ी दोनों दायें-बायें रहते हैं जैसे कि कोरल ट्री या पंजीरा तथा मेम में, इसके विपरीत त्रि-पत्रक पाणिवत् संयुक्त पत्ती के तीनों पर्णक सीधे पेटिओल के सिरों पर जुड़े होते हैं, जैसे बेल में।

पत्ती का जीवनकाल (Duration of the leaf). पत्ती का जीवनकाल विभिन्न होता है। यदि पैदा होने के थोड़े समय बाद ही पत्ती शाखा से झड़ जाती है तो उसे (१) **शीघ्रपाती** (कँडुकस, **caducous**) कहते हैं। जब पत्ती एक ऋतु तक जीवित रहती है, और साधारणतया जाड़ों में झड़ती है, तो (२) **पर्णपाती** (डेसीडुअस, **deciduous**) अथवा एक वर्षी कहलाती है। जब पत्ती एक से अधिक मौसम तक रहती है, आमतौर पर कुछ वर्षों तक, तो उसे (३) **चिरलग्न** (**persistent** या **evergreen**) कहते हैं।

कुछ वर्णनात्मक शब्द (Some Descriptive Terms).

(१) **छत्रीय पत्ती (Peltate leaf).** आमतौर से पर्णफलक तथा पेटिओल एक ही धरातल (plane) में होते हैं। किन्तु कुछ पौधों जैसे कमल, वाटर लिली, गार्डन नेस्टशिथम आदि में पेटिओल फलक के मध्य में समकोण बनाता हुआ लगा होता है; ऐसी पत्तियों को **पेल्टेट** या **छत्रीय पत्ती** कहते हैं।

(२) **उत्तराधर पत्ती (Dorsiventral leaf; dorsum—पीठ, venter—पेट या सामना).** इस प्रकार की पत्ती चपटी होती है, और फलक जमीन के समानान्तर (horizontal) होता है जिसके कारण उसकी एक सतह ऊपर होती है और दूसरी सतह नीचे। इस प्रकार की पत्ती की ऊपरी सतह निचली सतह की अपेक्षा अधिक प्रकाश पाती है, क्योंकि वह प्रकाशोन्मुख होती है और यही कारण है कि निचली सतह से ऊपरी सतह का रंग अधिक हरा होता है। आन्तरिक बनावट में भी दोनों सतहों में काफी अन्तर होता है (छठे अध्याय का प्रारम्भ देखिये)।

(३) **समद्विपार्श्व पत्ती (Isobilateral leaf; isos—बराबर, bi—दो, lateris—तरफ).** इस प्रकार की पत्ती लम्बान् रूप में खड़ी रहती है। ऐसी पत्ती अनेकों एक-बीजपत्री पौधों की होती है। इस पत्ती की दोनों सतहों पर बराबर प्रकाश पड़ता है, अतः उनका रंग एक-समान होता है। आन्तरिक बनावट में भी दोनों सतहों में कोई अन्तर नहीं होता।

(४) **केन्द्रीय पत्ती (Centric leaf).** जब पत्ती लगभग बेलनाकार तथा ऊपर की ओर अथवा नीचे की ओर मुड़ किये हो, जैसा कि प्याज, बीड़ आदि में तो केन्द्रीय या **सेण्ट्रिक** कहलाती है। केन्द्रीय पत्ती पर चहुँ-ओर एक-सा प्रकाश पड़ता है और इसलिए यह सब तरफ एक-सी हरी होती है।

(५) **स्तम्भीय पत्ती (Cauline leaf).** साधारणतया पत्तियाँ तने तथा

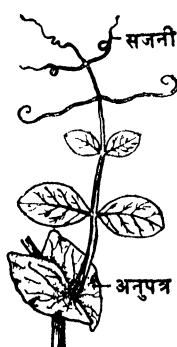
शाखाओं के हवाई भागों पर से निकली होती है; इन्हें कॉलाइन पत्तियाँ (*Caulis—*तना) कहते हैं।

(२) मूलपत्र (**Radical leaf**). कुछ पौधों, जैसे अनन्नास, घीकुँवार (*Indian aloe*), विलायती कैलास (century plant या *American aloe*), तथा अनेक कुमुदियों आदि में भूमि के अन्दर दबे तने के हिस्से में, अर्थात् भूमिगत तने से, पत्तियों के गुच्छे पैदा हो जाते हैं और ऐसा लगता है जैसे ये गुच्छे जड़ से निकले हों। इन पत्तियों को मूलपत्र (रैडिकल पत्तियाँ; *radix—*जड़) कहते हैं। ये अधिकतर एक बीजपत्री पौधों में होती हैं। एक ही पौधे पर रैडिकल तथा कॉलाइन दानों प्रकार की पत्तियाँ पैदा हो सकती हैं; उदाहरणार्थ सरसों, मूली आदि में।

पत्तियों के रूपान्तर (**Modifications of Leaves**)

बहुत-से पौधों की पत्तियाँ अनेक रूपों में परिवर्तित या रूपान्तरित हो जाती हैं तथा विशिष्ट कार्य सम्पादित करती हैं। पत्तियों के ये रूपान्तर निम्नलिखित हैं:

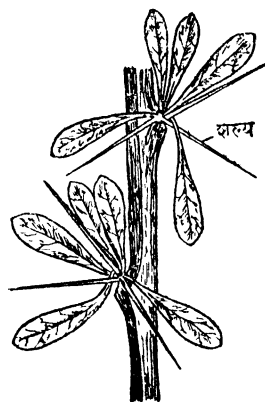
(१) पत्र संजनी (**Leaf-tendrils**) कुछ पौधों की पत्तियाँ कोमल तारनुमा और प्रायः काफ़ी ऐंठी हुई रचनाओं में परिवर्तित हो जाती हैं; इन्हें टेण्ड्रिल या संजनी कहते हैं। टेण्ड्रिल हमेशा आरोही अंग होते हैं और किसी भी वस्तु के स्पर्श के लिए सवेदनशील होते हैं। अतः जब यह किसी बाहरी वस्तु के सम्पर्क में आते हैं तब उसके चारों ओर लिपट कर पौधे को ऊपर चढ़ने में सहायक होते हैं। पत्ती



चित्र ४.२८



चित्र ४.२९



चित्र ४.३०

सपरिवर्तित पत्तियाँ—पर्ण संजनियाँ। चित्र ४.२८ मटर की पत्ती जिसमें ऊपर के पत्रक संजनियों में रूपान्तरित हो गये हैं। चित्र ४.२९ बन मटर (*Lathyrus*)।

चित्र ४.३० बारबेरी। प्राथमिक पत्तियाँ शल्यो में रूपान्तरित हो गयी हैं।

पूर्णतया या अपूर्णतया सपरिवर्तित हो सकती हैं। उदाहरणार्थ मटर में (चित्र ४.२८) सिर्फ़ ऊपर की ओर के पर्णक ही संजनियों में परिवर्तित होते हैं। छागल-वती

(*Naravelia*) और विग्नोनिया (*Bignonia venusta*), (जो एक सुन्दर लता है, तथा इसमें नारंगी रंग के फूलों के गुच्छे लगते हैं) की कुछ किस्मों में सिरों की ओर का पर्णक संजनी में परिवर्तित होता पाया गया है। कलियारी (glory lily) में पत्ती का सिरा (leaf-apex) एक घने महीन घेरे बनाती हुई संजनी में रूपान्तरित हो जाता है। कलश पादप (pitcher-plant, *Nepenthes*) में पर्णवृन्त (petiole) अक्सर संजनी का कार्य करता है और पिचर को सीधे ऊपर की दिशा में खड़ा रखता है (चित्र ४.३४)। उपर्युक्त सभी अपूर्ण सपरिवर्तन (partial modification) के उदाहरण हैं। जगली मटर (*Lathyrus ophaca*) में फिर भी सम्पूर्ण पत्ती संजनी में रूपान्तरित हो जाती है और दोनों पत्रवत् अनुपत्र (foliaceous stipules) पत्तियों का कार्य करते हैं (चित्र ४.२९)।

अंकुश (Hooks). विग्नोनिया उगिस-काटी (*Bignonia unguis cati*), जो एक सुन्दर आरोही है और गीहाटी तथा आमाम के दूसरे भाग में आमतौर पर होती है, में अग्रस्थ-पर्णक (terminal leaflets) तीन अत्यन्त नुकीले, कड़े, तथा मूड़े हुए अंकुशों में रूपान्तरित हो जाते हैं—बहुत कुछ बिल्ली के नाखून की भाँति (चित्र ४.३१)। ये अंकुश किसी पेड़ की छाल में अटक जाते हैं तथा ऊपर चढ़ने के लिए सहारे का काम करते हैं। इस प्रकार पौधा ऊँची चोटीवाले पेड़ों पर भी बड़ी आसानी से चढ़ जाता है।



चित्र ४.३१ विग्नोनिया उगिस-काटी जिसमें अंकुश हैं।

(२) पत्र-शल्य (Leaf-spines). आत्मरक्षा के हेतु कुछ पौधों की पत्तियाँ नुकीले, तीक्ष्ण अंगों में परिवर्तित हो जाती हैं। इन अंगों को शल्य (spines) कहते हैं। शल्य पत्तियों के रूपान्तर हैं, यह इस बात में सिद्ध होता है कि जो स्थिति शाखा पर पत्तियों की होती है, वही इन शल्यों की होती है, और अक्सर उनकी काँख में एक कली भी होती है। यह बारबेरी (barberry) के पुष्प-युक्त प्ररोह (flowering shoot) में देखा जा सकता है। नागफनी (prickly pear; चित्र ३.३१) की साधारण पत्तियाँ तो कम विकसित होती हैं और जल्दी ही झड़ जाती हैं, परन्तु कक्षस्थ-कलिका की नन्हीं पत्तियाँ या कोपल शल्यों में परिवर्तित हो जाती हैं। दूसरी ओर बारबेरी (चित्र ४.३०) में पूरी की पूरी पत्ती स्पाइन में परिवर्तित हो जाती है जब कि कक्षस्थ-कलिका की कोपल सामान्य (normal) रहती है। शल्य पत्ती के शिखर पर भी विकसित हो जाते हैं, जैसे खजूर में; या फलक के किनारे पर, जैसे भरभण्डा या पीला धतूरा (prickly poppy, *Argemone*) (चित्र ४.३२) में, अथवा शिखर तथा किनारे दोनों पर, जैसे धीकुँवार (Indian aloe, *Aloe*) और विलायती कैतालू (American aloe, *Agave*) में।

(३) शल्क-पत्र (Scale-leaves). साधारणतया यह पतली, सूखी, डण्डल रहित झिल्लीदार आकृति होती हैं। इसका रंग साधारण तौर पर भूरापन लिये हुए होता है; किन्तु कभी-कभी यह रंगहीन भी होती है। इसका कार्य अपने में स्थित

कक्षस्थ-कलिका की रक्षा करना है। कभी-कभी ये स्केली-पत्तियाँ मोटी और गूदेदार होती हैं, जैसे प्याज में, तब इनका कार्य पानी और भोजन संचित करना है। शल्क-पत्र अधिकतर भूमिगत तनों, जैसे प्ररुन्द (राइजोम), आकन्द (ट्यूबर), कन्द (बल्ब) और कन्दिका (कॉम) में पाये जाते हैं। यह बहुत-से पौधों के हवाई भागों में भी पाये जाते हैं। पूर्ण परजीवियों, जैसे अमरबेल (चित्र ३.१५) और ब्रूम रेप (broom rape) (चित्र ३.१६) में यह भोजन बनानेवाला हरी पत्तियों की भी जगह ले लेते हैं। बरगद, पीपल, इण्डिया रबर प्लांट (India rubber plant), इत्यादि में कलिका-शल्क (bud-scales) कलियों की नन्ही पत्तियों की रक्षा करते हैं। जाड़े में उत्पन्न होनेवाली कलियों (winter-buds) में बहुधा बाहरी पत्तियाँ (scale-leaves) पतली, सूखी और झिल्लीदार होती हैं। पर्ण-कार्यस्तम्भ (phyllodes) और पर्णकपर्व (cladodes) में पत्तियाँ या तो बिल्कुल ही नहीं होती या बहुत ही कम विकसित होती हैं, फिर भी अक्सर ये छोटे, सूखे शल्कपत्रों में रूपान्तरित हो जाती हैं; जैसे सनमूली (*Asparagus*) में। इक्वीसेटम (*Equisetum*) और झाऊ (*Casuarina*) में शल्क-पत्र प्रत्येक पर्व-सन्धि (node) पर एक भ्रमि या चक्र (whorl) रूप में पाये जाते हैं। बन-झाऊ (*Tamarix*) में छोटे छादीय शल्क-पत्र (sheathing scale-leaves) होते हैं जो तने से चिपके रहते हैं।

(४) ध्वन्त-फलक (फिलोड, **Phyllode**). आस्ट्रेलियन बबूल (Australian *Acacia*) (चित्र ४.३३) में पेटिओल अथवा मध्य-नाडी (rachis) का कोई-सा भाग चपटा या पखदार होकर पत्ती की आकृति ग्रहण कर लेता है तथा उसका रंग भी हरा हो जाता है। इस चपटे अथवा पंखदार पर्णध्वन्त (पेटिओल या रेकिस) को ध्वन्त-फलक (फिलोड) कहते हैं। इसकी साधारण पत्ती, जो पक्षवत्-संयुक्त होती है, अकुरित



चित्र ४.३२



चित्र ४.३३

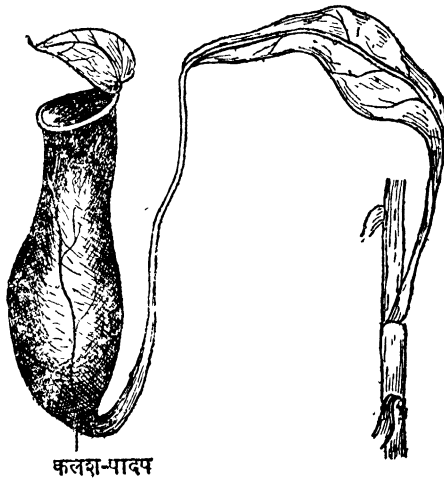
संपरिवर्तित पत्ती। चित्र ४.३२ अरमण्डा (*Argemone*) की पत्ती जिसमें सत्य है।

चित्र ४.३३ फिलोड और द्वि-पक्षवत् पत्ती दर्शाते हुए

आस्ट्रेलियन अकेसिया (*Acacia*) की पत्ती।

अवस्था में विकसित होती है अथवा कुछ जातियों में बाल्यावस्था में विकसित होती है किन्तु शीघ्र ही झड़ जाती है और तब फिलोड ही पत्ती के समस्त कार्य सम्पादित करता है। फिलोड का पक्ष आमतौर पर खड़ी (vertical) दिशा में विकसित होता है ताकि उसकी सतह पर सूर्य की रोशनी न पड़ सके। इससे जल का वाष्पन कम हो जाता है। आस्ट्रेलियन बबूल की लगभग ३०० जातियाँ (species) ऐसी हैं जिनमें वृन्त-फलक (phyllode) होता है।

(५) कलश (पिचर, **Pitcher**). कलश-पादप (pitcher plant, *Nepenthes*) में पत्ती कलश (पिचर या घड़े) का रूप धारण कर लेती है (चित्र ४.३४)। उसमें जो पतला डण्ठल होता है वह कभी-कभी संजनी की भाँति लिपट जाता है और कलश को उच्छीर्ष साधे रहता है और निचला आधा भाग पत्ती के रूप में चपटा हो जाता है। पिचर में एक ढक्कन होता है जो पिचर की बाल्यावस्था में उसका मुँह ढके रहता है। पिचर का कार्य कीड़ों को पकड़ना तथा पचाना है। कलश पादप की पत्ती की आकारिकी (morphology) इस प्रकार है—पिचर स्वयं एक पत्ती के फलक (leaf-blade) का रूपान्तर है। फलक की ऊपरी सतह पिचर की भीतरी सतह बनाती है। ढक्कन पत्ती के शिखर के उद्गर्ध (outgrowth) के रूप में बनता है। कोमल डण्ठल जो संजनी की भाँति लिपट जाता है, वास्तव में पेडिओल (पर्णवृन्त) का दूसरा रूप है। पत्तीनुमा अंग जो फलक-सा दिखाई देता है तथा उसी की भाँति व्यवहार करता है, पर्णाधार (leaf-base) से पैदा होता है।



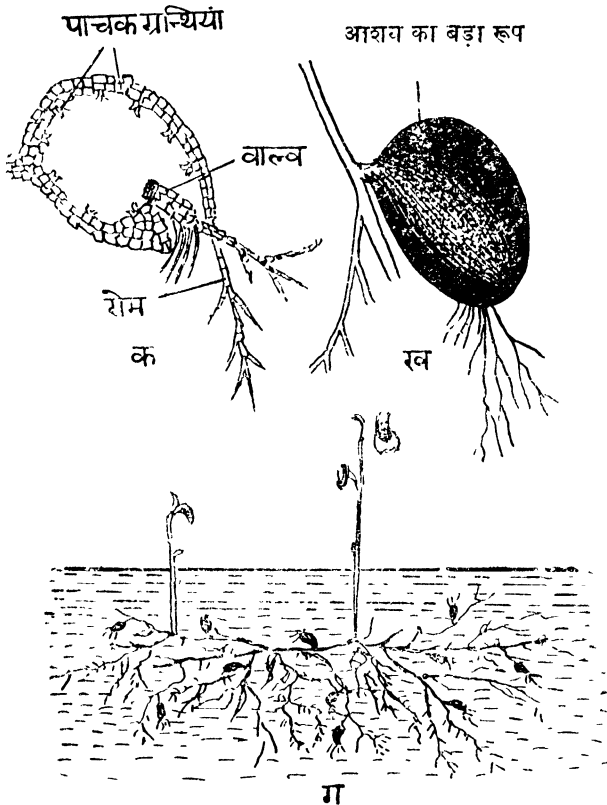
कलश-पादप

चित्र ४.३४ कलश-पादप (*Nepenthes*) की एक पत्ती।

एक आरोही उपरिरोही (climbing epiphyte) में जिसे डिस्चिडिया रैफ्लेसियाना (*Dischidia rafflesiana*) कहते हैं और जो गौहाटी तथा आसाम के दूसरे भागों में पाया जाता है, पत्ती के एक प्रकार के कलश में रूपान्तरण का एक अनोखा उदाहरण

मिलता है। कलश का आकार २ से ३½ इंच तक लम्बा तथा ½ से १ इंच तक चौड़ा होता है। किन्तु इसकी प्रकृति मांसाहारी नहीं होती। नेपेन्थीज की तरह इसमें भी नीचे की ओर मुँह होता है, पर इसमें ढक्कन नहीं लगा होता; बल्कि ढक्कन की जगह उसमें एक जीभ-सी होती है जो अन्दर की ओर निकली होती है। कलश की खाली जगह (cavity) में एक जड़ प्रवेश कर जाती है जो काफी शाखित (branched) हो जाती है। पानी बरसने पर कलश में पानी भर जाता है। इससे पहले ही उसमें चीटियाँ कूड़ा इकट्ठा कर देती हैं। तब जड़ इन सबको सोख लेती है।

(६) आशय (ब्लैडर, **Bladder**). ब्लैडरवर्ट (*Utricularia*) (चित्र ४.३५) में, जो तैरने वाली एक पतवार (weed) होती है तथा साधारणतया तालाबों



[After Brimble]

चित्र ४.३५ ब्लैडरवर्ट (*Utricularia*)। (क) एक ब्लैडर का सेक्शन (विशालित);
 (ख) एक ब्लैडर का विशालित (magnified) बाह्य रूप;
 (ग) प्राकृतिक स्थिति में बहुत-से छोटे-छोटे ब्लैडर।

में पायी जाती है, पत्ती बहुत काफी खण्डित होती है। इन खण्डों में से कुछ रूपान्तरित होकर ब्लैडर के समान आकृति बनाती है। इनका प्रवेश द्वार खटकेवाला होता है जिसमें होकर केवल पानी में रहनेवाले नन्हें-नन्हें जन्तु ही प्रवेश कर सकते हैं, किन्तु प्रवेश करने के बाद वाहर नहीं आ सकते।

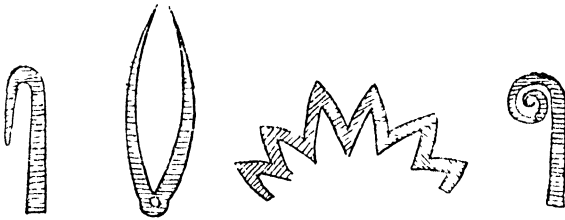
कलिकापर्णविन्यास (प्रीफोलिएशन, **Prefoliation**)

कली में पत्तियाँ जिस क्रम में रहती हैं, उसे कलिकापर्णविन्यास* कहते हैं। इसका विचार दो दृष्टिकोणों से किया जाता है; प्रथम, हर व्यक्तिगत पत्ती कली में किस ढंग से मुड़ी अथवा लिपटी है (टिक्सिस, **ptyxis**) ; तथा दूसरा यह कि कली में पत्तियाँ एक दूसरे के प्रति किस प्रकार सम्बन्धित या सुसज्जित हैं (वर्नेशन, **vernation**) । पर्ण-कलिका में पत्तियों का क्रम तथा पुष्प-कलिका में पुष्प-पत्रों का क्रम लगभग एक-सा होता है। और इसलिए दोनों की किस्मों को समझाने के लिए एक-से पारिभाषिक शब्द प्रयोग किये जाते हैं।

(क) बलना (टिक्सिस, **Ptyxis**).

(१) अधोवलित (रिक्लाइनेट, **Reclinate**). जब फलक का ऊपरी अर्ध-भाग निचले अर्धभाग पर झुका रहता है, जैसे लीकाट (loquat) में (चित्र ४.३६)।

(२) मध्य-नाड़ी-वलित (कनडुप्लीकेट, **ConduPLICATE**). जब पत्ती



चित्र ४.३६

चित्र ४.३७

चित्र ४.३८

चित्र ४.३९

टिक्सिस। चित्र ४.३६ रिक्लाइनेट। चित्र ४.३७ कनडुप्लीकेट।

चित्र ४.३८ प्लीकेट। चित्र ४.३९ रॉल्लेड।

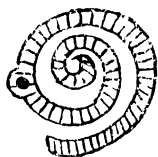
* विभिन्न लेखकों द्वारा इसके लिए विभिन्न शब्द, जैसे प्रीफोलिएशन (prefoliation), प्रीफ्लोरेशन (prefloration), ऐस्टिवेशन (astivation), टिक्सिस (ptyxis) आदि प्रयुक्त किये गये हैं।

मध्य-नाड़ी पर लम्बान में मुड़ी रहती है, जैसे दुली-वम्पा (*Magnolia*), कचनार (*Bauhinia*), अमरुद और शकरकन्द में (चित्र ४.३७)।

(३) आयाम-वलित (प्लीकेट, **Plicate** अथवा प्लेटेड, **plaited**)। जब पत्ती नाडियों पर लम्बान में टेढ़े-मेढ़े तरीके से धार-वार मुड़ी होती है, जैसे ताड़ में (चित्र ४.३८)।

(४) अग्रवलित (सर्पिनेट, **Circinate**)। जब पत्ती शिखर की ओर से आधार की ओर मुड़ी होती है, जैसे फर्न में (चित्र ४.३९)।

(५) परिवलित (कन्वोल्यूट, **Convolute**)। जब पत्ती एक किनारे से



चित्र ४.४०



चित्र ४.४१



चित्र ४.४२

चित्र ४.४० कन्वोल्यूट। चित्र ४.४१ इन्वोल्यूट। चित्र ४.४२ रिवोल्यूट।

दूसरे की ओर मुड़ी होती है, जैसे केला, एराण्डस् तथा ब्राह्मी बूटी (*Indian pennywort*) में (चित्र ४.४०)।

(६) अन्तर्वलित (रन्वोल्यूट, **Involute**)। जब पत्ती के दोनों किनारे मध्य-नाड़ी अथवा पत्ती के मध्य की ओर ऊपरी सतह पर मुड़े होते हैं, जैसे कमलिनी, कमल, मण्डविच आइटीण्ड क्लाइम्बर (*Antigonon*) तथा चित्रक (*Plumbago*) में (चित्र ४.४१)।

(७) बहिर्वलित (रिवोल्यूट, **Revolute**)। जब पत्ती इन्वोल्यूट टिपिसम की भाँति ही निचली सतह पर मुड़ी होती है, जैसे कनेर तथा देशी बादाम में (चित्र ४.४२)।

(ख) पत्रपारस्पर्य (वर्नेशन, **Vernation**)

पत्तियों में वर्नेशन निम्नलिखित प्रकार का हो सकता है

- (१) धारास्पर्शी (वाल्वेट, **Valvate**),
- (२) न्युट्रेस्टित (ट्विस्टेड, **Twisted**) या ऐंठी हुई।
- (३) अनियमछादी (इम्ब्रिकेट, **Imbricate**), [देखिए पृष्ठ १३४] तथा
- (४) इक्विटेण्ट (**Equitant**), जब पत्ती के दोनों किनारे विरुद्ध पत्ती के दोनों किनारों को ढके रहते हैं, जैसे वैण्डा (*Vanda*) तथा डेण्ड्रोबियम (*Dendrobium* दोनों ही एपिफिटिक ऑर्किड हैं) और वाच अथवा स्वीट फ्लैग (*Acorus calamus*) में।



चित्र ४.४३



चित्र ४.४४



चित्र ४.४५



चित्र ४.४६

वर्नेशन। चित्र ४.४३ वाल्वेट। चित्र ४.४४ ट्विस्टेड। चित्र ४.४५ इम्ब्रिकेट। चित्र ४.४६ इक्विवेटेण्ट।

पत्र-विन्यास (फिलोटैक्सी, Phyllotaxy)

पत्र-विन्यास अथवा फिलोटैक्सी (*phylla*—पत्तियाँ; *taxis*—क्रम या व्यवस्था) का अर्थ उन विधियों से है जिनके अनुसार वे तने अथवा शाखाओं पर सुसज्जित रहती हैं। इस सजावट का ध्येय यह है कि एक पत्ती की दूसरी पत्ती पर छाया न पड़े और हर पत्ती को आवश्यकता के अनुसार अधिक से अधिक सूर्य का प्रकाश मिल सके, जिससे वे खद्य-निर्माण का काम सुचारु रूप से कर सकें। तीन मुख्य प्रकार का पत्र-विन्यास पौधों में पाया जाता है।

१. एकान्तर (Alternate) या बिखरी हुई (Scattered). इसमें एक पर्वसन्धि पर एक ही पत्ती निकलती है (चित्र ४.४७), जैसे तम्बाकू, चाइना रोज, सरसो, सूरजमुखी, आदि में।

२. अभिमुख (Opposite). इसमें हर पर्व-सन्धि (node) पर दो पत्तियाँ निकलती हैं, एक इस तरफ और एक उस तरफ (चित्र ४.४८)। अभिमुख-पत्र-विन्यास में अधिकतर एक पर्व-सन्धि पर की दोनों पत्तियाँ निचली या ऊपरी पर्व-सन्धि पर की पत्तियों से समकोण बनाती है। इस प्रकार के क्रम को अभिमुख-स्वस्तिका (opposite decussate) या केवल स्वस्तिका (डिकसेट, decus-



चित्र ४.४७



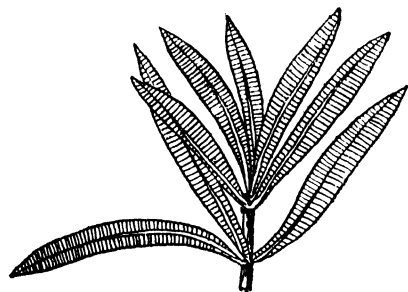
[After Brown]

चित्र ४.४८

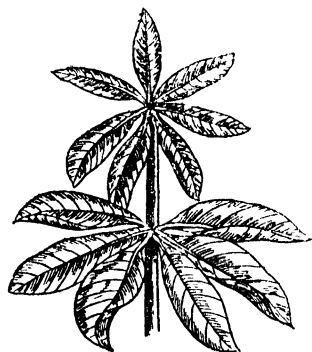
फिलोटैक्सी के प्रकार। चित्र ४.४७ एकान्तर फिलोटैक्सी। चित्र ४.४८ अभिमुख।

sate) कहते हैं। इसके उदाहरण हैं तुलसी, रंगन (*Ixora*), आक, अमरुद, आदि। फिर भी, कभी-कभी ऐसा देखा जाता है कि एक जोड़ी पत्तियों के ठीक नीचे उसी तल (plane) पर पत्तियों की दूसरी जोड़ी भी लगी होती है। पत्तियों के इस प्रकार के विन्यास (arrangement) को आच्छादित (superposed) कहते हैं, जैसे रंगून क्रीपर (*Quisqualis*) में। ऐसी गाखाएँ जो क्षैतिज दिशा में वृद्धि करती हैं, जैसे अमरुद, रंगन (*Ixora*), इत्यादि में, साधारणतया आच्छादित पत्तियाँ (superposed leaves) धारण करती हैं। अक्सर एक ही पौधे में एकान्तर (alternate) और अभिमुख (opposite) दोनों प्रकार का पत्र-विन्यास होता है।

३. भ्रमि (Whorled)). इसमें हर पर्व-सन्धि (node) पर दो से अधिक पत्तियाँ निकलती हैं और ये एक घेरे या भ्रमि के रूप में सजी रहती हैं (चित्र ४.४९ और



चित्र ४.४९



चित्र ४.५०

चित्र ४.४९ भ्रमि फिनोटैक्सि (कनेर में)। चित्र ४.५० भ्रमि फिलोटैक्सि।

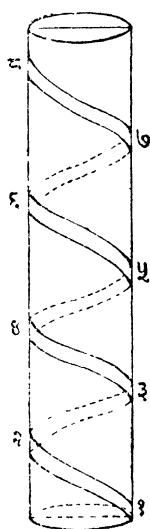
४.५०), जैसे चटियन (*Alstonia*), कनेर (नेरियम, *Nerium*), अलामण्डा (*Allamanda*), मोएना (*Vangueria*) आदि में। कभी-कभी अभिमुख तथा भ्रमि दोनों प्रकार के पत्र-विन्यास एक ही पौधे में होते हैं।

एकान्तर पत्र-विन्यास (Alternate phyllotaxy). इसमें पत्तियाँ तने के चारों ओर सर्पिल रूप में (spirally) सजी होती हैं। अब अगर हम एक पेंचदार रेखा की कल्पना करें जो एक पत्ती से आरम्भ हो और तने के चारों ओर दूसरी पत्तियों के आधारों को छूती हुई गुजरे, तो हम देखेंगे कि वह रेखा अन्त में एक ऐसी पत्ती पर पहुँच कर रुकती है जो उस पत्ती के, जिससे वह रेखा आरम्भ की गई थी, बिल्कुल ऊपर है। इस प्रकार की काल्पनिक रेखा को पर्ण विकास-सर्पिल (genetic spiral) कहते हैं, और खड़ी रेखा अर्थात् पत्तियों की खड़ी पंक्ति को उदग्रपंक्ति (अर्थोस्टिची, orthostichy; orthos—सीधी, stichos—रेखा) कहते हैं।

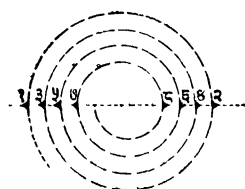
१. द्विपंक्तिय पत्र-विन्यास (Phyllotaxy $\frac{1}{2}$ or 2—ranked or distichous). घासों, बुलरश, पंथ-पादप (traveller's tree), बेलमकण्डा (*Bellama-*

acanda), दुलाल चम्पा (butterfly lily), अदरख, हल्दी, वैण्डा (*Vanda*) आदि में तीसरी पत्ती पहली पत्ती के बिल्कुल ऊपर होती है तथा विकास-सर्पिल (जेनेटिक स्पाइरल) उस पत्ती तक एक पूरा चक्कर लगा कर पहुँचता है और उसके मार्ग में दो पत्तियाँ (पहली तथा तीसरी पत्तियों के अतिरिक्त) आती हैं (चित्र ४.५१)। चौथी पत्ती दूसरी के बिल्कुल ऊपर होती है पाँचवी पत्ती पहली तथा तीसरी के ऊपर, और अन्य पत्तियाँ इसी क्रम के अनुसार होती हैं। इस प्रकार केवल दो उदग्रपत्तियाँ (orthostiches) होती हैं, अर्थात् पत्तियाँ दो पक्तियों या श्रेणियों में सजी होती हैं; इस प्रकार पत्र-विन्यास २-श्रेणी गत अथवा द्विपंक्तिय (di-stichous; *di*—दो, *stichos*—रेखा) हुआ। अब अगर पत्तियों की स्थितियाँ एक वृत्त (circle) या घड़ी की कमानी रूपी चित्र पर अंकित करे तो देखेंगे कि वे वृत्त पर आधी दूरी तक ही अंकित होती हैं जिसमें पत्तियाँ एक दूसरी से समान दूरी पर हैं। ऐसे पत्र-विन्यास को आधा पत्र-विन्यास कहते हैं तथा $\frac{1}{2}$ अंक द्वारा अंकित करते हैं। रेखा के ऊपर के अंक से विकास-सर्पिल (जेनेटिक स्पाइरल) के घुमावों की संख्या का बोध होता है, तथा रेखा के नीचे वाले अंक से रास्ते में आनेवाली पत्तियों की संख्या का बोध होता है।

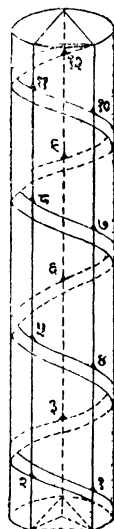
इसमें विकास-सर्पिल (जेनेटिक स्पाइरल) एक पूरा घुमाव करता है तथा वृत्त



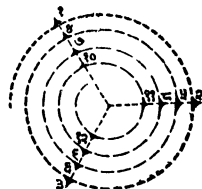
चित्र ४.५१



चित्र ४.५२



चित्र ४.५३



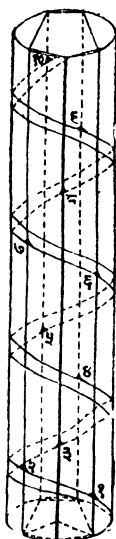
चित्र ४.५४

फिलोटैक्सि और कोणिक अपसरण। चित्र ४.५१ फिलोटैक्सि $\frac{1}{2}$ । ४.५२ कोणिक अपसरण 180° । चित्र ४.५३ फिलोटैक्सि $\frac{1}{2}$ । ४.५४ कोणिक अपसरण 120° ।

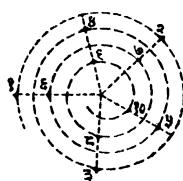
के केन्द्र पर 360° का कोण बनाता है तथा उसके मार्ग में दो पत्तियाँ आती हैं। इस प्रकार कोणिक अपसरण (angular divergence) अर्थात् किन्हीं भी दो पत्तियों के बीच अन्तर का कोण 360° का $\frac{1}{2}$, अर्थात् 180° होता है।

२ त्रिपंक्तिय पत्र-विन्यास (Phyllotaxy $\frac{1}{3}$ or 3-ranked or tristichous). सज्जे (sedges) में देखा जाता है कि चौथी पत्ती पहली पत्ती के बिल्कुल ऊपर होती है और उस पत्ती तक पहुँचने में विकास-सपिल (जेनेटिक स्पाइरल) एक पूरा चक्कर करता है तथा उसके मार्ग में तीन पत्तियाँ आती हैं। पाँचवी पत्ती दूसरी के ऊपर होती है छठी पत्ती तीसरी के ऊपर तथा सातवी पत्ती चौथी तथा पहली के ऊपर होती है (चित्र ४.५३)। इस तरह इसमें तीन उदग्र पंक्तियाँ (ऑर्थोस्टिचीज, orthostichies) हुई, अर्थात् पत्तियाँ तीन पंक्तियों या श्रेणियों में सजी होती है। अब अगर उनकी स्थितियाँ एक वृत्त अथवा कमानों की आकृति के चित्र पर अंकित करें तो देखेंगे कि वे वृत्त के तिहाई दूरी पर होगी। इस प्रकार पत्र-विन्यास $\frac{1}{3}$ या ३ श्रेणीगत या त्रिपंक्तिय (ट्राइस्टिचस, tristichous) हुई, कोणिक अपसरण ३६०° का $\frac{1}{3}$ अर्थात् १२०° हुआ।

३. पंच पंक्तिय पत्र-विन्यास (Phyllotaxy $\frac{1}{5}$ or 5-ranked or pentastichous). चाइना रोज में (चित्र ४.५४) देखा गया है कि छठी पत्ती पहली के बिल्कुल ऊपर होती है, तथा पर्ण विकास-सपिल (जेनेटिक स्पाइरल) उस पत्ती तक पहुँचने में दो घेरे पूरा करता है। सातवी पत्ती दूसरी के ऊपर, आठवी पत्ती तीसरी के ऊपर, नवी चौथी के ऊपर, दसवी पाँचवी के ऊपर तथा ग्यारहवी पत्ती छठी तथा



चित्र ४.५५



चित्र ४.५६

चित्र ४.५५ फिलोटैक्सी $\frac{1}{5}$ । ४.५६ कोणिक अपसरण १४४° ।

पहली के ऊपर होती है। इस तरह इसमें पाँच उदग्र पंक्तियाँ (orthostichies) हुई, अर्थात् पत्तियाँ पाँच पंक्तियों में सजी होती है, और चूँकि विकास-सपिल (जेनेटिक स्पाइरल) के दो चक्करों के मार्ग में पाँच पत्तियाँ आती हैं इसलिए वृत्त पर पत्तियाँ

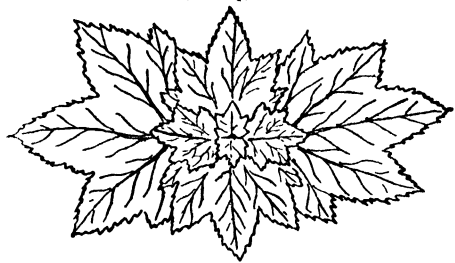
दो-बटे-पाँच ($\frac{2}{5}$) के अन्तर पर अंकित होती हैं। अतः पत्र-विन्यास $\frac{2}{5}$ या ५ श्रेणीगत या पाँच-पंक्तीय हुआ। एकान्तर पत्र-विन्यास का यह सर्व साधारण उदाहरण है जो पौधों में मिलता है। कोणिक अपसरण इस प्रकार के पत्र-विन्यास (फ़िलोटैक्सी) में 360° का $\frac{2}{5}$ या 144° हुआ।

[पहले दोनों उदाहरणों के अंश (numerator) तथा हर (denominators) को अलग-अलग जोड़ने से भी यही 'भिन्न' प्राप्त की जा सकती है। उदाहरणार्थ $\frac{1+1}{2+2} = \frac{2}{4}$ । अगले उदाहरण में यह भिन्न $\frac{1+2}{3+4} = \frac{3}{7}$ होगी तथा यथाक्रम और भी उदाहरण निकाले जा सकते हैं। $\frac{3}{7}$ से अधिक के भिन्न (fraction) पौधों में साधारणतया नहीं मिलते।]

पर्णकुट्टिम (Leaf Mosaic).

अनेकों मन्दिरों तथा सुन्दर भवनों के फ़र्श, दीवारों और छतों पर हम विभिन्न प्रकार के रंगीन शीशे तथा पत्थर एक विशेष बूटे के रूप में देखते हैं। इस प्रकार के नमूने को मोज़ेक (mosaic) कहते हैं। इसी प्रकार पौधों में हम पत्तियों का वितरण तथा बिठान (setting) एक विशेष बूटे के रूप में देखते हैं। पत्तियों के वितरण के इस ढंग को पर्णकुट्टिम (leaf mosaic) कहते हैं। पत्तियों को अपना भोज्य-पदार्थ बनाने के हेतु सूर्य की किरणों की विशेष आवश्यकता पड़ती है; इसी कारण वे अपने

को इस प्रकार स्थित कर लेती हैं कि वे एक दूसरे को कम से कम ढकें। इस प्रकार यह पाया जाता है कि वे एक दूसरे को कम से कम ढकती हैं। गार्डन नेस्टशियम, कुप्पी - मणि (Acalypha), विगोनिया (Begonia), और आरोही पौधे जिनमें पत्तियाँ गुच्छों में होती हैं, का निरीक्षण करने पर यह विदित होता है कि वे बहुत कुछ खपरैल (tiles) की भाँति सजी होती हैं, जैसे कि खपरैल के मकान में खपरे लगे होते हैं। वे पेड़ जिनमें मूल-पत्र (radical leaves) गुच्छे में लगी होती हैं, और वे जिनमें पर्व छोटे होते हैं और पत्तियाँ बड़ी, तथा भ्रमि पत्र-विन्यास (whorled-phyllotaxy) में ऊपरवाली पत्तियाँ नीचेवाली पत्तियों के एक के बाद दूसरी होती हैं। जब पत्तियाँ बहुत घनी होती हैं तो पच्चीकारी के काम में शीशे के जड़ाव के सदृश्य लगी होती हैं, और बड़ी पत्तियों के बीच के रिक्त स्थान में छोटी पत्तियाँ जड़ी हुई मालूम देती हैं। ज़मीन पर फैलनेवाले पौधे, जैसे खट्टी बूटी (Oxalis), भी लगभग ठीक एक मोज़ेक जैसी आकृति बनाते हैं। क्षैतिज फैलनेवाली शाखाओं में, जैसे कंटेली चम्पा (Artabotrys) की पत्तियाँ द्विपक्षीय (distichous) हो जाती हैं, अर्थात् वे मुड़कर अपने को इस



[After Lowson & Sahni]

चित्र ४.५७ पर्णकुट्टिम (leaf mosaic)।

प्रकार घुमा लेती है कि वे अपनी चपटी ऊपरी सतह सूर्य के प्रकाश के सम्मुख कर देती हैं।

पत्तियों के कार्य.

साधारणतया सच्ची पत्तियों (foliage leaves) के तीन कार्य होते हैं (१) भोज्य-पदार्थ का निर्माण, (२) वायुमण्डल तथा पौधे के बीच गैसों का आदान-प्रदान (interchange of gases) और (३) आवश्यकता से अधिक पानी को भाप बना कर अपने द्वारा निकालना। इसके अतिरिक्त मांसल पत्तियाँ (fleshy leaves) भोजन तथा पानी इकट्ठा रखने के काम आती हैं। कुछ दशाओं में पत्तियाँ कलियाँ पैदा करती हैं जो पौधे के वर्धी-प्रजनन (vegetative reproduction) का कार्य करती हैं। सपरिवर्तित पत्तियाँ विशेष प्रकार के कार्य करती हैं।

१. भोजन-निर्माण (Manufacture of food). पत्ती का मुख्य कार्य भोजन बनाना है (विशेषकर शकर तथा स्टार्च), जो कि केवल दिन में होता है, अर्थात् सूर्य की रोशनी में जिससे कि ऊर्जा (energy) प्राप्त होती है। यह कार्य पत्ती, हरिमकणक (क्लोरोप्लास्ट, जो कि उसमें मौजूद रहते हैं) तथा पानी और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड, जो क्रमशः पृथ्वी तथा वायु से प्राप्त होते हैं, की मदद से करती है।

२. गैसों का आदान-प्रदान (Interchange of gases). पौधे तथा वायुमण्डल के बीच गैसों का आदान-प्रदान पत्तियों द्वारा हो होता है। इस क्रिया को सुगम बनाने के लिए पत्ती पर महीन-महीन मुख (stomata) होते हैं जो कि विशेषकर पत्ती की निचली सतह पर स्थित होते हैं। गैसों का यह आदान-प्रदान विशेष रूप से श्वसन (respiration) के लिए होता है, जो सभी जीवित कोशाओं द्वारा सम्पन्न होता है। ये कोशाएँ ऑक्सीजन भीतर लेती हैं और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड बाहर निकालती हैं। और साथ ही केवल हरी कोशाओं द्वारा ही भोजन-निर्माण (manufacture of food) के लिए, वे कार्बन-डाइ-ऑक्साइड भीतर ले लेती हैं और ऑक्सीजन बाहर निकालती हैं।

३. पानी का वाष्प (Evaporation of water). मूल-रोम निरन्तर पृथ्वी से पानी अवशोषित करते रहते हैं जो कि पेड़ की आवश्यकता से कहीं अधिक होता है। यह अधिक पानी पत्तियों द्वारा ही वाष्प के रूप में बाहर निकाल दिया जाता है।

४. भोजन-संग्रहण (Storage of food). धीकुँवार (Indian aloe) और नोनिया-शाक (Portulaca) को मांसल पत्तियाँ तथा प्याज की मांसल शल्कें (fleshy scales) पौधे के भविष्य के इस्तेमाल के लिए, पानी और भोज्य-पदार्थ एकत्रित करती हैं। मरूस्थलीय पौधों की मांसल और रसदार (succulent) पत्तियाँ हमेशा ही अधिक मात्रा में पानी, म्यूसिलेज (mucilage) और भोज्य-पदार्थ इकट्ठा रखती हैं।

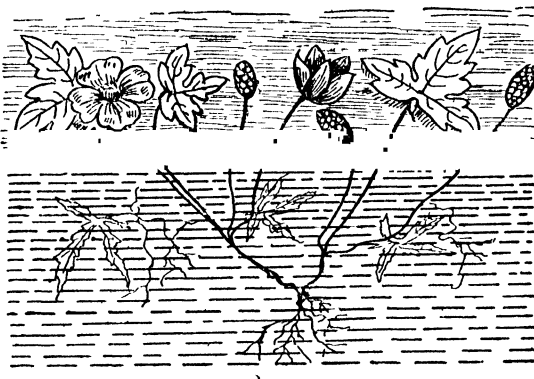
५. वर्धी-प्रजनन (Vegetative propagation). पथर-चटा (Bryophyllum) और शोभापर्ण (Begonia) की पत्तियाँ अपने ऊपर कलियाँ उत्पन्न करती हैं (चित्र २.१६ और २.१७) जिनके द्वारा इन पौधों का वर्धी-प्रजनन (vegetative

reproduction) होता है। वाकिंग फर्न्स (*Adiantum caudatum* और *Polypodium flagelliferum*), अपनी पत्तियों के सिरों (tips) द्वारा वर्धी-प्रजनन करते हैं। पत्तियाँ पृथ्वी की ओर झुक जाती हैं और ज़मीन छूते ही जड़ें दे देती हैं और एक कली उत्पन्न करती हैं जो एक नये पौधे में विकसित हो जाती है।

विषम-पर्णता (Heterophylly).

बहुत-से पौधों में एक ही पेड़ पर कई प्रकार की पत्तियाँ लगी होती हैं। यह दशा विषम-पर्णता अथवा पत्र-भिन्नता (**heterophylly**, *heteros*—विभिन्न, *phyllo*—पत्तियाँ) कहलाती है। विषम-पर्णता बहुत-से पानी के पौधों में पायी जाती है, और विशेषकर उनमें जो बहते हुए पानी में उत्पन्न होते हैं। इनमें तैरनेवाली पत्तियाँ और पानी में डूबी हुई पत्तियाँ विभिन्न प्रकार की होती हैं, पहली अधिकतर चौड़ी होनी है और लगभग पूर्ण रूप से फैली (expanded) रहती है और अखण्डित अथवा केवल हल्की खण्डित (lobed) होती है, जबकि पानी में डूबी हुई पत्तियाँ संकरी (narrow), फीते की तरह, रेखाकार (linear) या बहुत अधिक खण्डित होनी हैं।

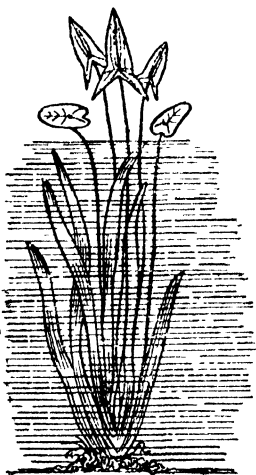
पानी में रहनेवाले पौधों में विषम-पर्णता (हेट्रोफिली) उनके वातावरण की दो विभिन्न दशाओं के लिए अनुरूपन (adaptation) मानी जाती है। ज़मीन पर उगने-वाले कुछ पौधों में भी विषम-पर्णता होती है किन्तु इसका कारण बताना कठिन है।



विषम-पर्णता। चित्र ४.५८ क्रोफुट (crowfoot)।

पानी में उगनेवाले पौधों में वाटर क्रोफुट (*Ranunculus aquatilis*) में (चित्र ४.५८) और कार्डेंथेरा ट्राइफ्लोरा (*Cardenthera triflora*) इत्यादि में विषम-पर्णता पायी जाती है। इनकी डूबी हुई पत्तियाँ बहुत खण्डित और तैरनेवाली

या हवा में निकली हुई पत्तियाँ सम्पूर्ण या हल्की खण्डित होनी है। वाटर प्लेण्टेन (*Alisma Plantago*) और ऐरोहेड (*Sagittaria*)



विषम पर्णता। चित्र ४.५९
ऐरोहेड (*Sagittaria*)।

में वे कभी-कभी पतली और फीते की-सी होती हैं, जबकि ऊपर निकली पत्तियाँ सम्पूर्ण या चौड़े खण्डों की होती हैं। कुत्रा (*Limnophila heterophylla*) में पत्तियों के सारे क्रमिक रूपान्तरों (transitions) के नमूने मिलते हैं। जमीन पर उगनेवाले पौधों, जैसे स्टर्कलिया अलाटा (*Sterculia alata*), चपलाश (*Artocarpus chaplasha*), भूई-दुमुर (*Ficus heterophylla*), इत्यादि में पत्तियों के साधारण आकार से लेकर विभिन्न नमूनों के खण्डित पत्ते पाये जाते हैं। दार्जिलिंग, शिलांग और खासी पर्वत श्रेणियों पर पायी जानेवाली भूमि पर चित्त रहनेवाली एक शाक (herb) जिसे हेमीफ्रैग्मा हेट्रोफिलम (*Hemiphragma heterophyllum*) कहते हैं, में दो प्रकार की पत्तियाँ पायी जाती हैं। इसमें मुख्य तने की पत्तियाँ अण्डवत् (ovate) और सम्पूर्ण होती हैं और छोटी, कक्षीय शाखाओं की पत्तियाँ सूच्याकार या सुई की-सी होती हैं।

रचना-सदृशता और कार्य-सदृशता (Homology and Analogy).

रचना-सदृशता संपरिवर्तित अंगों की बाहरी बनावट (morphology) का अध्ययन है, तथा समान बनावट और कार्य के दृष्टिकोण से अंगों का अध्ययन कार्य-सदृशता है। इसको यों भी कह सकते हैं कि जो अंग अपने उद्भव (origin) में एक दूसरे के समान होते हैं और इस प्रकार रचना-सदृश भी, वे एक दूसरे से रचना में रचना सदृश (homologous) कहे जाते हैं; तथा समान कार्य करनेवाले अंग जो अपनी रचना में भी एक दूसरे के समान हों, तो उद्भव में भिन्न होने पर भी एक दूसरे के कार्य-सदृश (analogous) कहे जाते हैं। इस प्रकार सब संजनियाँ (tendrils) एक दूसरी के कार्य-सदृश हैं; क्योंकि वे रचना और कार्य में समान हैं; लेकिन पेंशन-फलावर की सजनी कक्षस्थ-कली के रचना-सदृश है, अर्थात् कक्षस्थ-कली का रूपान्तर है। मटर की संजनी उसकी छोटी पत्तियों के रचना-सदृश है और कुमारिका (*Smilax*) की संजनी उसके अनुपत्रों (stipules) के। इसी प्रकार प्रकंद (rhizome) व आकन्द (tuber) जड़ों के कार्य-सदृश हैं; किन्तु तने के रचना-सदृश है। कांटे (थॉर्न) और शल्य (स्पाइन) कार्य-सदृश, संरचना हैं; किन्तु रचना सदृशता में कांटे शाखाओं और शल्य-पत्रों (scale leaves) के समान हैं। बबूल (*Acacia*) और देशी बेर (*Zizyphus*) आदि के शल्य, स्टिप्यूलस के रचना-सदृश हैं।

पौधों में प्रतिरक्षक यंत्र-रचना (Defensive Mechanisms in Plants)

सारा जन्तु-जगत अप्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष ढंग से भोजन के लिए वनस्पति-जगत पर निर्भर (parasitic) है। इसलिए पौधे या तो तरह-तरह के जन्तुओं के शिकार बन जाते हैं (विशेष रूप से वह शाकाहारी जीवधारियों के शिकार बन जाते हैं जो केवल वनस्पति पर ही निर्वाह करते हैं); या फिर उनमें ऐसे अग्ररक्षण-यंत्र होते हैं जिनसे वे आत्मरक्षा कर सकें और शत्रुओं के आक्रमण से अपने को बचा सकें। धरती पर स्थित रहने के कारण वे शत्रुओं के आक्रमण से बचने के लिए भाग नहीं सकते।

१. रक्षा-सामग्री (Armature).

१. कांटे, शल्य, शिताप्र और दृढ़रोम (Thorns, spines, prickles and bristles). ये सब नुकील और कड़े अंग विशेषतया शाकाहारी जीवों से बचाव के लिए विकसित होते हैं। छोटे शल्यमय (spinous) पौधे जिन्हें थिसिल्स (thistles) कहते हैं, उदाहरणार्थ ग्लोब थिसिल (globe thistle, *Echinops*), अपने शरीर पर छोटे-छोटे कांटे और रोयें उगा लेते हैं जिससे जीवधारी उनके निकट आने का साहस न करें।

(क) कांटे (Thorns). ये शाखाओं के रूपान्तर हैं जो पौधे की काफी गहराई में स्थित ऊतियों (tissues) से उत्पन्न होते हैं। ये सीधे और कड़े होने हैं तथा मोटी खालवाले जीवों में भी चुभ सकते हैं। बेल, मोएना (*Vangueria*), नीबू, अनार (pomegranate), दुरैंता (*Duranta*), पनीआला (*Flacourtia*), करीदा (*Carissa*) और कई अन्य पौधों में यह कांटे आत्म-रक्षक यंत्र के रूप में विशेष रूप से पाये जाते हैं।

(ख) शल्य (स्पाइन्स, Spines) ये पत्तियों या पत्तियों के विभिन्न भागों के रूपान्तर होते हैं और आत्मरक्षा का कार्य सम्पन्न करते हैं। यह अनन्नास (pine-apple), खजूर (date-palm), भरभण्डा या पीला धतूरा (prickly-poppy), बबूल (*Acacia*), विलायती कैत (American aloe, *Agave*), डैगरप्लाण्ट (*Yucca*) इत्यादि में पाये जाते हैं। डैगरप्लाण्ट में पत्तियों के सिरे नुकीले होकर बाहर की ओर मुड़े रहते हैं। हर एक पत्ती तलवार के आकार की मालूम होती है और तलवार का-सा व्यवहार भी करती है। और इस प्रकार इस जाति के पौधे चरनेवाले जानवरों से सुरक्षित रहते हैं। विलायती-कैत (*Agave*) और कुछ दूसरे पौधों के कांटे छोटी अवस्था में ऊपर की ओर नुकीले होते हैं; परन्तु धीरे-धीरे ये कांटे क्षैतिज और बाहर की दिशा में होने लगते हैं और अन्त में इनकी नोकें नीचे की ओर मुड़

जानी है। इस प्रकार जीवन की समस्त अवस्थाओं में पौधे जानवरों के आक्रमण से बचे रहने है।

(ग) शिताग्र (प्रिकिल्स, **Prickles**). प्रिकिन भी कांटों के समान कड़े और नुकीले होते हैं; परन्तु अधिकतर वक्र (curved) होते हैं और इनकी उत्पत्ति बाहरी भाग से होती है, इसके अलावा वह तने, पत्तियों या शाखाओं पर जहाँ-तहाँ असमान रूप से उगे रहते हैं। प्रिकिल्स प्रायः गुलाब, पंजीरा या कोरलट्री (*Erythrina*), रोमल (*Bombax*), प्रोसोपिस (*Prosopis*), आदि में पाये जाते हैं। ऊपर चढ़नेवाली झाड़ियों जैसे बेंत (*Calamus*) (चित्र ३७) में और बाघ-अवरा (*Pisonia*) आदि में बहुधा बहुत-से प्रिकिल्स और शल्य आत्म-रक्षा के लिए पाये जाते हैं। इनसे चढ़ने में भी मदद मिलती है, और इनमें उलझ जानेवाले जन्तुओं के लिए प्रायः बाहर निकलना बड़ा दुष्टकर हो जाता है। कतीता (सोलेनम जैथोकार्पम, *Solanum xanthocarpum*) और राम बेगुन (*Solanum ferov*) में प्रिकिल्स प्रायः नसों पर पाये जाते हैं।

(घ) दूढ़ रोम (त्रिसिल्स, **Bristles**). यह आकार में काफी छोटे, सीधे और मुई की-सी बनावट के होते हैं। यह प्रायः झुण्डों में उगते हैं और बहुधा इनमें छोटी-छोटी नोकें भी निकल आती हैं। त्रिसिल्स प्रायः नागफनी (prickly-pear) और दूसरे प्रकार के कैक्टस जाति के पौधों में पाये जाते हैं।

२. दंशरोम (**Stinging hairs**). बिछूनी (nettles) के पौधों की पत्तियों, फलों या शरीर पर मर्मभेदी बाल (दंशरोम) पैदा हो जाते हैं। हर बाल (चित्र ५१) की नोक सिलीशियस (siliceous) अर्थात् पथरीली और तेज होती है और धीरे से छूने पर ही टूट जाती है। छोटी-सी तेज नोक, मर्मभेदी होने के कारण, शरीर में घुस जाती है और घाव कर देती है, जिसमें मर्मभेदी बाल द्वारा सग्रहीत अम्लीय द्रव (acidic sap) फूले हुए आधार के दबने के कारण निकल पड़ना है और शरीर में पहुँच कर जलन, और सूजन तक पैदा कर देता है। बिछूनी (nettles) कई प्रकार की होती हैं। लाल बिछूनी (*Fleurya*) और बिछूनी या बहुन्ता (*Tragia*) प्रायः ऊसर स्थानों पर पाये जाते हैं। फोवर (fever) या डेविल (devil nettle, *Laportea*) जो आसाम में बहुत पाया जाता बिछूनी की सबसे अधिक विषैली किस्म है। इसके अतिरिक्त एक और विषैला नेटिल पाया जाता है, जिसे गिरार्डीनिया (*Girardinia*) कहते हैं। इससे बहुत अच्छे रेशे निकलते हैं, परन्तु विषैला होने के कारण इसके पौधों को इकट्ठा करके रेशे निकालना बहुत कठिन है। इसी कारण इसे व्यावसायिक महत्त्व नहीं मिला। अलकुशी या कबूतर (*Mucuna*) जो घना आरोही पौधा है, के पौधों के फलों पर इस प्रकार के मर्मभेदी बाल पाये जाते हैं जो कि उन सब जीवों के शरीर पर फफोले और उत्तेजना उत्पन्न कर देते हैं जो उनके सम्पर्क में आते हैं। यूटिकाडायोइका (*Urta dioica*) नामक पौधे में यह मर्मभेदी बाल पाये जाते हैं।



चित्र ५.१
एक दंशरोम।

३. ग्रन्थिलरोम (**Glandular hairs**) बहुत-से पौधों की पत्तियों,

शाखाओं और फलों पर ग्रन्थिदार बाल पाये जाते हैं। इस प्रकार के बालों से एक तरह के लसदार पदार्थ का स्राव होता है, जो एक तरह का गोद है। यदि कोई जन्तु भोजन के लिए इस प्रकार के पौधों पर आता है तो यह ग्रन्थियाँ उसके मुँह पर चिपक जाती है जिसको झाड़कर अलग करना उस जन्तु के लिए कठिन हो जाता है और इस प्रकार ग्रन्थिवाले बालों से युक्त पौधों पर पशुओं का आक्रमण कभी नहीं होता। ग्रन्थिवाले बालों के पौधों के उदाहरण तम्बाकू, पुनरनवा या सन्त (*Berhaaria*), भरेदा (*Jatropha*) और चित्रक (*Plumbago*) के पौधों में मिल सकते हैं।

४. रोम (**Hairs**). घने रोमों के छद्म या कड़े बालों की उपस्थिति भी पौधों को अन्य जीवों के आक्रमण से बचाती है; क्योंकि यह घने बाल, पशुओं के तालू में चिपक कर उनका गला जकड़ लेते हैं।

२. आत्मरक्षा के दूसरे साधन (*Other Devices of Defence*).

५. विष (**Poisons**). बहुत-से पौधों में विष या अन्य उत्तेजक द्रवों का स्राव होता है। ऐसे पौधों को जानवर सावधानी से बहिष्कृत कर देते हैं; क्योंकि उनमें जहरीले पौधों को गैर-जहरीले पौधों से पृथक् पहचान सकने का गुण होता है।

(क) आक्षीर (**Latex**). बहुत-से पौधों से रसदार दूधिया पदार्थ निकलता है। इस रस में हमेशा ही कुछ वर्ज्य-पदार्थ (*waste products*) होते हैं और यह रस प्रायः उत्तेजक या विषैला पदार्थ होता है। इस प्रकार यह सम्पर्क में आनेवाले जीवों की खालों पर फफोले या सूजन उत्पन्न कर देता है। आक या मदार, सीज (*Euphorbia nivulia*), घुघची (*Euphorbia nerifolia*), कनेर (*oleander*, *Nerium*), पीला कनेर (*yellow oleander*, *Thevetia*), इत्यादि में आक्षीर उनकी आक्षीर-कोशिकाओं (*latex-cells*) में पाया जाता है, और अफीम (*opium-poppy*), भरभण्डा या पीला धतूरा (*prickly poppy*), पपीता (*papaw*) और कम्पोजिटो कुल (*Compositae*) के पौधों में आक्षीर, आक्षीर-वाहिनियों (*latex vessels*) में पाया जाता है।

(ख) क्षारारभ (**Alkaloids**). बहुत-से ऐल्केलॉइड्स घातक विष भी हैं और उनकी बहुत थोड़ी ही मात्रा एक मजबूत पशु के प्राण लेने के लिए पर्याप्त है। पौधों के शरीर में विभिन्न प्रकार के क्षारारभ (*alkaloids*) पाये जाते हैं, जैसे स्ट्रिकनीन (*strychnine*) जो नक्स वोमिका (*nux vomica*) नामक पौधे में पाया जाता है, मोर्फीन (*morphine*) अफीम के पौधे (*opium poppy*) में मिलता है, डेट्यूरीन (*daturine*) धतूरा में मिलता है, इत्यादि।

(ग) उत्तेजक पदार्थ (**Irritating substance**) एरोइड्स (*aroids*), जमीकन्द (*Amorphophallus*) आदि पौधों में सुई के आकार के नुकीले और तेज कैल्सियम ऑक्जलेट (*calcium oxalate*) के रवे (*crystals*) निकलते हैं। यह रवे उन जानवरों के गले और जीभ में जलन पैदा कर देते हैं जो अपनी भोज्य-सामग्री इन पौधों में लेने आते हैं; और इस प्रकार इन पौधों को कभी भी चरनेवाले जानवरों से हानि नहीं पहुँचती।

६. कड़वा स्वाद और दुर्गन्ध (**Bitter taste and repulsive smell**). कड़वा स्वाद और दुर्गन्ध भी पशुओं को दूर रखने के अच्छे उपाय हैं। गन्धाल या

गन्धाली (*Pæderia*) में से इतनी बुरी गन्ध निकलती है कि कोई जानवर उसके निकट जाना पसन्द नहीं करता। पोदीना (*mint*), कुरुर-सोंगा या कुरुरौदा (*Blumea laceria*), तुलसी, आदि पौधों में भी बहुत तीव्र अरुचिकर गन्ध निकलती है। जर्मीकन्द (*Amorphophallus*) के फूलों के गुच्छे (पुष्प-क्रम, inflorescence) की गन्ध भी बहुत बदबूदार या सड़ीली होती है। नीम (*margosa*) और करेले (*bitter gourd*) का स्वाद कड़वा होता है और इस प्रकार यह शिकार नहीं बनते।

७ **वर्ज्य-पदार्थ (Waste products).** लैटेक्स, एल्केनॉइड और अन्य ऊपर बताये हुए पदार्थों के अतिरिक्त और भी बहुत-से वर्ज्य-पदार्थ पौधों में उपस्थित होते हैं, जैसे टैनिन (*tannin*), रेजिन (*resin*), सुगन्धित तेल (*essential oils*), रेफाइड्स (*raphides*), सिलिका (*silica*), आदि, जो पौधों को जन्तुओं के आक्रमण से सुरक्षित रखते हैं।

८. **अनुकारिता (Mimicry).** चरनेवाले पशुओं से बचने के लिए बहुत-से पौधे दूसरे ऐसे पौधों या जीवों के कुछ विशेष अंगों के रंग या आकार की नकल करते हैं जिनमें बचाव के विशेष शस्त्र होते हैं, उदाहरण के तौर पर कुछ एरॉइड्स (*aroids*, जैसे *Caladium* की किस्में) रंग-बिरंगे और चिन्कबरे साँपों की शक्ल के होते हैं। मरुल (*bowstring hemp*, *Sansevieria*) की कई जातियाँ (*species*) में पत्तियाँ भी चिन्कबरी और बहुरंगी होती हैं। शाकाहारी पशु उनसे सर्पों या किसी दूसरे जानलेवा (खूबवार) पशुओं का धोखा खाकर सावधानी से दूर रहते हैं। बन-सूरण या दानव का पीकदान (*devil's spittoon—Amorphophallus bulbifer*) के पुष्प-क्रम (*inflorescence*) धरती के ऊपर साँपों के फनों की तरह उठे रहते हैं, जो दूर से फन का धोखा देते हैं (चित्र ७.२)। एक अन्य प्रकार का एरॉइड (*aroid*), जिसे स्नेक-प्लांट (*snake-plant*, *Arisaema*) कहते हैं, बरसात में शिलाँग (आसाम) में काफी दिखाई पड़ता है और इसके फूल की रक्षक पत्तियों का छाद (*spathe*) जो हरे बैंगनी रंगका होता है, फूलों के गुच्छे (*spadix*) के ऊपर ऐसा फैला रहता है, जैसे काले साँप (*cobra*) का फन हो। इस तरह किसी अन्य पौधे या जीव के रूप रंग या उसकी किसी विशेष लक्षण के अनुकरण करने की क्रिया को अनुकारिता (मिमिक्री, **mimicry**; *mimic—to imitate* या नकल करना) कहते हैं।

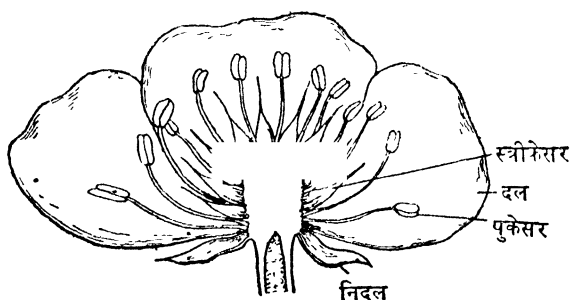
पौधों को बहुत-से परजीवी फंजाई (*parasitic fungi*) या फफूंदी और कुतरनेवाले कीड़ों और सूर्य की जलानेवाली किरणों से आत्म-रक्षा करनी पड़ती है। इनसे वे छाल या कॉर्क (*cork*) और अन्दर की छाल (*bark*) उत्पन्न करके अपनी रक्षा करते हैं।

फूल या पुष्प (The Flower)

फूल प्ररोह (shoot) का एक बहुत सशोधित (modified) रूप है, जो विशेष तौर से पौधे के प्रजनन के काम आता है। यह बीजाणु-पत्र (स्पोरोफिल, sporophyll) या स्पोर युक्त पत्तियों का एक पुंज (collection) है जो कभी अन्य सहायक अंगों सहित होता है और कभी सहायक अंगों रहित। स्पोरोफिल दो प्रकार के होते हैं—(क) लघुबीजाणु-पत्र (माइक्रो-स्पोरोफिल, micro-sporophyll) को पुंकेसर (स्टेमेन, stamen), और (ख) महाबीजाणु-पत्र (मेगास्पोरोफिल, mega-sporophyll) को अण्डप (कार्पेल carpel) कहते हैं। एक फूल में दोनों प्रकार के बीजाणु-पत्र पाये जा सकते हैं, किन्तु कुछ फलों में केवल एक ही प्रकार के पाये जाते हैं। माइक्रो-स्पोरोफिल में लघुबीजाणु (माइक्रोस्पोर्स, microspores) या छोटे-छोटे नरबीजाणु (male spores) होते हैं, जिन्हें पराग-कण (pollen grains) कहते हैं। महाबीजाणुपत्र में महाबीजाणु (मेगास्पोर्स, megaspores) होते हैं, जिन्हें मादा स्पोर्स या भ्रूणस्थान (एम्ब्रियो सैक, embryo-sac) कहते हैं।

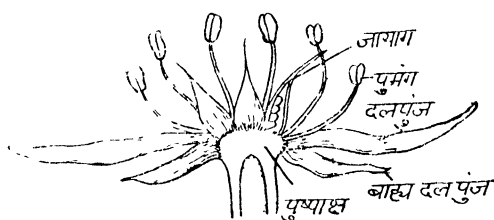
फूल के भाग (Parts of a Flower; चित्र ६.१, ६.२, और ६.३).

साधारण रूपसे एक फूल में पुष्प-पत्रों (floral leaves) के चार भ्रमि



चित्र ६.१ फूल के भाग।

(whorls) होते हैं जो एक छोटे अक्ष पर, जिसे पुष्पाक्ष (thalamus) कहते हैं, जड़ें (arranged) होते हैं।

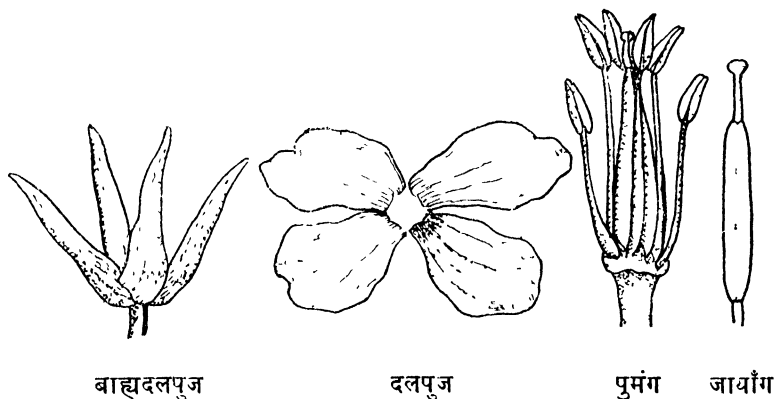


चित्र ६.२ एक फूल का अनुलम्ब काट (longitudinal section) जिससे फूल के विभिन्न भ्रमियों को पुष्पाक्ष (थैलेमस) पर स्थित देखी जा सकती है।

१. बाह्यदलपुञ्ज (कैलिकस, **Calyx**). बाह्यदलपुञ्ज फूल का सबसे निचला और पहला पुञ्ज है जो बहुत-सी छोटी-छोटी हरी पत्तियों से मिलकर बनता है, जिन्हें निदल या अंखड़ी (**sepals**) कहते हैं।

२. दलपुञ्ज (कोरोला, **Corolla**). यह फूल का दूसरा पुञ्ज है जो बाह्य-दलपुञ्ज के ऊपर होता है और बहुत-सी चमकदार रंगीन पत्तियों से मिलकर बनता है, जिन्हें दल या पंखड़ी (**petals**) कहते हैं।

३. पुमंग (एंड्रयूशियम, **Androecium**; *andros*—नर). फूल का तीसरा



चित्र ६.३ एक फूल के चारों भ्रमि अलग-अलग दिखाये गये हैं।

पुन नरपुञ्ज (**androecium**) है और इसके एक अंग (component part) को माइक्रोस्पोरोफ़िल या पुंकेसर (**stamen**) कहते हैं। ये फूल के नर अंग माने जाते हैं।

४. जायाग (गाइनीशियम, **Gynaecium**; *gyne*—मादा) या स्त्री-केसर (पिस्टिल, **Pistil**). यह फूल का चौथा या मादा पुञ्ज है, और इसके

एक अंग का महाबीजाणु-पत्र (मेगास्पोरोफल) या अण्डप (carpels) कहते हैं। यह फूल के मादा भाग माने जाते हैं।

बाह्यदलपुज (calyx) और दलपुज (corolla)—ये दोनों फूल के सहायक भ्रमि (accessory or helping whorls) होते हैं। पुमग (androecium) और जायाग (gynacium) फूल के अनिवार्य या प्रजनन के भ्रमि (essential or reproductive whorls) होते हैं; क्योंकि केवल यही दोनों भ्रमि फूल की प्रजनन क्रिया में काम आते हैं।

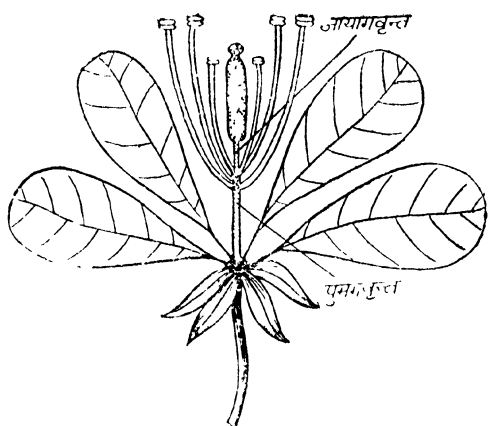
हम एक फूल को पूर्ण (complete) उस समय कहते हैं जब उसमें चारों भ्रमि होते हैं; और उस समय अपूर्ण (incomplete) कहते हैं जब उसमें से कोई भी भ्रमि अनुपस्थित होता है। जब फूल में पुकेसर (स्टेमन) और अण्डप (कार्पेल) दोनों रहते हैं तब हम उस फूल को द्विलिंगी (bisexual) या उभयलिंगी (hermaphrodite) कहते हैं; और जब इन दोनों में से कोई भी अनुपस्थित रहता है तो हम उस फूल को एकलिंगी (unisexual) कहते हैं। एकलिंगी फूल उस नर या स्टेमिनेट (staminate) कहलाता है जब उसमें केवल पुकेसर ही होते हैं; और जब केवल अण्डप (carpels) ही रहते हैं तो उस फूल को मादा या पिस्टिलेट (pistillate) कहते हैं। उस अवस्था में जब स्टेमन और कार्पेल दोनों नहीं पाये जाते तब हम उस फूल का अलिंगी या न्यूटर (neuter) कहते हैं। जब एक ही पेड़ में एकलिंगी, द्विलिंगी और अलिंगी—तीनों प्रकार के फूल पाये जाते हैं, तब हम उस पौधे को सर्वांगी (पॉलीगैमस, polygamous) कहते हैं, जैसे नडी (Polygonum), आम और मैंगोस्टीन (mangosteen) में। जब दलपुज (corolla) और बाह्यदलपुज (calyx) के रूप और रंग में कोई विशेष अन्तर नहीं होता तब हम उन दोनों को मिलाकर एक भ्रमि मानते हैं, जिसे परिपुष्प (पेरियन्थ, perianth) कहते हैं। पेरियन्थ के उदाहरण लार्कस्पर (larkspur), कृष्णकोली या गुल-अब्बास (four o'clock plant), केला, रजनी-गंधा या गुलशब्बो (Indian tuberose), उलट चन्दल या कलियारी (glory lily), आदि पौधों में भी पाये जाते हैं। जब पेरियन्थ का रंग हरा होता है तब हम उसे निदलाभ (सेपालॉइड, sepaloid) कहते हैं और जब पखड़ी (petals) की तरह रंगीन होता है तब हम उसे दलाभ (पेटालॉइड, petaloid) कहते हैं। परिपुष्प (पेरियन्थ) की पत्तियाँ जुड़ी हुई या अलग-अलग हो सकती हैं। इस प्रकार जब उसकी पत्तियाँ जुड़ी होती हैं तो उसे युक्त-परिपुष्प (गैमोफिलस, gamophyllous) और जब अलग होती है तो पृथक् परिपुष्प (पॉलीफिलस, polyphyllous) कहते हैं।

जब किसी फूल के दलपुज, बाह्यदलपुज, पुकेसर और अण्डप चक्रवत् रूप में पुष्पाक्ष (थैलेमम) पर जुड़े रहते हैं, तो हम उस फूल को चक्रीय (cyclic) कहते हैं, जैसा कि बहुत-से फूलों में देखने को मिलता है। और जब यही सब अंग सर्पिलाकार रूप में (spirally) थैलेमम पर जुड़े रहते हैं, तो उस फूल को अचक्रीय (acyclic) कहते हैं, जैसे वाटर लिली (water lily), दुली-चम्पा (Magnolia), चम्पा (Michelia) आदि में। फूल अर्ध-चक्रीय (hemicyclic) भी होते हैं, जैसे गुलाब का फूल। इनमें कुछ भाग चक्रीय और कुछ अचक्रीय होते हैं।

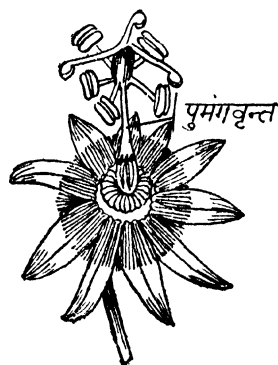
पुष्पाक्ष (Thalamus)

पुष्पाक्ष की प्रकृति (Nature of the Thalamus).

पुष्पाक्ष एक छोटा अक्ष है (देखिये चित्र ६.२) जिस पर पुष्प-पत्र, जैसे अंखड़ी, पखंडी, स्टेमन और कार्पेल जुड़े रहते हैं। अधिकतर फूलों में पुष्पाक्ष (थैलेमस) बहुत ही छोटा होता है; परन्तु हमारे अन्य फूलों में यह काफी लम्बा हो जाता है और तब उसमें पृथक् रूप में पर्व-सन्धियाँ (nodes) और पर्व (internodes) दिखाई देते हैं। बाह्यदलपुञ्ज और दलपुञ्ज के बीच के पर्व को **दलीभर** (ऐन्थोफोर **anthophore**; *anthos*—एक फूल, *phore*—एक वृन्त या डण्ठल) कहते हैं। श्वेत हुरहुर (*Gynandropsis*) में (चित्र ६.४) और झुमका या पैशन-फ्लावर (चित्र ६.५) में दलपुञ्ज और पुमंग (androecium) के बीच की इण्टरनोड काफी लम्बी है और इसको **पुमंगवृन्त** (ऐण्ड्रोफोर, **androphore**; *andros*—नर) कहते हैं। काटा-गुरकमाई (*Capparis*), श्वेत हुरहुर (*Gynandropsis*) और कतक चम्पा (*Pterosaermum*) में पुमंग और जायांग के बीच का वृन्त काफी लम्बा हो जाता है, इसे हम जायांगवृन्त (गाइनोफोर, **gynophore**; *gyn*—मादा) कहते हैं। जब पुमंगवृन्त और जायांगवृन्त



चित्र ६.४

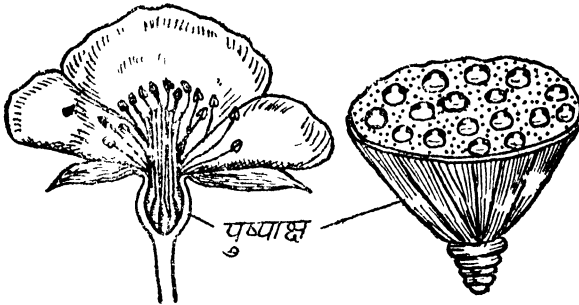


चित्र ६.५

थैलेमस के प्रकार। चित्र ६.४ श्वेत हुरहुर (*Gynandropsis*)। चित्र ६.५ झुमका (passion flower)।

(ऐण्ड्रोफोर और गाइनोफोर) दोनों बढ़ते हैं, तो हम उन दोनों को मिलाकर **पुजायांगवृन्त** (गॉइनैण्ड्रोफोर, **gynandrophore**) कहते हैं, जैसे कि हम

गॉइनैण्ड्रोपसिस (*Gynandropsis*) या हुरहुर के पौधों में देखते हैं। दुली-चम्पा (*Magnolia*) और चम्पा (*Michelia*) में पुष्पाक्ष (थैलेमस) काफी लम्बा और गूदेदार होता है और फूल के विभिन्न भ्रमि उस पर सर्पिलाकार रूप में (spirally) जुड़े रहते हैं। गुलाब में (चित्र ६.६) यह नतोदर (concave) और नाशपाती के आकार



चित्र ६.६

चित्र ६.७

पुष्पाक्ष के प्रकार (क्रमशः)। चित्र ६.६ गुलाब (अनुलम्बकाट) में।
चित्र ६.७ कमल का पुष्पाक्ष।

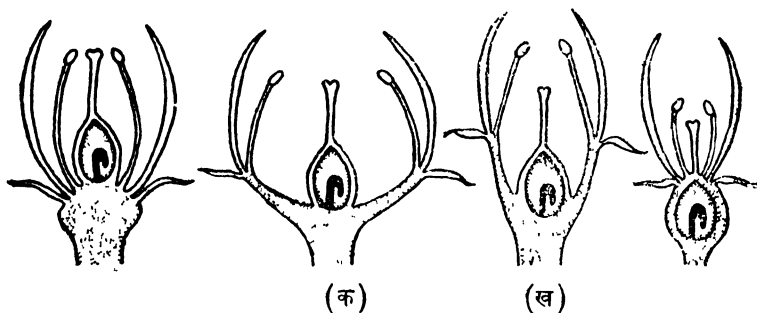
का होता है। कमल (lotus) का थैलेमस (चित्र ६.७) स्पंजी (spongy) और लट्टू के आकार का होता है। जब पुष्पाक्ष (थैलेमस) लम्बा होकर अण्डाशय से भी आगे चला जाता है, तो उसे अण्डपभार (कार्पोफोर, *carphophore*) कहते हैं, जैसा कि हमें गुलमेहदी (*balsam, Impatiens*) में मिलता है।

पुष्पाक्ष पर पुष्प-पत्रों की स्थिति (Position of Floral Leaves on the Thalamus).

अण्डाशय (ovary) और फूलों के विभिन्न भ्रमियों (whorls) की स्थिति में जो सम्बन्ध होता है वह विभिन्न प्रकार का होता है। यह सम्बन्ध तीन प्रकार का होता है—अधोजायता (*hypogyny*), परिजायता (*perigyny*), और उपरिजायता (*epigyny*)।

(१) अधोजायता (हाइपोगाइनी, *Hypogyny*). अधोजाय (*hypogynous*) पुष्प में पुष्पाक्ष (थैलेमस) शंकु-आकार (conical), उन्नतोदार (convex) चपटा या थोड़ा नतोदार (concave) होता है और अण्डाशय (ovary) को पुष्पाक्ष (थैलेमस) पर सबसे ऊँचा स्थान प्राप्त होता है, जब कि पुकेसर, दल और निंदल अलग-अलग क्रमानुसार उसके नीचे स्थित (inserted) होते हैं। ऐसी दशा में अण्डाशय को उत्तरवर्ती (*superior*) तथा बाकी अन्य पुष्प-पत्रों को अधोवर्ती (*inferior*) कहते हैं। इसके उदाहरण, सरसो, बैंगन (brinjal), चाइना रोझ और दुली-चम्पा (*Magnolia*) इत्यादि में देखे जाते हैं।

(२) **परिजायता** (पेरिगाइनी, **Perigyny**). एक परिजाय (perigynous) फूल में पुष्पाक्ष (थैलेमस) के 'किनारे' (margins) ऊपर की ओर बढ़कर एक प्याले की आकृति बनाते हैं, जिसको बाह्यदलपुञ्ज-नाल (calyx-tube) कहते हैं। यह अण्डाशय को ढके रहता, किन्तु इससे अलग रहता है। इसके साथ निदल (sepals), दल (petals) और पुकेसर (stamens) होते हैं। ऐसी दशा में अण्डाशय को अर्ध-



चित्र ६.८

चित्र ६.९

चित्र ६.१०

थैलेमस पर पुष्प-पत्रों की स्थिति। चित्र ६.८ अधोजायता (hypogyny)।

चित्र ६.९ परिजायता (perigyny; दो प्रकार की—क और ख)।

चित्र ६.१० उपरिजायता (epigyny)।

अधोवर्ती (half-inferior) कहते हैं। कुछ परिजाय फूलों (perigynous flowers) में अण्डाशय अपूर्ण रूप से पुष्पाक्ष (थैलेमस) में धसा रहता है। इसके उदाहरण, गुलाब, प्रिमरोज़ (primrose), आड़ू, प्रून (prune), क्रेप फ्लावर (crepe flower) और कभी-कभी लैग्युमिनोसी कुल (Leguminosae) में मिलते हैं।

(३) **उपरिजायता** (एपिगाइनी, **Epigyny**). एक उपरिजाय (epigynous) फूल में पुष्पाक्ष (थैलेमस) के 'किनारे' और भी अधिक ऊपर बढ़ जाते हैं जिससे अण्डाशय सम्पूर्ण रूप से ढक जाता है और इससे जुड़ जाता है। पुष्पाक्ष (थैलेमस) के किनारों पर निदल, दल और पुकेसर जुड़े रहते हैं और ये अण्डाशय से ऊँचे होते हैं। इस दशा में अण्डाशय (ovary) को अधोवर्ती (inferior) कहते हैं और बाकी अन्य पुष्प-पत्र उत्तरवर्ती होते हैं। इसके उदाहरण, सूरजमुखी, अमरूद, लौकी, खीरा इत्यादि हैं।

निपत्र (ब्रैक्ट्स, Bracts)

ब्रैक्ट, विशेष प्रकार की पत्तियाँ होती हैं जिनके कक्ष (axil) में एक फूल या फूलों का पुञ्ज उत्पन्न होता है। यदि ब्रैक्ट और फूल के बीच में भी कोई छोटी-सी पत्ती या शल्क के आकार की वस्तु होती है तो उसे निपत्रिका (ब्रैक्टोल, bracteole)

के नाम से पुकारते हैं। निपत्रों के आकार, रंग और जीवन-काल अलग-अलग होते हैं। इनका परम कर्तव्य धूप और वर्षा से पुष्प-कलिका की रक्षा करना है। इसी कार्य को सम्पन्न करने के लिए कभी-कभी उनका आकार बहुत बड़ा हो जाता है और वे पूरे फूल या फूलों के गुच्छे को ढक लेते हैं। जब तक इनका रंग हरा रहता है तब तक साधारण पत्तियों के समान वे भोजन बनाने का कार्य करते हैं। कभी-कभी उनका रंग चमकीला और आकर्षक हो जाता है, और तब वे परागसेचन (pollination) की क्रिया के लिए कीड़ों को अपनी ओर लुभाते हैं।

निपत्रों के प्रकार (Kinds of bracts). रंग, आकार और विन्यास में भिन्नता होने के कारण उन्हें कई नाम दिये गये हैं:

१. पत्रवत् निपत्र (**Leafy bracts**). यह ब्रैक्ट हरे और चपटे होते हैं और पत्ती की तरह प्रतीत होते हैं, जैसे कुष्पी मणि (*Acalypha*), भेकर (*Adhatoda*), श्वेत हुरहुर (*Gynandropsis*)।

२. शल्कीय निपत्र (**Scaly bracts**). जब निपत्र परत की तरह होते हैं,



चित्र ६.११



चित्र ६.१२

निपत्रों के प्रकार। चित्र ६.११ बगनविलास का दलाभनिपत्र (पेटालॉइड ब्रैक्ट)।

चित्र ६.१२ सूरजमुखी का निचक्र (इन्वोल्यूकर)।

अर्थात् छोटे और पतले होते हैं तो उन्हें स्केली ब्रैक्ट कहते हैं। इस प्रकार के ब्रैक्ट सूरजमुखी के फूल के मध्य-पुष्पको (central florets) में पाये जाते हैं।

३. छदशूकी छद (स्पेथ, **Spathe**). जब ब्रैक्ट इतने बड़े हो जाते हैं कि फल को पूर्ण रूप से ढक लेते हैं या ज्यादातर पूरे फूल के गुच्छे को ही समस्त रूप से छिपा लेते हैं, जिससे वे कुमारावस्था में सुरक्षित रहें, तो उन्हें छदशूकी छद (स्पेथ) कहते हैं (चित्र ६.२०, पृ० १२१)। ऐसे ब्रैक्ट एरोइड्स (aroids), केला, ताड़ों, भुट्टा (maize cob) आदि में पाये जाते हैं। स्पेथ प्रायः रंगीन और भडकीले होते हैं और इस प्रकार कीड़ों को परागण (pollination) के लिए आकर्षित करते हैं।

४. दलाभ निपत्र (**Petaloid bracts**). जब ब्रैक्ट पूर्ण रूप से रंगीन

और आकर्षक होते हैं, तो उन्हें दलाभ निपत्र (पेटालॉएड ब्रैक्ट) कहते हैं। इस प्रकार के ब्रैक्ट, वगन-विलास (glory of the garden) (चित्र ६.११) में और लाल पत्ता (poinsettia) आदि में मिलते हैं।

५. निचक्र (इन्वोल्यूकर, **Involucre**). जब एक या एक से अधिक निपत्र-भ्रमि (whorls of bracts) फूल के चारों ओर पाये जाते हैं, तो उसे निचक्र (इन्वोल्यूकर) कहते हैं जैसे इण्डियन स्ट्रॉबेरी (Indian strawberry, *Fragaria*); या फूलों के समूह के चारों ओर हो सकते हैं, जैसे सूरजमुखी (चित्र ६.१२), मेदा, आदि में। आइपेमिया पाइलिफेरा (*Ipomea pileata*) में एक विचित्र नाव के आकार का निचक्र (involucre) होता है।

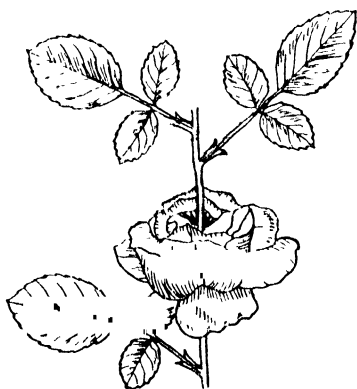
६. बसपत्र (ग्ल्यूम, **Glumes**). यह विशेष प्रकार के छोटे-छोटे और सूखे ब्रैक्ट होते हैं जो केवल घास और दलदल की जाति के पौधों में ही पाये जाते हैं।

फूल एक रूपान्तरित प्ररोह है (Flower is a Modified Shoot).

निम्नलिखित बातों से हम सिद्ध कर सकते हैं कि पुष्पाक्ष (थैलेमस) शाखा का रूपान्तर है, अखड़िया पखड़िया, स्टेम और कार्पेल रूपान्तरित पत्तियाँ हैं, और सम्पूर्ण फूल पर्णकलिका का रूपान्तर है।

१. वास्तव में पुष्पाक्ष (thalamus) एक वली का अक्ष है जिसमें पर्व (इण्टरनोड) बहुधा अविकसित या दबे हुए रहते हैं, किन्तु कुछ फूलों में, जैसे श्वेत दुरदुर (Gynandropsis), झुमका (passion flower), काटा-गुरकमाई (Capparis), कनक-चम्पा (Pterospermum) इत्यादि में पुष्पाक्ष (थैलेमस) लम्बा हो जाता है और तब शाखा की भाँति उसमें पर्व-सन्धियाँ (नोडस) और पर्व (इण्टरनोडस) स्पष्ट दिखाई देते हैं।

२. पुष्पाक्ष (थैलेमस) कभी-कभी विलक्षण रूप से बढ़ने लगता है, अर्थात् फूल के विभिन्न अंगों को धारण करने के पश्चात् वह ऊपर की ओर बढ़ने लगता है और साधारण पत्तियों युक्त हो जाता है। इस तरह थैलेमस एक शाखा की तरह व्यवहार करता है। इसके उदाहरण, कभी-कभी, गुलाब (चित्र ६.१३),



चित्र ६.१३ गुलाब में थैलेमस का विचित्र विकास (monstrous development)।

लार्कस्पर, नाशपाती, इत्यादि में मिलते हैं।

३. पर्ण-कलिका की भाँति पुष्प-कलिका, स्थिति में अग्रस्थ (terminal) या कक्षस्थ (axillary) होती है।

४. अखड़ियों (निदल), और पंखड़ियों (दल), आदि का पुष्पाक्ष (थैलेमस)

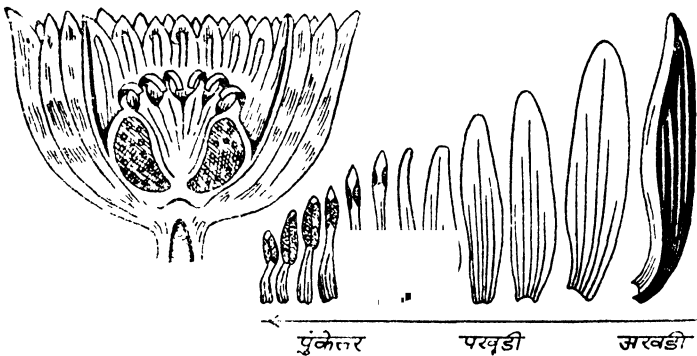
पर विन्यास उसी रूप में रहता है जिस प्रकार का विन्यास पत्तियों का तने या शाखाओं पर होता है अर्थात् या तो भ्रमीय (whorled) या एकान्तर (alternate)।

५. यहाँ तक कि निदल (sepals) और दल (petals) के विन्यास का आपस में जो सम्बन्ध होता है (पुष्पदल-विन्यास, aestivation), ठीक वही सम्बन्ध सत्य पत्रों (foliage leaves) में होता है (कलिकापर्ण-विन्यास, prefoliation)।

६. निदलों और दलों का पत्ती की प्रकृति का होना स्पष्ट है; क्योंकि वे रचना आकार (form) और नाडो विन्यास में एक तरह के होते हैं; और सचमुच, मुसेण्डा (*Mussaenda*) (चित्र ६.१४) में तो एक अंखंडो स्पष्ट रूप से सफेद या रंगीन पत्ती में बदल जाती है। हरे गुलाब में पखड़ियों की रचना पत्तीनुमा और हरे रंग की होती है। परन्तु पुकेसर (स्टेमेन) और अण्डप (कार्पेल) हर प्रकार से पत्तियों से 'असमान' होते हैं। उनकी और पत्तियों की रचना-सदृशता (homology) कुछ फलों में देखी जा सकती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वाटर लिली (चित्र ६.१५) में अखड़ियों से पखड़ियों और पखड़ियों से स्टेमेन तक में, एक क्रमशः परिवर्तन (transition) दिखाई देता है। बगीचे में उगाये गये गुलाब में बहुत-सी पखड़ियाँ (petals) होती हैं; परन्तु जंगली गुलाब में केवल पाँच ही पखड़ियाँ होती हैं। इसको इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कि बहुत से स्टेमेन धीरे-धीरे पखड़ियों में परिवर्तित हो गये। इसी प्रकार चाइना-रोज (China-rose) की जातियों में और स्थल-पद्म या गुल अजायब (*Hibiscus mutabilis*) में कुछ या अधिकतर स्टेमेन पखड़ियों में



चित्र ६ १४. मुसेण्डा (*Mussaenda*) जिसमें एक अंखंडो पत्ती में रूपान्तरित हो गयी है।



चित्र ६ १५ कमल के फूल में पुष्पपत्रों का क्रमशः परिवर्तन (transition)।

शामिल हो गये। कुछ गुलाब के फूलों में कार्पेल का स्थान हरी पत्तियाँ ले लेती हैं।

कभी-कभी जीनिया (Zinnia) में कुछ पुकेसर (stamens) और अण्डप (carpels), पंखडियों में बदलने हुए पाये गये हैं। कैना (Canna) में पुकेसर और कुक्षि-वृन्त (style) दलाभ (petaloid) हो गये हैं।

७. पुष्प-क्रम (इंफ्लोरेसेंस, inflorescence) के वृन्त (stalk) पर साधारण फूल लगते हैं। कभी-कभी, जैसे विलायती कैनालू (American aloe, Agave) में कुछ फूल की कलियाँ, पत्तियों की कलियों में बदल जाती हैं; जिन्हें पत्रकन्द (बुलबिल्स, bulbils) कहते हैं। वुनजिन्स वर्धी-प्रजनन (vegetative reproduction) में काम आते हैं।

पुष्प की सम्मिति (Symmetry of the Flower).

जब फूल के केन्द्र से जाने हुए किसी भी उदग्र काट (vertical section) द्वारा काटने से, उसके दोनों हिस्से बिल्कुल बराबर के आधे हो तो ऐसे फूल को सम्मितीय (सिमेट्रिकल, symmetrical) कहते हैं। इस प्रकार के फूलों को नियमित (regular) या ऐक्टिनोमॉर्फिक (actinomorphic) भी कहते हैं। इनके उदाहरण हम सरसों, धतूरा (Datura), बैंगन, मिर्च आदि के फूलों में मिलते हैं। परन्तु किसी विशेष एक ही वर्टिकल सेक्शन द्वारा हम एक फूल को दो एक-से भागों में बाँट सकें, तो हम उस फूल को ज़ाइगोमॉर्फिक (zygomorphic) या एक-सम्मितीय (monosymmetrical) कहते हैं, जैसे मटर, सेम, आतशी (rattlewort), गुलमोहर (gold mohur), अमलनास (Cassia) आदि; और जब फूल को दो एक-से भागों में नहीं बाँट सकें, तो ऐसे फूल को अनियमित (irregular) या असम्मितीय (asymmetrical) कहते हैं।

फूल को सम्मितीय उस समय भी कहते हैं जब उसके सारे भ्रमियों में अंगों की संख्या एक ही होती है या एक भ्रमि के अंगों की संख्या दूसरे का गुणन या अपवर्त्य (multiple) होती है। इस प्रकार के सिमेट्रिकल फूल को संभाज्य (isomerous; *isos*—बराबर *meros*—भाग) कहते हैं। भ्रमियों की संख्या के अनुसार फूल, बाइमेरस (bimerous), ट्राइमेरस (trimerous), टेट्रामेरस (tetramerous) या पेन्टामेरस (pentamerous) हो सकता है, यदि भ्रमियों की संख्या २, ३, ४, या ५ या इनकी अपवर्त्य हो। एक-बीजपत्री पौधों (monocotyledons) में प्रायः ट्राइमेरस फूल पाये जाते हैं; और द्वि-बीजपत्री पौधों (dicotyledons) में अधिकतर पेन्टामेरस फूल होते हैं। जब एक फूल के विभिन्न भ्रमियों में अंगों की संख्या बराबर या उसकी अपवर्त्य (multiple) नहीं होती, तो उस फूल को हेट्रोमेरस (heteromerous; *heteros*—भिन्न) कहते हैं।

पुष्प-क्रम (इंफ्लोरेसेन्स, Inflorescence)

इंफ्लोरेसेन्स एक प्रकार की शाखा प्रणाली है जो फूलों के गुच्छे से युक्त रहती है। यह अग्रस्थ (apical) या कक्षस्थ (axillary) हो सकती है। शाखा-विन्यास की प्रकृति के ऊपर निर्भर होने के कारण इंफ्लोरेसेन्स कई प्रकार की हो सकती है। इस पूरी प्रणाली को हम दो मुख्य शीर्षकों में भाजित कर सकते हैं; पहले को

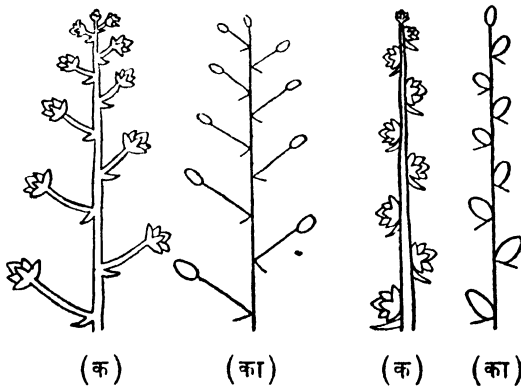
एकवर्धक्षीय (racemose) या अनिश्चित (indefinite) और दूसरे को बहुवर्धक्षीय (cymose) या निश्चित (definite) कहते हैं।

१. एक-वर्धक्षीय प्रकार (Racemose Type).

इस प्रकार की इन्फ्लोरेसेन्स में मुख्य-अक्ष (main axis) कभी भी केवल एक फूल में नहीं समाप्त (terminated) हो जाता; बल्कि वह बढ़ता ही रहता है और अगल-बगल (laterally) फूल देता रहता है। यह फूल अग्रभिर्वर्धक्रम (acropetal succession) में होने हैं, यानी नीचे के या बाहरी फूल उन फूलों से पुराने होते हैं जो ऊपर या अन्दर की ओर होते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि एक-वर्धक्षीय पुष्प-क्रम में फूल खिलने का क्रम केन्द्राभिग (सेण्ट्रीपीटल, centripetal) होता है। एक-वर्धक्षीय पुष्प-क्रम (racemose inflorescence) के विभिन्न रूप तीन शीर्षकों में बाँटे जा सकते हैं। पहले वह होते हैं जिनमें मुख्य अक्ष (axis) लम्बा हो जाता है, दूसरे, वह होते हैं जिन में मुख्य अक्ष छोटा हो जाता है, और तीसरे, वे होते हैं जिनमें मुख्य अक्ष चपटा (flattened), नतोदर (concave) या उन्नतोदर (convex) आकार का हो जाता है।

(अ) जिनमें मुख्य अक्ष लम्बा हो जाता है.

१. एक-वर्धक्ष (रेसीम, Raceme). इस प्रकार के पुष्प-क्रम में मुख्य अक्ष बड़ा और लम्बा हो जाता है और किनारे-किनारे फूलों से युक्त होता है



चित्र ६.१६

चित्र ६.१७

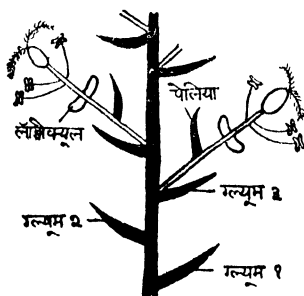
एक वर्धक्षीय (रेसिमोज) पुष्प-क्रम। चित्र ६.१६ (क) एक-वर्धक्ष (रेसीम);
(का) उसी का रेखा-चित्र। चित्र ६.१७ (क) शूकी (स्पाइक);
(का) उसी का रेखा-चित्र।

(चित्र ६.१६)। इन सब फूलों में वृन्त होते हैं। नीचे के बड़े फूलों के वृन्त, ऊपर के छोटे फूलों के वृन्तों की अपेक्षा लम्बे होते हैं, जैसे मूली, सरसो, गुलमोहर (gold mohur), करंजा (fever nut) आदि में।

पुष्प-क्रम के मुख्य वृन्त को पुष्प-वण्ड (पेडन्किल, **peduncle**) कहते हैं, और हर व्यक्तिगत फूल के वृन्त को पुष्प-वृन्त (पेडिसल, **pedicel**) कहते हैं। जब पेडन्किल छोटा और फूला हुआ होता है तो उसे रिसेप्टकिल (receptacle) कहते हैं, जैसा हमें अजीर और सूरजमुखी आदि के फूलों में मिलता है।

२. शूकी (Spike). यहाँ भी मुख्य वृन्त (stalk) लम्बा होता है और नीचे के फूल बड़े होते हैं और ऊपरवाले फूलों की अपेक्षा जल्दी खिलते हैं, जैसा कि हम रेसीम में देखते हैं, परन्तु इस प्रकार के फूल अवृन्त (सेमाइल, sessile) होते हैं, अर्थात् इन फूलों में वृन्त नहीं होता। इसके उदाहरण बसक या भेकर (*Adhatoda*), बोलाई (*Amarantus*), लटजीरा (*Achyranthes*) इत्यादि में देखे जाते हैं।

३. शूकिका (Spikelets) यह छोटे-छोटे स्पाइक होते हैं जिनमें कभी-



चित्र ६.१८



चित्र ६.१९

एक-वर्ध्याक्षीय (रेसिमोज) पुष्प-क्रम: चित्र ६.१८ शूकिका (स्पाइकलेट)।

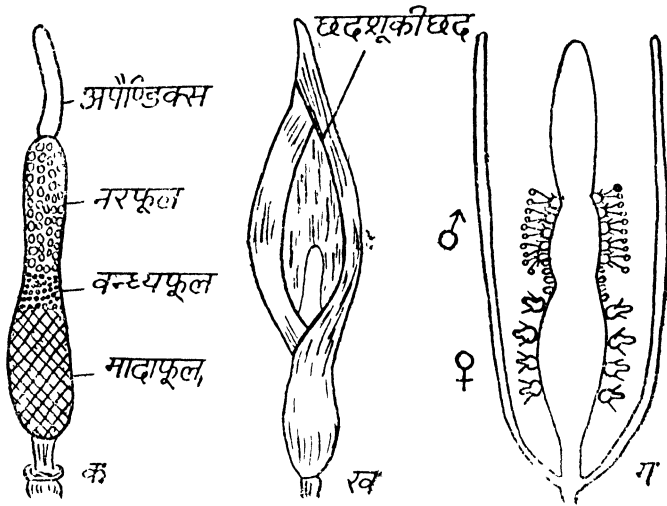
चित्र ६.१९ निलम्ब शूकी (कैटकिन)।

कभी कई फूल होते हैं और कभी केवल एक फूल। आधार की ओर यह छोटे-छोटे विशेष प्रकार के निपत्रों (bracts) द्वारा घिरे रहते हैं, जिन्हें हम बूस पत्र (ग्ल्यूम, glume) कहते हैं, जैसे घासों में (चित्र ६.१८)। यहाँ मुख्य इन्फ्लारेसेन्स रेसीम या स्पाइक होता है; परन्तु अन्तिम शाखाएँ स्पाइकनेट होती हैं।

४. निलम्ब शूकी (कैटकिन, **Catkin**). यह भी एक प्रकार का स्पाइक होता है, जिसका मुख्य वृन्त काफी लम्बा और निलम्बी (pendulous) होता है। इस वृन्त पर केवल एक-लिंगी फूल लगते हैं (चित्र ६.१९), जैसे शहतूत (mulberry; *Morus*), बर्च (Birch, *Betula*) और ओक (oak, *Quercus*) आदि में।

५. छवशूकी (स्पैडिक्स, **Spadix**). यह भी एक प्रकार का स्पाइक (शूकी) पुष्प-क्रम है जिसमें वृन्त गूदेदार होता है, जो एक या एक से अधिक

बड़े-बड़े ब्रैक्ट (निपत्र) द्वारा ढका रहता है (चित्र ६.२०)। इन निपत्रों को हम छदशूकी छद (स्पेथ, *spathe*) कहते हैं। यह इप्लोरेमेन्य, एरिण्डस (*ariods*),

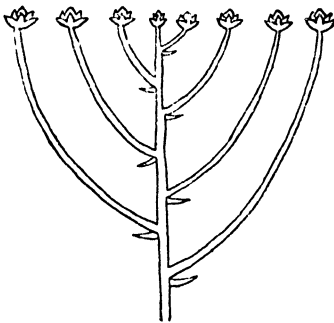


रेसीमोज पुष्प-क्रम। चित्र ६.२० (क) स्पेथ हटा लेने पर स्पैडिक्स। (ख) स्पेथ; जिसके अन्दर छदशूकी (*spadix*) है। (ग) अनुलम्ब काट में।

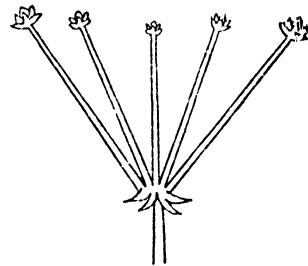
केला और ताड़ों आदि में मिलता है। स्पैडिक्स केवल एक-बीजपत्री पौधों में पाये जाते हैं।

(ब) जिनमें मुख्य अक्ष छोटा हो जाता है.

६. समशिख (कोरिम्ब, *Corymb*). इसमें अक्ष अपेक्षाकृत छोटा होता



चित्र ६.२१



चित्र ६.२२

एक-वर्धनशील (रेसिमोज) पुष्प-क्रम। चित्र ६.२१ समशिख (कोरिम्ब)।
६.२२ छत्रक (अम्बेल)।

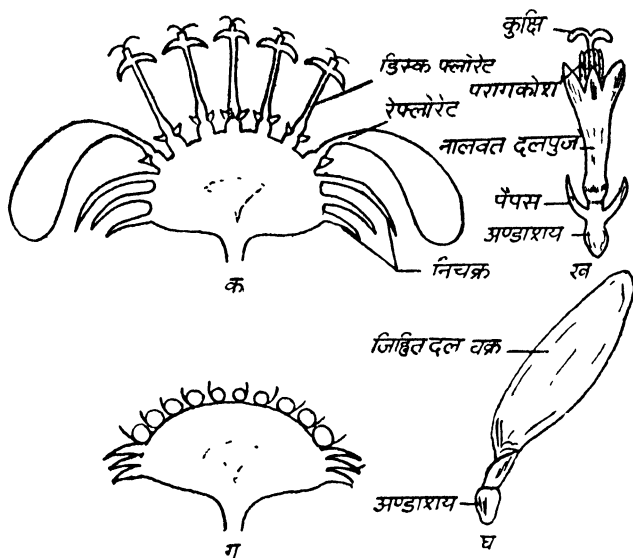
है और निचले फूलों के वृन्त या पुष्प-वृन्त (pedicels) ऊपरवाले फूलों के वृन्तों की अपेक्षा काफी लम्बे होते हैं। इस प्रकार सब फूल करीब-करीब एक ही तल पर आ जाते हैं (चित्र ६.२१), जैसे कण्डीटफ्ट (candytuft, *Iberis*) में।

७. छत्रक (अम्बेल, **Umbel**). अम्बेल इफ़ज़ोरेमेन्स में भी मुख्य अक्ष छोटा होता है और उसकी चोटी पर फूलों का एक समूह होता है। इन फूलों के वृन्तों की लम्बाई बराबर होती है (चित्र ६.२२), जैसे धनिया (*coriander*), जीरा (*cumin*), गाजर (*carrot*), सीक (*fennel*) और प्याज (*onion*) आदि में।

(स) जिनमें मुख्य अक्ष चपटा होता है.

८. मुण्डक (हेड या कैपिटुलम, **Head or capitulum**) इसमें मुख्य अक्ष या पुष्पाक्ष (receptacle) दबा (suppressed) होता है और करीब-करीब चपटा हो जाता है। फूल (जिन्हें यहाँ पुष्पाक या florets कहते हैं), बिना वृन्त (stalk) के होते हैं, जिससे वे रिसेप्टकिल के धरातल पर एक साथ इकट्ठे (crowded) रहते हैं (चित्र ६.२३)।

सम्पूर्ण पुष्प-क्रम अकेले फूल के समान प्रतीत होता है। इसमें धरातल के बाहरी भाग के फूल बड़े होते हैं और ये अन्दरवाले छोटे फूलों की अपेक्षा जल्दी खिलते

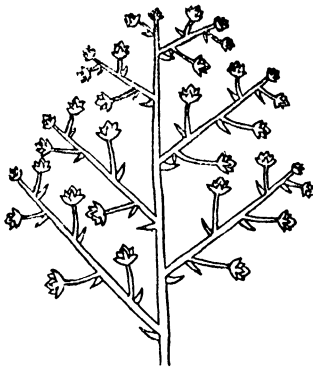


रेगिमोज पुष्प-क्रम। चित्र ६.२३ हेड या कैपिटुलम। (क) सेक्शन में सम्पूर्ण कैपिटुलम; (ख) एक डिस्क फ्लोरेट; (ग) रेखा-चित्र, (घ) एक रेफ्लोरेट।

है। हेड या कैपिटुलम (मुण्डक) इंप्लोरेसेन्स सूरजमुखी की जाति के फूलों (sun-flower family or *Compositae*) का एक विशेष लक्षण है, अर्थात् यह गेंदा

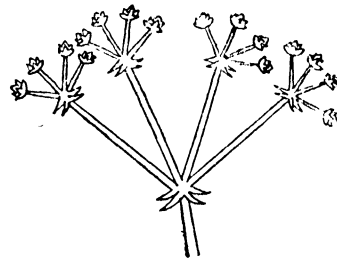
(marigold), जीनिया (Zinnia), कुसुम (safflower), कॉसमॉस (Cosmos), ट्राइडेक्स (Tridax) आदि के फूलों में पाया जाता है। यह बबूल (Acacia), छुई-मुई (sensitive plant), कदम (Anthocephalus) आदि में भी पाया जाता है। पुष्प-क्रमों में कैपिटुलम एक सर्वोच्च (most perfect) इन्फ्लोरेसेन्स माना गया है। व्यक्तिगत फूल काफी छोटे होते हैं, परन्तु एक मुण्डक (head) में इकट्ठा हो जाने के कारण यह काफी स्पष्ट और उत्कृष्ट (conspicuous) हो जाते हैं और साथ ही दलपुज (corolla) और अन्य पुष्प-भागों की रचना सामग्री में भी काफी बचत करते हैं। दूसरी बात यह भी है कि केवल एक ही कीड़ा थोड़े समय में ही, बिना एक फूल से दूसरे फूल पर उड़े, बहुत-से फूलों का परागण (pollination) कर सकता है।

पुष्प-क्रम के संयुक्त रूप (Compound forms). जब इन्फ्लोरेसेन्स का मुख्य अक्ष शाखाओं में भाजित हो जाता है और शाखाएँ फूल धारण करती हैं, तब इन्फ्लोरेसेन्स को संयुक्त (कम्पाउण्ड, compound) कहते हैं। उदाहरण के तौर पर यदि एक-वर्धक्ष (raceme) विभिन्न शाखाओं में भाजित हो जाता है तो उसे संयुक्त एक-वर्धक्ष (compound raceme) या पैनिकल (panicle) कहते हैं (चित्र ६.२४), जैसे डेगार प्लाण्ट में। इसी प्रकार दूसरे कम्पाउण्ड रूप भी रहते हैं, जैसे संयुक्त शूकी (compound spike) गेहूँ में; संयुक्त छद-शूकी (compound spadix), जैसे ताड़ों में; संयुक्त समशिख (compound corymb), जैसे कैण्डीटपट में; संयुक्त छत्रक (compound umbel), जैसे एनीस (anise)



चित्र ६.२४

चित्र ६.२४ पैनिकल



चित्र ६.२५

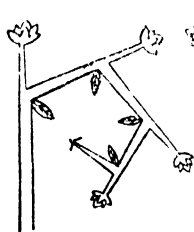
चित्र ६.२५ कम्पाउण्ड अम्बेल।

(चित्र ६.२५) में और संयुक्त मुण्डक (compound head), जैसे ग्लोब थिसिल (glob thistle, Echinops) में। मिश्रित पुष्प-क्रम (mixed inflorescence) भी कम नहीं पाये जाते। दो रेसीमोज (एक-वर्धक्षीय) रूपों का मिश्रण हो सकता है, जैसे एक-वर्धक्ष (raceme) और शूकी (spike) का, रेसीम और अम्बेल का या किसी दो अन्य का। कभी-कभी तो एक-वर्धक्षीय (racemose) और बहु-वर्धक्षीय

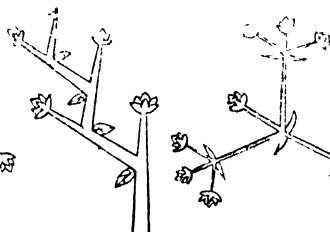
(cymose) रूप भी एक में मिल सकते हैं, जैसे आक, रंगन (*Ixora*), भाट (*Clerodendron*) आदि में।

२. बहु-वर्ध्वाक्षीय प्रकार (Cymose Types).

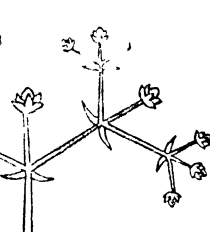
साइमोज इन्फ्लोरेसेन्स में मुख्य अक्ष की वृद्धि, इसके शीर्ष (apex) पर एक कली के विकसित हो जाने के कारण, शीघ्र ही रुक जाती है। और साथ ही इस अग्रस्थ-कलिका के नीचे विकसित होनेवाले पार्श्व अक्ष (lateral axis) का भी अन्त एक फूल में हो जाता है और इस प्रकार इसकी भी वृद्धि रुक जाती है। फूलों में वृत्त ही भी सकता है और नहीं भी हो सकता। बहु-वर्ध्वाक्षीय (cymose) पुष्प-क्रम में फूलों का विकास अक्षोभिग क्रम (basipetal succession) में होता है, अर्थात् अग्रस्थ-कलिका सबसे बृद्ध होती है, और पार्श्व-कलिकाएँ छोटी हैं या दूसरे शब्दों में, फूलों के खुलने का क्रम केन्द्रापग (सेण्ट्रीफ्यूगल, Centrifugal) होता है। बहुवर्ध्वाक्षीय पुष्प-क्रम एकशाखी (uniparous), द्विशाखी (biparous), या बहुशाखी (multiparous) हो सकता है।



चित्र ६.२६



चित्र ६.२७



चित्र ६.२८

बहुवर्ध्वाक्षीय (साइमोज) पुष्प-क्रम। चित्र ६.२६ कुण्डलाकार बहुवर्ध्वाक्ष।

चित्र ६.२७ बाच्छिक बहु-वर्ध्वाक्षीय। चित्र ६.२८ द्विशाखी बहुवर्ध्वाक्ष।

१ एकशाखी बहुवर्ध्वाक्ष (Uniparous or monochasial cyme, *Unus*—एक, *Parere*—उत्पन्न करना)। इस प्रकार के पुष्प-क्रम में मुख्य-अक्ष का अन्त एक फूल में हो जाता है, और एक समय में यह केवल एक ही पार्श्व अक्ष देता है जो स्वयं एक फूल में समाप्त हो जाता है। पार्श्व और एक के बाद एक आनेवाले सभी अक्ष प्राथमिक कक्ष की भाँति फिर केवल एक ही अक्ष पैदा करते हैं। एकशाखी बहुवर्ध्वाक्ष (uniparous cyme) के दो रूप देखे जाते हैं—कुण्डलाकार (हेलीकोइड, **helicoid**) और बाच्छिक (स्कॉर्पिओइड, **scorpioid**)। (क) जब पुत्री-अक्ष (daughter axes) लगातार (एक के बाद एक) केवल एक ही तरफ विकसित होते हैं, जिससे एक प्रकार की हेलिक्स (helix) बन जाती है तो ऐसे बहुवर्ध्वाक्षीय पुष्प-क्रम (cymose inflorescence) को कुण्डलाकार (या एक तरफ वाला) बहुवर्ध्वाक्ष (**helicoid cyme**) कहते हैं (चित्र ६.२६)। इसके उदाहरण बिगोनिया (*Begonia*), रस (*Juncus*) और आलू कुल (*Solanaceae*) के कुछ पौधों

में मिलते हैं। (ख) जब पुत्री-अक्ष एक तरफ के बाद दूसरी तरफ विकसित होते हैं, जिससे एक टेढ़ा-मेढ़ा आकार बन जाता है, तो इस प्रकार के बहुवर्धक्षीय पुष्प-क्रम को **बार्च्छिक (scorpioid)** (या एक के बाद दूसरी तरफ वाला) **बहुवर्धक्ष** कहते हैं (चित्र ६.२७)। इसके उदाहरण, कपास, सनड्यू (sundew), हाथीसूड (heliotrope) और कालमेघ या महतीता (*Andrographis*) में मिलते हैं।

मोनोकेजियल साइम (एक-शाखी बहुवर्धक्ष) में एक के बाद एक आनेवाले अक्ष टेढ़े-मेढ़े या मुड़े हुए हो सकते हैं किन्तु बहुधा ये थोड़ा बढ़ने के पश्चात् सीधे हो जाते हैं और इस तरह एक केन्द्रीय (central) या कूट-अक्ष (pseudo-axis) बनाते हैं। इस प्रकार के पुष्प-क्रम को **संयुक्ताक्षी बहुवर्धक्ष (sympodial cyme)** कहते हैं। फूल से निपत्र (bract) की आपेक्षिक स्थिति (relative position) को देख कर हम सिम्पोडियल साइम को एक-वर्धक्षीय पुष्प-क्रम (racemose type) से भिन्न पहचान सकते हैं। संयुक्ताक्षी बहुवर्धक्ष (सिम्पोडियल साइम) में ब्रैवट फूल के विपरीत (**opposite**) उत्पन्न होता है, जबकि एक-वर्धक्षीय प्रकार (racemose type) में निपत्र फूल के आधार पर होता है।

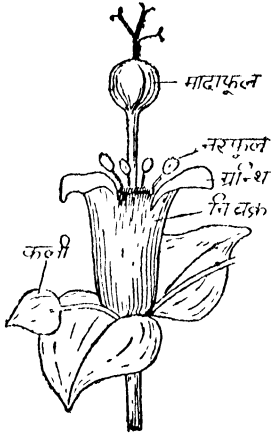
२. **द्विशाखी बहुवर्धक्ष (Biparous dichasial or cyme; bi—दो, Parere—उत्पन्न करना)**. इस प्रकार के पुष्प-क्रम में मुख्य अक्ष एक फूल में समाप्त हो जाता है और दो पार्श्व अक्ष उत्पन्न करता है। पार्श्व और एक के बाद एक आने वाली (succeeding) शाखाएँ भी इसी प्रकार व्यवहार करती हैं (चित्र ६.२१)। इसके उदाहरण सागौन (teak), हर-सिगार (night-jasmine), बेला, जूही, बमेली, रंगन (*Ixora*), इत्यादि में मिलते हैं।

३. **बहुशाखी बहुवर्धक्ष (Multiparous or polychasial cyme)**. सर्वदा की भाँति इस प्रकार के साइम ज इप्लोरेसेन्स में भी मुख्य अक्ष का अन्त एक फूल में हो जाता है, और पुत्री-अक्षों (daughter axes) की एक भ्रमि (whorl, अर्थात् दो से अधिक) उत्पन्न हो जाती है जो स्वयं भी इसी प्रकार का व्यवहार करती हैं। लगभग साथ ही बहुत-से पार्श्व फूलों के विकसित हो जाने के कारण मापूर्ण पुष्प-क्रम एक-छत्रक (umbel) के समान प्रतीत होता है। किन्तु इसे हम शीघ्र ही अम्बेल से पहचान सकते हैं, क्योंकि बहुशाखी पुष्प-क्रम में मध्य का फूल सबसे पहले खिलता है। यह आक या मदार में देखा जाता है।

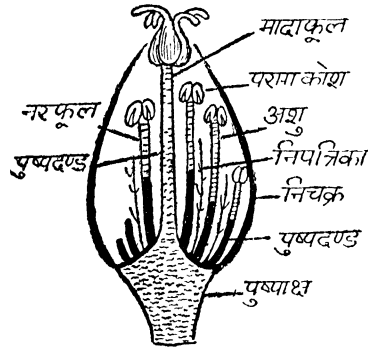
३. विशेष प्रकार (Special Types).

१. **चवक या कटोरिया (साएथियम, Cyathium)** यह एक विशेष प्रकार का इप्लोरेसेन्स है जो दूधिया रसवाले पौधों (Spurges, *Euphorbia* जाति) और रंगचिता (*Pedilanthus*) आदि में पायी जाती है (चित्र ६.२९)। इस पुष्प-क्रम में प्याले के आकार का एक निचक (involucre) होता है जिसमें मकरन्द ग्रन्थियाँ (nectar secreting glands) पायी जाती हैं। निचक (इन्वोल्युकर) द्वारा ढका हुआ बीच में एक मादा फूल होता है जिसका वृन्त अपने चारों ओर घिरे हुए नर फूलों के वृन्तों की अपेक्षा लम्बा होता है। यह ध्यान में रखने की बात है कि मादा फूल घट कर केवल स्त्री केसर (pistil) तक ही सीमित रह जाता है और सहायक फूल भ्रमियो रहित होता है और नर फूल घट कर केवल स्टेमन ही रह जाते हैं या दूसरे शब्दों में

बीच का पिस्टिल (स्त्री केसर) एक पूरे मादा फूल का प्रतिरूप होता है और किनारे-किनारे के स्टेमन पर फलों के प्रतिरूप होते हैं। हर स्टेमन एक नर फूल है, यह इस बात से प्रमाणित होता है कि स्टेमन एक वृन्त से जुड़ा रहना है और उसके आधार पर एक शल्कीय निपत्र (स्केली ब्रैवेट) होता है। इस प्रकार के इप्लोरेसेन्स में फूल सेण्ट्रीफ्यूगल साइमोज क्रम में विकसित होते हैं। बीच का मादा फूल पहले परिपक्व होता है और उसके बाद स्टेमेन्स (नर फूल), जो मादा फूल के चारों ओर होते हैं और अन्त में किनारे के फूल पकते हैं।



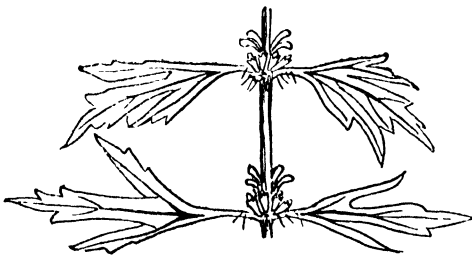
(क)



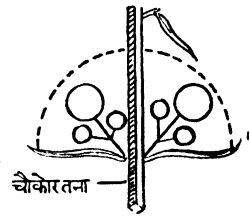
(ख)

चित्र ६.२९ (क) साएथियम; (ख) वही अनुलम्ब काट में।

२. **अभियुग्म (वर्टिसिलास्टर, Verticillaster)**. यह डाइकेजियल साइम (द्विशाली-बहुवर्धक) का एक सघनित (condensed) रूप है, जिसमें पत्तियों की काँख में थोड़े या सम्पूर्ण रूप से बिना वृन्त के फलों का एक झुण्ड होता है जिससे



(क)



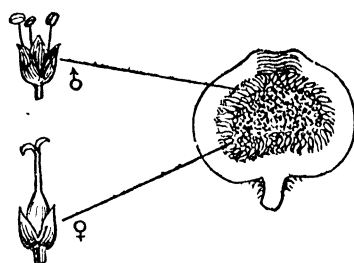
(ख)

चित्र ६.३० (क) वर्टिसिलास्टर; (ख) उसी का रेखा-चित्र।

नोड पर एक झूठा भ्रमि (false whorl) बन जाता है (चित्र ६.३०)। पहले वृन्त मे से अगल-बगल दो शाखाएं निकलती है और फिर ये शाखाएं और इनके बाद वाली शाखाएं एक के बाद दूसरी दिशाओं (alternate sides) में केवल एक-एक शाखा को जन्म देती है। इस प्रकार का इप्लोरेसेन्स तुलसी की जाति (*Labiatae*) के अनेक सदस्यों में पाया जाता है। इस जाति में पत्तियाँ अभिमुख (opposite) होती हैं, इसलिए नोड पर फूलों के दो झुण्ड भी अभिमुख होते हैं जैसे पोदीना (*mint*), द्रोना (*Leonurus*), श्वेत द्रोना (*Leucas*), कोलियस (*Coleus*) आदि में। तुलसी (*sacred basil*) में वर्टिसिलास्टर घट कर केवल डाइकेजियल साइम ही रह जाता है; क्योंकि आगे की शाखाएं अविकसित रहती है।

३ हाइपैन्थोडियम (*Hypanthodium*). इस प्रकार के इप्लोरेसेन्स में (चित्र ६.३१) रिसेप्टेकिल (*receptacle*) एक खोखले गड्ढे की तरह हो जाता है। इसके ऊपर एक छेद होता है जो छोटे-छोटे शल्को (*scales*) द्वारा घिरा रहता है।

फूल खोखले गड्ढे के अन्दर की दीवार पर लगते हैं जैसे फाइकस (*Ficus*, अर्थात् वरगद, अजीर, पीपल इत्यादि) में। इसमें मादा फूल गड्ढे की पेंदी पर लगते हैं और नर फूल गड्ढे के शिखर या ऊपरी भाग में लगते हैं।



चित्र ६.३१ हाइपैन्थोडियम।

पुष्प-क्रम		
एक-वर्ध्वक्षीय	बहु-वर्ध्वक्षीय	विशेष प्रकार
—एक-वर्ध्वक्षीय—जैसे, मूली —शूकी—जैसे, अमरन्त —शूकिका—जैसे, घास —निलम्बशूकी—जैसे, बर्च —छवशूकी—जैसे, केला —समशिख—जैसे, कण्डीटपट —छत्रक—जैसे, धनिया —मुण्डक—जैसे, सूरजमुखी	—एकशाखी— —कुण्डलाकार जैसे, बिगोनिया —बाच्छिक— जैसे, हेलियोट्रोप —द्विशाखी—जैसे चमेली —बहुशाखी—जैसे, मदार	—चषक या कटोरिया— जैसे, स्पर्जेंज —भ्रमियुग्म—जैसे, द्रोना —हाइपैन्थोडियम— जैसे, अजीर

बाह्यदलपुंज (Calyx)

बाह्यदलपुंज फूल का सबसे निचला और सबसे बाहरी भ्रमि है। यह बहुत-सी अंखड़ियों या निदल (*sepals*) से मिलकर बनता है। यह प्रायः हरा होता है (निदलाभ, *sepaloid*); परन्तु कभी-कभी यह रंगीन होता है; ऐसी दशा में इसे दलाभ (*petaloid*) कहते हैं, जैसे कृष्ण-चूर या गुलमोहर (*gold mohur*), राधा-चूर

(dwarf gold mohur) और गार्डन नेस्टर्सियम (garden nasturtium) आदि में। यह रंग, रूप और आकार में भिन्न-भिन्न होते हैं। यह नियमित (regular) हो सकते हैं और अनियमित (irregular) भी। अखडियाँ अलग-अलग भी हो सकती हैं, और एक में जुड़ी हुई भी। जब अखडियाँ स्वतंत्र होती हैं तो उस बाह्यदलपुज को **पूयक-निदली (polysepalous; poly—अनेक)** कहते हैं, जैसे सरसो, मूली आदि में। परन्तु जब अखडियाँ संयुक्त होती हैं तो उस बाह्यदलपुज को **युक्त-निदली (gamosepalous, gamo—संयुक्त)** कहते हैं, जैसे बैंगन, मिर्च, चाउना रोज आदि में। कभी-कभी बाह्यदलपुज फूल में बिल्कुल नहीं होता है, या उमका शल्को (scales) में रूपान्तर हो जाता है, जैसे सूरजमुखी, गेंदा (marigold) आदि में; या पॅपस (Pappus) में बदल जाता है (नीचे का चित्र) जैसे कम्पोजिटों के बहुत-से फूलों में होता है। *Mussaenda* (चित्र ६.१४) में एक अखड़ी काफी बड़ी हो जाती है और पत्ती के आकार की होकर बिल्कुल सफेद या चमकीले रंग की हो जाती है।

कार्य.

(१) **रक्षा (Protection)**. बाह्यदलपुज का मुख्य कार्य कली की दशा में फूल को ढके रख कर तथा धूप और वर्षा से उसकी रक्षा करना है। चित्रक (Plumbago) के फूल के बाह्यदलपुज में चिपकनेवाली ग्रन्थियाँ (glands) होती हैं और इस प्रकार वह शाकाहारी जीवों से फूल की रक्षा कर सकते हैं।

(२) **स्वीकरण (Assmilation)** जब बाह्यदलपुज हरा होता है तो साधारण पत्तियों की तरह वायुमण्डल से कार्बन-डाइ-ऑक्साइड लेकर शर्करा (sugar) और स्टार्च (starch) आदि पदार्थ बनाता है।

(३) **आकर्षण (Attraction)**. जब बाह्यदलपुज आकर्षक और भडकीला होता है तो परागण (pollination) की क्रिया के लिए कीड़े को आकर्षित करता है।

(४) **विशेष कार्य (Special function)**. कम्पोजिटों कुल (Compositae) के बहुत-से फूलों में बाह्यदलपुज रोयों के झुण्ड (जिसको **पॅपस, pappus**, कहते हैं) की शक्ति में निकलता है और यह बीज बनने तक मौजूद रहता है। ऐसे बाह्यदलपुज की सहायता से बीज हवा द्वारा दूर-दूर तक बिखर जाते हैं।



चित्र ६.३२
पॅपस
(pappus)।

जीवन-काल (Duration). जब कली के खिलते ही बाह्यदलपुज गिर जाता है तो उसे **शीघ्रपाती (caducous)** कहते हैं, जैसे पोस्ता (Poppy) आदि में। यदि बाह्यदलपुज फूल के मुरझाने पर गिर जाता है तो उसे **पर्णपाती (deciduous)** कहते हैं। परन्तु कभी-कभी बाह्यदलपुज फल तक में जुड़ा पाया जाता है। इस दशा में उसे **चिरलग्न (persistent)** या स्थायी कहते हैं। चिरलग्न बाह्यदलपुज मुरझाई दशा भी प्राप्त कर सकता है, जैसे रूई में; या कई उदाहरणों में यह बढ़ता ही जाता है और गंदेदार हो जाता है, जैसे डिलेनिया (*Dillenia*) में।

(२) दलपुंज (Corolla)

दलपुज फूल का दूसरा भ्रमि है, जो बहुत-सी पंखडियों या दलों (petals) से

मिल कर बनता है। अक्सर पखड़ियाँ भड़कीली और रंगीन होती हैं, और कभी-कभी सुगन्धित भी होती हैं, और तब उनका काम परागसेचन (*pollination*) के लिए कीड़ों को आकर्षित करना है। वे बहुत कम उदाहरणों में निदलाभ (*sepaloid*) पायी जाती हैं। जब फूल कली की अवस्था में होता है तो दलपुज उसके अन्दर के सारे आवश्यक अंगों, जैसे पुकेसर (*stamens*) और अण्डप (*carpels*), को ढके रहता है और बाहरी गर्मी तथा वर्षा से उनकी रक्षा करता है।

बाह्यदलपुज के समान दलपुज भी नियमित या अनियमित हो सकता है, जो पंखड़ियों की समानता और भिन्नता पर निर्भर करता है। बाह्यदलपुज के समान दलपुज भी युक्तदली (*gamopetalous*) या पृथकदली (*polypetalous*) हो सकता है जो पखड़ियों की संयुक्त या स्वतंत्र दशा पर निर्भर करता है। गैमोपेटलस रूप में पखड़ियाँ पूर्ण या अपूर्ण रूप से संयुक्त हो सकती हैं। पॉलीपेटलस दलपुज में प्रत्येक पखड़ी कभी-कभी नीचे की ओर पतली हो जाती है और इस प्रकार एक सकरा (*narrow*) डण्डल-सा बनाती है, जिसे 'क्ला' (*claw*) कहते हैं। क्लॉ के ऊपर का चौड़ा भाग 'लिम्ब' (*limb*) कहलाता है। क्लॉ पत्ती के डण्डल या पेटिओल (*petiole*) के स्थान पर होता है और लिम्ब पत्ती के फलक की जगह होता है। गैमोपेटलस (संयुक्त) दलपुज में निचला नलीदार भाग ट्यूब (*tube*) और ऊपर का भाग 'लिम्ब' कहलाता है। लिम्ब में बहुत-सी पालियाँ (*lobes*) हो सकती हैं जो पखड़ियों की संख्या पर निर्भर होती हैं। ट्यूब का वह भाग जो लिम्ब में खुलता है, 'थ्रोट या गला' (*throat*) कहलाता है।

दलपुंजों के रूप (*Forms of Corollas*)

दलपुज के विभिन्न रूप उसके रेगुलर या ईरेंगुलर और गैमोपेटलस या पॉलीपेटलस होने, तथा पखड़ियों के आकार और लम्बाई-चौड़ाई और फूल में उनके विन्यास पर निर्भर है। इस प्रकार विभिन्न रूपों का अध्ययन चार मुख्य शीर्षकों में हो सकता है।

(क) नियमित पृथकदली दलपुज (*Regular Polypetalous Corollas*).

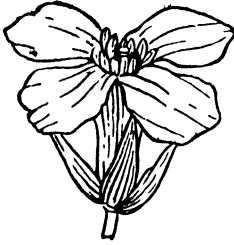
(१) स्वस्तिकाकार (क्रूसीफॉर्म *Cruciform*). क्रूसीफॉर्म दलपुज में चार स्वतंत्र पखड़ियाँ होती हैं। हर एक पखड़ी में एक 'क्ला' होता है। ये पखड़ियाँ एक क्रॉस (*cross*) के रूप में जुड़ी रहती हैं (चित्र ६.३३—१), जैसे सरसों की जाति के फूलों (क्रूसीफेरी फैमिली, *Cruciferae* family)—सरसों, मूली आदि में।

(२) गुद्-पंचनखर (केरिओफाइलेशस, *Caryophyllaceous*). इस प्रकार के दलपुज में पाँच पखड़ियाँ होती हैं जिनके 'क्ला' तुलनात्मक रूप से बड़े होते हैं, और पंखड़ियों के 'लिम्ब' क्लॉ के समकोण दिशा में रहते हैं (चित्र ६.३३—२), जैसे पिक (*Dianthus*) में।

(३) गुलाबाकार (रोजेशस, *Rosaceous*). पहले की तरह इस रूप में भी पाँच पंखड़ियाँ होती हैं, परन्तु इनके क्लॉ बहुत छोटे होते हैं और कभी-कभी नहीं भी होते हैं, और लिम्ब नियमित रूप से बाहर की ओर फैल जाते हैं (चित्र ६.३३—३), जैसे गुलाब, चाय, प्रून (*prune*) आदि में।

(ख) नियमित संयुक्त दलपुंज (*Regular Gamopetalous Corollas*).

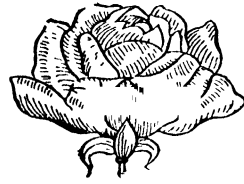
(४) घण्टाकार (कैम्पेन्युलेट, **Campanulate** or **bell-shaped**). जब दलपुंज का रूप घण्टी की तरह होता है (चित्र ६.३३-४), जैसे रसभरी (gooseberry), घण्टपुष्पी (bell flower, *Campanula*), गाब (mangosteen) आदि में, तब उसे कैम्पेन्युलेट कहते हैं।



१. स्वस्तिकाकार
(क्रूसीफॉर्म)



२. गुठ-प चनखर
(केरियोफाइलेशस)



३. गुलाबाकार
(रोजेशस)



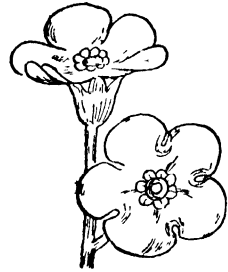
४. घण्टाकार
(कैम्पेन्युलेट)



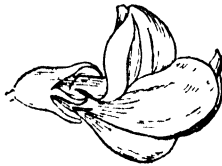
५. नालाकार
(ट्यूबुलर) (इफण्डीबुलीफॉर्म)



६. धतूराकार



७. चक्राकार
(रोटेट)



८. आगस्तिक
(पैपिलिओनेशस)



९. द्वयोष्ठी
(बाइलेबिएट)



१०. संवृत
(पर्सोनेट)



११. जिह्वित
(लिंग्यूलेट)

चित्र ६.३३ दलपुंजों के रूप।

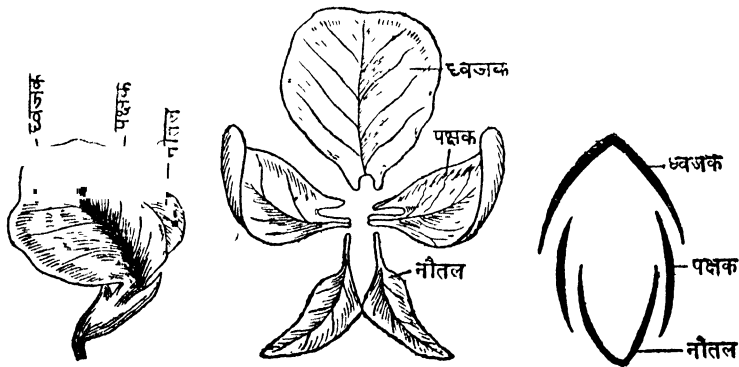
(५) नालाकार (ट्यूबुलर, **Tubular**). जब दलपुज बेलनाकार (cylindrical) या नालवत् (tube-like) होता है, अर्थात् नीचे से ऊपर तक लगभग एक ही जैसा फैला रहता है, तो उसे नालाकार (ट्यूबुलर) कहते हैं (चित्र ६.३३—५), जैसे सूरजमुखी के बीच के पुष्पक (central florets)।

(६) धतूराकार (इफण्डिबुलीफॉर्म या कुप्पी रूप, **Infundibuliform or funnel-shaped**). जब दलपुज एक कीप (funnel) के रूप का होता है, तो उसे धतूराकार (infundibuliform) कहते हैं। इसमें दलपुज का निचला भाग सकरा (narrow) होता है, जो धीरे-धीरे बाहर की ओर फैलकर चौड़ा हो जाता है (चित्र ६.३३—६), जैसे धतूरा (thorn-apple), बलमी साग (water bindweed), पीला कनेर (yellow oleander), रेलवे क्रीपर (railway creeper) आदि में।

(७) चक्राकार (रोटेट, **Rotate or wheel-shaped**). जब दलपुज का ट्यूब छोटा होता है और लिम्ब उसके समकोण पर रहता है तो दलपुज एक चक्र या पहिये (wheel) के समान लगता है। इसे चक्राकार दलपुज कहते हैं (चित्र ६.३३—७), जैसे हरसिगार (night jasmine), नैनतारा (periwinkle), आक या मदार, आलू आदि में।

(ग) अनियमित पृथकदली दलपुंज (*Irregular Polypetalous Corollas*)

(८) आगस्तिक (पैपिलिओनेशस या तितली-समान, **Papilionaceous or butterfly-like**) देखने में यह तितली के समान लगता है (चित्र ६.३३—८) और पाँच पखड़ियों (दलों) से मिलकर बनता है। सबसे बाहरी पखड़ी सबसे बड़ी होती है। इसे ध्वजक (स्टैंडर्ड या बैक्सिलम, standard or vexillum) कहते हैं। पार्श्विक (lateral) दो पखड़ियों को पक्षक या पंख (wings or alae) कहते हैं।



चित्र ६.३४

चित्र ६.३५

चित्र ६.३६

चित्र ६.३४ मटर का पैपिलिओनेशस फूल। ६.३५ उसी की पंखड़ियाँ खोल कर दिखाई गई हैं। चित्र ६.३६ पैपिलिओनेशस दलपुज का बैक्सिलरी एस्टिवेशन।

कहते हैं, और सबसे अन्दर की दो पलड़ियाँ जो सबसे छोटी भी होती हैं, नीतल (कील या कैराइना keel or carina) कहलाती हैं। प्रत्यक्ष रूप से ये दोनों (कील) पलड़ियाँ जुड़ी रहती हैं और एक नाव रूपी खोलवा गड्ढा बनाती हैं। उदाहरण के लिए अपराजिता (*Clitoria*), झुझनिया (*rattlewort, Crotalaria*), मटर (चित्र ६.३४, ६.३५, ६.३६), सेम और मटर की जाति (पैपिलियोनेसी फेमिली) के अन्य पौधों को ले सकते हैं।

(घ) अनियमित सयुक्तदली दलपुंज (*Irregular Gamopetalous Corollas*).

(९) द्वयोष्ठी दलपुंज (बाइलेबिएट **Bilabiate or two-lipped**). इस प्रकार के दलपुंज में दलपुंज का लिम्ब दो भागों या ओठों में बँटा रहता है—ऊपर वाला और नीचेवाला; तथा बीच में चौड़ी खुली मुँह की दरार रहती है (चित्र ६.३३—९)। इसके उदाहरण तुलसी (*Ocimum*), द्रोना (*Leonurus*), श्वेत द्रोना (*Leucas*), हाइग्रोफिला (*Hygrophila*), भेकर (*Adhatoda*) आदि में मिलते हैं।

(१०) संवृत (पर्सोनेट या मास्कड, **Personate or masked**). यह भी पहले की तरह दो ओठों (lips) के आधार का दलपुंज है; परन्तु यहाँ दोनों ओठ एक दूसरे के इतने निकट होते हैं कि दलपुंज का मुँह बन्द हो जाता है। निचले ओठ का बाहर की ओर निकला हुआ भाग, जिससे दलपुंज का मुँह बन्द हो जाता है, तालू (पैलेट, *palate*) कहलाता है (चित्र ६.३३—१०) जैसे स्नेपड्रेगन (*snappedragon*), लिण्डनबर्जिया (*Lindenbergia*) इत्यादि में।

(११) जिह्वित (लिग्यूलेट या पट्टीरूप **Ligulate or strap shaped**). जब दलपुंज के नीचे की ओर एक छोटी सकीर्ण-सी नली बन जाती है, परन्तु ऊपर की ओर दलपुंज एक पट्टी के समान चौड़ा रहता है, तो ऐसे दलपुंज को लिग्यूलेट या स्ट्रैप-शेड कहते हैं (चित्र ६.३३—११) जैसा कि सूरजमुखी के बाहरी पुष्पको (outer florets) में पाया जाता है।

दलपुंज के रूप

नियमित

अनियमित

—पृथक्दली

—स्वस्तिकाकार—जैसे, सरसो

—गूढ़ पंचनखर—जैसे पिक

—गुलाबाकृति—जैसे, गुलाब

—संयुक्तदली

—घण्टाकृति—जैसे, बेल-फ़लावर

—नालाकार—जैसे, सूरजमुखी के मध्य पुष्पक

—धतूराकार—जैसे, धतूरा

—चक्राकार—जैसे, हरसिगार

—पृथक्दली

—आगस्तिक—जैसे, मटर, सेम, झुझनिया, आदि

—संयुक्तदली

—द्वयोष्ठी—जैसे, तुलसी

—संवृत—जैसे, स्नेपड्रेगन

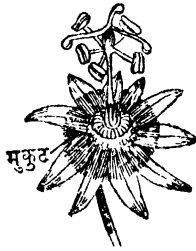
—जिह्वित—जैसे, सूरजमुखी के बाहरी पुष्पक

दलपुंज के उपांग (Appendages of the Corolla)

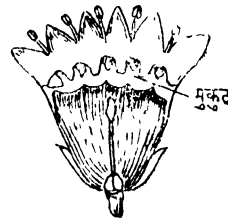
दलपुंज या परिपुष्प (perianth) में कभी-कभी कई प्रकार के उपांग भी होते हैं, जैसे स्नैपड्रैगन (snapdragon) में दलपुंज की नली एक ओर को थोड़ी फूली रहती है और इस प्रकार एक थैली के आकार की प्रतीत होती है। इस प्रकार के दलपुंज को पुटाकार (सैकेट, *saccate*) या गिबबस (*gibbous*) कहते हैं। बहुत-से-फलो, जैसे गुल-मेहदी (*balsam*), गार्डन-नेस्टर्शियम (*garden nasturtium*) और लार्कस्पर (*larkspur*) आदि में पेरियन्थ एक नली के रूप में लम्बा हो जाता है जिसे स्पर (*spur*) कहते हैं (चित्र ६.३७), और तब पेरियन्थ को स्पर-पुट युक्त (*spurred*) कहते हैं। कुछ फूलों में एक विशेष प्रकार का थैला, जिसे मकरन्द-कोष (*nectary*) कहते हैं, विकसित होता है। इस थैले में मकरन्द (*nectar*) होता है।



चित्र ६.३७



चित्र ६.३८



चित्र ६.३९

पेरियन्थ के उपांग। चित्र ६.३७ बाइलेविएट दलपुंज जिसमें 'स्पर' है।
दलपुंज के उपांग। मुकुट (*corona*)। चित्र ६.३८ झुमका (*passion flower*)।
चित्र ६.३९ अमरबेल (*Cuscuta*) का फूल।

कभी-कभी दलपुंज के अनुप्रस्थ रूप से (*transversely*) फट जाने के कारण एक अतिरिक्त भ्रमि इसके हलक (*throat*) पर बन जाता है। यह अतिरिक्त भ्रमि पालियों (*lobes*), शल्कों (*scales*) या बालों का बना हो सकता है। यह शल्क-पालियाँ और बाल स्वतंत्र भी हो सकते हैं और संयुक्त भी। इस भ्रमि को मुकुट (*corona* या *crown*) कहते हैं। मुकुट झुमका (*passion flower*) में (चित्र ६.३८), अमरबेल (*dodder*) में (चित्र ६.३९) और कनेर (*Nerium*) आदि में अच्छी प्रकार देखा जा सकता है। कोराना से फूल की सुन्दरता अधिक बढ़ जाती है और इस प्रकार यह कीड़ों को परागमेचन के लिए आकर्षित करने के लिए एक उपयोजन (*adaptation*) है।

पुष्पदल-विन्यास (ऐस्टिवेशन, *Aestivation*)

एक फूल में अंखड़ियों और पंखड़ियों का अपनी ही भ्रमि (*whorl*) के दूसरे सदस्यों

से जो सम्बन्ध होता है, उस विन्यास की विधि (manner of arrangement) को पुष्पदल-विन्यास कहते हैं। पौधों के वर्गीकरण के दृष्टिकोण से पुष्पदल-विन्यास एक महत्वपूर्ण लक्षण है, और यह निम्न प्रकार का हो सकता है:



चित्र ६.४०
(वाल्वेट)
धारास्पर्शी



चित्र ६.४१
(ट्विस्टेड)
न्युट्रेण्डित



चित्र ६.४२
(इम्ब्रिकेट)
अनियमछादी



चित्र ६.४३
वैक्सिलरी

दलपुञ्ज का ऐस्टिवेशन।

१. धारास्पर्शी (वाल्वेट, **Valvate**). जब एक अंखड़ी या पंखड़ी का एक किनारा दूसरी अंखड़ी या पंखड़ी के किनारे को छूता रहता है या जब यह एक दूसरे के बहुत निकट रहती है पर एक दूसरे को ढकती नहीं, तो इसे धारास्पर्शी या अनतिछादी पुष्पदल-विन्यास (valvate aestivation) कहते हैं (चित्र ६.४०), जैसे गरीफ़ा (custard apple), आक या मदार, कटेनी चम्पा (*Artabotrys*) आदि में।

२. न्युट्रेण्डित (ट्विस्टेड या कॉण्टॉर्टेड, **Twisted or contorted**). जब अंखड़ी या पंखड़ी का एक किनारा दूसरी अंखड़ी या पंखड़ी के किनारे को ढक लेता है और उसका दूसरा किनारा स्वयं एक तीसरी अंखड़ी या पंखड़ी के किनारे द्वारा ढका रहता है, तो ऐसे पुष्पदल-विन्यास को न्युट्रेण्डित (twisted) कहते हैं, (चित्र ६.४१), जैसे चाइना रोज, कपास इत्यादि में।

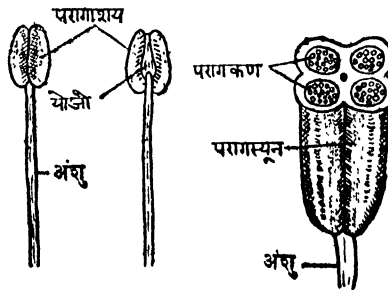
३. अनियमछादी (इम्ब्रिकेट, **Imbricate**). जब अंखड़ियों या पंखड़ियों में से एक अन्दर की ओर आ जाती है और उसके दोनों किनारे बाहर की दो अंखड़ियों या पंखड़ियों से घिर जाते हैं और एक बाहर की ओर हो जाती है और बची हुई अंखड़ियों या पंखड़ियों में से प्रत्येक एक किनारे पर दूसरी के द्वारा ढक जाती है और दूसरे किनारे से अपने आगेवाली अंखड़ी या पंखड़ी के किनारे को ढक लेती है तो इस प्रकार के ऐस्टिवेशन को अनियमछादी (इम्ब्रिकेट) कहते हैं (चित्र ६.४२)। यह अमलतास (*Cassia*), कृष्णचूर या गुलमोहर, राधाचूर (dwarf gold mohur), करंजा (fever nut) आदि में पायी जाती है।

४. वैक्सिलरी (**Vexillary**). जब किसी फूल में पाँच पंखड़ियाँ होती हैं तथा पिछली (posterior) पंखड़ी सबसे बड़ी होती है और अपने दायें-बायें किनारे की दोनों पंखड़ियों को करीब-करीब ढक लेती है और ये दोनों पंखड़ियाँ सामने की दोनों पंखड़ियों को, जो सबसे छोटी होती है, ढक लेती हैं, तो इस प्रकार के ऐस्टिवेशन को वैक्सिलरी कहते हैं (चित्र ६.४३)। वैक्सिलरी ऐस्टिवेशन साधारण रूप से सभी पैपिलिओनेशस (papilionaceous) दलपुञ्जों में मिलता है, जैसे मटर के कुल

(Papilionaceae) जिसमें मटर, सेम, अपराजिता (Clitoria), झंझुनिया (rattlewort) आदि होते हैं।

(३) पुमंग (एण्ड्रीशियम, Androecium)

पुमंग (Androecium; andros—नर). फूल का नर जननेन्द्रिय भ्रमि (male reproductive whorl) होता है और बहुत से पुंकेसरों (stamens) से मिलकर बनता है। स्टेमेन विशेष प्रकार की पत्तियों के रूपान्तर माने गये हैं, जिनका काम-नर बीजाणु (male spores) या लघुबीजाणु (microspores) या परागकण उत्पन्न करना है। इन पत्तियों को माइक्रोस्पोर-युक्त पत्तियाँ या लघु-बीजाणुपत्र (microsporophylls) भी कहते हैं। प्रत्येक पुंकेसर या स्टेमेन तीन भागों से मिलकर बनता है, जिन्हें अंश (filament), परागकोश (ऐन्थर, anther)



(क) (ख)

चित्र ६४४

चित्र ६४५

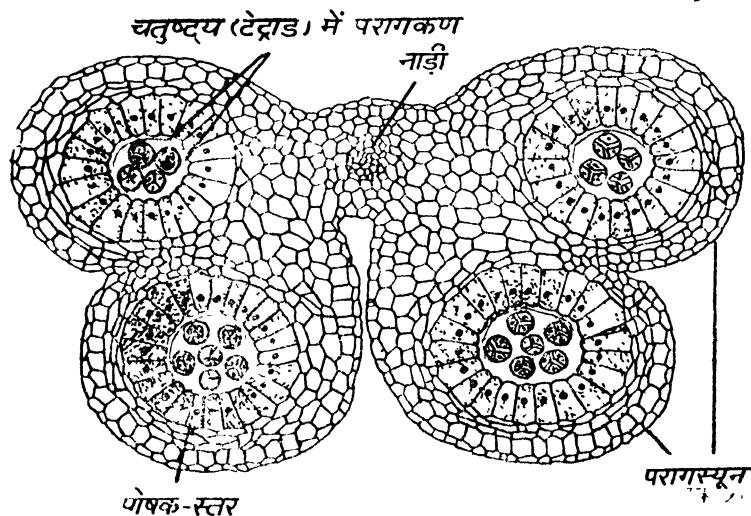
चित्र ६४४ पुंकेसर। (क) एक पुंकेसर (सामने से देखने पर); (ख) एक पुंकेसर (पीठ की ओर से देखने पर) जिसमें योजी स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

चित्र ६४५ अनुप्रस्थ रूप से काटने पर एक पुंकेसर, जिसमें ४ पराग-स्यून् (pollen sacs) और बहुत-से परागकण दिखाई दे रहे हैं।

और योजी (कनेक्टिव, connective) कहते हैं। फ़िलामेंट (चित्र ६४४) एक पतला-सा डण्डल होता है और ऐन्थर इसका चौड़ा सिर (head) होता है जो फ़िलामेंट के सिर पर लगा रहता है। प्रत्येक ऐन्थर (परागकोश) साधारणतया दो पालियों (lobes) का बना होता है। हर पाली के अन्दर दो कमरे या लॉक्यूलाई (loculi) होते हैं। इन कमरों को परागस्यून् (pollen sacs) या परागयैली या लघुबीजाणु-धानी (microsporangia) कहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक ऐन्थर में कुल मिलाकर चार कमरे होते हैं। (चित्र ६४५)। किन्तु बहुत-से परागकोशों में केवल दो ही होते हैं। और कभी-कभी, जैसे चाइना रोज़ (China rose), भिण्डी (lady's finger), कपास (cotton) आदि में केवल एक ही कमरा होता है। हर पराग यैली

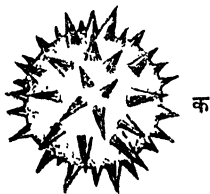
(pollen sac) में बारीक चूर्ण या दानेदार कोशाओं (granular mass) का ढेर होता है। इन्हें परागकण (pollen grains) या लघुबीजाणु (microspores) कहते हैं। पराग धूलियों में परागकण बहुत अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं और कभी-कभी धूल के कणों के समान हवा के द्वारा इधर-उधर बिखर जाते हैं, जैसा कि हमें ताड़ (palms), केवडा (screwpine), और मक्का (maize) आदि में दिखाई देता है। कभी-कभी, जैसे गन पाउडर प्लाण्ट (Pilea), अटिका (Urtica) आदि में ऐन्थर चटाखे के साथ फटते हैं और परागकण के झुण्ड उनमें से निकल कर उड़ते हुए दिखाई देते हैं। ऐन्थर की दोनों पालियाँ एक मध्य-नाड़ी (mid-rib) से जुड़ी रहती हैं, जिसे योजी (कनेक्टिव, connective) कहते हैं। फिलामेण्ट पत्ती के डण्ठल (petiole) का अनुरूप होता है, ऐन्थर पत्ती के फलक का और कनेक्टिव बीच की नाड़ी का अनुरूप होता है। ऐन्थर का वह सिरा जिस पर कनेक्टिव जुड़ा रहता है, पीठ या बैक (back) कहलाता है और दूसरी ओर का सिरा मुख (face) कहलाता है। मुख पर बहुधा एक लम्बी दरार होती है। जब 'फेस' फूल के मध्य की ओर मुड़ा रहना है तब उस फूल को अन्तर्मुखी (इन्ट्रोर्ज, introrse) कहते हैं, और जब 'फेस' बाहर की ओर मुड़ा रहता है तब उस फूल को वहिर्मुखी (एक्स्ट्रोर्ज, extrorse) कहते हैं। जब स्टेमेन (पुकेसर) में ऐन्थर (परागकोश) नहीं होता या उसका विकास बहुत कम हुआ रहता है और उसमें परागदाने नहीं रहते तो उस स्टेमेन को बाँझ या बन्ध्य (sterile) कहते हैं। इस प्रकार के बाँझ पुकेसर को बन्ध्यकेसर (staminode) भी कहते हैं, जैसा कि पिंक (pink), दुगहरिया (noon flower, Pentapetes) आदि में पाया जाता है। और जब फिलामेण्ट नहीं होता तो ऐन्थर को सेसाइल (sessile) या आवृन्त कहते हैं।

पराग (The Pollen). परागकण (pollen grains) या लघुबीजाणु



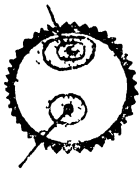
चित्र ६.४६ अनुप्रस्थ काट में एक परागकोश (anther) जिसमें चार विवर और चतुष्टय (टेट्राड) में परागकण दिखाई दे रहे हैं।

(microspores) फूल के नर जननेन्द्रिय तत्व (reproductive bodies) होते हैं और परागस्यन (pollen sac) या लघुबीजाणुधानी (microsporangia) के अन्दर पाये जाते हैं। इनका आकार बहुत छोटा होता है जो $\frac{1}{1000}$ से $\frac{1}{100}$ इंच तक होता है और यह धूल के कणों के समान होते हैं। प्रत्येक परागकण में एक-एक अतिमूक्ष्म कोशा (microscopic cell) होती है। इस सेल के दो छ्द होते हैं जिन्हें बहिर्कवच (एक्जाइन, **exine**) और आन्तरकवच (इण्टाइन, **intine**) कहते हैं। बहिर्कवच एक सख्त, क्यूटिनाइज्ड (cutinised) परत है जिसमें अक्सर शल्यमय उद्बर्ध (spinous outgrowths) या रेटिकुलेगन्स (reticulations) होते हैं। कभी-कभी यह चिकनी भी होती है। आन्तरकवच पतली, मुलायम और सेल्युलोज (cellulose) की बनी होती है और एक्जाइन के अन्दर रहती है। चीड़ (pinc) के फूलों के परागकणों में दो स्पष्ट पख-से होते हैं। जब परागकण को उगना होता है तो आन्तरकवच एक नली के रूप में (चित्र ६४८) बहिर्कवच की कुछ सकीर्ण और कमजोर सुराखों या दरारों में से निकलती है। इस



क

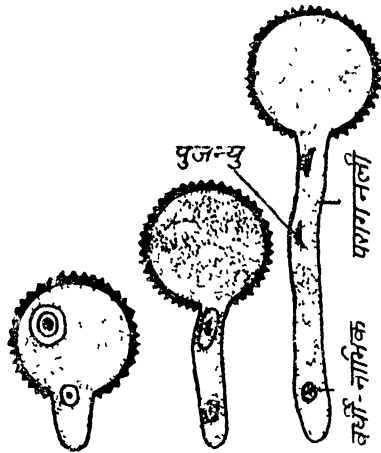
वर्धी-नाभिक



ख

जनन नाभिक

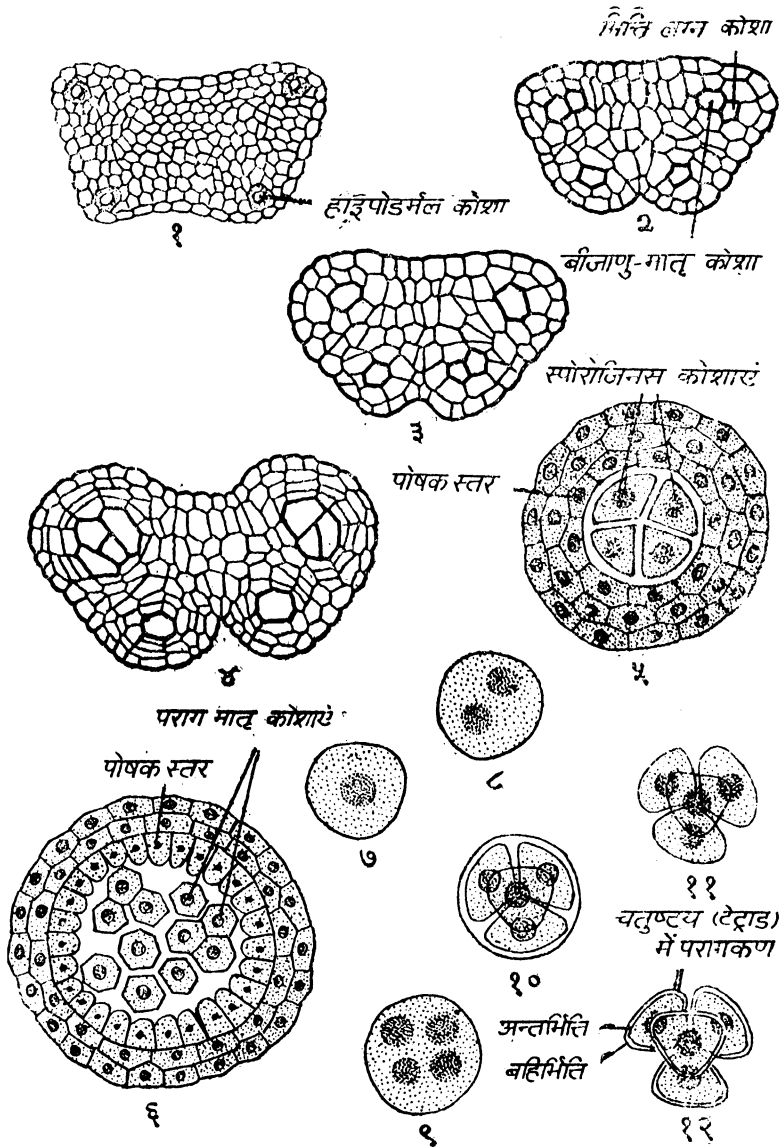
चित्र ६४७



चित्र ६४८

चित्र ६४७ परागकण: (क) एक सम्पूर्ण परागकण, (ख) सेक्शन में एक परागकण, जिसमें वर्धी-नाभिक (बड़ीवाली) और जनन-नाभिक (generative nucleus) दिखाई दे रही है। चित्र ६४८ पराग-नली की वृद्धि की स्थितियाँ।

नली को पराग नली तथा इन दरारों को अंकुर छिद्र (germ pores) कहते हैं (चित्र ६४७)। कभी-कभी सुराख स्पष्ट ढक्कन से ढका रहता है, जो वृद्धि करते हुए आन्तरकवच के धक्का देने से खुल जाता है। पहले-पहल हर परागकण में केवल



[1, 2, 3, 4, Redrawn from Maheshwari]

चित्र ६.४८। १-६; परागकोश का विकास। ७-१२ परागकणों का विकास।
 १. अनुप्रस्थकाट में एक परागकोश जिसमें चार हाइपोडर्मल कोशाएं दिखाई दे रही हैं;
 २. ऊपरी (पेराइटल सेल) और निचली (स्पोरोजिनस सेल); ३. ४. पेराइटल।

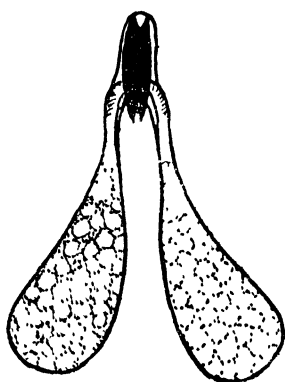
एक नाभिक (nucleus) होती है। यह नाभिक बँट कर दो नाभिकों (nuclei) में बदल जाती है। इनमें से एक कोशा बड़ी होती है, जिसे **वर्धी-नाभिक (vegetative nucleus)** अथवा **ट्यूब न्युक्लियस (tube nucleus)** कहते हैं। और छोटी नाभिक को **जनन नाभिक (generative nucleus)** कहते हैं। जब पराग-नलिका बढ़ने लगती है, तो यह अपने साथ अपने सिरे पर वर्धी-नाभिक और जनन नाभिक ले जाती है। जेनरेटिव न्युक्लियस शीघ्र ही दाँ में बँट जाता है और इस प्रकार दो नर जननेन्द्रियाँ इकाइयाँ (male reproductive units) बन जाती हैं जिन्हें **पुंजन्य (male gametes)** कहते हैं। ट्यूब न्युक्लियस तब नष्ट हो जाता है।

परागकणों का विकास (Development of pollen grains). पराग-कोश (anther) की प्रारम्भिक दशा में कोशाओं की चार लम्बवत् कतारें (vertical rows of cells)—प्रत्येक पाली में एक-एक—प्रत्यक्ष हो जाती है। इनकी कोशाओं में प्ररसीय (प्रोटोप्लाज्मिक) वस्तुएँ घने रूप में उपस्थित रहती हैं (चित्र ६.४८—१)। कतार की प्रत्येक कोशा दो कोशाओं में विभाजित हो जाती है—भीतरी और बड़ी **बीजाणु मातृ कोशा (sporogenous cell or archesporium)** कहलाती है और दूसरी बाहरी और छोटी **भित्तिलग्न कोशा (parietal cell)** कहलाती है (२)। पेराइटल सेल अनुस्पर्श रूप से (tangentially) दो या तीन कतारों में भाजित हो जाती है (३)। ये कोशाएँ (पेराइटल सेल्स) फिर लगातार अपनी रेडियल दीवारों (radial walls) के द्वारा भाजित होती जाती हैं। और स्पोरोजिनस सेल (४) के चारों ओर आ जाती है। स्पोरोजिनस सेल स्वयं भी भाजित होना शुरू कर देता है जिससे केन्द्रीय कोशाओं का एक समूह बन जाता है (५)। ये स्पोरोजिनस कोशाएँ वृद्धि करती हैं, एक दूसरे से अलग हो जाती हैं और **बीजाणु या पराग मातृ कोशाएँ (spore or pollen-mother cells)** हो जाती हैं। पेराइटल (भित्तिलग्न) कोशाओं की सबसे भीतरी परत जो स्पोरोजिनस कोशाओं और बाद में पराग मातृ-कोशाओं से ठीक सटी हुई होती है, **पोषक-स्तर (टेपिटम, tapetum)** कहलाती है (६)। टेपिटम की कोशाएँ लगभग स्फानवत् (wedge-shaped) होती हैं और इनमें एक या अधिक नाभिक (nuclei) होती हैं। यह पोषक ऊति (nutritive tissue) होती है जिससे वृद्धि करते हुए पराग-कणों को भोजन प्राप्त होता है। अन्त में टेपिटम नष्ट हो जाता है।

प्रत्येक पराग-मातृ-कोशा (७) की नाभिक दो बार भाजित होती है, जिससे चार-चार नाभिकें (nuclei) बन जाती हैं। इन दो लगातार भाजनो में से प्रथम (८) अर्धसूत्रि भाजन (मिओसिस, meiosis) होता है और दूसरा (९)

कोशाओं के भाजन; ५. टेपिटम (सबसे भीतरी परत) के साथ पेराइटल (भित्तिलग्न) परतें जो केन्द्रीय स्पोरोजिनस टिशू को चारों ओर से घेरे हुए हैं; ६. पेराइटल परतें टेपिटम (पूर्ण रूप से विकसित) और पराग-मातृ-कोशाएँ; ७. एक पराग-मातृ-कोशा, ८-९. नाभिक भाजन, १०. प्रोटोप्लास्ट का टेट्राहीड्रल रीति में भाजन; ११. पराग-मातृ-कोशा की दीवार का गायब होना और परागकणों का टेट्राहीड्रक रीति से विन्यास; १२. टेट्राड में परागकण और प्रत्येक परागकण में बहिर्भित्ति और अन्तर्भित्ति का निर्माण।

सूत्रि भाजन (माइटोसिस, mitosis) होता है (१०)। इस तरह से प्रत्येक नाभिक में साधारण रूप से रहनेवाले विध्यसूत्रों (chromosomes) की संख्या ($2x$) के बजाय केवल आधी संख्या (x) रह जाती है। इस प्रकार उत्पन्न हुई चारों नाभिकें टेट्राहीड्रल (tetrahedral) ढग से विन्यस्त होती है। और फिर साइटोप्लाज्म का भाजन होता है जिससे नाभिके चार स्पष्ट खण्डों (segments) में अलग-अलग बँट जाती है। इन खण्डों को परागकोशाएँ कहते हैं (११)। मातृ-कोशा की दीवार गायब हो जाती है (१२) और प्रत्येक परागकोशा एक मोटी बाहरी दीवार—बहिर्भित्ति (exine) और एक पतली भीतरी दीवार—अन्तर्भित्ति (intine) स्राविन (secrete) करती है। चारों परिपक्व (mature) कोशाएँ एक दूसरे से अलग हो जाती हैं और चार परागकण बनाती हैं। किन्तु एक



बीजपत्रियों में साइटोप्लाज्म का भाजन दो तलों (planes) से होता है जो एक दूसरे के समकोण पर रहते हैं। यह भाजन द्वि-बीजपत्रियों के समान टेट्राहीड्रल ढग से नहीं होता। होंगला (bulrush, *Typha*), रस (juncus), सनड्यू (*Diosera*) और कुछ अन्य उदाहरणों में एक समूह में उत्पन्न हुई चार कोशाएँ अलग-अलग नहीं होती, बल्कि करीब-करीब एक दूसरे से जुड़ी (coherent) रहती हैं। आक या मदार (*Calotropis*) और ऑर्किड्स (orchids) में प्रत्येक पराग-स्थान (pollen sac) की पराग कोशाएँ (pollen cells) एक समूह में संयुक्त होती हैं। इस समूह को पराग-पिण्ड (pollinium) कहते हैं (चित्र ६.४९)।

चित्र ६.४९ मदार (*Calotropis*) का परागपिण्ड (pollinium)।

अशु का परागकोश से जोड़ (Attachment of the filament to the anther). फिलामेंट ऐन्थर से निम्नलिखित चार मुख्य प्रकार में जुड़ा रहता है:

१. आधारलग्न (बेसीफिक्स्ड या इन्नेट, **Basifixed or innate**). जब अंश परागकोश के आधार (base) पर जुड़ा रहता है (चित्र ६.५०), जैसे सरसो, मली, सेज (sedge), कमल (water lily) इत्यादि में।

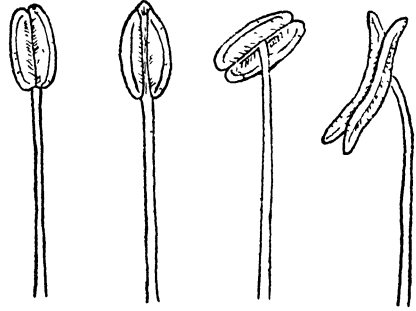
२. अभिलग्न (ऐडनेट, **Adnate**). जब फिलामेंट परागकोश के आधार से शिखर तक जुड़ा रहता है (चित्र ६.५१), जैसे चम्पा (*Michelia*), दुली-चम्पा (*Magnolia*) इत्यादि में।

३. पृष्ठ-लग्न (डॉर्सीफिक्स्ड, **Dorsifixed**). जब अंश परागकोश की पीठ पर जुड़ा रहता है (चित्र ६.५२) जैसे झुमका (पैशन फ्लावर) में।

४. मध्यडोली (वर्सटाइल, **Versatile**). जब अशु परागकोश की पीठ पर से केवल एक बिन्दु पर जुड़ा रहे, जिससे ऐन्थर हवा में स्वतंत्रतापूर्वक झूल सके (चित्र ६.५३), जैसे घासों, ताड़ों, स्पाइडर लिली (spider lily, *Pancratium*) आदि में।

संलग्न और अभिलग्न (**Cohesion and Adhesion**). ऐडेजन

(adhesion), ऐडनेट (adnate) और ऐडेरेण्ट (adherent) शब्द फूल के विभिन्न भ्रमियों के सदस्यों के संयोग को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त होते हैं, जैसे पखड़ियों का पुकेसरो (stamens) से संयोग, या पुकेसरो का अण्डपो (carpels) से संयोग। और कोहेजन (cohesion), कोनेट (connate) और कोहेरेण्ट (coherent) शब्द फूल के एक ही भ्रमि के विभिन्न भागों के संयोग को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त होते हैं, जैसे पुकेसरो का आपस में संयोग या अण्डपो का आपस में संयोग।

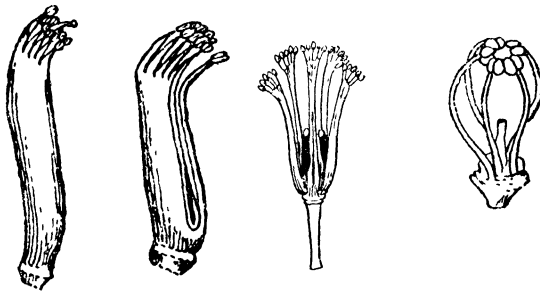


चित्र ६.५० चित्र ६.५१ चित्र ६.५२ चित्र ६.५३
आधारलग्न अभिलग्न पृष्ठलग्न मध्यडोली

पुकेसरो का संलाग
(**Cohesion of stamens**
या **synandry**) पुकेसर

पुकेसर में अशु का परागकोश से जोड़।

स्वतंत्र भी होते हैं और संयुक्त (coherent) भी। कभी-कभी केवल उनके फिलामेण्ट ही जुड़े रहते हैं और एन्थर स्वतंत्र होते हैं, और कभी-कभी केवल एन्थर (परागकोश) ही संयुक्त रहते हैं और फिलामेण्ट स्वतंत्र होते हैं।



चित्र ६.५४ चित्र ६.५५ चित्र ६.५६ चित्र ६.५७
एकमलाग द्विसंलाग बहुसंलाग संपराग
(मोनएडल्फस) (डाइएडल्फस) (पॉलीएडल्फस) (सिजिनीशिअस)

पुकेसरो का संलाग।

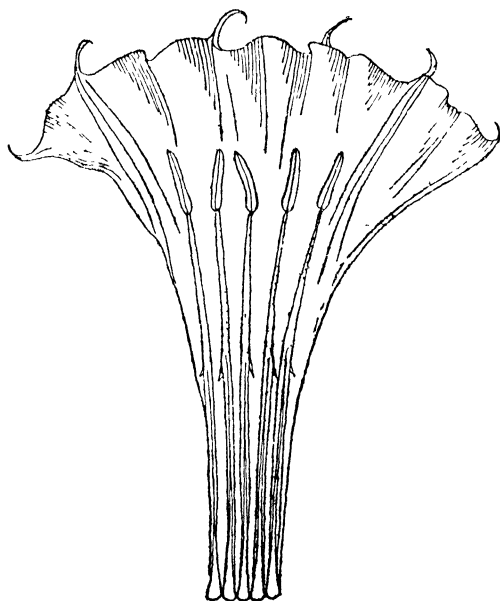
(१) **एकसंलाग** (मोनएडल्फस, **Monadelphous**; *monos*—एक, *adelphous*—बण्डल). (चित्र ६.५४) जब अशु (filaments) एक ही बण्डल में संयुक्त होते हैं, तो पुकेसर **एकसंलाग** कहे जाते हैं, जैसे मालवेसी कुल (*Malvaceae*) के पौधों—चाइना रोज़, भिण्डी, कपास, मद्रास हेम्प (*Madras hemp*)—आदि में।

(२) द्विसंलाग (डाइएडल्फस, **Diadelphous**; *di*—दो). जब फिलामेण्ट दो बण्डलों में संयुक्त रहते हैं, तो पुकेसर (stamens) द्विसंलाग कहे जाते हैं (चित्र ६.५५), जैसे मटर कुल (*Papilionaceae*) के पौधों—मटर, सेम, दालो, इत्यादि में।

(३) बहुसंलाग (पॉलीएडल्फस, **Polyadelphous**; *poly*—कई). जब अशु अनेक बण्डलों में अर्थात् दो से अधिक बण्डलों में संयुक्त होते हैं, तब पुकेसरो को बहुसंलाग कहते हैं (चित्र ६.५६), जैसे सेमल, रेंडी, नीबू, चकोतरा (*shaddock*) इत्यादि में।

(४) संपराग (सिंजिनीशियस, **Syngenesious**; *syn*—एक साथ या संयुक्त, *genes*—बनाना). जब परागकोश संयुक्त रहने हैं और फिलामेण्ट स्वतंत्र रहते हैं, तो पुकेसर संपराग कहे जाते हैं (चित्र ६.५७), जैसे सूरजमुखी कुल (*Compositae*) के पौधों—सूरजमुखी, गेंदा आदि में।

पुकेसरों का अभिलाग (**Adhesion of Stamens**). जब पुकेसर दलपुज से सट जाते हैं तब उनको (१) दलबद्ध (एपीपेटलस **epipetalous**) कहते हैं, जैसे धतूरा (*Datura*) में (चित्र ६.५८) तम्बाकू, आल, रगन (*Ixora*) और सूरजमुखी इत्यादि में। और जब वे परिपुष्प (perianth) में सटे रहने हैं, तब उनको परिपुष्पबद्ध (एपीफिलस, **epiphylous**) कहते हैं, जैसे नलिनी कुल (*Liliaceae*)

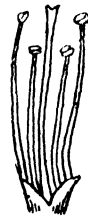


(चित्र ६.५८) धतूरा (*Datura*)।

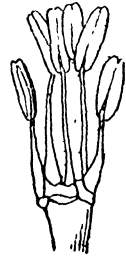
के पौधों—व्याज, सलमूली (*Asparagus*) इत्यादि में। संयुक्त-दली दल पुज (gamopetalous corolla) वाले अधिकतर फूल दलबद्ध (epipetalous) पुकेसर रखते हैं। जब पुकेसर, चाहे अपनी पूरी लम्बाई द्वारा या केवल अपने परागकोशों (anthers) द्वारा अण्डपो (कार्पेल्स) से सटे (adhered) रहते हैं, तब वे (२) पुंजायौग (**gynaandrous**) कहे जाते हैं, जैसे मदार (*Calotropis*), आर्किड्स, इशर-मूल (Indian birthwort, *Aristolochia indica*) और पेलिकन प्लावर (*Aristolochia gigas*) में।

पुकेसरों की लम्बाई (चित्र ६.५९, ६.६०). एक फूल के पुकेसर एक ही लम्बाई

के हो सकते हैं या उनकी लम्बाई, आपस में बिना किसी निश्चित सम्बन्ध के, भिन्न-भिन्न हो सकती है। किन्तु कुछ उदाहरण में लम्बे और छोटे पुकेसरों में एक निश्चित सम्बन्ध होता है। इस प्रकार तुलसीकुल (Labiateae) में, जैसे तुलसी (*Ocimum*), द्रोना (*Leonurus*), श्वेत द्रोना (*Leucas*), इत्यादि में चार पुकेसर होते हैं, जिनमें दो लम्बे और दो छोटे होते हैं। ऐसे पुकेसर (१) द्विदीर्घक (डाइडिनेमस, **didynamous**, di—दो, *dynamis*—शक्ति) कहे जाते हैं। क्रूसीफेरी कुल (Cruciferae) के पौधों, जैसे सरसों, मूली, शलजम, रेप (rape) इत्यादि, में छः पुकेसर होते हैं, जिनमें चार बड़े और दो छोटे होते हैं। ऐसे पुकेसर (२) चतुर्दीर्घक (टेट्राडाइनेमस, **tetradynamous**, *tetra*—चार) कहलाते हैं। कभी-कभी एक ही पेड़ के फूलों में सं कुछ में लम्बे पुकेसर होते हैं और कुछ में छोटे पुकेसर होते हैं। इस प्रकार के पुकेसरों को द्विरूपिक पुकेसर (dimorphic stamens) कहते हैं। दलपुञ्ज से तुलना करने में पुकेसरों की लम्बाई दो प्रकार की हो सकती है, (१) दलपुञ्जली (corolla tube) से स्टेमेन लम्बाई में छोटे हो सकते हैं और उसी में सीमित रहते हैं। ऐसे पुकेसरों को **इन्सर्टेड (inserted)** कहते हैं। (२) स्टेमेन दलपुञ्जली से लम्बे हो सकते हैं और तब नली के बाहर निकले रहते हैं। इस प्रकार के स्टेमेन को **एक्सर्टेड (exserted)** कहते हैं।



चित्र ६.५९
द्विदीर्घक



चित्र ६.६०
चतुर्दीर्घक

पुकेसरों की लम्बाई।

पुकेसरों की संख्या. फूलों में पुकेसरों की संख्या विभिन्न होती है—१ से ∞ (अर्थात् एक से लेकर असंख्य तक)। अदरक कुल में केवल एक पुकेसर मिलता है और कैवटस जाति के बहुत से पौधों में यह अगणित संख्या में पाये जाते

हैं। संयुक्तदली फूलों में साधारणतया एक निश्चित संख्या (१० से कम) होती है और पृथकदली फूलों में अनिश्चित संख्या (१० से अधिक) मिलती है। साधारण नियम के अनुसार एक-बीजपत्री फूलों में ३ पुकेसर या ३ के गुणक (multiple) होते हैं, और द्वि-बीजपत्री फूलों में ५ पुकेसर या इसके गुणक पाये जाते हैं।

पुकेसरों का निवेश या स्थिति (Insertion or position of stamens). अन्य पुजों को भाँति पुकेसर भी पुष्पाक्ष (thalamus) पर निविष्ट (inserted) होते हैं। इनकी स्थिति दलपुञ्ज (corolla) और जायांग (gynaecium) के बीच में होती है। फिर भी अण्डाशय (ovary) से इनकी तुलनात्मक-स्थिति विभिन्न हो सकती है, जिससे ये अधोजाय (hypogynous), परिजाय (perigynous) या उपरिजाय (epigynous) हो सकते हैं (पृ० ११३-४ देखें)।

परागकोश का स्फुटन (Dehiscence of the anther). जब परागकण पकते हैं तो अन्दर से ऐन्थर की दीवारों पर दबाव डालते हैं, ऐन्थर फट जाता

है और परागकण बाहर निकल आते हैं। परागकोश का फटना या स्फुटन चार विभिन्न रूपों में होता है।

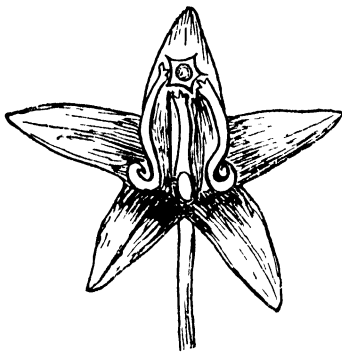
१. **अनुलम्ब स्फुटन (Longitudinal dehiscence)**. जब ऐन्थर की पालियाँ (lobes) लम्बाई में फटती हैं तो उसे लम्बाकार या अनुलम्ब स्फुटन (longitudinal dehiscence) कहते हैं, जैसी कि धतूरा, शरीफा, सूरजमुखी, चाइना रोज़, कपाम आदि में पायी जाती है।

२. **अनुप्रस्थ स्फुटन (Transverse dehiscence)**. जब ऐन्थर की पालियाँ चौड़ाई में फटती हैं तो उसे अनुप्रस्थ स्फुटन (transverse dehiscence) कहते हैं। यह लेबिएटी कुल (Labiatae) में देखने को मिलता है।

३. **छिद्रिल स्फुटन (Porous dehiscence)**. जब स्फुटन शिखर पर के एक या अधिक छेदों में से होता है, तो उसे छिद्रिल स्फुटन कहते हैं, जैसे आलू, बैंगन आदि में।

४. **कपाटीय स्फुटन (वाल्व्यूलर, Valvular dehiscence)**. जब स्फुटन एक या अधिक कपाटी या वाल्वों के द्वारा होता है तो उसे वाल्व्यूलर या कपाटीय कहते हैं। यह वाल्व खिड़की की कुण्डी (shutter) के समान केवल बाहर की ओर ही खुलते हैं। इस प्रकार का स्फुटन दालचीनी (cinnamon), कपूर (camphor), तेजपात (bay leaf) और बार्बेरी (barberry) आदि में देखने को मिलता है।

पुंकेसरो के उपांग (Appendages of stamens) फिलामेण्ट और ऐन्थर दोनों में ही बाल या शल्क के रूप में उद्बर्ध (outgrowths) होते हैं।



चित्र ६६१

आक या मदार (*Calotropis*)।

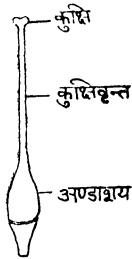
मेलॉस्टोमा (*Melostoma*), ऑस्बेकिया (*Osbeckia*) और कनेर (*Nerium*) आदि में ऐन्थर चोंच, स्पर (spur) या बालयुक्त होते हैं। इसी प्रकार फिलामेण्ट में भी उपांग हो सकते हैं। जब यह उपांग निश्चित भ्रमियों में होते हैं तो यह पुंकेसरीय मुकुट (स्टैमिनल कोरोना, **staminal corona**) बनाते हैं। इस प्रकार आक या मदार (*Calotropis*) में हमें सींग (horn) रूपी कोरोना का एक भ्रम मिलता है (चित्र ६६१)। स्पाइडरवर्ट (spiderwort, *Tradescantia*) में बालों का एक भ्रम होता है। स्पाइडर लिली (spider lily, *Pancratium*) में कोरोना एक झिल्लीदार प्याले के रूप में फिलामेण्ट के

आधार पर चिपका हुआ पाया जाता है।

(४) जायांग या स्त्रीकेसर (**Gynaecium or Pistil**)

जायांग (गाइनीशियम, **gynaecium**; *gyne*—मादा) या स्त्रीकेसर (पिस्टिल **pistil**; *pistillum*—मूसल या pestle, क्योंकि पिस्टिल का आकार मूसल की तरह होता है) फूल का मादा जननेन्द्रिय भ्रम (reproductive whorl) होता है, और एक या अधिक अण्डपों (**carpels**) से मिलकर बनता है। अण्डप विशेष प्रकार की पत्तियों के रूपान्तर होते हैं, जिनका काम मादा बीजाणु (female

spores) या महाबीजाणु (megaspore) या भ्रूणस्यून (embryo sac) पैदा करना है। इस प्रकार की महाबीजाणुयुक्त पत्तियों को महाबीजाणुपत्र (megasporophylls) भी कहते हैं। जब पिस्टिल केवल एक ही कार्पेल का बना हुआ होता है, जैसा कि मटर, सेम, गुलमोहर, छुई-मुई इत्यादि के फूलों में होता है, तो उस पिस्टिल को साधारण (simple) या एकाण्डपी (monocarpellary) कहते हैं (चित्र ६.६२, ६.६३)। परन्तु जब पिस्टिल दो से अधिक अण्डपों का बना हुआ होता है, तो उसे संयुक्त (compound) या बहुअण्डप (polycarpellary) कहते हैं। एक कम्पाउण्ड पिस्टिल में कार्पेल स्वतंत्र भी हो सकते हैं, जैसे गुलाब, कमल स्टोनक्रॉप (Sedum), चम्पा, दुली-चम्पा, कटेली चम्पा, लेवेण्डर चम्पा आदि में। ऐसे स्त्रीकेसर (pistil), पृथकाण्डप (एपोकार्पस, apocarpous; apo—स्वतंत्र, karpos—फल



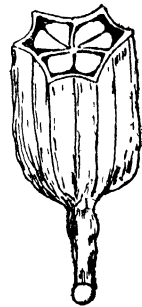
चित्र ६.६२
एक साधारण
पिस्टिल।



चित्र ६.६३
साधारण पिस्टिल
का एक-विवरीय
अण्डाशय।



चित्र ६.६४
एक सिन्कार्पस
पिस्टिल।

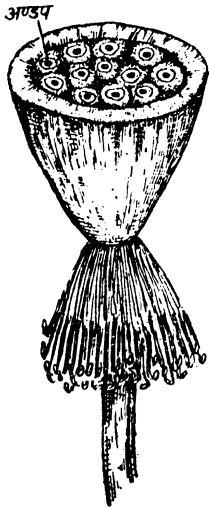


चित्र ६.६५
सिन्कार्पस पिस्टिल
का तीन-विवरीय
अण्डाशय।

पिस्टिल : बीजाण्डों (ovules) पर ध्यान दीजिये।

या अण्डाशय) कहलाते हैं (चित्र ६.६६), या सारे अण्डप एक साथ जुड़े भी हो सकते हैं जैसा कि आमतीर पर पाया जाता है। ऐसे पिस्टिल को युक्ताण्डप (सिन्कार्पस, syncarpous; syn—संयुक्त) कहते हैं (चित्र ६.६४, ६.६५)। प्रत्येक स्त्रीकेसर के तीन भाग होते हैं (चित्र ६.६४)—कुक्षि या वर्तिकाग्र (स्टिग्मा, stigma), कुक्षिवृन्त या वर्तिका (स्टाइल, style) और अण्डाशय (ओवरी, ovary)। स्त्रीकेसर (pistil) का छोटा गोल सिरा कुक्षि (स्टिग्मा) कहलाता है और स्टिग्मा को सहारा देनेवाला पतला डण्ठल कुक्षिवृन्त (स्टाइल) कहलाता है। इसी प्रकार पिस्टिल का निचला फूला हुआ भाग अण्डाशय (ओवरी) के नाम से पुकारा जाता है। अण्डाशय में एक या एक से अधिक छोटी-छोटी गोल या अण्डाकार आकृतियाँ होती हैं। ये आकृतियाँ बीजों के अल्पविकसित रूप (rudiments) हैं और यह बीजाणु (ओव्यूल, ovules) या महाबीजाणुधानी (megasporangia) कहलाती हैं। प्रत्येक ओव्यूल में एक बड़ा अण्डाकार सेल होता है (चित्र १०.४) जिसे भ्रूणस्यून (embryo sac) या

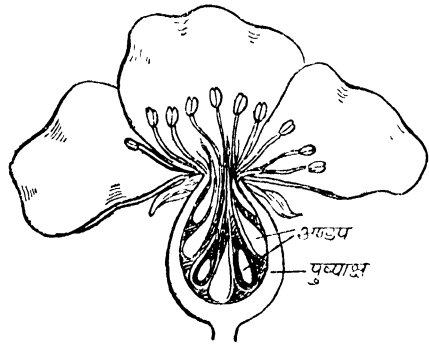
महाबीजाणु (megaspore) कहते हैं। अण्डाशय आगे चलकर फल को और बीजाण्ड बीजो को जन्म देते हैं। एपोकार्पस पिस्टिल (पृथकाण्डप स्त्री-केसर) बहुत-से फलों को जन्म देता है—उतने ही फलों को जितने उसमें कार्पेल (अण्डप) होते हैं, सिन्कार्पस (युक्ताण्डप) पिस्टिल केवल एक फल को ही जन्म देता है, क्योंकि इस रूप में सारे कार्पेल संयुक्त होकर केवल एक अण्डाशय ही बनाते हैं जब किसी पिस्टिल में कुक्षि अनुपस्थित या असाधारण होता है, या अण्डाशय



कमल



कम्पा



गुलाब

चित्र ६.६६ एपोकार्पस पिस्टिल।

में ओव्यूल नहीं होते या बीजाणुओं (ovules) में एम्ब्रियो-सैक या अण्डकोशा (egg-cell) नहीं होता तो पिस्टिल को वन्ध्य या बाझ (sterile) कहते हैं। ऐसे पिस्टिल को वन्ध्य स्त्रीकेसर या पिस्टिलोड (pistillode) भी कहते हैं।

स्त्री-केसर

साधारण—जैसे, मटर, सेम आदि। कम्पाउण्ड
(एक कार्पेल) (एक से अधिक)

युक्ताण्डप—जैसे, सरसो, कपास, नीबू,
(संयुक्त कार्पेल) लिली आदि।

पृथकाण्डप—जैसे, गुलाब, कमल,
(स्वतंत्र कार्पेल) आदि।

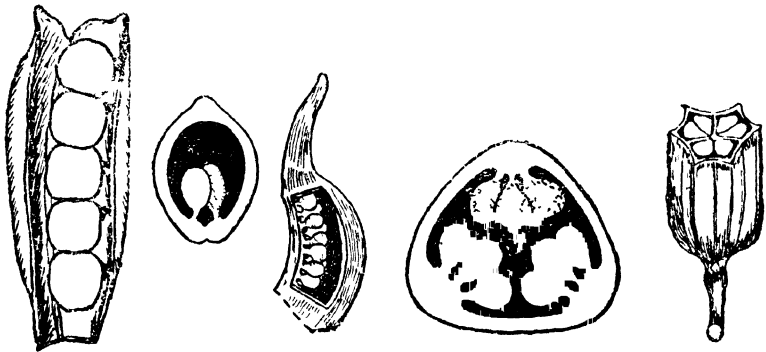
सिन्कार्पस पिस्टिल में कार्पेल. एक युक्ताण्डप (syncarpous) पिस्टिल में प्रायः अण्डपों (carpels) की संख्या ज्ञात करना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को हटाने के लिए निम्नांकित बातें देखनी चाहिए:

(१) कुक्षियों (stigmas) या कुक्षिपालियों (stigmatic lobes) की संख्या।

- (२) कुक्षिवृन्तो (styles) की संख्या।
- (३) अण्डाशय की पालियों की संख्या।
- (४) अण्डाशय के कमरो (chambres) या विवरो (loculi) की संख्या।
- (५) जरायुओ (placentae) की संख्या।
- (६) अण्डाशय में बीजाण्डो के गुच्छों की संख्या।

बहुत-सी जगह यह देखा गया है कि ऊपर लिखे हुए विभिन्न भागो की संख्या सिन्कार्पस पिस्टिल के कार्पेलो की संख्या के तुल्य होती है।

अण्डाशय (The Ovary). कार्पेल एक रूपान्तरित पत्ती है। मटर, सेम, चना आदि के फूलो से जिनमें केवल एक ही अण्डप (कार्पेल) रहता है, हम कार्पेल की पर्ण-प्रकृति (foliar nature) सिद्ध कर सकते हैं। ऐसे उदाहरणो में कार्पेल या पाँड (pod) की तुलना एक ऐसी पत्ती से की जा सकती है, जो मध्य-नाड़ी (mid-rib) पर मोड़ दी गई हो। एक मुड़े हुए कार्पेल में जब दोनो किनारे (margins) मिलते हैं तथा एक दूसरे से जुड़ जाते हैं तो एक कमरा बन जाता है। जुड़े हुए किनारो के मिलने के स्थान (junction) को अधर-सेवनी (ventral suture) कहते हैं, और उस मध्य-नाड़ी के, जिस पर कार्पेल मुड़ा रहता है, पृष्ठ सेवनी (dorsal suture)



[After Lawrence]

चित्र ६.६७

चित्र ६.६८

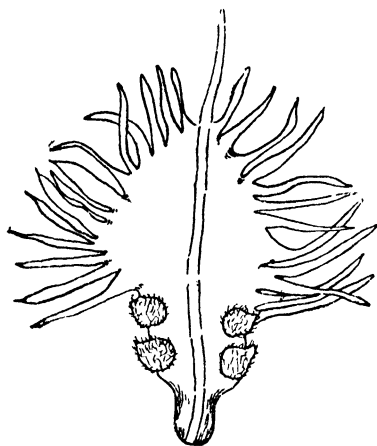
चित्र ६.६९

चित्र ६.७०

अण्डाशय का विकास : चित्र ६.६७ मटर का खुला हुआ कार्पेल, जिसमें बीजाण्ड किनारों पर लगे हुए हैं; चित्र ६.६८ एक एपोकार्पस पिस्टिल से बना हुआ एक-विवरीय अण्डाशय। चित्र ६.६९ एक सिन्कार्पस पिस्टिल के तीन कार्पेलो के किनारे के मिलने से बना हुआ एक विवरीय अण्डाशय। चित्र ६.७० तीन कार्पेलो और उनके किनारो के भीतर की ओर मुड़ने तथा केन्द्र पर मिलने से बना हुआ तीन-विवरीय अण्डाशय।

कहते हैं। केन्द्रल सूचर पर ऊतियो का एक उठाव (ridge) विकसित होता है; यह जरायु (placenta) कहलाता है। इसमें बीजाण्डो (ovules) की दो कतारें होती हैं जो कार्पेल के मुड़े हुए दोनो किनारों से सम्बन्धित हैं। कार्पेल के मुड़ने से जो बन्द कमरा बनता है और जिसमें ओव्यूल्स ढके रहते हैं, अण्डाशय (ovary) कहलाता

है। जब कार्पेल बन्द होता है तो अग्रस्थ-वृद्धि (apical-growth) के कारण एक उठाव (projection) बन जाता है। इसके द्वारा हम कुक्षि (stigma) और कुक्षिवृन्त (style) को अलग-अलग पहचान सकते हैं। एपोकार्पस (पृथक-अण्डप) पिस्टिल में, उदाहरणार्थ रैननकुलस (*Ranunculus*) में, अण्डाशय भी ऊपर बतायी गयी तरह से बनता है। फिर भी, सिन्कार्पस पिस्टिल में कार्पेल अपने केवल किनारों द्वारा जुड़े



चित्र ६.७१. नग्नबीज
(gymnosperm)।

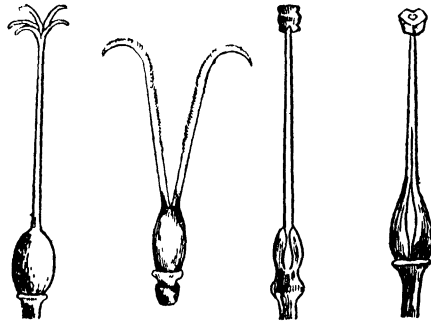
हो सकते हैं जिससे एक-विवरीय अण्डाशय (one-chambered ovary) बन जाता है, जैसे ऑर्किड्स में; या कार्पेल्स भीतर को इस प्रकार मुड़े होते हैं कि उनके किनारे केन्द्र में जुड़े होते हैं। इस प्रकार एक बहु-विवरीय (multi-chambered) अण्डाशय बन जाता है, जिसके मध्य में एक अक्ष (axis) होता है, जैसे चाइना रोज़ में। कभी-कभी भाजन करनेवाली झूठी दीवारें होती हैं जिनके कारण अण्डाशय में अण्डपो (carpels) की मर्यादा से अधिक कमरे बन जाते हैं, जैसे धतूरा (*Datura*) में। किन्तु नग्नबीजो (gymnosperms) में अण्डप अण्डाशय बनाने के लिए बन्द नहीं होते और इसलिए उनमें न तो कुक्षि

(stigma) होता है और न ही कुक्षिवृन्त (style) या अण्डाशय (ovary)। इनमें ओव्यूल्स खुले हुए कार्पेल्स के किनारों पर उत्पन्न होते हैं जो स्वयं भी खुली हवा में होते हैं।

कुक्षिवृन्त (Style). कुक्षिवृन्त एक पतला डण्ठल है जो अण्डाशय के शिखर से निकलता है। जब कुक्षिवृन्त उसी सीधी रेखा में होता है जिसमें अण्डाशय होता है, जैसा कि साधारण रूपसे पाया जाता है, तो उसे अग्रस्थ (terminal or apical) कहते हैं। फिर भी कभी-कभी, जैसा कि स्ट्रॉबेरी (strawberry) आदि में पाया जाता है, अण्डाशय का शिखर एक ओर को मुड़ा रहता है जिससे कुक्षिवृन्त अण्डाशय के बगल से उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। ऐसी दशा में इसे पार्श्व (lateral) कहते हैं। तुलसी (*Labiatae*) और हाथीमूँड या हीलियोट्रोप (*heliotrope, Heliotropium*) में अण्डाशय चार पालियों का बना हुआ होता है और कुक्षिवृन्त अण्डाशय के बीच के दबे हुए भाग से उत्पन्न होता है और ऐसा प्रतीत होता है कि वह अण्डाशय के आधार या सीधे थैलेमस से ही उत्पन्न हुआ हो। इस प्रकार के कुक्षिवृन्त को जायांग-आधारिक (गाइनोबेसिक, gynobasic) कहते हैं। कुछ उदाहरणों में, जैसे कैंना (*Canna*) और आइरिस (*Iris*) के फूलों में, कुक्षिवृन्त चपटा और रंगीन होता है ऐसी दशा में इसको बलाभ (पेटालॉइड, petaloid) कहते हैं। साधारणतया कुक्षिवृन्त पर्णपाती (deciduous) होता है, अर्थात् निषेचन

(fertilization) की क्रिया के बाद शीघ्र ही सूख कर गिर जाता है। परन्तु छागलवती (*Naravelia*), वर्जिन्स बावर (*virgin's bower, Clematis*) आदि में कुक्षिवृन्त चिरलम्न (**persistent**) होता है। कुक्षिवृन्त का धरातल चिकना भी हो सकता है और रोमयुक्त भी, अर्थात् वह बालों से ढका हो सकता है। बहुत-से उदाहरणों में यह बाल परागकर्णों को इकट्ठा करने में सहायता देते हैं।

कुक्षि (Stigma). कुक्षि आमतौर से कुक्षिवृन्त के शिखर पर होता है और घुण्डी के आकार का प्रतीत होता है या कभी-कभी थोड़ा नुकीला होता है। यह कभी-कभी चपटा और लम्बा भी होता है। साधारणतया संयुक्त स्त्रीकेसर (compound pistil) में यह पालियोंवाला (lobed) होता है और इन खण्डों की संख्या कार्पेल की संख्या के तुल्य होती है। अक्सर यह फैलती हुई किरणों के समान भी विभाजित होता हुआ प्रतीत होता है। कुक्षि का धरातल चिकना भी हो सकता है और खुरदरा भी, परन्तु जब यह पकता है तो चिपचिपा हो जाता है और परागकण इस पर चिपक जाते हैं। बहुत-से उदाहरणों में यह बालदार या पखदार (**feathery**) होता है जिससे हवा में उड़ते हुए परागकणों को आसानी से पकड़ लेता है।



(क)

(ख)

चित्र ६.७२

चित्र ६.७३

चित्र ६.७४

अण्डपों का संलाग : चित्र ६.७२ (क) स्वतंत्र कुक्षियोंवाली एक पिस्टिल।
(ख) स्वतंत्र कुक्षिवृन्तोंवाली एक पिस्टिल। चित्र ६.७३ स्वतंत्र अण्डाशयोंवाली एक पिस्टिल। चित्र ६.७४ स्वतंत्र अण्डाशयों और कुक्षिवृन्तोंवाली एक पिस्टिल।

अण्डपों का संलाग (Cohesion of carpels—syncarpy). कार्पेल (चित्र ६.७२, ६.७३, ६.७४) या तो अपनी पूरी लम्बाई में संयुक्त होते हैं, जैसा कि बहुत-से सिन्कार्पस (syncarpous) स्त्री केसरो (pistils) में पाया जाता है, या केवल अण्डाशय के भाग में ही जुड़े हुए होते हैं और इस प्रकार कुक्षिवृन्त (style) और कुक्षि (stigma) स्वतंत्र रह जाते हैं—यह दशा डाएन्थस (*Dianthus*) और चिता (*Plumbago*) में पायी जाती है—या कार्पेल केवल ओवरी और स्टाइल के भाग में ही जुड़े हुए हो सकते हैं और इस प्रकार कुक्षि (stigma) स्वतंत्र रह जाते हैं, जैसा कि कपास और चाइना रोज (*China rose*) आदि में पाया जाता है; या कार्पेल केवल

कुक्षिवृन्त (style) और कुक्षि (stigma) के भाग में ही जुड़े होते हैं और केवल अण्डाशय ही स्वतंत्र रह जाते हैं, जैसा कि नैनतारा (periwinkle; *vinca*), कनेर (*Nerium*) आदि में पाया जाता है। कभी-कभी कार्पेल केवल कुक्षि के भागों में ही जुड़े हुए रहते हैं जैसा कि आक या मदार (*Calotropis*) में पाया जाता है।

जरायुन्यास (Placentation)

जरायु (Placent). जरायु एक ऊति (tissue) है जो कि अण्डाशय में एक पेरनकाइमेटस उद्बर्ध (parenchymatous outgrowth) है, जिस पर ओव्यूल या ओव्यूलस लगे रहते हैं। प्लेसेण्टा अधिकतर कार्पेल के किनारों पर निकलता है, यह या तो उनकी संयुक्ति रेखा के पूरे भाग से निकल सकता है जिसे **सेवनी (suture)** कहते हैं या कार्पेल के आधार या शिखर से निकलता है। जिस क्रम में प्लेसेण्टा अण्डाशय के भीतरी भाग (cavity) में वितरित रहते हैं उस विधि को **जरायुन्यास (प्लेसेण्टा, placentation)** कहते हैं।

जरायुन्यास के प्रकार (Types of placentation). साधारण अण्डाशय में, जो केवल एक कार्पेल का बना होता है, केवल एक प्रकार का प्लेसेण्टेशन पाया जाता है, जिसे **सीमान्त (marginal)** कहते हैं; और कम्पाउण्ड अण्डाशय में (जो दो या दो से अधिक संयुक्त कार्पेलों का बना होता है) **अक्षवर्ती (axile)**, **भित्तिलग्न (parietal)**, **आधार-लग्न (basal)**, **मुक्त केन्द्रीय या तललग्न (free central or superficial)** प्लेसेण्टेशन पाये जाते हैं।

१. सीमान्त (मार्जिनल, Marginal). मार्जिनल प्लेसेण्टेशन में (चित्र ६.७५) अण्डाशय में कमरा होता है और प्लेसेण्टा दोनों कार्पेलों की संयुक्ति के स्थान से निकलता है, जिसे **अधर-सेवनी (वेण्ट्रल सूचर, ventral suture)** कहते हैं यह **लेग्युमिनोसी कुल (Leguminosae)** के पौधों जैसे मटर, चना, गुलमोहर, अमलतास (*Cassia*), छई-मुई आदि में पाया जाता है। वह रेखा या सूचर जो कार्पेल की मध्य-नाडी (mid-rib) के तुल्य होता है, पृष्ठ सेवनी (dorsal suture) कहलाता है, इस पर कोई जरायु (placenta) नहीं उगता।

२. अक्षवर्ती (एक्सैडल, axile). इस प्रकार के प्लेसेण्टेशन (चित्र ६.७६) के अण्डाशय में बहुत-से कमरे होते हैं; बहुधा उतने ही कमरे होते हैं जितने अण्डाशय में अण्डप (carpels) होते हैं। बीजाण्ड-युक्त प्लेसेण्टा मध्य-अक्ष (central axis) से निकलता है। यह कार्पेल के किनारों का संगम है और इसी कारण इसका नाम **एक्सैडल प्लेसेण्टेशन** है। यह नीबू, नारंगी, चाइना रोज़, आलू आदि में पाया जाता है।

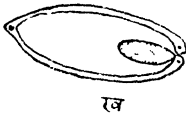
[इस प्रकार के जरायुन्यास में कार्पेल अन्दर की ओर मुड़े रहते हैं और उनके किनारे अण्डाशय के मध्य में एक दूसरे के सम्पर्क में आकर जुड़ जाते हैं और इस तरह एक मध्य धुरी या डण्डल बनाते हैं और साथ ही अण्डाशय को उतने ही कमरों या (loculi) में विभाजित कर देते हैं जितने कार्पेल का वह बना होता है। कभी-कभी कृत्रिम दीवारों के कारण कमरों की संख्या बढ़ जाती है, जैसा कि धतूरा (*Datura*) आदि में पाया जाता है। धतूरे में दो अण्डप होते हैं; परन्तु अण्डाशय में चार कमरे पाये जाते हैं।]

३. मुक्त-केन्द्रीय (फ्री-सेण्ट्रल, **Free-central**). मुक्त-केन्द्रीय जरायु-न्याम (चित्र ६.७७) में सेप्टा या विभाजन की दीवार त्रिशु अण्डाशय में ही टूट जाती है और इस प्रकार ओवरी में केवल एक कमरा बन जाता है और ओव्यूल-युक्त प्लेसेण्टा मध्य-अक्ष के चारों ओर लगते हैं। यह पिक कुल (pink family) के पौधे, जैसे पिक (*Dianthus*), गिमा साग (*Polycarpon*), साबुनी (*Saponaria*), स्टिलेरिया (*Stellaria*) आदि में पाया जाता है। अण्डाशय के विभाजन की दीवारों के अवशेष परिपक्व अण्डाशय में अक्सर देखे जा सकते हैं। या पुष्पाक्ष (थैलेमस) स्वयं ही एक कमरेवाले अण्डाशय के खोखले भाग (cavity) में बड़ जाना है और ओव्यूल युक्त जरायु (placentae) उसी के सम्पूर्ण धरातल पर उगने लगता है। इस प्रकार बीजाण्ड (ovule) अण्डाशय के मध्य भाग में स्वतंत्र रूप से पाये जाते हैं। यह प्रिमरोज (*Primula*) में देखा जा सकता है।

४. भित्तिलग्न (पैराइटल, **Parietal**; *parietis*—दीवार). यहाँ भी (चित्र ६.७८) अण्डाशय में एक कमरा होता है, परन्तु ओव्यूल-युक्त जरायु

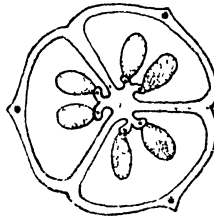


क

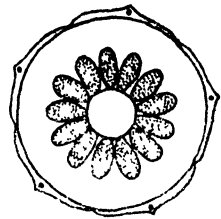


ख

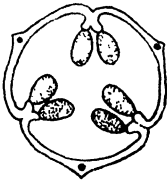
चित्र ६.७५



चित्र ६.७६



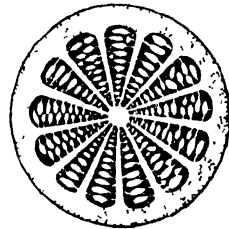
चित्र ६.७७



चित्र ६.७८



चित्र ६.७९



चित्र ६.८०

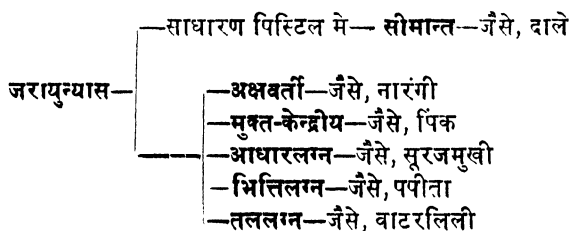
जरायुन्यास के प्रकार। चित्र ६.७५ सीमान्त; (क) अनुलम्ब काट; (ख) अनुप्रस्थ काट। चित्र ६.७६ अक्षवर्ती। चित्र ६.७७ मुक्त-केन्द्रीय। चित्र ६.७८ भित्तिलग्न। चित्र ६.७९ आधारलग्न। चित्र ६.८० तल-लग्न।

(placentae), अण्डाशय के अन्दर की दीवार पर लगते हैं। उनकी स्थिति अण्डपो के किनारों के संगम पर निर्भर रहती है और उनकी संख्या अण्डपों की संख्या पर

निर्भर करती है। यह पपीता (papaw), पोस्ता (poppy), पीला धतूरा (prickly poppy), सरसों और ऑर्किड्स (orchids) आदि में पाया जाता है।

५. आधारलग्न (बेसल, Basal). बेसल प्लेसेण्टेशन (चित्र ६.७९) में अण्डाशय में एक कमरा होता है और प्लेसेण्टा सीधे पुष्पाक्ष पर ही निकलता है। इस प्लेसेण्टा में केवल एक बीजाण्ड (ovule) अण्डाशय के आधार पर लगा रहता है। यह कम्पोजिटो (compositae) के पौधों, जैसे सूरजमुखी, गेंदा इत्यादि में मिलता है।

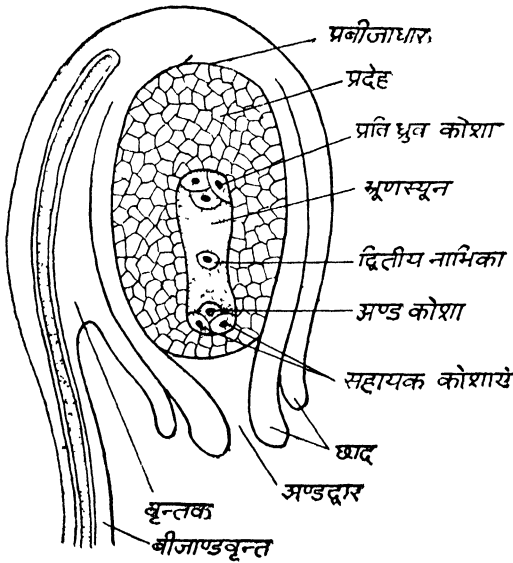
६. तललग्न (सुपरफिशल, Superficial). अक्षवर्ती जरायुन्यास (axile placentation) की भाँति सुपरफिशल प्लेसेण्टेशन (चित्र ६.८०) में भी, अण्डाशय बहुविवरीय (मल्टिलॉक्युलर, multilocular) होता है और इसमें बहुत-से अण्डप होते हैं; किन्तु इस दशा में जरायु विभाजन की दीवार की भीतरी सतह के चारों ओर विकसित होते हैं। यह वाटरलिली में देखने को मिलता है।



बीजाण्ड (Ovule)

बीजाण्ड की रचना (Structure of the ovule). प्रत्येक ओव्यूल (चित्र ६.८१) प्लेसेण्टा पर एक पतले डण्ठल द्वारा जुड़ा रहता है, जिसे (१) बीजाण्डवृन्त (फ्यूनिक्ल, funicle) कहते हैं। वह बिन्दु, जिस पर बीजाण्ड का शरीर अपने डण्ठल यानी बीजाण्डवृन्त से जुड़ा रहता है, (२) वृन्तक (hilum) कहलाता है। ओव्यूल का मुख्य शरीर (३) प्रवेह (न्यूसेलस, nucellus) कहलाता है और यह दो खोलों से घिरा रहता है, जिन्हें (४) छाद या चोल (इन्टेग्युमेण्ट्स, integuments) कहते हैं। जिम्नोस्पर्मस में, कम्पोजिटो और कुछ अन्य कुलों में, जिनके दलपुज गैमोपेटलस (सयुक्त दली) होते हैं, केवल एक इन्टेग्युमेण्ट होता है। चन्दन (sandal-wood, Santalum) और लोरेन्थस (Loranthus) आदि में छाद नहीं होता। इन्टेग्युमेण्ट्स के शिखर पर एक छोटा-सा छेद रह जाता है; (५) इसे अण्डद्वार (माइक्रोपाइल, micropyle) कहते हैं। न्यूसेलस का आधार जहाँ से इन्टेग्युमेण्ट्स निकलते हैं, (६) निभाग या प्रबीजाधार (चलाज़ा, chalaza) कहलाता है। अन्त में न्यूसेलस में जुड़ी हुई या दबी हुई, एक बड़ी अण्डाकार (oval) कोशा दिखाई देती है, जो माइक्रोपाइलवाले किनारे (micropylar end) की ओर होती है; इसे (७) भ्रूणसूत या भ्रूण धैली

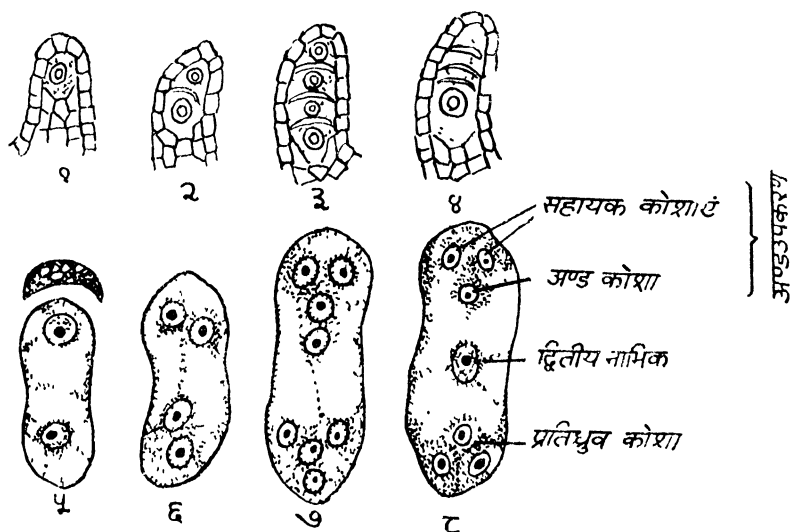
(embryo-sac) कहते हैं, अर्थात् इस थैली में भ्रूण या एम्ब्रियो रहता है। यह ओव्यूल का सबसे महत्वपूर्ण भाग है।



चित्र ६८१ अनुलम्ब काट में बीजाण्ड।

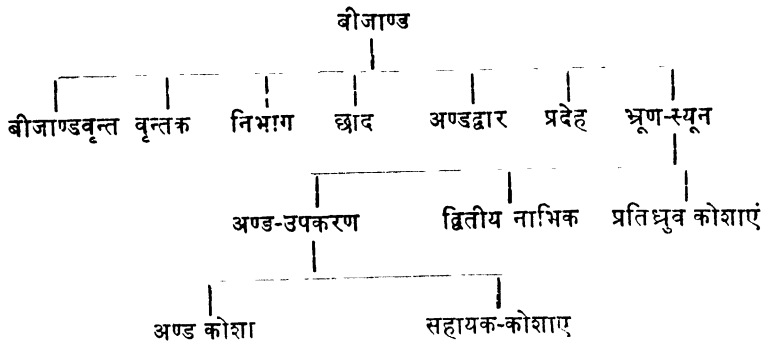
भ्रूण-स्यून (Embryo-sac) की रचना और विकास. भ्रूण-स्यून या महाबीजाणु (megaspore) निम्नलिखित रूप से विकसित होता है (चित्र ६.८२) : अण्डाशय की कैविटी (cavity) में ओव्यूल पहले-पहल एक छोटी-सी सूजन के रूप में प्लेसेन्टा से निकलता है (१)। उसमें प्रारम्भिक अवस्था पर ही एक कोशा—भ्रूण-स्यून की मातृ-कोशा—न्यूसेलस में स्पष्ट हो जाती है (२)। यह मातृ-कोशा आकार में बढ़ती है और दो बार विभाजन करके चार महाबीजाणुओं (megaspores) की एक रेखा में परिवर्तित हो जाती है। इसको **लीनियर चतुष्टय (linear tetrad)** कहते हैं (३)। यह नोट करने की बात है कि लगातार दोनों विभाजनों में से केवल पहला ही प्रह्रास भाजन (reduction division) होता है। चार कोशाओं (जिनमें क्रोमोसोम्स की संख्या $2x$ से घट कर उसकी आधी यानी x रह जाती है) में से ऊपर की तीन कोशाएं नष्ट हो जाती हैं और काली टोपियों के समान दीखती हैं और केवल सबसे नीचेवाली कोशा क्रिया करती है (४)। इस सेल का नाभिक (nucleus) विभाजित हो जाता है और पुत्री नाभिकों (poles) की ओर चली जाती हैं (५)। इनमें फिर विभाजन होता है और इस प्रकार इनकी संख्या बढ़कर चार हो जाती है (६)। इनमें से प्रत्येक नाभिक फिर विभाजित होता है और इस प्रकार भ्रूण-स्यून में आठ नाभिकों बन जाते हैं जिनमें से चार-चार नाभिकों

दोनों सिरों पर होते हैं (७)। भ्रण-स्यून आकार में बढ़ना है। दोनों सिरों से एक-एक नाभिक अन्दर की ओर बढ़ना है और आगे चलकर द्वितीय नाभिक (secondary nucleus) बनाता है। माइक्रो-पाइलर सिरे पर बचे हुए तीनों नाभिकों मिलकर अण्ड-उपकरण (egg-apparatus) बनाते हैं और अन्य तीन, जो विपरीत सिरे या चलाजावाले सिरे (chalazal-end) पर होते हैं और एक पुत्र या कतार के रूप में रहते हैं, मिलकर प्रतिध्रुव कोशाएँ (antipodal cells) बनाते हैं (८)।



चित्र ६.८२ भ्रण-स्यून के विकास की अवस्थाएं।

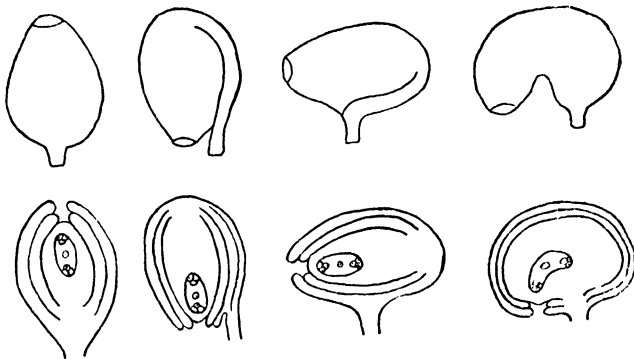
वही हुई उन तीन सेलो मे से जो (१) एग एंपेरेटस बनाते हैं, एक स्त्री-जन्य (female gamete) होती है जो (क) अण्ड कोशा (egg cell) या ओवम (ovum) या अण्डगोल (ऊस्फीयर, oosphere) कहलाता है और अन्य दो (ख) सहायक कोशाएँ (सिनरजिड्स, *cynergids*; *syn*—साथ, *ergein*—कार्य करना) या सहायक सेल (co-operating cell) कहलाती हैं। सिनरजिड करीब-करीब नाशपाती की शक्ल के होते हैं, और अण्डकोशा, जो बड़ा हो जाता है, इनके नीचे रहता है। निषेचन (fertilization) की क्रिया होने के पश्चात् अण्डकोशा (egg cell) भ्रूण बन जाती है; परन्तु सहायक कोशाएँ केवल निषेचन की क्रिया में ही सहायता देती हैं और पराग नली को रास्ता बतानी हैं, और जैसे ही उनका काम समाप्त हो जाता है, वे नष्ट हो जाती हैं। प्रतिध्रुव कोशाओं का कोई काम नहीं होता और आगे-पीछे वे नष्ट हो जाती हैं। द्वितीय नाभिक निषेचन की क्रिया होने के पश्चात् एण्डोस्पर्म को जन्म देता है।



बीजाण्डों के रूप (Forms of ovules). ओव्यूल निम्नलिखित रूपों के हो सकते हैं:

१. उदग्रमुख (ऑर्थोट्रोपस, **Orthotropous**; *ortho*—सीधा, *tropous*—मोड़) या सीधा (**Straight**). जब बीजाण्ड खड़ा या सीधा हो जिससे फ्यूनिंकिल, चलाजा और माइक्रोपाइल एक ही लम्बवत् रेखा में पड़ते हो (चित्र ६.८३)। यह पॉलीगोनेसी (*Polygonaceae*) के पौधों, जैसे पानी-मिर्च (*Polygonum*), खट्टा-मिट्टा (*sorrel*, *Rumex*), आदि और पाइपरेसी (*Piperaceae*) के पौधों, जैसे पान (*Piper betle*), चई (*Piper chaba*), पिपनी (*Piper longum*), काली मिर्च (*Piper nigrum*) में।

२. अधोमुख (एनाट्रोपस, **Anatropous**; *ana*—पाँठ की ओर या ऊपर) या उल्टा (**Inverted**). जब ओव्यूल अपने डण्ठल यानी फ्यूनिंकिल पर मुड़ जाता है, जिससे माइक्रोपाइल हाइलम के नजदीक स्थित रहता है। माइक्रोपाइल और



चित्र ६.८३
उदग्रमुख
(ऑर्थोट्रोपस)

चित्र ६.८४
अधोमुख
(एनाट्रोपस)

चित्र ६.८५
अनुप्रस्थावर्त
(एम्फीट्रोपस)

चित्र ६.८६
वक्रावर्त
(कम्पाइलोट्रोपस)

बीजाण्डों के रूप।

चलाजा (किन्तु पयूनिकिल नहीं) एक ही सीधी रेखा पर स्थित रहते हैं। बीजाण्डों का यह सबसे साधारण रूप है।

३. अनुप्रस्थवर्त (ऐम्फीट्रोपस, **Amphitropous**; *amphi*—दोनों तरफ) या अनुप्रस्थ (**Transverse**)। जब बीजाण्ड अनुप्रस्थ रूप से अपने डण्ठल या पयूनिकिल के समकोण पर स्थित रहता है, जैसे डकवीड (*Lemna*) में।

४. वक्रावर्त या मुड़ा हुआ (कैम्पाइसोट्रोपस, **Campylotropous**; *kampylos*—मुड़ा हुआ, or **Curved**)। जब अनुप्रस्थ बीजाण्ड घूम कर घोड़े की नाल की शक्ल का मुड़ा हो, जिससे कि माइक्रोपाइल और चलाजा एक ही सीधी रेखा में नहीं पड़ते हो, जैसे चना, सेम, काटा गुरकमाई (*Capparis*), सरसों-कुल (*Cruciferae*), गुल-अब्बास (*Mirabilis*), गिमा-साग (*Polycarpon*) इत्यादि में।

अण्डाशय के भीतर ओव्यूल की स्थिति स्थिति के अनुसार ओव्यूल निम्न-लिखित प्रकार से हो सकता है:

१. उच्छोर्ग (**Erect**) अर्थात् ओव्यूल ऊपर की ओर उठा रहता है, जैसे सूरजमुखी कुल (*Compositae*) में।

२. निलम्बी (**Pendulous**) अर्थात् शीर्ष से नीचे की ओर मूँडा रहता है।

३. लटका हुआ (**Suspended**) अर्थात् किनारे से निकलता है और नीचे की ओर टेढ़ा होकर मुड़ा रहता है।

४. क्षैतिज (**Horizontal**) अर्थात् किनारे से भीतर की ओर क्षैतिज दिशा में मड़ा रहता है।

परागण (Pollination)

परागकणों (pollengrains) के परागकोश (anther) से कुक्षि (stigma) में पहुँचने या स्थानान्तर को परागसेचन या परागण (पॉलीनेशन, **pollination**) कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है (१) स्वयं-परागण (**self-pollination**) या आत्म-निषेचन (ऑटोगैमी, **autogamy**; *auto*—स्वयं, *gamos*—विवाह) और (२) पर-परागण (**cross-pollination**) या पर-निषेचन (ऐलोगैमी, **alogamy**; *allos*—भिन्न)। पहले प्रकार में एक फूल के परागकण सीधे उसी फूल की कुक्षि (stigma) पर गिरते हैं और दूसरे प्रकार में एक फूल के परागकण दूसरे फूल की कुक्षि तक ले जाये जाते हैं। परागसेचन के बाद पुकेसर और पखड़ियाँ गिर जाती हैं। इससे बाह्यदल पुज (calyx) भी गिर सकता है या फल में जुड़ा रह सकता है।

१. स्वयं-परागण (Self-pollination).

यह केवल द्विलिगी फूलों में ही हो सकता है। द्विलिगी फूलों में भी कभी-कभी ऐसी यन्त्र-रचना होती है जो स्वयं-सेचन को पूर्ण रूप से रोक देती है। पर-सेचन एक प्राकृतिक नियम है और स्वयं-सेचन बहुधा आकस्मिक होता है। कुछ विशेष रूपों को छोड़कर स्वयं-परागण केवल उसी समय होता है जब पर-परागण असफल हो जाता है। फूलों में निम्नलिखित कुछ अनुकूलन (adaptation) पाये जाते हैं जिनमें फूल स्वयं-सेचन की क्रिया में सफल होते हैं। हर दशा में फूल का द्विलिगी होना आवश्यक है।

(क) सह-पषवता (होमोगैमी, **Homogamy**; *homos*—वही). यह वह दशा है जिसमें एक द्विलिगी फूल के परागकोश (anthers) और कुक्षियाँ (stigmas) एक ही समय परिपक्व होते हैं।

(१) इस दशा में कुछ परागकणों का कीड़ों या हवा की सहायता से उसी फूल के स्तिग्मा पर पहुँचना काफी सम्भव है, और इस प्रकार स्वयं-सेचन हो जाता है।

(२) कभी-कभी, जैसा कि गुल-अब्बास (*Mirabilis*) में पाया जाता है, ऐसा होता है कि जैसे ही परागकोश पकते हैं, फिलामेण्ट ऎँठ कर लिपट जाते हैं और परागकोशों को कुक्षि के निकट ले आते हैं। तब परागकोश फट जाते हैं और अपने परागकण सीधे कुक्षि के धरातल पर गिरा देते हैं, और इस प्रकार स्वयं-परागण हो जाता है। इसका विपरीत भी कुछ रूपों में पाया जाता है, अर्थात् कुक्षि बढ़कर पुकेसरों से छू जाता है और इस प्रकार स्वयं-सेचन हो जाता है। यह कभी-कभी सूरजमुखी की फेमिली या कम्पोज़िटी (*compositae*) और चाइना रोज़ फेमिली या मालवेसी (*Malvaceae*) में पाया जाता है।

(३) बहुत-से शिथिलता से लटकते हुए फूलों में कुक्षिवृन्त (style) फिलामेण्ट से लम्बा होता है; और सीधे खड़े हुए (erect) फूलों में फिलामेण्ट स्टाइल से लम्बे होते हैं और इस प्रकार हरेक दशा में स्वयं-परागण आसानी से हो जाता है।

(४) रगन (*Ixora*), गन्धराज (cape jasmine, *Gardenia*) आदि में पराग-कोश सकीर्ण-दलपुज नली (narrow corolla tube) के मुख पर स्थित होते हैं और जैसे ही स्टिग्मा दलपुज नली के बाहर निकलता है, वैसे ही एन्थर फट जाते हैं और कुक्षि पर परागकण गिरा देते हैं।

(ख) संवृत-पुष्पता [क्लीस्टोगैमी, **Cleistogamy**; *kleistos*—बन्द]। कुछ ऐसे द्विलिगी फूल होते हैं जो कभी नहीं खिलते। ऐसे फूलों को संवृत (cleistogamous) या बन्द फूल कहते हैं। इस रूप में या तो एन्थर और



चित्र ७१ कॉमेलिना (*Commelina benghalensis*) जिसके भूमिगत फूल दिखाई दे रहे हैं।

कुक्षियाँ (stigmas) एक दूसरे के बहुत निकट होती हैं या एक दूसरे के चारों ओर लिपट जाते हैं और इस प्रकार जैसे ही परागकोश (anthers) फटते हैं वैसे ही उसी फूल की कुक्षि पर परागकण गिर जाते हैं। क्लीस्टोगैमी बहुत-से भूमि के अन्दर रहनेवाले फूलों, जैसे कनशीरा या कनकौआ (*Commelina benghalensis*; चित्र ७१) आदि में पायी जाती है। ऐसे फूल बहुत छोटे और अप्रत्यक्ष (inconspicuous) होते हैं। यह कभी रंगीन नहीं होते और न ही इनमें मधुस्राव होता है और न ही इनमें कोई गन्ध होती है।

संवृत-पुष्पता वायोला (*Viola*), जनकस (*Juncus*), इम्पेशेन्स (*Impatiens*), ड्रोसरा (*Drosera*), खट्टी पत्ती (*Oxalis*) आदि की कुछ जातियों (species) में पायी जाती है।

२. पर-परागण (Cross-pollination).

पर-परागण की विधियाँ (Modes of cross-pollination). पर-सेचन बाहरी साधनों (agents) द्वारा होता है जो एक फूल के परागकणों को लेजाकर दूसरे फूल की कुक्षि पर जमा कर देते हैं। यह प्रतिनिधि बहुत-से कीट (मक्खियाँ, मधुमक्खियाँ और भौरे आदि), जन्तु (चिड़ियाँ और घोंघे आदि), हवा और पानी होते हैं। पर-परागण एकलिंगी फूलों का नियम है, जब कि यह द्विलिगी फूलों में साधारण रूप से पाया जाता है।

(क) कीट-परागण (एण्टोमोफिली, **Entomophily**; *entomon*—कीड़ों, *phileo*—प्यार करना). पौधों में कीड़ों द्वारा पराग सेचन बहुत ज्यादा पाया जाता है। कीटपरागित (entomophilous) या कीट प्रेमी फूलों में बहुत से अनुकूलन (adaptations) होते हैं जिनकी सहायता से वे कीड़ों को सेचन के लिए आकर्षित

करते हैं। सबसे बड़े उपयोजनों में एक यह है कि प्रायः इनकी पखडियाँ रंगीन होती हैं और इस रूप में फूल जितना टेढ़ा-मेढ़ा और रंगीन होता है उस पर कीड़ों का उतना ही अधिक आकर्षण होता है। डार्विन (Darwin) का कहना तो यहाँ तक है कि कोई भी टेढ़ा-मेढ़ा फूल ऐसा नहीं है जो कीड़ों द्वारा परागित न होता हो। कभी-कभी जब फूल काफी दिखावटी नहीं होते तो अन्य भाग रंगीन और भड़कीले हो जाते हैं और कीड़ों को आकर्षित करते हैं। इस प्रकार बेबोना (*Mussaenda*) में (चित्र ६.१४) एक अखड़ी एक बड़ी और सफेद पत्ती में रूपान्तरित हो जाती है और कीड़ों को आकर्षित करने के विज्ञापन (advertisement) के झण्डे का काम करती है। बगनविलास (*glory of the garden, Bougainvillea*) में (चित्र ६.११) और लालपत्ती या पोइनसेटिया (*poinsettia, Euphorbia pulcherrima*) में निपत्रों का रंग बहुत गहरा रंगीन होता है और इस प्रकार फूल बहुत स्पष्ट और आकर्षक हो जाते हैं। केला और एराण्डस् (aroids), जैसे कचानू (*Colocasia*), मन्द-कन्द (*Alocasia*), जमीकन्द या सूरन (*Amorphophallus*) आदि में इसी काम के लिए स्पेथ (spathes) चमकीले रंगीन होते हैं।

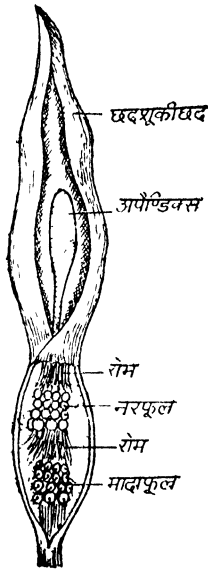
दूसरा मुख्य अनुकूलन (adaptation) मधु या रस होता है। करीब-करीब सभी सयुक्त-दली दलपुञ्जों में मधु-स्राव होता है जो कीड़ों के लिए एक आकर्षण होता है, विशेष रूप से मक्खियों के लिए। मधु या मकरन्द (nectar) एक विशेष ग्रन्थि में होता है जिसे मकरन्द-ग्रन्थि (nectary) कहते हैं, और कभी-कभी एक विशेष आकृति में भी होता है जिसे 'स्पर' (spur) कहते हैं। फूल पुञ्जों में किसी एक के आधार पर नेक्टरी स्थित होती है और जब मधु-मक्खियाँ नेक्टरी या 'स्पर' से मधु खींचती हैं तो वे अकस्मात् रूप से परागसेचन कर देती हैं।

[मधुमक्खियाँ बहुत चतुर कीड़ा होती हैं। वे केवल उन्हीं फूलों पर जानी हैं जो मधुस्राव करते हैं। मक्खियाँ इस कार्य में तनिक मूर्ख होती हैं। वे सर्वदा फूलों के रंग पर आकर्षित हो जाती हैं और मधु के मामले में अक्सर धोखा खा जाती हैं। मधु-मक्खियाँ अपने काम में बहुत चूस्त होती हैं। सर जॉन ल्यूबक (Sir John Lubbock) ने बहुत ध्यान से देखा कि एक ही मधुमक्खी फूलों पर कुछ ही मिनट बाद फिर जाती है। वह मधु-संग्रह करती है, छत्ते (hive) को वापस जाती है, उसे वहाँ जमा कर लेती है और साथियों सहित कुछ ही मिनटों में फिर वापस लौट आती है। अकेली मक्खी इस प्रकार एक दिन में सौ से अधिक फूलों का परागण आसानी से कर सकती है।]

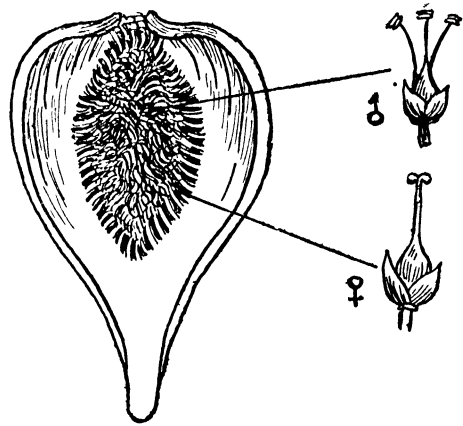
तीसरा मुख्य अनुकूलन गन्ध है। बहुत-से कीट-प्रेमी फूल मोहक सुगन्ध देते हैं, जिससे दूर से ही वह कीड़ों को आकर्षित कर लेते हैं। रात में जब रंग काम में नहीं आता तो विशेष रूप से सुगन्ध काम में आती है—यह कीड़ों को फल तक पहुँचा देती है। रात्रि के फूल नियमित रूप से मीठी सुगन्धवाले होते हैं, जैसे हरसिंहार या शेफालिका (night jasmine, *Nyctanthes*), रात की रानी (queen of the night, *Cestrum*), जूही (jasmine), आदि। कभी-कभी वह गन्ध जो मनुष्य के लिए घृणित और कुत्सित मालूम होती है, उसे कुछ छोटे कीड़े बहुत अधिक पसन्द करते हैं, जैसे जमीकन्द (*Amorphophallus*) की इफ्लोरेसेन्स (चित्र ७.२) का अपैण्डिक्स (appendix)।

कीट प्रेमी फूलों के परागण या तो चिपचिपे होते हैं या शल्यमय उद्धर्ष-युक्त

(spinous outgrowth) होते हैं। स्टिग्मा भी चिपचिपा (sticky) होता है। बहुत-से कीड़ों के लिए परागकण अच्छे भोजन का कार्य भी करते हैं। फूल कीड़ों को अपने रंग, गन्ध या मधु द्वारा आकर्षित करते हैं, कभी-कभी कीड़े भोजन की खोज



चित्र ७.२ बन सूरज
(*Amorphophallus
bulbifer*)



चित्र ७.३ अनुलम्ब काट में अंजीर (*Ficus*)।
ध्यान दीजिये कि इसका मुँह शल्को द्वारा
रक्षित है।

या धूप या वर्षा से बचने के लिए फूलों पर आ जाते हैं। जब वे फूलों पर आते हैं, भोज्य-पदार्थों (मधु या परागकणों) को ग्रहण करते हैं और जब उड़कर दूसरे फूल पर जाते हैं तथा उनमें घुसने के लिए कुक्षि (stigma) से रगड़ खाते हैं, तो चिपचिपा होने के कारण कुक्षि तुरन्त उनके शरीर पर से परागकण इकट्ठा कर लेता है। इस प्रकार पर-परागण हो जाता है।

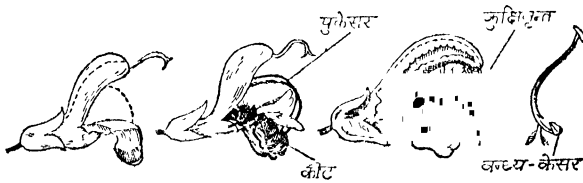
सूरज-मुखी, गेदा, कदम (*Anthocephalus*), बबूल (*Acacia*), छुई-मुई (sensitive plant, *Mimosa*) आदि में, जिनके अकेले फूल छोटे और तड़क-भड़क के होते हैं, एक घने पुष्प-क्रम, (inflorescence) में एकत्रित हो जाते हैं और इस प्रकार कीड़ों को परागसेचन के लिए आकर्षित करने के काबिल हो जाते हैं। घने पुष्प-क्रम का एक दूसरा लाभ भी है; फूल इकट्ठे और एक दूसरे के निकट रहने के कारण पराग सेचित होने की पूरी आशा रख सकते हैं।

फाइकस (*Ficus*) जैसे, बरगद, पीपल, अजीर आदि में कीड़े फूल-गृह में एक अग्रस्थ-छिद्र (apical pore) द्वारा घुसते हैं और जैसे ही वे फल-गृह में द्वितीयक

फूलों पर रेंगते हैं, पराग सेचन कर देते हैं (चित्र ७३)। नर फूल शिखा छिद्र के निकट और मादा फूल खोखले गृह के आधार के निकट होते हैं। वे (नर और मादा फूल) विभिन्न समय पर परिपक्व होते हैं, जिससे कि परागकण दूसरे पुष्प-क्रम से लाने पड़ते हैं।

कभी-कभी फूलों के सेचन में केवल एक ही प्रकार के कीड़ों से सुविधा होती है और इस कार्य के लिए अन्य कीड़े व्यर्थ होते हैं। उदाहरण के रूप में स्नैपड्रैगन (snapdragon), और अन्य फूलों में परसीनेट दलपुञ्ज (personate corollas) होने के कारण एक निश्चित आकार और भार के कीड़ों द्वारा ही दलपुञ्ज के मुख खुल सकते हैं और लम्बी नली युक्त दलपुञ्जवाले फूलों में पराग सेचन केवल लम्बी जीभवाले कीड़ों से ही हो सकता है।

तुखमलगा (sage, *Salvia*) कीड़ों द्वारा पर-परागण का एक अच्छा उदाहरण है (चित्र ७४)। इसमें दो पुकेसर होते हैं और प्रत्येक पुकेसर की दोनों पराग



चित्र ७४ तुखमलगा (*Salvia*) में पर-परागण की विधि।

पालियाँ (anther lobes) एक लम्बे मुड़े हुए कनेक्टिव द्वारा पृथक् होती हैं। यह कनेक्टिव स्वतंत्र रूप से फिलामेंट पर झूलता है। ऊपरी खण्ड उपजाऊ (fertile) होता है और निचला खण्ड वन्ध्य (sterile) होता है। प्राकृतिक स्थिति में योजी (connective) सीधा (upright) रहता है। जब मधुमक्खी दलपुञ्ज नली में घुसती है तो प्रत्येक स्टेमन के निचले वन्ध्य खण्ड को धक्का देती है; कनेक्टिव चक्रवत् रूप में झूलने लगता है और ऊपरी उपजाऊ खण्ड नीचे आ जाता है और मधुमक्खी की पीठ पर टकराता है और उस पर परागकण झाड़ देता है। इसमें फूल पूर्व-पुष्पक (protandrous) होता है और जब कुक्षि परिपक्व होता है तो वह नीचे की ओर मुड़ जाता है और मधुमक्खी की पीठ छूता है और उस पर से परागकण ले लेता है। इस प्रकार पराग-सेचन हो जाता है। यह पर-परागण की एक विशेष यंत्र-रचना (mechanism) है।

(ख) वायु-परागण (ऐनीमॉफिली, **Anemophily**; *anemos*—हवा)। कुछ रूपों में परागण वायु द्वारा भी होता है। वायु परागित (anemophilous) या वायु प्रेमी फूल छोटे और अस्पष्ट होते हैं। यह कभी भी रंगीन या भड़कीले नहीं होते। यह कोई भी गन्ध नहीं देते और न ही इनमें कोई मधु-स्राव होता है। परागकोश बहुत अधिक संख्या में परागकण उत्पन्न करते हैं; क्योंकि जब यह वायु द्वारा उड़ते हैं और एक फूल से दूसरे फूल पर जाते हैं, तो इनमें से बहुत अधिक संख्या में व्यर्थ भी हो जाते हैं। यह साधारण रूप से मक्का में (चित्र ७५) देखा जा सकता है। पौधे के शिखर पर नर फूलों का एक भारी झुण्ड होता है और नीचे

की ओर थोड़े से मादा फूलों के स्पैडिक्स (spadices, sing—spadix) होते जो है स्पेथ द्वारा घिरे होते हैं और प्रत्येक एक पत्ती की काख में होता है। नर्म, लम्बे और रेशमी धागों का एक पुंज—या कुक्षिवृन्त (styles)—स्पैडिक्स को ढकनेवाले स्पेथ के बाहर निकलता हुआ देखा जा सकता है। यह हवा में स्वतंत्रता से लटकते रहते हैं। जब परागकोश फटते हैं तब धूल के समान परागकणों का एक बादल पेड़ के चारों ओर



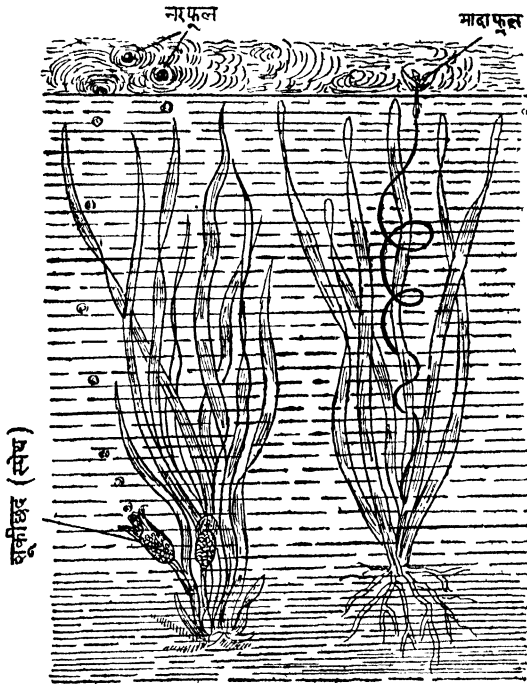
वायु-मण्डल में देखा जा सकता है। इसमें से कुछ परागकण बाहर निकले हुए कुक्षियों द्वारा पकड़ जाते हैं, और इस प्रकार परागण हो जाता है; परन्तु प्रायः अधिकतर परागकण व्यर्थ जाते हैं। वायुपरागित फूलों में परागकण हल्के और सूखे होते हैं। कभी-कभी, जैसा कि चीड़ (pine) में देखने को मिलता है, ये पखदार हो जाते हैं जिससे वायु द्वारा इनके वितरण में सुविधा होती है। कुक्षि (stigma) अपेक्षाकृत बड़े और बाहर निकले हुए होते हैं और कभी-कभी शाखाओ-युक्त और अक्सर पखदार भी हो जाते हैं। वायु परागण की यह निम्नकोटि की विधि जिम्नोस्पर्म में व्यापक रूप से पायी जाती है; किन्तु ऐन्जियोस्पर्म में यह विधि निम्न श्रेणी की कुछ किस्मों में ही सिर्फ पायी जाती है। इसके उदाहरण घास, बास, अन्न, ज्वार, गन्ना, झाड़ियाँ, चीड़ और बहुत प्रकार के ताड़ों आदि में मिलते हैं।

चित्र ७.५ मत्तका का पौधा जिसमें नरफूल (ऊपर) एक पैनिक्ल में हैं, और मादा फूल (नीचे) स्पैडिक्स में। हवा में लहराते हुए कुक्षिवृन्तों पर ध्यान दो।

(ग) जल-परागण (हाइड्रोफिली, **Hydrophily**; *hydro*—पानी)। कुछ फूलों में परागण पानी द्वारा भी हो सकता है। बहुत-से पानी के पौधों में जल परागण में सहायता करता है, हालांकि यह सीधे वह क्रिया नहीं करता, जैसा कि ईल नाम की घास (*Vallisneria*) और हाइड्रिला

(*Hydrilla*)—जो पानी की दो घास पतवार हैं—में पाया जाता है। वैलिसनेरिया पौधा (चित्र ७.६) द्विधायक (dioecious) होता है। नर फूल एक पौधे पर एक छोटे डण्ठल वाले स्पैडिक्स पर होते हैं जो स्पेथ से घिरा रहता है। इनका आकार बहुत छोटा होता है और स्पेथ के अन्दर यह बहुत अधिक संख्या में होते हैं। मादा फूल अकेले होते हैं। और मादा पेड़ पर एक लम्बे पतले डण्ठल पर उत्पन्न होते हैं जो ऐंठदार रूप में मुड़ा रहता है और फूलों को पानी में डूबा रखता है। जब नर फूल परिपक्व हो जाते हैं तो स्पैडिक्स से अलग हो जाते हैं और अभी बन्द ही रहते हैं कि पानी के तल पर बहने लगते हैं; बाह्यदलपुंज फैलकर उन्हें हल्कापन (buoyancy) दे देता है। इसी समय मादा फूल पानी के तल अपने डण्ठल की ऐंठन खोलकर आ जाता है और इस

प्रकार नर फूलों के सम्पर्क में आता है। परागकोश फट जाते हैं और कुछ लसदार परागकण कुक्षि के किनारे पर चिपक जाते हैं। परागण के उपरान्त मादा फल का डण्ठल फिर ऎँठ जाता है, जिससे कि फूल पानी के नीचे पेदी से कुछ ऊपर पकता है। जलवाले पौधों में, जिनके फूल स्पष्ट रूप से तैरनेवाले या हवाई होते हैं, परागण कीड़ों द्वारा ही होता है। जल परागित फूल हमेशा छोटे और अस्पष्ट होते हैं। बहुत कम



चित्र ७.६ वैलिसनेरिया (*Vallisneria*)। बायाँ, एक नर पौधा जिसमें बहुत-से छोटे-छोटे नर फूल स्पेथ द्वारा ढके हुए स्पैडिस मे हैं; दायाँ, एक मादा पौधा जिसमें पानी पर तैरता हुआ एक मादा फूल दिखाई दे रहा है।

दशाओं में पानी प्रत्यक्ष रूप से परागण का उत्तरदायी होता है। इस प्रकार के परागण का उदाहरण विशेष रूप से नैयास (*Najas*) में मिलता है। यह डूबी हुई पानीवाली घास होती है और इसमें एर्कालगी फूल लगते हैं। इस पौधे में परागण पानी के अन्दर होता है।

(घ) जन्तु-परागण (जूफिली, **Zoophily**; Zoo—जानवर). चिड़ियाँ, गिलहरी, चमगादड़ और घोघ आदि भी परागण के अच्छे साधन हैं; जैसे चिड़ियाँ और गिलहरी, मन्दार (*Erythrina*) और सेमल (*Bombax*) के पौधों में परागण करती हैं। चमगादड़ों कदम (*Anthocephalous*) में; और घोघे एरॉण्ड्स की कुछ बड़ी किस्मों तथा स्नेक प्लाण्ट (*Arisaema*) में परागण करते हैं।

कीड़े भी इन फूलों में परागण कर सकते हैं। एराण्ड में, जिन्हें श्रीमान् और श्रीमती भी कहते हैं, इफ़लोरेसेन्स एक स्पैडिक्स (spadix) होता है। इनमें मादा फूल जिन्हें श्रीमती भी कहते हैं, स्पैडिक्स के आधार पर रहते हैं और नर फूल जिन्हें श्रीमान् भी कहते हैं, ऊपर की ओर लगे रहते हैं। इन फूलों में कुक्षि (stigma) पहले परिपक्व हो जाते हैं, जिससे कि परागकणों को दूसरे पुष्प-क्रम से आना पड़ता है।

स्वयं-परागण और पर-परागण से लाभ और हानि. स्वयं-परागण से यह लाभ है कि यदि दोनों पुकेसर और अण्डप (carpels) एक समय ही परिपक्व हो तो किसी एकक्षयक फूल में स्वयं-परागण निश्चित होता है। परन्तु स्वयं-परागण से एक हानि भी है—इसके द्वारा प्रणतित सन्तान (progeny) दुर्बल होती है। पर-परागण से ये लाभ हैं—(क) इससे सर्वदा काफी स्वस्थ सन्तान उत्पन्न होती है जो जीवन संग्राम के लिए अच्छी तरह तैयार होती है; (ख) इस विधि से अधिक बीज उत्पन्न होते हैं; (ग) पर-परागण की क्रिया से नई किस्में भी पैदा की जा सकती हैं। पर-सेचन में यह असुविधा है कि यह बाहरी प्रतिनिधियों, जैसे कीड़े, हवा आदि की सहायता पर निर्भर होता है। और इसलिए इसका कार्य सम्पादन कुछ न कुछ अनिश्चित और खर्चीला होता है; क्योंकि परागण के इन प्रतिनिधियों को आकर्षित करने के लिए विभिन्न साधन उत्पन्न करने पड़ते हैं।

पर-परागण के लिए अनुरूपन (Contrivances for cross-pollination). फूलों में बहुत-से विविध साधन मिलते हैं जो स्वयं-परागण को रोकते हैं और पर-परागण की सहायता करते हैं। ये निम्न प्रकार हैं:

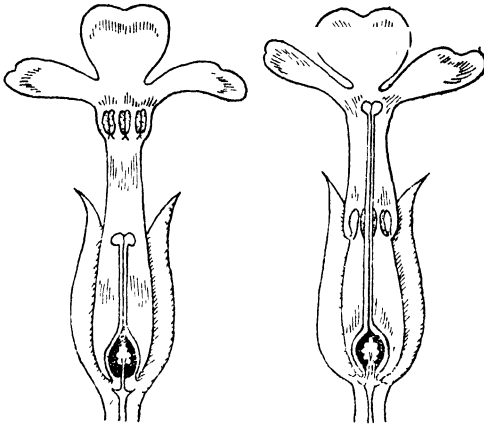
१. **एकांगता या एक-लिंगता (Dicliny or unisexuality).** एकांगी (diclinous; di—दो या पृथक्, kline—शैथ्या) फूल एकलिंगी होते हैं, अर्थात् पुकेसर और अण्डप अलग-अलग फूलों में होते हैं। ऐसे फूलों में स्वयं-परागण का सवाल ही नहीं उठता। इन फूलों में पर-परागण बीजों की उत्पत्ति के लिए अनिवार्य है। एकांगता के दो रूप होते हैं (क) जब नर और मादा फूल एक ही पौधे पर लगते हैं तो उस पौधे को **एकक्षयक** (मोनोगियस, **monoecious; monos**—एक, **oikos**—घर), जैसे लौकी, ज़ीरा, कद्दू, रेंडी, मक्का इत्यादि में; और (ख) जब नर और मादा फूल दो भिन्न पौधों पर होते हैं। अर्थात् जब एक पौधे में केवल नर फूल और दूसरे में केवल मादा फूल लगते हैं, तब पौधे को **द्विक्षयक** (डायोशियस, **dioecious; di**—दो या पृथक्) कहते हैं, जैसे पपीता, कुछ ताड़, शहतूत (**Morus**), आदि में।

२. **स्वयं-वन्ध्यता (Self-sterility).** यह वह दशा है जिसमें एक फूल का परागण उसके ही परागकणों द्वारा नहीं हो सकता। कभी-कभी, जैसा कि कुछ ऑर्किड्स (orchids) में देखा जाता है, एक ही फूल के परागकणों का उसी फूल के कुक्षि (stigma) पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। झमका (passion flower, **Passiflora**) और मालवा (**Malva**) की कुछ जातियाँ भी स्वयं-वन्ध्य (self-sterile) होती हैं।

३. **पृथक्-पक्षता (डाइकोगैमी, Dichogamy; dica—दो में).** बहुत से एकक्षयक फूलों में परागकोश और कुक्षि प्रायः अलग-अलग समय पर परिपक्व होते हैं। इस दशा को **पृथक्-पक्षता** कहते हैं। और स्पष्ट है कि चूँकि ऐन्थर और स्टिग्मा अलग-अलग समय पर पक्के हैं, इसलिए स्वयं-परागण पर रोक लग जाती है।

पृथक-पक्वता की दो दशाएं होती है (क) **पूर्व-स्त्रीपक्वता** (प्रोटोगाइनी, **protogyny**; *protos*—पहले, *gyne*—मादा), जब अण्डप पहले पकते हैं तो उस अवस्था को पूर्व-स्त्रीपक्वता कहते हैं; इसका अर्थ यह है कि कुक्षि परागकण लेने के लिए तैयार हो जाते हैं इसके पहले कि उसी फूल के परागकोश फटे और अपने परागकण झाड़ दें। यह दुली-चम्पा (*Magnolia*), चम्पा (*Michelia*), देवदारू (*Polyalthia*), कटेली चम्पा (*Artabotrys*), शरीफा (*Anona*), कुछ ताड़, इसारमूल या इण्डियन बर्थवर्ट (*Aristolochia*) आदि में पायी जाती है। (ख) **पूर्व-पुंपक्वता** (प्रोटैण्ड्री, **protandry**; *andros*—नर), जब किसी फूल के परागकोश पहले पकते हैं (फूट कर अपने परागकण गिरा देते हैं), अर्थात् उस समय पकते हैं जब उसी फूल का कुक्षि परिपक्व नहीं होता, जिससे कि परागकणों का दूसरे फूल पर जाना अति आवश्यक हो जाता है, तो इस दशा को पूर्व-पुंपक्वता कहते हैं। इसके उदाहरण मालवेसी फेमिली, कम्पोजिटो फेमिली, धनिया, अजवाइन (*Carum*) आदि में मिलते हैं। पूर्व-पुंपक्वता पूर्व-स्त्रीपक्वता की अपेक्षा अधिक पायी जाती है।

४. **कुक्षिवृन्त-भिन्नता** (हेट्रोस्टाइली, **Heterostyly**; *heteros*—भिन्न)। कुछ पौधे ऐसे होते हैं जिनमें दो प्रकार के फूल होते हैं। एक प्रकार के फूलों के पुकेसर



चित्र ७.७

चित्र ७.८

प्राइमरोज के द्विरूपिक फूल। चित्र ७.७ लम्बे कुक्षिवृन्तवाला एक फूल।

चित्र ७.८ छोटे कुक्षिवृन्तवाला एक फूल।

लम्बे और कुक्षिवृन्त छोटे होने हैं और दूसरे प्रकार के फूलों में छोटे पुकेसर और लम्बे कुक्षिवृन्त होते हैं। इसे द्विरूपिक (डाइमॉर्फिक, *dimorphic*; *di*—दो, *morphe*—रूप) हेट्रोस्टाइली कहते हैं। इसी प्रकार त्रिरूपिक हेट्रोस्टाइली भी हो सकती है अर्थात् पुकेसर और कुक्षिवृन्त तीन विभिन्न आकार के होते हैं और तीन विभिन्न प्रकार के फूलों पर लगते हैं। इस प्रकार की सभी हालतों में पर-परागण

विभिन्न फूलों में समान लम्बाईवाले पुकेसर और कुक्षिवृन्त में शीघ्रता से हो जाता है। जब पर-परागण असफल हो जाता है, तो कभी-कभी एक ही फूल पर उत्पन्न हुए विभिन्न लम्बाइयों के पुकेसर और कुक्षिवृन्त में स्वयं-परागण हो जाता है। लाल अलसी (red linseed; *Linum*) से स्वयं-परागण द्वारा बिल्कुल कोई बीज नहीं पैदा होता। द्विरूपिक कुक्षिवृन्त-भिन्नता (dimorphic heterostyly), प्राइमरोज (चित्र ७.७, ७.८), बकह्वीट (buckwheat), ऑग्जेलिस (*Oxalis*), अलसी (*Linum*) और धौन फूल (*Woodfordia*) में पायी जाती है। त्रिरूपिक कुक्षिवृन्त-भिन्नता ऑग्जेलिस (*Oxalis*) और अलसी (*Linum*) की कुछ जातियों में मिलती है।

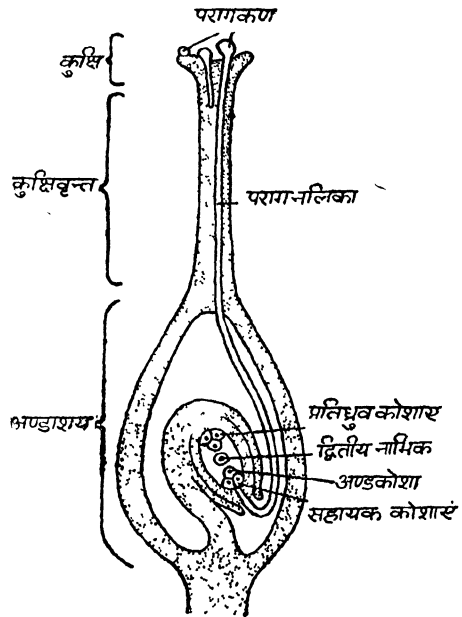
५. अनात्मक-परागणता (हर्कोगैमी, **Herkogamy**; *herkos*—चारदीवारी या रुकावट). कुछ सहपक्व (homogamous) फूलों, में अर्थात् उन फूलों में जहाँ परागकोश और कुक्षिवृन्त एक ही समय पर परिपक्व होते हैं, फूल के अंगों में बहुत अनुकूलन (adaptations) होते हैं जो स्वयं-परागण के लिए रुकावट का काम करते हैं, और इस प्रकार कीड़ों द्वारा पर-परागण में सहायता करते हैं। फूल के दोनों अंग एक दूसरे से कुछ दूरी पर हो सकते हैं, परागकोश दलपुज-नलिका के भीतर घुसे (inserted) हो सकते हैं और कुक्षिवृन्त बाहर निकले (exserted) रह सकते हैं; या परागकोश बाहर निकले और कुक्षिवृन्त अन्दर घुसे हो सकते हैं; या परागकोश बाहर की ओर मुख किये रह सकते हैं; या फन के समान पंखड़ियों या पेटालॉएड कुक्षिवृन्त से ढके रह सकते हैं जैसा कि आइरिस (*Iris*) में मिलता है; या परागकोश और कुक्षि (stigma) की स्थिति ऐसी हो सकती है, जो स्वयं-परागण के लिए बाधाजनक हो। इस प्रकार हम देखते हैं कि ऑर्किड्स (orchids) और आक या मदार (*Calotropis*) के परागकण ऐसी स्थिति में होते हैं जहाँ से वे स्वयं कुक्षि तक न पहुँच सकें। इसके अलावा यह अपने उपांगों की सहायता से अपनी जगह चिपके से रहते हैं और केवल कीड़ों की मदद से ही ले जाय जा सकते हैं। तुखमलंगा (*Salvia*) के पुकेसर और पिस्टिल (स्त्रीकेसर) का विशेष प्रकार का क्रम, जिससे कि परसेचन हो सके, पहले ही लिखा जा चुका है (पृष्ठ १६१ देखें)।

निषेचन (Fertilization)

दो भिन्न लिंग की जननेन्द्रिय इकाइयों (sexual reproductive units) का संयोग (fusion) गर्भाधान या निषेचन कहलाता है। इन इकाइयों को जन्तु (गेमीट्स, **gametes**) कहते हैं। फूलदार पौधों में यह क्रिया निम्नलिखित रूप से होती है (चित्र ८.१)। परागण के उपरान्त, अर्थात् परागकण के कुक्षि पर पहुँचने के बाद अन्तर्कवच (intine),

बहिर्कवच (exine) के कुछ दुर्बल स्थानों (germ pores) को तोड़कर एक नली के रूप में निकल आता है। इस नली को पराग-नलिका या पराग नली (**pollen tube**) कहते हैं (चित्र ६.४८)। कुक्षिद्वारा स्रावित शकर के समान पदार्थ से पराग-नलिका की वृद्धि उत्तेजित (stimulated) हो जाती है। यह नली कुक्षि को तोड़कर उसके भीतर घुस जाती है। कुक्षिवृन्त में से होकर आगे बढ़ती है और नीचे अण्डाशय (ovary) की पेंदी की दीवार तक पहुँच जाती है। यह अपने साथ द्यूब-नाभिक और जनन-नाभिक (**tube-nucleus** and **generative nucleus**) को ले जाती है। जनन-नाभिक दो में विभाजित हो जाती है, जिन्हें

पुंजन्तु (**male gametes**) कहते हैं। द्यूब न्यूक्लियस शीघ्र ही या बाद में नष्ट हो जाता है। कभी-कभी जनन-नाभिक परागण से पहले ही विभाजित हो जाता है। पराग-नलिका के सिरे पर साइटोप्लाज्म इकट्ठा हो जाता है जिसमें नाभिकें धंसी रहती हैं। पराग-नलिका अण्डाशय की दीवार में चलकर अन्त में माइक्रोपाइल की ओर मुड़



चित्र ८.१ निषेचन की क्रिया दिखाते हुए
अनुलम्ब काट में एक अण्डाशय।

जाती है (अण्डाशय की खाली जगह में इसकी स्थिति चाहे जो हो)। तब पराग-नलिका माइक्रोपाइल में से होकर गुजरती है और फिर भ्रूणस्यून (embryo-sac) में पहुँच जाती है। इस प्रकार के निषेचन को छिद्र-भेदी निषेचन (porogamic fertilization) कहते हैं। कभी-कभी, जैसे झाऊ (*Casuarina*) और कुछ अन्य पौधों में पराग-नलिका ओव्यूल के आधार (chalaza) से होकर भ्रूणस्यून में घुसती है या यहाँ तक कि यह छादों (integuments) को फाड़कर आती है। यह कबचोदग-भेदी या निभागोद्वाह निषेचन (chalazogamic fertilization) कहलाता है। एम्ब्रियो सैक के अन्दर पहुँचने पर पराग-नलिका का सिरा घुलकर नष्ट हो जाता है। और पुजन्य (male gametes) बाहर निकल आते हैं। इन दो जन्तुओं में से एक अण्डकोशा (egg-cell) से मिल जाता है और दूसरा भ्रूणस्यून में और आगे बढ़ता है और दोनों ध्रुव नाभिकों (polar nuclei) से अथवा उनके स्वयं के मिले हुए पदार्थ—द्वितीय नाभिक (secondary nucleus) से मिल कर एक रूप हो जाता है। इस प्रकार निषेचन पूरा हो जाता है। निषेचन की क्रिया में, सिनर्जिड या सहायक सेल का काम नर गैमीट को एग-सेल और द्वितीय नाभिक की ओर निर्देशित करना है। जैसे ही निषेचन समाप्त होता है, वैसे ही यह सहायक कोशा भी नष्ट हो जाती है। एण्डोपोडल कोशाओं की कोई विशेष क्रिया नहीं होती, इसलिए वे निषेचन से पहले ही नष्ट हो जाती हैं। निषेचन के बाद अण्डकोशा अपने आपको एक कोशा-भित्ति (cell-wall) में ढक लेती है और तब अण्ड-बीजाणु (ऊस्पोर, oospore) कहलाती है। अण्ड-बीजाणु से भ्रूण, बीजाणु से बीज और सम्पूर्ण अण्डाशय से फल और द्वितीय नाभिक, जिसे अब एण्डोस्पर्म न्यूक्लियस कहते हैं, से भ्रूणपोष (एण्डोस्पर्म, endosperm) बन जाता है। यदि किसी कारण निषेचन असफल रहता है तो अण्डाशय मुरझा जाता है और सूखकर गिर जाता है। केला, पपीता, नारंगी, अनन्नास आदि की कुछ उगाई जानेवाली जातियों में कभी-कभी अण्डाशय निषेचन के बिना भी फल में विकसित हो सकता है। बिना निषेचन के हुए फल के विकास को पार्थेनोकार्पी (parthenocarpy, अपराग-फलन) कहते हैं। इस प्रकार विकसित फूल बहुत कम दशाओं में बीज धारण करते हैं। भिन्न-भिन्न पौधों में परागण और निषेचन के बीच में व्यतीत समय काफी अलग-अलग होता है। प्रायः यह समय कुछ घण्टों से लेकर कुछ दिनों तक का होता है। परन्तु कुछ पेड़ों में यह समय कुछ या कई महिनो तक भी खिच जाता है—मीडो सैफ्रन (meadow saffron) में छः महिने तक या अधिक और ओक (oak) में लगभग तेरह महिने तक होता है। यह समय कुशिवृत्त की लम्बाई पर उतना निर्भर नहीं होता जितना कि पराग-नलिका की वृद्धि-गति (rate of growth) पर। कुछ जिम्नोस्पर्म्स में निषेचन परागण के एक वर्ष बाद होता है। चूँकि परागण का केवल एक नर गैमीट बीजाण्ड के एक अण्डकोशा से ही संयुक्त होता है, स्पष्ट है कि अण्डाशय के पूर्ण निषेचन के लिए उतने ही परागकणों की आवश्यकता होगी जितने कि ओव्यूल उस अण्डाशय में है। फिर भी, साधारण रूप से, बहुत-से परागकण कुक्षि पर जमा होते हैं और उनमें से बहुत-से पराग-नलिका बनाते हैं; परन्तु सफल केवल वही होते हैं जो दूसरों की अपेक्षा ओव्यूल के निकट अधिक जल्दी पहुँचते हैं। अन्य पराग-नलिकाएँ निषेचन के उपरान्त सूख जाती हैं।

[इस स्थान पर यह ध्यान रखना चाहिए कि निषेचन केवल एक ही जाति

(**species**) के पौधों में या एक ही प्रजाति (**genus**) की विभिन्न जातियों में हो सकता है; परन्तु दो विभिन्न प्रजातियों (**genera**) के पौधों में कभी नहीं हो सकता; कैलीफोर्निया के श्री लूथर बर्बैंक (Luther Burbank), जिन्हें वनस्पति जगत का जादूगर ठीक ही कहा जाता था, ने एक ही कुल के दो विभिन्न प्रजातियों के पौधों में कृत्रिम-परागण करने में सफलता प्राप्त की। हाल ही में भारतवर्ष में भी एक कुल की दो विभिन्न प्रजातियों के पौधों से कृत्रिम-परागण किया गया है।]

दोहरा निषेचन (Double fertilization). पूर्व लिखित वर्णन से यह स्पष्ट हो गया होगा कि ऐन्जियोस्पर्म्स में निषेचन दो बार होता है (अ) दोनों नर गैमीटों में से एक भ्रूणस्यून के अण्डकोश से मिलकर एक रूप हो जाता है, और (ब) दूसरा गैमीट द्वितीय नाभिक से संयुक्त हो जाता है। यह द्वितीय नाभिक (सेकण्ड्री न्यूक्लियस) ऐम्ब्रियो-सैक के विकास काल में दोनों ध्रुव नाभिकों (polar nuclei) के मिलने से बनता है। इस क्रिया को दोहरा निषेचन (double fertilization) कहते हैं। इस दोहरे निषेचन का सर्वप्रथम १८९८ में अन्वेषण हुआ था; परन्तु बाद में यह पाया गया कि यह क्रिया ऐन्जियोस्पर्म्स (angiosperms) में सर्व-व्यापक रूप से है, दोहरे निषेचन का महत्त्व अभी ठीक रूप से ज्ञात नहीं हुआ है। एक नर गैमीट (पुंजन्यु) और अण्डकोश के मिलने से भ्रूण की उत्पत्ति होती है; जबकि दूसरे पुंजन्यु और द्वितीय-नाभिक के मिलने से एण्डोस्पर्म बनता है, और एक भगिनी भ्रूण (sister embryo) का निर्माण नहीं होता, जैसा कि आशा की जाती थी। यह कहा गया है कि एक दूसरे ध्रुव-नाभिक की उपस्थिति विघ्नकारी हो सकती है और इस कारण सेकण्ड्री न्यूक्लियस (एण्डोस्पर्म न्यूक्लियस) तिगुने संयोग (triple fusion) के कारण एण्डोस्पर्म में विकसित हो जाता है, बजाय इसके कि एक भ्रूण में विकसित हो।

प्रहास-भाजन या अर्ध-सूत्र भाजन (Reduction division). अपनी-अपनी मातृ कोशओं (mother cells) से परागकण और भ्रूणस्यून अर्ध-सूत्र भाजन की क्रिया के द्वारा उत्पन्न होते हैं (चित्र ६४९ और ६८२), और इसलिए पराग-नलिका का नर गैमीट और भ्रूण स्यून की मादा गैमीट या अण्डकोश $\times$ पित्रसूत्र (chromosomes) रखते हैं, अर्थात् अपनी मातृ कोश के क्रोमोसोम्स की संख्या का आधा। और जब यह दोनों गैमीट मिलकर अण्डबीजाणु (oospore) बनाते हैं, तो संख्या द्विगुणित हो जाती है ($x+x=2x$)। इस प्रकार पीढ़ी-दर-पीढ़ी क्रोमोसोम्स की संख्या वही की वही बनी रहती है।

लक्षणों की उत्तराधिकारिता (Inheritance of characters). पौधों में माता-पिता के सारे लक्षण उनकी सन्तान द्वारा ग्रहण हो जाते हैं। यह सत्य इस बात से स्पष्ट है कि एक जाति के पौधे उसी जाति को सन्तान को जन्म देते हैं। प्रश्न यह उठता है: “यह लक्षण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक किस प्रकार पहुँचते हैं?” पौधे में नर गैमीट पराग-नलिका में और मादा गैमीट जिसे अण्डकोश भी कहते हैं, भ्रूणस्यून में होता है। यह दोनों गैमीट एक रूप होकर ऊस्पोर को जन्म देते हैं। अण्डबीजाणु (oospore) विकसित होकर भ्रूण बनाता है। यह भ्रूण आगे बढ़कर पूरे पौधे के रूप में हो जाता है, जो हर प्रकार से अपने माँ-बाप (parent) पौधे से मिलता-जुलता है। इस प्रकार के क्रम के परिणाम से हम कह सकते हैं कि यह मातृ-पितृ लक्षण भ्रूण और अण्डबीजाणु में ही रहे होंगे, अर्थात् यथार्थ रूप में अण्डकोश और नर गैमीट द्वारा ही ऐसा हुआ होगा। यह दो नाभिकों अर्थात् अण्डकोश और

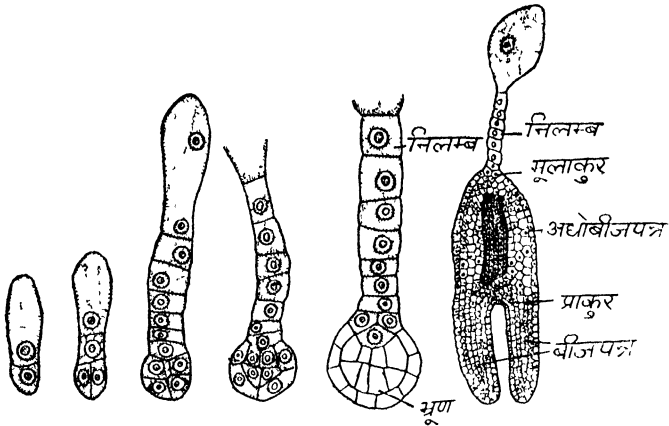
नर गेमीट (पुंजन्यु) ही वंशानुक्रम के लक्षणों के वाहक (bearers of hereditary characters) माने जाते हैं। यह स्पष्ट है कि कोई विशेष वंशानुक्रम के लक्षण (जैसे फल का रंग) इन नाभिकों में नहीं पाया जा सकता, परन्तु फिर भी यह मानने में कोई आपत्ति नहीं है कि उनमें कोई चीज़ ऐसी जरूर मौजूद है जिसके द्वारा उस विशेष लक्षण का प्रतिनिधित्व होता है। वह 'कोई चीज़' जो अभी अच्छी तरह ज्ञात नहीं है, उस विशेष लक्षण का फ़ैक्टर या जीन (factor या gene) कहलाता है। और यह 'फ़ैक्टर' या 'जीन' गेमीट के क्रोमोसोम्स (chromosomes) में या प्रजनन-कारी नाभिकों (reproductive nuclei) में होते हैं। यह जीन या फ़ैक्टर वंशानुक्रम के लक्षणों को माता-पिता से सन्तान में वहन (transmit) करते हैं। सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि यह न्यूक्लियस जो आकार में इतने छोटे होते हैं, अपने अन्दर पौधे के सभी विभिन्न लक्षण रखते हैं, चाहे पौधे की बनावट कितनी ही जटिल क्यों न हो।

बीज (The Seed)

बीज का विकास.

निषेचन के बाद ओव्यूल में क्रम से बहुत-से परिवर्तन होते हैं और इसके फल-स्वरूप बीज की उत्पत्ति होती है। निषेचित अण्डकोशा या 'ओवम' (ovum) बढ़ता है और बढ़कर भ्रूण को जन्म देता है, और सेकण्ड्री न्यूक्लियस एण्डोस्पर्म को जन्म देता है; बीजाण्ड में अन्य परिवर्तन भी होते हैं।

१. भ्रूण का विकास (चित्र ९.१, ९.२). निषेचन के पश्चात् अण्डकोशा या अण्ड (egg-cell or ovum) अपने चारों ओर एक कोशाधु (सेल्युलोज) की दीवार बना लेता है और अण्डबीजाणु (oospore) के रूप में बदल जाता है। ऊस्पोर दो कोशाओं में विभाजित हो जाता है—पहली ऊपरी कोशा और दूसरी निचली कोशा। ऊपरी फिर अनेक कोशाओं की एक कतार में एक दिशामें विभाजित हो जाती है। इस कतार को निलम्ब (सस्पेन्सर, *suspensor*) कहते हैं। सस्पेन्सर की सबसे ऊपरी

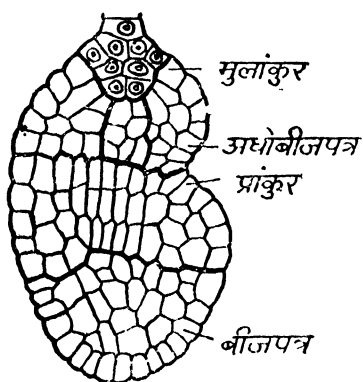


[Redrawn from Maheshwari]

चित्र ९.१ द्वि-बीजपत्री भ्रूण का विकास।

कोशा, जिसे अधोवर्ध (हाइपोफाइसिस, *hypophysis*; *hypo*—नीचे, *phyo*—बढ़ना) कहते हैं, विभाजित होकर मूलाकुर की नोक को जन्म देती है। सस्पेन्सर का काम प्रदेह (न्यूसेलस, *nucellus*) से भोज्य-पदार्थ खींचकर बनते हुए भ्रूण को पहुँचाना है। जब मूलाकुर बन जाता है तो सस्पेन्सर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। ऊस्पोर के निचले सेल को भ्रूण-कोशा (embryonic cell) कहते हैं। यह एक दूसरे पर समकोण बनाती हुई तीन दीवारों द्वारा विभाजित होती है और इस प्रकार आठ कोशाओं को

जन्म देती है। इनमें से चार कोशाएं सस्पेन्सर के बगल में रहती हैं और चार उससे दूर। यह सब कोशाएं आकार में बढ़ने लगती हैं और जल्दी-जल्दी विभाजित होने



[Redrawn from Maheshwari]

चित्र ९.२ एक बीजपत्री
शिशु भ्रूण।

लगती है। प्रांकुर (plumule) और दोनों बीजपत्र (cotyledons) सस्पेन्सर में दूरवाली चार कोशाओं से बनते हैं और मुलांकुर (radicle) का मुख्य भाग तथा अधोबीजपत्र (hypocotyl) सस्पेन्सर के निकटवाले दूसरे चार सेलों के पुंज से बनता है।

द्विबीजपत्री भ्रूण में दो बीजपत्र बनते हैं जो अगल-बगल (laterally) रहते हैं और प्रांकुर अग्रवर्ती (terminal) रहता है। एक-बीजपत्री भ्रूण में, केवल एक बीजपत्र होता है जो शिखरवत् रहता है और इसमें प्रांकुर पार्श्वस्थ रहता है। हाल के अन्वेषणों द्वारा पता चला है कि यह भिन्नता पूर्ण रूप से लागू नहीं होती।

२. एण्डोस्पर्म का विकास. एक नरगेमीट और सेकण्डी न्यूक्लियस के मिल कर एक रूप होने पर (तिहरे संयोग के कारण) सेकण्डी न्यूक्लियस, जिसे अब एण्डोस्पर्म न्यूक्लियस कहते हैं, बढ़ना शुरू कर देता है। यह विभाजित होता है और बहुत-सी छोटी-छोटी नाभिकों को जन्म देता है। प्रत्येक न्यूक्लियस के चारों ओर प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) इकट्ठा हो जाता है और अन्त में इनके बीच में सेल की दीवार खिच जाती है। इस प्रकार के स्वतंत्र रूप से सेल बनने के क्रम के फलस्वरूप एक ऊति (tissue) बन जाती है। इस टिशू को भ्रूणपोष (endosperm or albumen) कहते हैं। यह न्यूसेलस को खर्च करके बढ़ना आरम्भ करता है, अर्थात् न्यूसेलस से भोज्य-पदार्थ खींच लेता है। इस प्रकार यह विभिन्न प्रकार के भोज्य-पदार्थों से भरपूर हो जाता है जो भ्रूण के अकुरण की क्रिया में काम आते हैं। यथार्थ रूप से ऐल्ब्युमेन को भ्रूण के विविध भोज्य-पदार्थों का संग्रहालय मानते हैं। बहुत-से बीजों में तरुणावस्था में एण्डोस्पर्म नहीं रहता, यद्यपि हमेशा यह भ्रूण के विकास के समय अवश्य बनता है। यह यथार्थ रूप से इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कि एम्ब्रियो अपनी उन्नति की क्रिया में लगातार एण्डोस्पर्म में इकट्ठे भोजन को खींचता रहता है और अन्त में उसको बिल्कुल शून्य कर देता है। इस प्रकार जब कुछ भी शेष नहीं रहता तो बीज को अभ्रूणपोषी (exalbuminous) कहते हैं। फिर भी, कुछ उदाहरणों में एण्डोस्पर्म तीव्रता से बढ़ता है जिससे कि एम्ब्रियो उसे पूर्ण रूप से शून्य नहीं कर पाता है। ऐसे बीज को तब भ्रूणपोषी (albuminous) कहते हैं। अधिकतर उदाहरणों में एण्डोस्पर्म न्यूसेलस (प्रदेह) की जगह को पूर्णतया भर देता है जिससे बीज में बिल्कुल न्यूसेलस नहीं मिलता, किन्तु कुछ उदाहरणों, जैसे वाटर लिली, अदरक कुल, गुल-अब्बास और बगन-विलास, में न्यूसेलस उपस्थित रहता है और एक भोजन-संग्रह ऊति (food-

storing tissue) में वृद्धि कर जाता है। इसे प्रदेह शेष (perisperm) कहते हैं। वाटर लिली, अदरक कुल और पान कुल में एण्डोस्पर्म और पेरिस्पर्म दोनों ही मिलते हैं। एल्ब्युमेन खाद्य (mealy) हो सकता है जब उसमें स्टार्च के दाने भरे रहते हैं, जैसे कि चावल, गेहूँ आदि में पाया जाता है, यह चिकना (oily) भी हो सकता है जब इनमें तेल की गोलियाँ भरी रहती हैं, जैसे कि रेडो, नारियल आदि में, यह गूदेदार (fleshy) भी हो सकता है जब यह मोटा और मुलायम होता है, यह म्युसिलैजिनस (mucilaginous) कहा जाता है जब इसकी दीवारें चिपचिपे या लसदार पदार्थ की बनी होती हैं जिसे म्यूसिलेज (mucilage) कहते हैं, जैसा कि मँलो (mallow) में मिलता है, और कडा (horny) भी हो सकता है जब यह मोटा और कठोर हो जाता है, जैसा कि वेजीटेबिल-जाइवरी-पाम (vegetable ivory palm) और सुपारी (betel-nut) में पाया जाता है।

३. बीजाण्ड में अन्य परिवर्तन (Other changes in the ovule). ओव्यूल में थोड़े-से अन्य परिवर्तन भी होते हैं। दोनों छद्म (integuments) बीजखोल (seed-coat) का रूप ले लेते हैं। इनमें से बाहरी को बीजचोल (testa) और अन्दरवाली को अन्तःकवच (tegmen) कहते हैं। कुछ बीजों में ओव्यूल का केवल एक छद्म होता है और कुछ परजीवी पौधों में कोई भी छद्म नहीं होता। कुछ बीजों, जैसे कि वाटर लिली, जायफल (nutmeg), मैंगोस्टीन (mangosteen), आदि में बीजाण्डवृन्त (funicle) की एक अतिवृद्धि भी होती है जो ओव्यूल के ऊपरी भाग में बढ़ जाती है और करीब-करीब पूरे बीज को ढक लेती है। इस प्रकार की अतिवृद्धि को बीजोपांग (ऐरिल, aril) कहते हैं, जावित्री या जायफल का गदाधारी भाग भी ऐरिल है और इसी तरह लीचों का गूदा भी ऐरिल है। कुछ बीजों में माइक्रोपाइल पर भी एक छोटी-सी अतिवृद्धि हो जाती है जिसे अग्रचोल (कैरकल, caruncle) कहते हैं। यह रेडो और यूफोर्बिएसी कुल (Euphorbiaceae) के दूसरे सदस्यों में, कपाल फुटकी (balloon vine) आदि में पाया जाता है। बीज के एक ओर एक चिह्न भी देखा जा सकता है। इस चिह्न को वृन्तक (हाइलम, hilum) कहते हैं। यह उस स्थान को अंकित करता है जहाँ पर बीज या ओव्यूल, डण्ठल या एम्ब्रियोनिकल से जुड़ा रहता है। अब बीजाण्ड और बीज में मिलनेवाले विभिन्न भागों की तुलना की जा सकती है।

बीजाण्ड (ovule)

बीज (seed)

बीजाण्ड वृन्त (funicle)	वृन्त (stalk)
वृन्तक (hilum).....	वृन्तक (hilum)
प्रदेह (nucellus)	प्रदेहशेष (perisperm)
छद्म (integuments).....	बीजखोल (seed-coats)
अण्डद्वार (micropyle).....	अण्डद्वार (micropyle)
भ्रूण-स्थान (embryo-sac)	

(क) अण्डउपकरण (egg-apparatus) :

(१) सहायक कोशाएँ नष्ट हो जाती हैं

(२) अण्ड-कोशा (egg-cell) भ्रूण (embryo)

(ख) द्वितीय-नाभिक (secondary-nucleus).... भ्रूणपोष (endosperm)

(ग) प्रतिध्रुव-कोशाएँ (antipodal cells)..... नष्ट हो जाती हैं।

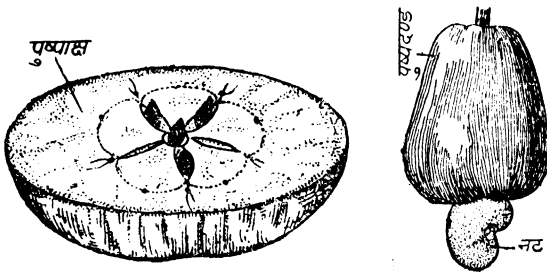
फल (The Fruit)

फल का विकास.

निपेचन के उपरान्त पहला काम भ्रूण का विकास है। साथ ही साथ बीजाण्ड में भी कुछ परिवर्तन होने लगते हैं और पूर्ण ओव्यूल बीज के रूप में बदल जाता है। भ्रूण के विकास के साथ ही अण्डाशय की दीवार में भी बहुत परिवर्तन होने लगते हैं। यह परिवर्तन अक्सर फूल के उन अन्य भागों में भी होता है जो फल की उत्पत्ति में भाग लेते हैं। इन परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप अण्डाशय (ovary) से फल का विकास होता है। इसलिए हम फल को एक पका हुआ अण्डाशय भी समझ सकते हैं। यदि किसी कारण निपेचन सफल नहीं हो पाता तो अण्डाशय, साधारणतया, मुरझा जाता है और गिर जाता है। फल के दो भाग होते हैं (क) फल-भित्ति या फलछाद (**pericarp**; *peri*—चारों ओर, *karpos*—फल), जो अण्डाशय की दीवार से बनता है और (ख) बीज जो बीजाण्डों से बनते हैं। नारंगी, केला, अंगूर आदि और अन्य फलों की कुछ बगीचे में लगाई हुई जातियों में भ्रूण और बीज नहीं भी विकसित होते हैं। और केवल बीज-रहित (**seedless**) फल ही बनते हैं। फलभित्ति (**pericarp**) मोटी भी हो सकती है और पतली भी। जब यह मोटी होती है तब यह दो या तीन भागों से मिलकर बनी होती है बाहरी भाग को बहिर्फल-भित्ति (एपिकार्प, **epicarp**) कहते हैं जो फल का छिलका बनाती है, मध्य भाग को मध्य फल-भित्ति (मीजोकार्प, **mesocarp**) कहते हैं और यह भाग आम, आड़ू, खजूर आदि में गूदेदार होता है। भीतरी भाग को अन्तर्फल-भित्ति (एण्डोकार्प, **endocarp**) कहते हैं। यह भाग प्रायः पतला और झिल्लीदार होता है, जैसा कि नारंगी में पाया जाता है; या कठोर और पथरीला भी हो सकता है, जैसा कि बहुत-से ताड़ों, आम आदि में मिलता है। बहुत-से फलों में फलभित्ति इन तीन भागों में भिन्नित नहीं होती।

जब फूल का केवल अण्डाशय ही फल के रूप में बढ़ जाता है तो उस फल को साधारण रूपसे सत्यफल (**true fruit**) कहते हैं; परन्तु बहुधा ऐसा भी देखा गया है कि फूल के अन्य भाग, जैसे थैलेमस, (रिसेप्टेक्लि, **receptacle**) या बाह्यदलपुज (**calyx**) भी बढ़कर फल की रचना में भाग ले सकते हैं; इस प्रकार के फल को कूट या स्पूरियस (**false or spurious**) फल कहते हैं; इसे स्पूडोकार्प (**pseudocarp**) भी कहते हैं। इस प्रकार डिलेनिया (*Dillenia*) में बाह्यदलपुज स्थायी और गूदेदार होता है और फल का प्रमुख भाग बनाता है। सेब (**apple**) में (चित्र १०.१) और नाशपाती में थैलेमस अण्डाशय के चारों ओर बढ़ जाता है और गूदेदार हो जाता है; स्ट्रॉबेरी में थैलेमस सूज जाता है और इसकी बाहरी उन्नतोदर सतह

पर छोटे-छोटे फल लग जाते हैं। गुलाब (चित्र ६.६६) में थैलेमस लम्बा हो जाता है और उसकी भीतरी नतोदर सतह पर छोटे-छोटे सत्यफल लगते हैं। सूरज-मुखी की फेमिली में अधोवर्ती फल (inferior fruit) सूखे थैलेमस द्वारा घिरा रहता है और प्रायः बालों (पैपस) के एक पुंज से ढका रहता है (चित्र ११.२)। काजू (cashew-nut) में (चित्र १०.२) पुष्पदण्ड (peduncle) बढ़कर गूदेदार हो जाता है और फल का एक भाग बनाता है और असली काजू उसके सिरे पर रहता है; शरीफा का समूह फल (aggregate fruit), जिसमें बहुत-से छोटे-छोटे सत्यफल संयुक्त होते हैं, नकली (spurious) होता है; अन्त में वह फल भी जो पूरे पुष्प-क्रम (inflorescence) से ही उत्पन्न होते हैं, कूट, कृत्रिम या नकली फल कहलाते हैं, जैसे कि शहतूत, अन्ननास, अंजीर, कटहल, बरगद आदि।



[After Brown]

चित्र १०.१

चित्र १०.२

चित्र १०.१ अनुप्रस्थ रूप से कटा हुआ सेब (apple)। चित्र १०.२ काजू (cashew-nut)।

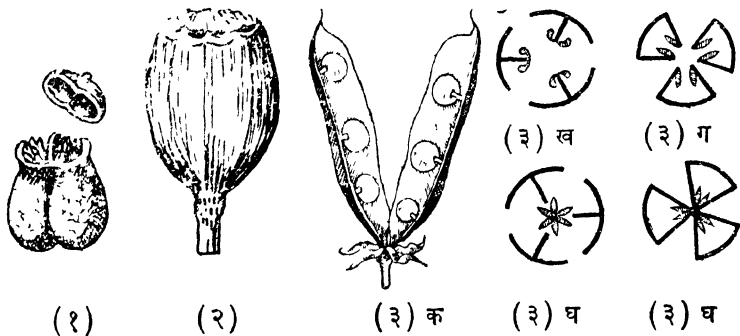
फलों की स्फुटन (Dehiscence of Fruits)

बहुत-से फल ऐसे हैं कि जब वह पकते हैं तब उनकी फल-भित्ति (pericarp) फट जाती है और बीज बिखर जाते हैं, ऐसे फलों को स्फुटी (डेहिसेण्ट; **dehiscent**) कहते हैं (चित्र १०.३)। बहुत-से फल ऐसे भी होते हैं जिनकी फल-भित्ति नहीं फटती और इस प्रकार इनके बीज फलों से अलग नहीं होते जब तक कि फल सड़ नहीं जाते। इस वर्ग के फलों को अस्फुटी (**indehiscent**) कहते हैं। स्फुटी फल विविध प्रकार से फटते हैं, और उनके फटने की विधि के अनुसार स्फुटन अनुप्रस्थ (**transverse**), छिद्रिल (**porous**), और लम्बाकार या कपाटीय (**longitudinal or valvular**) हो सकती है।

१. अनुप्रस्थ (**Transverse**). जब फल अनुप्रस्थ रूप से फटता है जिससे कि ऊपरी भाग निचले भाग से सन्दूक के अलग ढक्कन के समान अलग हो जाता है, तब इसे अनुप्रस्थ स्फुटन कहते हैं (चित्र १०.३—१), जैसे मुर्ग-कलगी (cock's comb, *Celosia*) और पोर्टुलाका (*Portulaca*) इत्यादि में।

२. छिद्रिल (**Porous**). जब फल अनेक छोटे-छोटे छिद्रों द्वारा फटता है

जिनमे से होकर बीज बिखरते हैं तब इसे छिद्रिल स्फुटन कहते हैं (चित्र १०.३-२), जैसे पोस्ता (poppy), धियातोरई (bath sponge) आदि में।



चित्र १०.३ फलों का स्फुटन। १. अनुप्रस्थ, २. छिद्रिल, ३क. सुचरल; ३ख विवरीय, ३ग. पटीस्फुटन, ३घ. पटीभग (सेप्टीफ्रैगल)।

३. कपाटीय (Valvular). जब फल शिखर से आधार तक या उसका उल्टा, पूर्ण या अपूर्ण लम्बाकार रूप से फटता है तो इसे कपाटीय स्फुटन कहते हैं। जब स्फुटन पूर्ण होती है तो फल बहुत-से टुकड़ों में टूट जाता है, जिन्हें कपाट (valves) कहते हैं और इसी कारण इस स्फुटन को कपाटीय (valvular) कहते हैं। यह निम्न प्रकार की हो सकती है:

एकाण्डपी फलों (Monocarpellary Fruits) में.

(क) सुचरल (Sutural). जब एक कार्पेलवाले फल फटने हैं तो वह सदैव सेवनी (suture) या दरारों की सहायता से ही फटते हैं, चाहे अधर सेवनी (ventral suture) से, जैसे कि मदार में; या उत्तर सेवनी (dorsal suture) से, जैसे दुली-चम्पा (Magnolia) में, या दोनों सेवनियों से, जैसे लैग्युमिनोसी (Leguminosae) में। तब इस प्रकार की स्फुटन को सुचरल कहते हैं (चित्र १०.३-३क)।

बहुअण्डपी फलों (Polycarpellary Fruits) में.

(ख) विवरीय (लॉक्यूलिसाइडल, Loculicidal). जब फल का स्फुटन विवर (loculus or chamber) की पीठ की ओर से होनी है और वाल्व अक्ष से अलग हो जाते हैं तो इस स्फुटन को विवरीय कहते हैं (चित्र १०.३-३ख)। यह पिक (pink), भिण्डी कुल (Malvaceae) के पौधों, जैसे कपास में, और एकैथेसी फेमिली (Acanthaceae) के पौधों, जैसे बासक या अदलसा (Adhatoda) और महतीता (Andrographis), में मिलती है।

(ग) **पटी-स्फुटन** (सेप्टीसाइडल, **Septicidal**). जब स्फुटन फल के विभाजन की दीवार या पटी (septa) पर से होती है तो उसे **पटी-स्फुटन** कहते हैं (चित्र १०.३—३ ग)। इस स्फुटन में फल अपने साधक अण्डपो (component carpels) में फट जाता है। यह सरसो कुल (cruciferae), अल्सी, उलट-कम्बल (devil's cotton, *Abroma*) आदि में मिलती है।

(घ) **पटीभंग** (सेप्टीफ्रैगल, **Septifragal**). जब एक बहुविवरीय (multilocular) फल विवरीय (loculicidally) रूप से या पटी रूप से (septicidally) स्फुटित होता है और उसी समय विभाजन की दीवारे या सेप्टा भी टट जाते हैं जिससे कि वाल्व अलग हो जाते हैं और बीज मुख्य अक्ष पर लगे रह जाते हैं, तो इस स्फुटन को **सेप्टीफ्रैगल** कहते हैं (चित्र १०.३—३ घ)। यह धतूरा (*Datura*), तून (*Cedrela*), कनक-चम्पा (*Pterospermum*) आदि में पायी जाती है।

फलों का वर्गीकरण

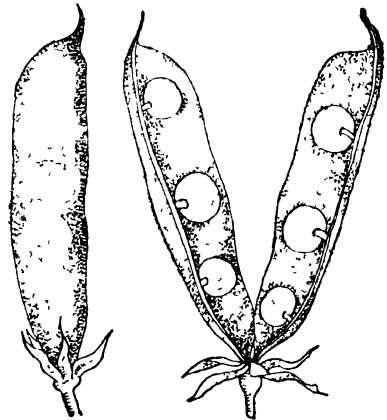
फलों को, चाहे वे सत्य हो या कूट, हम तीन वर्गों में बाँट सकते हैं—(क) **एकिक-फल** (simple fruits), (ख) **पुंज फल** (aggregate fruits) और (ग) **संश्लिष्ट फल** (multiple or composite fruits)।

(क) **एकिकफल** (Simple Fruits).

जब केवल एक फल जो सहायक अंगों सहित भी हो सकता है और रहित भी (जैसा कि सत्य और कूट में बताया गया है), एक फूल के अण्डाशय से विकसित होता है, तब यह **एकिकफल** कहलाता है। एकिकफल सूखा भी हो सकता है और गूदेदार भी। सूखे फल फिर स्फुटी (dehiscent) या अस्फुटी (indehiscent) हो सकते हैं।

१. स्फुटी या बहुबीज स्फुटी फल (Dehiscent or Capsular Fruits).

(१) **फली** (लैग्यूम या पॉड, **Legume or pod**). यह सूखा और एक कार्पेलवाला (एकाण्डप) फल है जो एक सुपीरियर, एक कोष्ठकवाले अण्डाशय से बनता है और दोनों, दरारों (sutures) से फटता है। यह लैग्यूमिनोसी के पौधों, जैसे मटर (चित्र १०.४), सेम, दालों, झुझुनियाँ आदि में पाया जाता है। जब लैग्यूम बीजों के बीच में संकुचित या बँट जाता है (constricted or partitioned) जिससे एक बीज रखनेवाले कई भाग हो जाते हैं तब यह



फल: चित्र १०.४ मटर का लैग्यूम या पॉड।

अनुप्रस्थफटीक (लोमेण्टम, **lomentum**) कहलाता है, जैसे बबूल (*Acacia*), छुई-मुई, : मूँगफली, अमलतास आदिमें।

(२) **एक सेवनीक फल** (फॉलिकिल, **Follicle**) पहलेवाले फल के समान यह भी सूखा, एक अण्डपवाला सुपीरियर और एक कोष्ठकवाला फल है, परन्तु यह केवल एक दरार या सेवनी (suture) से पटता है, जैसे आक या मदार (चित्र १०.५), काकतुण्डी (*Asclepias*), नयनतारा (periwinkle), चम्पा (*Michelia*) आदि में।



चित्र १०.५



चित्र १०.६

चित्र १०.५ मदार (*Calotropis*) का फॉलिकिल। चित्र १०.६ सरसो का सिलिकवा।

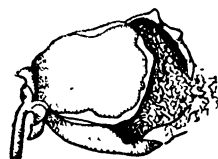
(३) **कूटपटीक फल** (सिलिकवा, **Siliqua**) यह लम्बा-पतला, बहुत से बीजोवाला फल होता है और सुपीरियर दो कार्पेलवाले (bicarpellary) अण्डाशय से बनता है जिसमें दो भित्ति-लग्न जरायु (parietal placentae) होते हैं। यह दोनों दरारों की सहायता से नीचे से ऊपर को फटता है। पहले पहले अण्डाशय एक कोष्ठक होता है, परन्तु जैसे-जैसे यह अण्डाशय

फल के रूप में परिवर्तित होता है, बीच में कृत्रिम दीवार बन जाने के कारण यह दो कोष्ठक (two-chambered) हो जाता है। इस कृत्रिम दीवार को कूटपटी (replum) कहते हैं। यह कूटपटी (false septum) एक प्लेसेण्टा से दूसरे तक जाती है। कूटपटीक फल सरसों कुल (cruciferae) में मिलता है (चित्र १०.६)। जब कूटपटीक फल (siliqua) बहुत छोटा और चटपटा होता है, और उसकी लम्बाई-चौड़ाई लगभग बराबर होती है और इसमें केवल कुछ ही बीज अधिक होते हैं, तो इसको कूटपटीका फल (सिलिक्युला, **silicula**) कहते हैं, जैसे शेफर्ड्स पर्स (shepherd's purse, *Capsella*) में।

(४) **प्रावर फल** (कैप्सूल, **Capsule**) यह बहुत-से बीजोयुक्त, एक या अनेक विवरीय या कोष्ठक (uni- or multilocular) फल होता है, जो सुपीरियर (कभी-कभी इन्फीरियर भी), दो या अनेक कार्पेलवाले (bi- or polycarpellary) अण्डाशय से बनता है और विविध प्रकार से फटता है। सिन्कार्पस ओवरी से बनानेवाले सभी स्फुटी फल साधारण रूप से कैप्सूल ही कहे जाते हैं। कैप्सूल छिद्रों द्वारा भी फट सकता है, जैसे पोस्ता में; या अनुप्रस्थ भी फट सकता है, जैसे मुर्ग-कलगी (cock's comb) में, और विवरीय



चित्र १०.७



[After Maud Jepson]

चित्र १०.८

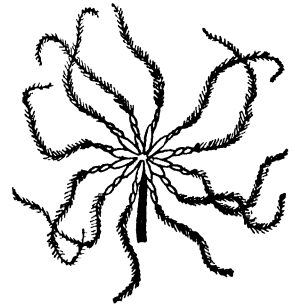
चित्र १०.७ धतूरा (*Datura*) का कैप्सूल।
चित्र १०.८ कपास का कैप्सूल।

रूपसे भी फट सकता है, जैसे कपाम मे (चित्र १०.८), सेप्टीसाइडल रूप से, जैसे अलसी मे; और सेप्टीफ्रैगल रूप से धतूरा (*Datura*) मे (चित्र १०.७)।

२. अस्फुटी फल (Indehiscent Fruits).

(१) संचोलभित्ति फल (कैरिओपसिस, **Caryopsis**). यह बहुत छोटा, सूखा, एक-कोशीय और एक बीजवाला फल होता है, और सुपीरियर एक कार्पेलवाले अण्डाशय से बनता है। इस फल का फलावरण (pericarp) बीज-चोल से संयुक्त हो गया है। इसके उदाहरण घास कुल (*Gramineae*) मे मिलते है (चित्र १.५, १६)।

(२) एक बीजास्फुटी फल (ऐकीन, **Achene**). यह छोटा, सूखा, एक कोष्ठक, एक बीजवाला फल होता है और सुपीरियर, एक कार्पेलवाले अण्डाशय से बनता है, परन्तु पहले वाले फल के विरुद्ध इस फल का पेरिकार्प बीज-छाद या छिलके से अलग रहता है। साधारणतया ऐकीन एक एपीकार्पस पिस्टिल से विकसित होते है और इसलिए एक फूल बहुत-से ऐकीन फलों का एक पुंज (aggregate) पैदा कर देता है—उन्हे ही स्वतंत्र कार्पेल उस फल मे होते है, जैसे वर्जिनस बावर (*virgin's bower, Clematis*) और छागलवती (*Naravelia*) मे (चित्र १०.९)।



चित्र १०.९ छागलवती (*Naravelia*) के ऐकीन।

(३) सूर्यमुखी फल (सिप्सेला, **Cypselia**). यह एक सूखा, एक कोष्ठक, और एक बीजवाला फल होता है जो इन्फीरियर, दो कार्पेलवाले अण्डाशय से बनता है। इसमे पेरिकार्प और बीजावरण अलग रहते है, जैसे सूरजमुखी कुल (*Compositae*) मे (चित्र ११.२)।

(४) काष्ठ फल (नट, **Nut**). यह एक सूखा, एक कोष्ठक और एक बीज-वाला फल होता है, और सुपीरियर, दो या अनेक कार्पेलवाले अण्डाशय से बनता है। इसका फलावरण कठोर और लकड़ी के समान होता है, जैसे चेस्टनट, ओक (*oak*), बीच (*beech*) आदि मे।

[नारियल और लम्बे ताड़ के फल अष्ठिफल (*drupes*) होते है. क्योंकि इनमे अन्तर्फलभित्ति (*endocarp*) कठोर और लकड़ी के समान होता है (और सम्पूर्ण पेरिकार्प नहीं) और सुपारी और खजूर (*date-palm*) एक बीजवाले बदरी फल (*berry*) होते है; क्योंकि इनमे पेरिकार्प नर्म होता है (सुपारी मे रेशेदार और खजूर मे गूदेदार) और बीज पथरीला होता है (फलावरण नहीं)।]



चित्र १०.१० खम-आलू (*Dioscorea*) का समारा।

(५) सपक्ष फल (समारा, **Samara**). यह एक सूखा अस्फुटी, एक या दो बीजयुक्त फल होता है जो सुपीरियर, दो या तीन कार्पेलवाले अण्डाशय से बनता है (चित्र १०.१०)। इसमे चपटी पखदार

अतिवृद्धियाँ होती है, जैसे माधवीलता (*Hiptage*), गर्जन (*Dipterocarpus*), मेपिल (*Acer*), एलम (*Elm*) या अल्मस आदि में। समारा में पंख सर्वदा पेरिकार्प से उत्पन्न होते हैं और फल अपने साधक भागों (component parts) में टूट जाता है। प्रत्येक भाग में एक-एक बीज होता है। साल (*Shorea*) का फल (चित्र १०.११) भी पंखदार होता है, परन्तु इसके पंख सूखे स्थायी बाह्यदलपुज होते हैं। इस प्रकार के पंखदार फलों को **समाराएँड (samaroid)** कह देते हैं (चित्र १०.११)।



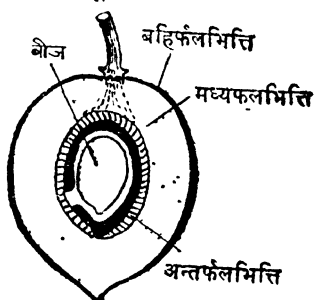
चित्र १०.११ साल
(*Shorea*) का समारा।

(६) **वेडमस्फुटी फल (शाइजोकार्प, Schizocarp)**. यह एक सूखा, अस्फुटी द्विविवरीय फल होता है और एक इन्फोरियर, दो कार्पेलवाले अण्डाशय से विकसित होता है। जब फल पकता है तब यह दो, अस्फुटी, एक-बीजवाले टुकड़ों में फट जाता है। इन टुकड़ों को **एक्सफुटी (मेरिकार्प, mericarp)** कहते हैं। ये मेरिकार्प अक्ष के आगे बढ़े हुए सिरे (carpopore) से जुड़े रहते हैं। शाइजोकार्प अम्बेलिफेरी (*Umbelliferae*) का लक्षणिक-फल (characteristic fruit) है। यह घनियाँ, जीरा, सीफ, गाजर इत्यादि में पाया जाता है।

२. गूदेदार फल (Fleshy Fruit).

गूदेदार फल एक या अनेक कोष्ठक, और एक या अनेक बीजो-युक्त हो सकते हैं। यह सुपीरियर अण्डाशय से भी बन सकते हैं और इन्फोरियर से भी, जिसका प्लेसेंटेशन अक्षवर्ती (axile) या भित्तिलग्न (parietal) होता है। साधारणतया ये फल अस्फुटी होते हैं और ऐसा होने के कारण बीज केवल गूदे के सड़ने के बाद ही अलग हो सकते हैं। ऐसे फलों में बीज केवल पशुओं द्वारा ही बिखरते हैं।

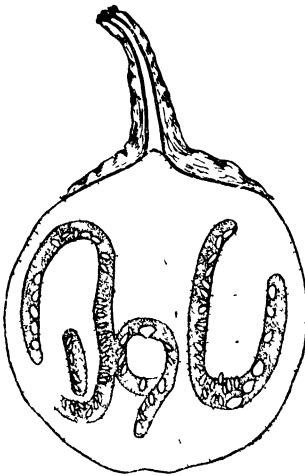
(१) **अष्ठिफल (ड्रूप, Drupe)**. यह एक गूदेदार, एक या अधिक कोष्ठकों का और एक या अधिक बीजो-युक्त फल होता है जो एक कार्पेलवाली या सिनकार्पस पिस्टिल (युक्ताण्डप स्त्रीकेसर) से बनता है। इसकी फलभित्ति तीन भागों में बंटी होती है—बहिर्फलभित्ति, मध्यफलभित्ति और अन्तर्फलभित्ति। बहिर्भित्ति फल का छिलका बनाती है, मध्यभित्ति प्रायः गूदेदार होती है, और अन्तर्भित्ति कठोर और पथरीली (गुठलीदार) होती है। इसी कारण फल को **गुठलीदार फल (stone fruit)** भी कहते हैं, जैसे आम, आड़ू, बेर (चित्र १०.१२), नारियल, ताड़ आदि।



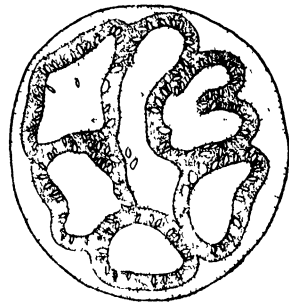
चित्र १०.१२ बेर का अष्ठिफल
(drupe)

(२) **बदरी फल (बक्क या बेरी, Bacca or berry)**. यह सुपीरियर

(कभी-कभी इन्फोरियर), अस्फुटी, प्रायः कई बीजों-युक्त, मांसल या गूदेदार फल होता है, और एक कार्पेलवाले या अधिकतर सनिकार्पस पिस्टिल से उत्पन्न होता है जिसका प्लेसेण्टेशन अक्षवर्ती या भित्तिलग्न होता है। यह टमाटर, रसभरी (gooseberry), अगूर, बगन (चित्र १०.१३), केला, अमरूद और पपीता



(क)

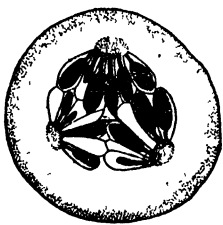


(ख)

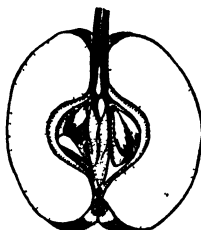
चित्र १०.१३ बँगन का बेरी। (क) अतलम्ब काट में; (ख) अनुप्रस्थ काट में।

आदि में पाया जाता है। बेरी फल में पहले-पहल तो बीज प्लेसेण्टा से जुड़े रहते हैं, परन्तु बाद में वे प्लेसेण्टा से अलग हो जाते हैं और स्वतन्त्र रूप से गूदे में रहते हैं। एक बीजवाला, बेरी भी बहुधा मिलता है, जैसे कि खजूर, कटेली चम्पा (*Artabotrys*) इत्यादि में। बेरी में भी बहिर्भित्ति, मध्यभित्ति और अन्तर्भित्ति पहचाने जा सकते हैं, परन्तु गुठलीदार अन्तर्भित्ति न होने के कारण यह रूप से भिन्न है।

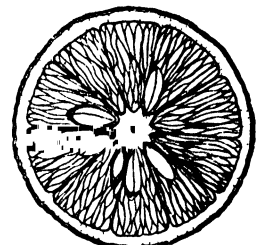
(३) अलायुक फल (पेपो, **Pepo**)। यह भी बेरी के समान मांसल या



चित्र १०.१४



चित्र १०.१५



चित्र १०.१६

चित्र १०.१४ अनुप्रस्थ काट में खीरे का पेपो। १०.१५ मेब का पोम (चित्र १०.१ भी देखिये)। चित्र १०.१६ नारंगी का हस्पिरीडियम।

गूदेदार और अनेक बीजवाला फल होता है, परन्तु यह इन्फीरियर, एक सेलवाले या नकली तीन सेलवाले मिनकार्पस पिस्टिल से बनता है जिसमें प्लेसेण्टेशन भित्तिलग्न होता है। यह कद्दू की फेमिनी (कुकुरबिटैसी, Cucurbitaceae) का मुख्य लक्षण है (चित्र १०.१४)। पेपों में बीज गूदे में दबे रहते हैं और प्लेसेण्टा से जुड़े रहते हैं।

(४) उत्कोलक फल (पोम, **Pome**)। यह एक इन्फीरियर, दो या अधिक कोष्ठको का गूदेदार सिनकार्पस फल होता है और थैलेमस से घिरा रहता है। गूदेदार खाने योग्य भाग थैलेमस का बना होता है और असली फल इसके अन्दर रहता है। इसके उदाहरण सेब (चित्र १०.१५) और नाशपाती में मिलते हैं।

(५) जम्बीरक या नारंगक फल (हस्पिरोडियम, **Hesperidium**)। यह सुपीरियर बहुन-में कोष्ठको का गूदेदार फल होता है, जो सिनकार्पस पिस्टिल से बनता है जिसमें अक्षवर्ती प्लेसेण्टेशन होता है। इसमें अन्तर्भित्ति अन्दर को मूड़ जाती है और इस प्रकार स्पष्ट रूप से गूह या कमरे बन जाते हैं, और बहिर्भित्ति तथा मध्य-भित्ति संयुक्त हो जाती है और फल से आसानी से अलग हो जानेवाला छिलका या बक्कल बनाती है, जैसे कि नारंगी (चित्र १०.१६), नकोतरा, नीबू आदि।

(ख) पुंज फल (Aggregate Fruits)।

पुंज फल एक अकेले फूल से बनता है जिसका पिस्टिल ऐपोकार्पस होता है। स्वतंत्र होने के कारण प्रत्येक कार्पेल एक छोटा-सा साधारण फल (fruitlet) बन जाता है। इस प्रकार एक पुंज फल, अर्थात् बहुत से छोटे-छोटे साधारण फलों का समुदाय होता है—उतने ही फलों का समुदाय जितने स्वतंत्र कार्पेल उस फूल में होते हैं जिससे फल बनता है। इस प्रकार के साधारण छोटे-छोटे फलों के समुदाय को, जो एक फूल से बनता है, समूह फल या इटीरियो (etaerio) कहते हैं। इटीरियो का प्रत्येक छोटा फल एक-सेवनीक (follicle), ऐकीन (achene), अष्ठिकल (drupe) या बदरी फल (berry) हो सकता है। इसके साधारण रूप यह है:

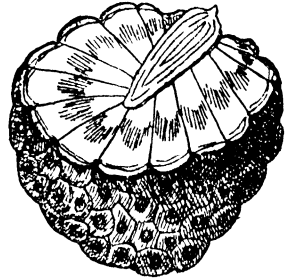
(१) एक-सेवनीक फलों का पुंज फल (An etaerio of follicles)। इस के साधारण उदाहरण, आक या मदार, काकतुण्डी (blood flower, *Asclepias*), नयनतारा (periwinkle) आदि में मिलते हैं। इन फलों में प्रत्येक पुंजफल फॉलिकिल के जोड़े का होता है। लार्कस्पर और कुचला (aconite) में तीन फॉलिकिलों का समुदाय थैलेमस के शिखर पर उत्पन्न होता है और चम्पा (*Michelia*) में बड़े हुए थैलेमस पर बहुत-से फॉलिकिल उत्पन्न होते हैं।

(२) एक बीजास्फुटी फलों का पुंज फल (An etaerio of achenes)। इसके उदाहरण वर्जिन्स बावर (virgin's bower, *Clematis*) और छागलवती (*Naravelia*) में मिलते हैं। इनमें ऐकीन (चित्र १०.९) परदार, चिरलग्न (persistent) कुशिवृन्त-युक्त होते हैं और एक समुदाय में रहते हैं। गुलाब (चित्र ६.६) में ऐकीन एक खोखले गूदेदार थैलेमस में बन्द रहते हैं, स्ट्राबेरी में छोटे-छोटे फल गूदेदार थैलेमस पर लगे रहते हैं, और कमल (चित्र ६.७) में ये चपटे, लट्टू के आकार के स्पंज के समान थैलेमस पर लगे रहते हैं।

(३) अष्ठिकलों का पुंज फल (An etaerio of drupes)। इस

का उदाहरण रैस्पबेरी (raspberry) में मिलता है। इसमें बहुत-से छोटे-छोटे अण्डफल (drupes or druples) जो फूल के विभिन्न अण्डपो (carpels) से बनते हैं, एक गूदेदार थैलेमस पर एकत्रित रहते हैं।

(४) बदरी फलों का पुज फल (Anetaerio of berries). शरीफा या सीताफल (custard-apple) और रामफल (bullock's heart) की बेरी, जो ऐपोकार्पस पिस्टिल से बनती है और गूदेदार थैलेमस में दबी रहती है, एक पृथक् फल के रूप में बढ़ती है। परन्तु कटेली-चम्पा (*Artabotrys*), लेवेण्डर-चम्पा (*Unona*) और देवदारू या पुत्रजीवी (*Polyalthia*) में स्पष्ट और पृथक् बदरी फलों (berries) का एक समुदाय उत्पन्न होता है।



चित्र १०.१७ शरीफा या सीताफल (custard-apple)।

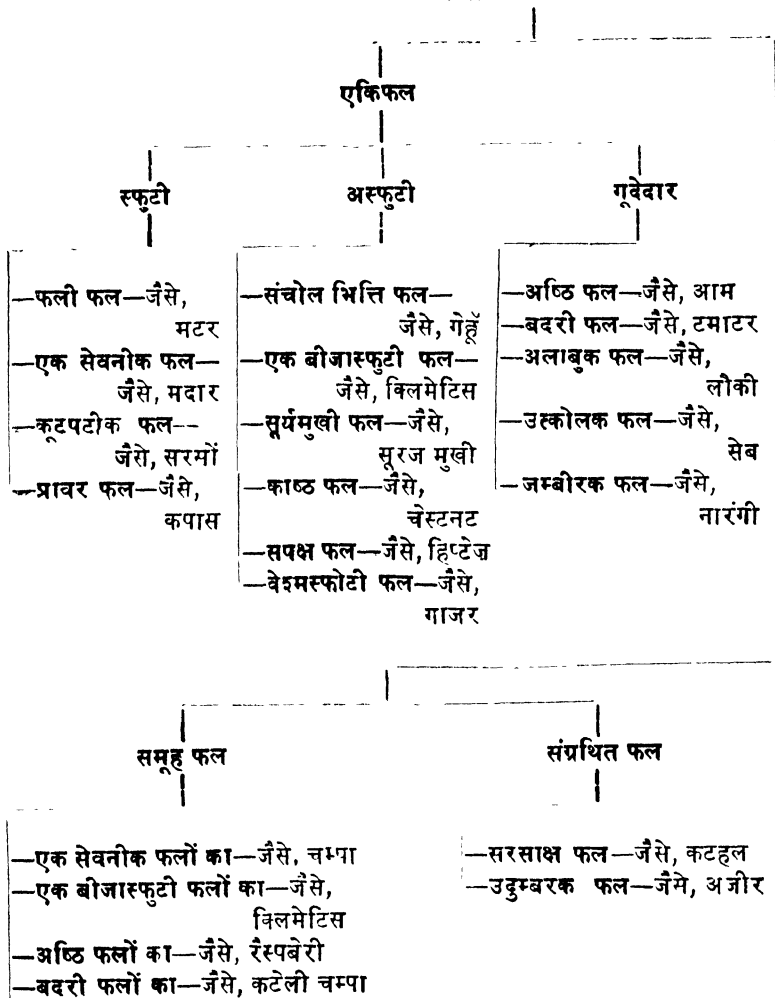
(ग) संग्रथित फल (Multiple or Composite Fruits).

संग्रथित फल वह होता है जो एक ही में गटे बहुत-से फूलों से उत्पन्न होता है, या दूसरे शब्दों में पुरो इन्फ्लोरेसेन्स से उत्पन्न होता है। ऐसे फल को इन्फ्रुक्टेमेन्स (infructescence) भी कहते हैं।

(१) सरसाक्ष फल (सोरोसिस, **Sorosis**). यह एक संग्रथित (multiple) फल होता है जो स्पाइक (spike) या स्पैडिक्स (spadix) से बनता है। फूल अपनी रसदार अखड़ियों की सहायता से संयुक्त हो जाते हैं और इसी समय इनका वृन्त, जिस पर यह फूल लगे होने हैं बढ़ जाता है और गूदेदार या लकड़ी के समान हो जाता है, और परिणाम स्वरूप सारा पुष्प-क्रम (inflorescence) एक ठोस गूदा-सा बन जाता है, जैसे अनन्नास और कटहल। शहतूत भी सोरोसिस है, परन्तु इसमें गूदेदार भाग ढीली-ढीली जुड़ी हुई अखड़ियों का बना होता है।

(२) उदुम्बरक फल (साइकोनस, **Syconus**). साइकोनस (चित्र ७.३) एक खोखले, नाशपाती के आकार के गूदेदार पुष्पासन (receptacle) से बनता है, जिसमें बहुत-से छोटे-छोटे नर और मादा फूल होते हैं। रिसेप्टेकिल बढ़ता है, गूदेदार हो जाता है और इस फल के रूप में परिवर्तित हो जाता है। यथार्थ रूप से इसमें बहुत-से छोटे-छोटे सत्य फल या ऐकीन होते हैं जो रिसेप्टेकिल के अन्दर रहनेवाले मादा फूलों से उत्पन्न होते हैं, जैसे अजीर, बरगद, पीपल, आदि।

फलों का वर्गीकरण



कुछ सामान्य फल और उनके मक्ष्य (Edible) भाग.

अंगूर (बेरी)—फलावरण और प्लेसेण्टी। अमरुद (बेरी)—थैलेमस और फलावरण। केला (बेरी)—मध्यभित्ति और अन्तर्भित्ति। पपीता (बेरी)—मध्यभित्ति। टमाटर (बेरी)—फलावरण और प्लेसेण्टी। खजूर (एक बीजयुक्त बेरी)—फलावरण। बेल (बेरी)—मध्यभित्ति, अन्तर्भित्ति और प्लेसेण्टी। आम (द्रूप)—मध्यभित्ति। हिन्दुस्तानी बेर (द्रूप)—मध्यभित्ति और बहिर्भित्ति। ताड़ (फाइब्रस

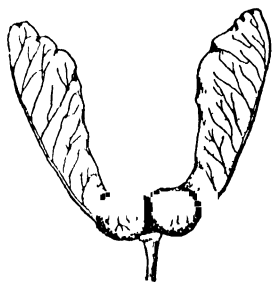
डूप) — मध्यभित्ति। नारियल (फ्राइब्रस डूप) — भ्रूणपोष। तरबूज (पेपो) — मध्य-भित्ति। खीरा (पेपो) — मध्यभित्ति, अन्तर्भित्ति और प्लेसेण्टी। नारंगी (हस्परीडियम) — सरस प्लेसेण्टल रोम। चकोतरा (हस्परीडियम) — सरस प्लेसेण्टल रोम। सेब (पोम) — गूदेदार थैलेमस। नाशपाती (पोम) — गूदेदार थैलेमस। काजू (नट) — पेडिंकल और बीजपत्र। लीची (एक बीजयुक्त नट) — गूदेदार ऐरिल। मटर (लैग्यूम) — बीजपत्र। चावल, मक्का, गेहूँ और ज्वार (कैरिऑपसिस) — स्टाच्युक्त भ्रूणपोष। शरीफा (बेरीज का समूह फल) — व्यक्तिगत बेरीज की गूदेदार फलावरण। अंजीर (साइकोनस) — मासल रिसेप्टेकिल। अनन्नास (सोरोसिस) — रिसेप्टेकिल का बाहरी भाग, ब्रैक्ट्स और पेरियन्थ। कटहल (सोरोसिस) — ब्रैक्ट्स, पेरियन्थ और बीज। स्ट्राबेरी (ऐकीन्स या नट्स का समूह फल) — रसदार थैलेमस। अनार (विशेष) — बीज का बाहरी रसदार भाग। डिलेनिया (विशेष) — अक्रीसेण्ट (acerescent) बाह्यदलपुज।

बीजों और फलों का विकिरण (Dispersal of Seeds and Fruits)

अगर बीज और फल सीधे मातृ-पौधे के नीचे गिरकर वही उगते हैं तो मिट्टी के आवश्यक पोष्टिक पदार्थ व्यय कर देते हैं। ऐसी दशा में उन्हें स्थान और धूप की भी कठिनाई का बहुत अधिक अनुभव होता है। इस प्रकार भोजन और प्रकाश की खोज में एक प्रकार का जीवन-संघर्ष होने लगता है जो पौधे के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। इस प्रकार की और अन्य घटनाओं से रक्षा करने के लिए पौधे विभिन्न प्रकार के साधन उत्पन्न कर लेते हैं जो बीजों को दूर-दूर तक बिखेरने का कार्य करते हैं। दूसरी बात यह है कि यदि बीज और फल दूर-दूर तक बिखर जायें तो बहुत सम्भव है कि उनमें कम से कम कुछ अकुरण और वृद्धि की सहायक परिस्थिति पा जायें।

(क) वायु द्वारा बीजों और फलों का विकिरण.

बीज और फलों में बहुत-से ऐसे अनुकूलन (adaptations) होते हैं जो उन्हें वायु द्वारा मातृ पौधे से कुछ या काफी दूर तक बिखर जाने में सहायता देते हैं।



[After Maud Jepson]

चित्र ११.१



चित्र ११.२

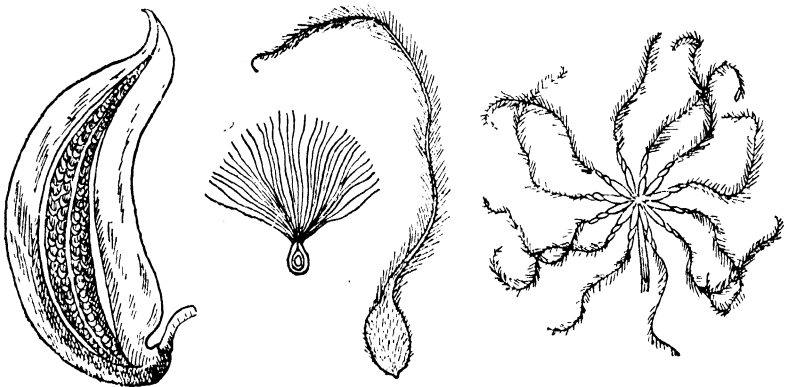
चित्र ११.१ Acer का पंखदार फल। चित्र ११.२
कम्पोजिटी कुल का पैपस।

(१) पंख (Wings). माधवीलता (*Hiptage*) के फल पंख के रूप में उपांग (appendages) उत्पन्न कर लेते हैं (चित्र ११.१) जो उन्हें वायु में तैरने में और इस प्रकार बिखरने में सहायता देते हैं। साल (*Shorea*) और गरजन (*Dipterocarpus*) में अखड़ियाँ सूखी और चिरलन होती हैं और पंख का काम करती हैं और इस प्रकार वायु द्वारा फल के बिखरने में सहायता करती हैं। अर्लू (*acer*, *Oroxylum*),

सैजन (horse radish), टेकोमा (*Tecoma*), हंसलता या पेलिकन फलावर (*Aristolochia gigas*) आदि भी पख के समान चौड़े उपागो से युक्त होते हैं। जब फल फटता है तो ये बीज हवा द्वारा उड़ा ले जाये जाते हैं।

(२) वायुछत्र रचना (**Parachute mechanism**). कम्पोज़िटी फेमिली के बहुत-से पेड़ों में बाह्यदलपुज बाल के समान आकृतियों में रूपान्तरित हो जाता है जिन्हें पैपस (**pappus**) कहते हैं (चित्र ११.२)। पैपस फूल में चिरलग्न (**persistent**) रहता है और एक छाते के समान खुलता है। जैसे ही फूल पितृ-पौधे से अलग होता है, पैपस एक पैराशूट का काम करता है और उसे हवा में तैरने में सहायता करता है। कभी-कभी फल वायु द्वारा बहुत दूर तक ले जाय जाते हुए भी पाये गये हैं।

(३) समुच्छल रचना (**Censer mechanism**). कुछ पौधों के बीज केवल फल के स्फुटन के बाद ही वायु द्वारा बिखर सकते हैं। ऐसी दशाओं में बहुधा बीज फूल से उस समय तक नहीं झड़ते जब तक फल वायु द्वारा न झकझोरा जाय। इस प्रकार पोस्ता (poppy), भरभण्डा या करुआ (prickly poppy, *Argemone*), दुण्डुल (bath sponge), हंसलता या पेलिकन फलावर (*Aristolochia gigas*) आदि में फल फट जाते हैं और जब उन्हें वायु छेड़ती है तभी उनके बीज बाहर झड़ पाते हैं।



चित्र ११.३

चित्र ११.४ चित्र ११.५

चित्र ११.६

चित्र ११.३ मदार का स्फुटी फल (फॉलिकिल)। चित्र ११.४ उसी का रोम-युक्त बीज। चित्र ११.५ किनमेटिस का फल जिसमें चिरलग्न परदार कुक्षिवृन्त है। चित्र ११.६ चिरलग्न परदार कुक्षिवृन्तो सहित न्नागलवती (*Naravelia*) के फल।

(४) बाल (**Hairs**). आक या मदार (*Calotropis*), कपास, बन्ड-फलावर (*Asclepias*) आदि के बीजों में बाल होते हैं (चित्र ११.४), जो उनके वायु द्वारा बिखरने में सहायता करते हैं।

(५) चिरलग्न कुक्षिवृन्त (**Persistent styles**). वर्जिन्स बावर (*Clematis*) और न्नागलवती (*Naravelia*) आदि में कुक्षिवृन्त चिरलग्न और

‘परदार’ होते हैं (चित्र ११.५, ११.६)। इस प्रकार फल वायु द्वारा आसानी से ले जाये जाते हैं।

(६) हल्के बीज और फल (Light seeds and fruits). कुछ बीज और फल इतने हल्के और आकार में छोटे होते हैं कि वायु के हल्के से झोके से ही उड़ सकते हैं। वनस्पति जगत में ऑर्किड्स के बीज सबसे छोटे होते हैं। उनमें करोड़ों धूल के कण के समान बीज कैप्सूल में उत्पन्न होते हैं और इनका आकार इतना छोटा होता है और भार इतना हलका होता है कि हवा के झोके से यह धूल के कण के समान उड़ सकते हैं। कुछ घासों के बीज (फन) भी बहुत छोटे और हल्के होते हैं। मिन-कोना (*Chunchona*, जिसमें quinine मिलती है) के बीज भी बहुत छोटे और बहुत ही हल्के होते हैं तथा झिल्लीदार पंखयुक्त होते हैं। एक औंस में इसके ७०,००० बीज होते हैं।

(ख) जल द्वारा बीजों और फलों का विकिरण.

जिन बीजों और फलों को पानी द्वारा बिखरना होता है, वे प्रायः तैरने के साधन उत्पन्न कर लेते हैं। यह साधन स्पंज के समान या रेशेदार बाहरी छद होते हैं। नारियल के रेशेदार फल समुद्र के पानी में काफी दूर तक बह जाते हैं और इन्हें किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचती। अतः नारियल समुद्री किनारों और समुद्री द्वीपों की मुख्य वनस्पति है। यहाँ हालत दोहरे नारियल (double coconut, *Lodoicea*) की है जो सिकेली (Seychelles) प्रदेश का निवासी है। इस पौधे में सबसे बड़े बीज होते हैं और फल को पकने में दस साल लगते हैं। इसके फल, पेड़ का पता लगने से काफी पूर्व ही हिन्द महासागर में बहते हुए पाये गये थे। कमल (चित्र ६.७) में थैलेमस स्पंज के समान होता है और फल उसके अर्धगोलाकार शिखर पर लगते हैं। यह पानी में बहता रहता है और वायु या पानी की तेज धारा से आगे बह जाता है। कुछ समय बाद थैलेमस सड़ जाता है और फल अलग हो जाते हैं। यह डूब जाते हैं और पेदी (bottom) में जाकर समय से उग जाते हैं। कभी-कभी बीज छोटे और हल्के होते हैं और पानी पर तैर सकते हैं, जैसे वाटर लिली के बीज। यह भी ऐरिल (aril) रखते हैं जिसमें हवा भरी रहती है। जब फल फटता है तो बीज पानी पर तैरने लगते हैं। नदी के किनारे उगनेवाले पेड़ों के फल और बीज बराबर पानी की धारा द्वारा ही ले जाये जाते हैं।

(ग) विस्फोटक (Explosive) फलों द्वारा बीजों का विकिरण.

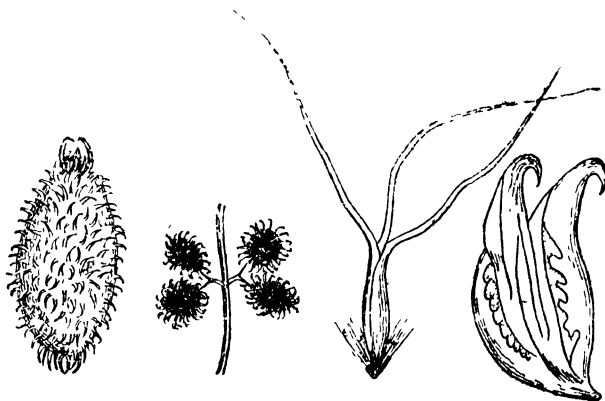
बहुत-से फल आकस्मिक झटके के साथ फटते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बीज पितृ-पौधे से कुछ गज की दूरी पर गिरते हैं। विस्फोटक फलों के साधारण उदाहरण, गुल-मेहदी (balsam), खट्टी पत्ती (wood sorrel), हरसिंगार (night-jasmine) रेडी आदि में मिलते हैं। गुलमेहदी के पके हुए फल छूने ही एकाएक फट जाते हैं। इनकी कपाटियाँ (valves) अन्दर की सिमट जाती हैं और बीज तेज झटके के साथ बाहर निकल कर सभी दिशाओं में बिखर जाते हैं।

एकैन्थेसी (Acanthaceae) फेमिली के बहुत-से पौधों में विस्फोटक फल होते हैं जो लचक के साथ शिखर में आधार तक फट जाते हैं। इसी प्रकार रुएलिया (*Ruellia*), महतीता (*Andrographis*), वज्रदन्ती (*Barleria*), हरगोजा (*Acanthus*) आदि के पके फल नमी के सम्पर्क में आते ही तेजी से दो कपाटियों में फट जाते हैं और उनमें से बीज बहुत तेजी से बाहर निकल जाते हैं। एकैन्थेसी (Acanthaceae) कुल की बहुत-सी जातियों के बीजों में जैकुनेटर (juculators) या मुड़े हुए अकुश लगे रहते हैं जो सीधे हो जाते हैं और उनके बाहर बिखरने में सहायता करते हैं। तेज धूप के दिन फ्लॉक्स (*Phlox*) के मूखे फूलों के चटखने की आवाज फ्लॉक्स (*Phlox*) की वयारियों में स्पष्ट रूप से सुनाई देती है।

फटनेवाले फलों का एक रोचक उदाहरण लता कंचन या क्लाइम्बिंग माउण्टेन एबोनी (*Bauhinia vahli*) में मिलता है। इसके लम्बे 'पाँड' (फल) जो कभी-कभी एक फुट से भी अधिक लम्बे होते हैं तेज आवाज के साथ फटते हैं और बीजों को चारों ओर बिखेर देते हैं।

(घ) जन्तुओं द्वारा बीजों और फलों का बिखरना.

बहुत-से बीजों और फलों के शरीर पर अकुश, काटे, नोके, शल्य, सख्त बाल और चिपकनेवाली ग्रन्थियाँ होती हैं जिनकी सहायता से वे ऊनवाले पशुओं और आदमियों के कपड़ों में भी चिपक जाते हैं और मातृ पौधे से बहुत दूर चले जाते हैं। ओकरा (cockle-bur, *Xanthium*) में (चित्र ११.७) और बन ओकरा (*Urena*) में (चित्र ११.८) के फल बहुत-से मुड़े अकुशों से युक्त होते हैं और स्पियर घास (*Aristida*)



चित्र ११.७

चित्र ११.८

चित्र ११.९

चित्र ११.१०

चित्र ११.७ ओकरा (*Xanthium*) का फल जिसमें मुड़े हुए अंकुश हैं।
 चित्र ११.८ बन ओकरा (*Urena*) का फल जिसमें वक्र (मुड़े हुए) अंकुश हैं।
 चित्र ११.९ आधार पर कड़े बालों सहित स्पियर घास का बीज (फल)।
 चित्र ११.१० बाघ-नखी का अंकुश-युक्त फल।

मे (चित्र ११.९) और चार काटा (love thorn, *Andropogon*) मे पीछे की ओर मुड़े हुए कड़े बाल होते हैं जो इसी काम के लिए होते हैं। दुआ-कुआ (*Pupalia*) इस प्रकार के वितरण का एक बहुत अच्छा उदाहरण है। इसके फूल छोटे होते हैं और झुण्डो मे उगने हैं। बाहरी (imperfect) फूलों के पेरियन्थ भाग अंकुशी दृढ़ बालों मे बदल जाते हैं जो बाहर की ओर फैल जाते हैं। पशुओं द्वारा फलों के बिखरने मे यह हुकदार नाकें बहुत सहायता देती हैं। बाघनखी (*Martynia*) के बीज मे (चित्र ११.१०) दो बहुत तेज नुकीले, कड़े और मुड़े हुए अंकुश होते हैं जिनकी सहायता से यह बालदार पशुओं के शरीर मे सुगमता से उलझ जाता है और इस प्रकार बिखर जाता है। लटजीरा (*Achyranthes*) के फल जिनके ब्रैक्ट तेज होते हैं और पेरियन्थ पत्तियाँ भी तेज होती हैं, तथा मन्त (*Boerhaavia*) और चित्रक (*Plumbago*) के फल, जिनमे चिपकनी ग्रन्थियाँ होती हैं, भी इसी प्रकार पशुओं द्वारा बिखरते हैं। गोखरी काटा (*Tribulus*) के फलों पर तेज, दृढ़ स्पाइन होते हैं, जिनके द्वारा यह खुरदार जन्तुओं के पैरों मे चिपक जाते हैं और आसानी से बिखर जाते हैं।

बहुत-से मांसल फलों के बीज और विशेषकर रंग-बिरंगे बीज चिड़ियों द्वारा चारों ओर वितरित कर दिये जाते हैं। चिड़ियाँ गूदेदार फल, जैसे अमरूद, अगूर, अजीर आदि खाती हैं और अपच बीज उनके मल के साथ बाहर निकल आते हैं। यह बीज तब उगने लगते हैं। अजीर, बरगद और पीपल साधारण रूप से खजूर के तनों पर उगते हुए पाये जाते हैं। इन सब जगह बीज चिड़ियों और गिलहरियों द्वारा छोड़ दिये गये हैं। मिसिल्टो (*Viscum*) मे, जो आम और अन्य पेड़ो पर अर्ध-परजीवी है, बीज बहुत चिपकनेवाले (sticky) होते हैं और उन चिड़ियों की चोंच पर सुगमता से चिपक जाते हैं जो इन्हे या इनके फलों को खाने आती हैं। चिड़ियाँ अपनी चोंच किसी पेड़ की शाखा पर रगड़ कर साफ करती हैं और इस प्रकार बीज फिर उस पर चिपक जाते हैं और अनुकूल परिस्थितियों मे जम जाते हैं। बहुत-सी चिड़ियों के (जो अपनी मे चलती हैं या इनमे नहाने जाती हैं) शरीर पर जलवाले पीधों के बीज और फल चिपक जाते हैं और एक तालाब से दूसरे तालाब तक चले जाते हैं। इसी तरह यह फल भी एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाती हैं। गीदड़ खजूर और बेर आदि खाते हैं और बीज उनकी पाचन नली (alimentary canal) मे बाहर निकलने के पश्चात् जमने लगते हैं। चमगादड़ और गिलहरियाँ भी बीजों और फलों को बिखरने के अच्छे साधन हैं। खाने योग्य फलों के या सुन्दर फूलों के, या दवाई मे काम आनेवाले अथवा दूसरे आर्थिक महत्त्व के पीधे मनुष्य जातिके द्वारा भी वितरित हो जाते हैं।

भाग २

आणैतकी

(हलस्टॉलॉऑी, **Histology**)

कोशा (The Cell)

ऐतिहासिक विवरण. हिस्टॉलॉजी का अध्ययन सबसे पहले सन् १६६५ में रॉबर्ट हुक (Robert Hooke) नामक एक अंग्रेज़ ने किया। उन्होंने बोटल के काग (bottle cork) की एक पतली फाक (slice) ली और उसकी आन्तरिक रचना का अध्ययन एक सूक्ष्मदर्शी (microscope) की सहायता से किया। बोटल के काग में पहले-पहल उन्होंने मधुमक्खी के छत्ते के सदृश एक रचना देखी और उन्होंने इस रचना के प्रत्येक व्यक्तिगत खोखले विवर (hollow cavity) का नाम कोशा (cell) रखा।

सन् १८३८ में दो जर्मन वैज्ञानिकों, श्लीडन (Schleiden) और श्वान (Schwann), ने इस ओर प्रयास किया। श्लीडन वनस्पति-विज्ञान का पण्डित था और श्वान प्राणी-विज्ञान का। उन्होंने यह साबित कर दिया कि वनस्पति और जीव-जन्तु दोनों की अन्दरूनी बनावट कोशावान् (cellular) है। उन्होंने यह भी बतलाया कि जीवित ऊति (living tissue) की हर कोशा में जो पदार्थ भरा होता है वह अर्ध-तरल (semi-fluid) तथा दानेदार (granular) होता है। वनस्पति कोशा के अन्दर भरे हुए इस दानेदार पदार्थ का नाम फ़ॉन मोल (Von Mohl) ने सन् १८४६ में प्ररस (protoplasm) रखा।

कोशा के अन्दर एक नाभिक (न्यूक्लियस, nucleus) होता है, इस बात का पता सबसे पहले सन् १८३१ में राबर्ट ब्राउन ने लगाया। फिर भी, इसका सन्तोषजनक विवरण सबसे पहले १८८० में स्ट्रामबर्गर (Strasburger) ने दिया।

पेड़-पौधों का शरीर बहुत सारे छोटे-छोटे स्वतंत्र कमरों (विवरों) या इकाइयों का बना होता है। प्रत्येक विवर एक दीवार द्वारा घिरा होता है तथा इसमें एक सूक्ष्म दानेदार, अर्ध-तरल, पारदर्शक (हाएलिन, hyaline) पदार्थ भरा रहता है। इस पदार्थ के अन्दर एक और वस्तु दबी (embedded) होती है जो घनत्व के लिहाज़ से उससे अधिक घनी, और आकार में गोलाकार या अण्डाकार होती है। ये विवर या इकाइयाँ बहुत कुछ शहद के छत्ते के कमरों (कोशाओं) की तरह ही होती हैं। इसलिए इनको भी कोशाओं (cells) के नाम से पुकारा जाता है। चूँकि पौधे का पूरा शरीर इन्हीं कोशाओं का बना होता है, अतः ये कोशाएँ पौधों की रचनात्मक इकाइयाँ हैं। इसके अलावा प्रत्येक कोशा पौधे की एक छोटी प्रयोगशाला है जहाँ तमाम जीवन-सम्बन्धी क्रियाएँ हो रही हैं; अतः हम एक कोशा की परिभाषा इस रूप में कर सकते हैं कि यह पौधे की रचनात्मक और कार्यात्मक इकाई (structural and functional unit) है। कोशा को जो दीवार घेरे रहती है, वह कोशा-भित्ति (cell-wall) कहलाती है, और सूक्ष्म-दानेदार, अर्ध-तरल, पारदर्शक पदार्थ जो कोशा-विवर को भरे रहता है प्ररस कहलाता है तथा अधिक घनी और गोलाकार

वस्तु नाभिक (nucleus) कहलाती है। प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) ही वनस्पति तथा जीव-जन्तुओं का वास्तविक जीवित पदार्थ है, और प्रत्येक इकाई, या नाभिक सहित प्ररस की स्वतंत्र मात्रा (independent mass of protoplasm), प्ररसक (protoplast) कहलाती है। नाभिक की प्रकृति भी प्रोटोप्लाज्मिक होती है। अतः प्रोटोप्लास्ट जीवन की इकाई है, अर्थात् पौधे के शरीर की वास्तविक कार्यात्मक (physiological) इकाई है, और प्रोटोप्लाज्म वह पदार्थ है जिसमें प्रोटोप्लास्ट के भिन्न-भिन्न अंग सम्मिलित हैं। या यों कहिये कि प्रोटोप्लास्ट के भिन्न-भिन्न अंग जिस पदार्थ के बने हुए हैं वह पदार्थ प्रोटोप्लाज्म है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वनस्पति कोशा दो वस्तुओं की बनी होती है :

१. प्रोटोप्लाज्म जो उसका जीवित भाग है, तथा

२. कोशा-भित्ति, जो प्रोटोप्लाज्म के चारों ओर एक ढाँचा बनाती है। यह ढाँचा प्रोटोप्लास्ट की आकृति तथा दृढ़ता को कायम रखता है और उसकी आवश्यक रक्षा भी करता है।

पूर्ण विकसित कोशा का आकार, चाहे वह गोलाकार हो या बहुभुजाकार, औसत रूप से कम से कम $\frac{1}{16}$ मिलीमीटर, और अधिक से अधिक $\frac{1}{8}$ मिलीमीटर तक होता है। यद्यपि बहुत-से ऐसे भी सेल पाये गये हैं जिनका आकार २०० मिलीमीटर तक होता है और ऐसे भी जिनका आकार $\frac{1}{16}$ मिलीमीटर। फिर भी जैसे-जैसे उनमें वृद्धि होती जाती है उनकी आकृति तथा आकार में अन्तर आता जाता है।

जीवित कोशान्तर्वस्तुएँ (Living Cell-contents)

१. प्ररस (Protoplasm).

प्रोटोप्लाज्म (*protos*—पहली; *plasma*—आकृति) वनस्पति तथा जीव-जन्तुओं का जीवित भाग होता है। केवल यही ऐसा पदार्थ है जिसमें जीवन रहता है और ऐसे सभी पौधे और जन्तु, जिनमें यह पदार्थ रहता है, जीवित होते हैं। प्रोटोप्लाज्म द्वारा ही सारे जीवन-सम्बन्धी कार्य सम्पन्न होते हैं, जैसे वृद्धि, पोषाहार, भोजन का निर्माण, श्वसन क्रिया, प्रजनन इत्यादि। जब प्रोटोप्लाज्म मर जाता है यानी उसकी जीवन-ज्योति समाप्त हो जाती है, तो कोशा ऊपर लिखे जैविक कार्यों में से कोई भी नहीं कर सकती। इसलिए प्रोटोप्लाज्म जीवन का भौतिक आधार है।

भौतिक आकृति. प्रोटोप्लाज्म एक स्वच्छ, फेनयुक्त, लस-लसा, जेलीनुमा (jelly-like) अर्ध-तरल और कुछ दानेदार पदार्थ होता है। इसमें पानी की मात्रा बहुत अधिक हो जाती है—९० प्रतिशत या इससे भी अधिक—और यह पानी से संपृक्त (saturated) रहता है। जब इसमें पानी कम हो जाता है तो इसकी जैविक क्रियाशीलता भी कम हो जाती है, यहाँ तक कि एक अवस्था ऐसी आती है कि क्रियाशीलता बिल्कुल रुक जाती है, जैसा कि सूखे बीजों में होता है। गर्म करने पर प्रोटोप्लाज्म जम जाता है और जब यह मर जाता है तो इसकी पारदर्शकता समाप्त हो जाती है।

प्रोटोप्लाज्म बाह्य उद्दीपनों (external stimuli) के लिए सवेदनशील (responsive) होता है। यह बाह्य उद्दीपन, जैसे सुई या पिन की नोक से छेड़ना, धक्का (shock), कुछ विशेष प्रकार के रासायनिक पदार्थों का समावेश कराया जाना, अथवा प्रकाश या ताप का एकाएक कम या ज्यादा कर दिया जाना, इत्यादि

है। उद्दीपित करने पर प्रोटोप्लाज्म सिकुड़ने लगता है; परन्तु उद्दीपन-कारक (stimulating agent) के हटाने ही वह फिर फैलने लगता है। यह संवेदनशीलता (contractibility), जिसमें सिकुड़ना तथा फैलना दोनों शामिल हैं, प्रोटोप्लाज्म की जन्म-जात (inherent) प्रवृत्ति है।

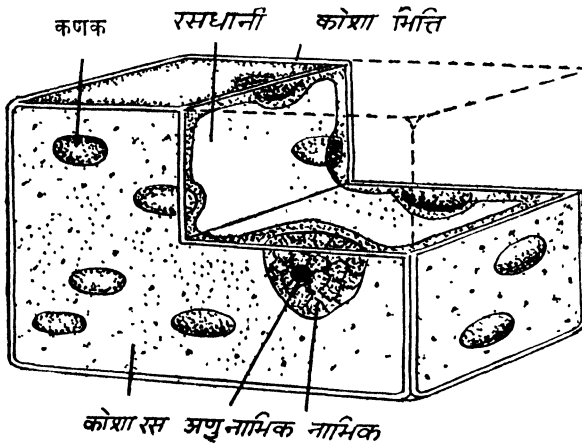
प्रोटोप्लाज्म की प्रकृति अर्ध-प्रवेश्य (semi-permeable) होती है। इसका मतलब यह हुआ कि केवल कुछ वस्तुएं ही उसमें प्रवेश पा सकती हैं, बाकी नहीं। परन्तु प्रोटोप्लाज्म की मृत्यु हो जाने पर उसका यह गुण समाप्त हो जाता है।

रासायनिक प्रकृति. रासायनिक दृष्टि से प्रोटोप्लाज्म एक अत्यन्त जटिल यौगिक है जिसमें खासतौर पर प्रोटीड्स (proteids) होते हैं और साथ में कुछ और क्रिस्म के रासायनिक यौगिक होते हैं। प्रोटोप्लाज्म की ठीक-ठीक रचना (composition) स्थापित नहीं की जा सकती, क्योंकि इसकी बनावट कभी एक-सी नहीं रहती, हर समय बदलती रहती है। साथ ही साथ इसमें सदा ही अनेक बाह्य पदार्थ उपस्थित रहते हैं। इस कारण प्रोटोप्लाज्म कभी भी स्वच्छ और निर्मल अवस्था में नहीं पाया जा सकता। यह भी याद रखने की बात है कि अगर प्रोटोप्लाज्म का विश्लेषण करने का प्रयत्न किया जाय तो यह नष्ट हो जाता है और इसके अन्दर कुछ रासायनिक परिवर्तन हो जाते हैं। फिर भी यह ज्ञात है कि इसमें पानी की मात्रा बहुत अधिक होती है। अगर इसका तमाम पानी भाप बना कर उड़ा दिया जाय और बचे हुए अवशेष का विश्लेषण किया जाय तो पता लगेगा कि इसमें अधिकतर प्रोटीड्स हैं जिनकी मात्रा ४० से ६५ प्रतिशत तक होती है। प्रोटीड्स की रचना में कार्बन (C), हाइड्रोजन (H), ऑक्सीजन (O), नाइट्रोजन (N), गन्धक (S) और कभी-कभी फॉस्फोरस (P) भी भाग लेते हैं। प्रोटोप्लाज्म की रचना में प्रोटीड्स के अलावा जो और वस्तुएं होती हैं उनमें कार्बोज (कार्बोहाइड्रेट्स, carbohydrates), चर्बी तथा तेल (fats and oils), अनेक अकार्बनिक लवण, जैसे पोटेशियम नाइट्रेट (KNO_3) मुख्य रूपसे सदा उपस्थित रहते हैं। इसके अतिरिक्त यदि प्रोटोप्लाज्म का दहन किया जाय तो उसकी बची हुई राख में कुछ धातुएं मिलेंगी जिनमें पोटेशियम (K), मैग्नीसियम (Mg), और लोहा (Fe) प्रमुख हैं। इनके अलावा अक्सर कुछ और धातुएं भी उपस्थित रहती हैं। प्रोटोप्लाज्म का स्वभाव क्षारीय (alkaline) है। कभी-कभी लिटमस पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता (neutral); किन्तु यह अम्लीय (acidic) कभी नहीं होता।

प्रयोग. (क) आयोडीन (Iodine) के घोल के साथ मिलाने पर प्रोटोप्लाज्म भूरापन लिए हुए पीले रंग का हो जाता है। (ख) हल्के कास्टिक पोटाश (KOH) में प्रोटोप्लाज्म घुलनशील है। (ग) 'मिलन्स रीएजेंट' (Millon's reagent, यानी nitrate of mercury) के साथ मिलाने पर प्रोटोप्लाज्म का रंग लाल ईंट (brick-red) सा हो जाता है। गर्म करने पर यह प्रतिक्रिया जल्दी हो जाती है।

कोशारस और रसधानी (Cytoplasm and vacuole). एक साधारण वनस्पति कोशा का प्रोटोप्लाज्म दो भागों का बना होता है (क) कोशा के अन्दर का सारा प्रोटोप्लाज्म जिसे कोशा-प्ररस (cell-protoplasm) या कोशारस (cytoplasm) कहते हैं, तथा (ख) अधिक घनत्व का गोला आकृतिवाला प्रोटोप्लाज्म का विशिष्ट पुंज जिसे नाभिक (nucleus) कहते हैं। कोशा की तरुणावस्था में कोशारस न्युक्लियस और कोशा-भित्ति के बीच के स्थान को भरे रहता

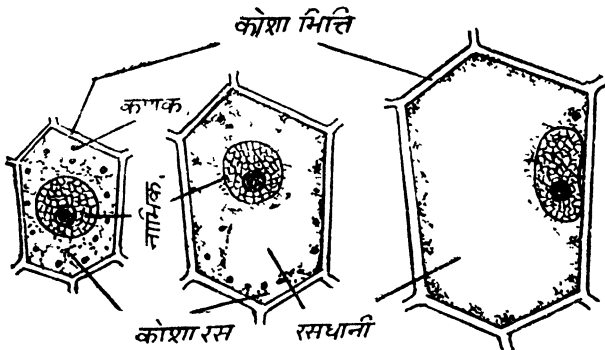
है। इसके दो भाग होते हैं, एक भीतरी जो पारदर्शक (शीशानुमा) और दानेदार होता है और दूसरा बाहरी जो पारदर्शक तो होता है परन्तु दानेदार नहीं होता;



[After Hylander and Stanley]

चित्र १२.१ एक वृक्ष-कोशा का सामान्यित उद्रेखण (generalized drawing)।

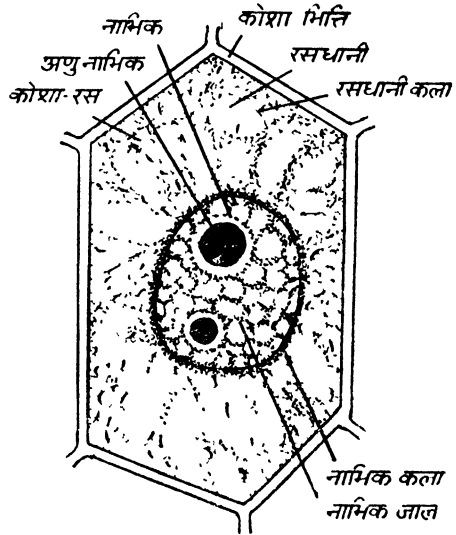
हालांकि वह भीतरी भाग से अधिक गाढ़ा होता है। बाहरी भाग को बहिर्कोशारस (एक्टोप्लाज्म, **ectoplasm**; *ektos*—बाहरी) या एक्टोप्लास्ट (**ectoplast**) कहते हैं; और भीतरी भाग को अन्तर्कोशारस (एण्डोप्लाज्म, **endoplast**)



चित्र १२.२ अपने आकार में वृद्धि और रसधानियों का विकास दिखाती हुई तरुण और परिपक्व कोशाएँ।

plasm) या एण्डोप्लास्ट (**endoplast**)। बहिर्कोशारस काफी महत्वपूर्ण तह है जो पानी और दूसरे पदार्थों के आवागमन को नियंत्रित करता है। सूक्ष्मदर्शी के द्वारा देखने पर प्रायः हमें कोशारस में अनेक नन्हें-नन्हें दाने (**granules**) दिखाई देते हैं,

जिनकी प्रकृति अभी तक अस्पष्ट है। इनको माइक्रोसोम (microsome) कहते हैं। तरुण कोशा में अन्दर की सारी जगह कोशारस द्वारा भरी रहती है, लेकिन जैसे-जैसे कोशा का आकार बढ़ता है विभिन्न आकारो के अनेक रिक्त स्थान कोशा के अन्दर पैदा हो जाते हैं। जिन्हे रसधानी (vacuoles) कहते हैं। जैसे-जैसे कोशा बढ़ती जाती है, ये छोटे-छोटे वैक्युओल आपस में मिल जाते हैं और एक बड़ा वैक्युओल बन जाता है। यह बड़ा वैक्युओल परिपक्व कोशा के पूर्ण केन्द्रीय भाग को घेर लेता है और कोशा-भित्ति के अन्दर की ओर केवल एक पतली तह के रूप में ही रह जाता है। न्यूक्लियस और कणक (plastid) भी इसी तह में दबे रहते हैं (चित्र १२.१); या फिर साइटो-



[Redrawn from Hill]

चित्र १२.३ बहुत-सी छोटी-छोटी रसधानियों से युक्त एक कोशा।

प्लाज्म पतले-पतले नाजुक धागो का रूप ग्रहण कर लेता है जो कोशा-भित्ति के अन्दर की ओरवाली तह से न्यूक्लियस तक फैले रहते हैं और कभी-कभी न्यूक्लियस कोशा के विवर (cavity) में इन धागो द्वारा लटका हुआ रहता है (चित्र १२.३) ऐसी दशा में अनेक छोटी-छोटी रसधानियाँ (vacuoles) कोशा में साइटोप्लाज्मिक धागों के बीच प्रकट हो जाती हैं। वैक्युओल रिक्त नहीं होता, बल्कि इसमें एक तरल पदार्थ भरा होता है जिसे रसधानी-रस या केवल धानी रस (cell-sap) कहते हैं। कोशा की युवावस्था में धानीरस साइटोप्लाज्म में जाता रहता है (permeates)। बहुत-से रासायनिक यौगिक या तो सेल-सैप में घुले रहते हैं या उनमें अवलम्बित रहते हैं (in state of suspension)। इस प्रकार वैक्युओल को हम पानी, कुछ खनिज लवणों और भोज्य-पदार्थों तथा विकरों (enzymes) का भण्डार-घर कह सकते हैं। साइटोप्लाज्म की वह तह जो वैक्युओल से सम्बन्धित रहती है और उसको एक झिल्ली की तरह बाँधे रहती है, रसधानी कला (टोनोप्लास्ट, tonoplast) कहलाती है। (चित्र १२.३)।

प्ररस की गतियाँ (Movements of protoplasm). प्रोटोप्लाज्म में चलने-फिरने की क्रिया कई प्रकार से होती है। छाद-रहित प्रोटोप्लाज्म में, जिसको कोशा-भित्ति न घेरे हुए हो, दो प्रकार की क्रियाएँ होती हैं—सिलियरी (ciliary) और अमीबॉइड (amoeboid)। कोशा-भित्ति से घिरे हुए प्रोटोप्लाज्म में एक

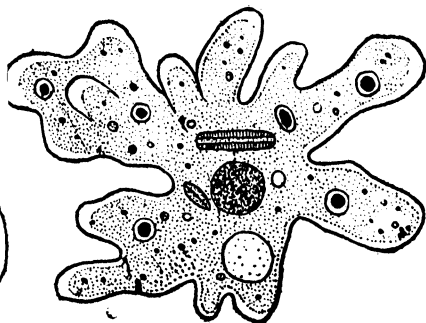
प्रकार की बहते रहने की क्रिया (streaming movement) होती है जिसे रस-भ्रमण (syclosis) कहते हैं। साइक्लोसिस दो प्रकार से होती है—परिभ्रमण (rotation) और परिवाही भ्रमण (circulation)।

(१) सिलियरी गति (Ciliary movement). छोटे-छोटे स्वतंत्र, छादहीन प्रोटोप्लाज्मिक शरीरों के तैरते रहने को सिलियरी गति का नाम दिया गया है (चित्र १२.४)। इस प्रकार की गति बहुत-से एल्गी और फंजाई के चल-बीजाणुओं (जूसपोर्स, zoospores), जीवाणु (bacteria), मॉस (moss) तथा फर्न्स (ferns) के चलपुञ्ज्युओं (antherozoids) इत्यादि के द्वारा होती है। इन प्रोटोप्लाज्मिक शरीरों को तैरने में सहायता देने के लिए एक या एक से अधिक विशेष घागे होते हैं जो चाबुक की आकृति के होते हैं। इन्हें पक्ष्म (सिलिया,



[After Hylander & Stanley]

चित्र १२.४ सिलियरी गति।



[After Haupt]

चित्र १२.५ अमीबॉइड गति।

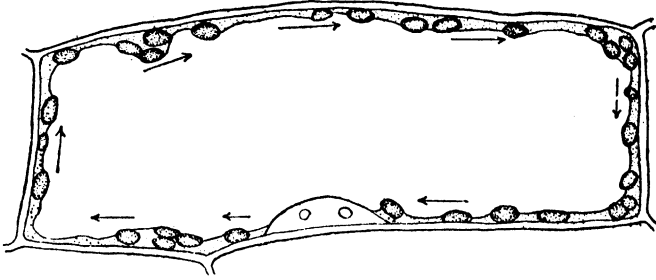
प्ररस की गतियाँ।

cilia) या पल्लेजला (flagella) कहते हैं। इन पक्ष्मों के इधर-उधर कम्पन करने से ये पक्ष्मयुक्त शरीर पानी में चलते हैं या स्वतंत्र रूपसे तेजी के साथ तैरते हैं।

(२) अमीबॉइड गति (Amoeboid movement). छादहीन प्रोटोप्लाज्म के रेंग कर चलने की क्रिया को अमीबॉइड गति कहते हैं (चित्र १२.५), उदाहरण है, मिक्सोमाइसिटोज (myxomycetes) या स्लाइम फंजाई (slime fungi)। प्रोटोप्लाज्म शरीर के एक या एक से अधिक बिन्दुओं पर उभार (protrusion) बनाता है जिन्हें कृत्रिमपद (स्यूडोपोडिया, pseudopodia; pseudos—कृत्रिम, podos—पाँव) कहते हैं। सूडोपोडिया बनने के दूसरे ही क्षण यह उभार फिर पीछे हट जाता है और उसका प्रोटोप्लाज्म शरीर के साथ बराबर हो जाता है। यह क्रिया बहुत कुछ एक कोशीय जीव अमीबा की भाँति होती है। कोशा-भित्ति न होने के कारण इस प्ररसीय पुंज (protoplasmic mass) का कोई विशेष आकार नहीं होता और वह भोजन के ठोस कणों को अन्तर्ग्रहण (engulf) कर सकता है।

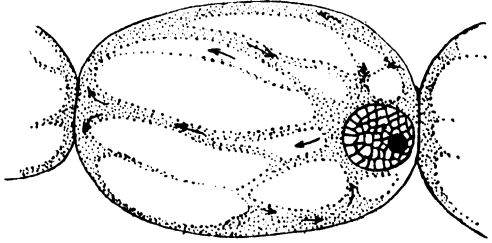
(३) परिभ्रमण (Rotation). जब प्रोटोप्लाज्म कोशा-भित्ति के सहारे घड़ी की सुई की दिशा में या उसकी विपरीत दिशा में (clockwise or anti-

clockwise) एक बड़े आकार के केन्द्रीय वैक्युओल के चारों ओर चलता या बहता है, तो इस प्रकार के चलने या बहने को परिभ्रमण कहते हैं (चित्र १२.६)। हर कोशा के प्रोटोप्लाज़्म की गति की दिशा स्थिर रहती है। जब प्रोटोप्लाज़्म परिभ्रमण करता है तो अपने बहाव में यह न्यूक्लियस और प्लैस्टिड्स को भी बहा ले जाता है।



[Modified after Smith]

प्ररस की गति: चित्र १२.६ इलोडिया (*Eloдея*) की एक जीवित कोशा में परिभ्रमण।



[After Hill]

चित्र १२.७ स्पाइडरवर्ट (*Tradescantia*) के स्टेमेन के बाल में परिवाही भ्रमण।

रोटेशन का अध्ययन भली प्रकार वैलिसनेरिया (*Vallisneria*), हाइड्रिला (*Hydrilla*) और नाइटेला (*Nitella*) और बहुत-से दूसरे जल में रहनेवाले पौधों में किया जा सकता है।

(४) परिवाही भ्रमण (**Circulation**). जब सेल के अन्दर प्रोटोप्लाज़्म अनियमित रूप से विभिन्न दिशाओं में बहुत-से छोटे-छोटे रसधानियों के चारों ओर बहता है तो ऐसे बहने को परिवाही भ्रमण कहते हैं (चित्र १२.७)। परिवाही भ्रमण कजूरा (*Commelina obliqua*) के पुकेसरीय रोमों (staminal hairs) में, जो गुलाबी रंग के होते हैं, भली प्रकार देखा जा सकता है। स्पाइडरवर्ट (*Tradescantia*) के स्टेमेन के बालों में, लौकी के प्ररोह रोमों (shoot-hairs) में, और बिगोनिया (*Begonia*) तथा कई अन्य पौधों में भी सर्कुलेशन पाया जाता है।

२. नाभिक (Nucleus).

कोशारस में दबा हुआ एक गोल या अण्डे की आकृतिवाला एक विशिष्ट प्रोटो-प्लाज्मी अंश होता है जिसका घनत्व साइटोप्लाज्म के घनत्व से भी अधिक होता है; इसे नाभिक (न्यूक्लियस) कहते हैं (चित्र १२.१)। न्यूक्लियस की आकृति कैसी है, यह इस बात पर निर्भर है कि जिस सेल का वह न्यूक्लियस है, उसकी प्रकृति क्या है। तरुण कोशा में जो न्यूक्लियस होता है वह मध्य में स्थित होता है और उसकी आकृति लगभग हमेशा गोल या अण्डाकार होती है, किन्तु एक लम्बे सेल का न्यूक्लियस उसी अनुपात में लम्बान में फैल जाता है। एक परिपक्व कोशा में जब वैक्यूओल बन जाता है तब न्यूक्लियस कोशारस (cytoplasm) की किनारेवाली तह (lining layer of cytoplasm) में स्थित रहता है और कोशा-भित्ति की ओर चपटा हो जाता है। नाभिकें सभी पौधों में सर्वव्यापक रूप से उपस्थित रहती हैं। उच्च श्रेणी के पौधों में एक कोशा में केवल एक न्यूक्लियस होता है, आक्षीर (latex) स्राव करनेवाली ऊति (laticiferous tissue) में (चित्र १३.१७, १३.१८) और बहुत-से एल्गो और फ्रंजाई में एक सेल में अक्सर अनेक नाभिकें (nuclei) होती हैं। कुछ निम्न श्रेणी के पौधों में, फिर भी सच्ची नाभिकें नहीं मिलतीं, किन्तु इनमें उसी तरह की नाभिक-सामग्री (nuclear material) रहती है। नाभिकों के आकार में भी काफी भिन्नता पायी जाती है—कम से कम $\frac{1}{100}$ मिलीमीटर और अधिक-से-अधिक $\frac{1}{2}$ मिलीमीटर तक। फिर भी, उनका साधारण आकार $\frac{1}{100}$ मिलीमीटर से $\frac{1}{2}$ मिलीमीटर तक होता है। न्यूक्लियस के अन्दर जो आधारभूत पदार्थ भरा होता है वह नाभिकरस (nucleoplasm) या केरियोलिम्फ (karyolymph) कहलाता है। कोशारस की तरह नाभिकरस भी लगभग अर्ध-तरल (semi-fluid) होता है। न्यूक्लियस हमेशा साइटोप्लाज्म के साथ पाया जाता है यानी जिस सेल में न्यूक्लियस होगा उसमें साइटोप्लाज्म भी होगा। सेल के इन दोनों जैविक अंशों की अन्तर्क्रिया के फलस्वरूप ही सेल में जीवन की ज्योति जगमगाती रहती है। न्यूक्लियस कभी भी अपने आपसे नया नहीं उत्पन्न हो सकता, बल्कि यह पहले से मौजूद न्यूक्लियस के भाजन के द्वारा सख्या में वृद्धि करता है।

रचना (Structure). नाभिकों के अध्ययन के लिए प्याज का अन्दरूनी गुदेदार शल्कपत्र लीजिये और उसके छिलके का एक टुकड़ा छीलकर अलग करिये। इसे इओसिन (eosin) या सैफ्रनिन (safranin) के घोल के साथ अच्छी तरह रंगिए। अब यदि इसे सूक्ष्मदर्शी (microscope) में देखें तो हमें प्रत्येक कोशा में एक स्पष्ट न्यूक्लियस दिखाई देगा (चित्र १२.८)। सूक्ष्मदर्शी की उच्च शक्ति (high magnification) में हम इसकी बनावट का अध्ययन कर सकते हैं। इस प्रकार यदि न्यूक्लियस की बनावट का अध्ययन किया जाय तो पता लगंगा कि इसमें मुख्य रूप से चार भाग होते हैं। ये बाहर से अन्दर की तरफ क्रमशः इस प्रकार हैं:

(१) नाभिककला (Nuclear membrane). हर न्यूक्लियस को दीवार की तरह चारों ओर से घेरे रहनेवाली झिल्ली को न्यूक्लियस की झिल्ली या नाभिक कला कहते हैं।

(२) नाभिकरस (Nuclear sap). यह एक घना पारदर्शक, प्ररसीय

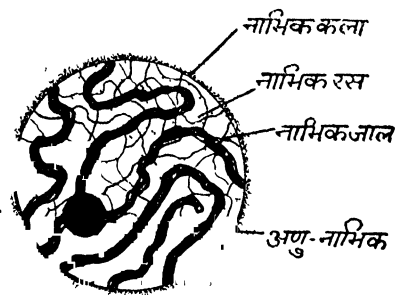
आधारभूत पदार्थ (protoplasmic ground substance) होता है, जो न्यूक्लियर झिल्ली से घिरे हुए स्थान में भरा होता है।

(३) नाभिक जाल (न्यूक्लियर रेटीकुलम, Nuclear reticulum) न्यूक्लियस के रस में लटका हुआ नाजूक तारों का एक जाल होता है जिसे न्यूक्लियस का जाल या नाभिकजाल (क्रोमेटिन जाल) कहते हैं।

सम्पूर्ण जाल में एक पदार्थ होता है, जिसे क्रोमेटिन (chromatin) कहते हैं। यह देखा जाता है कि जिस बिन्दु पर दो तार (threads) एक दूसरे को पार (intersect) करते हैं वहाँ यह तार रंगने पर सर्वदा अधिक गहरा और स्पष्ट रंग देते हैं। क्रोमेटिन, नाभिक का अनिवार्य जीवन-पदार्थ है उसे पित्रागति या वंशानुक्रम (हेरेडिटी, heredity) का भौतिक आधार मानते हैं, अर्थात् पित्रागत (hereditary) लक्षणों का माना-पिता से उनके बच्चों में वहन (transmission) इसी पर निर्भर है।



चित्र १२८ (क) प्याज के शल्कपत्र की कोशिकीय संरचना।



चित्र १२.८ (ख) नाभिक रचना।

(४) अणु-नाभिक (न्यूक्लिओलस, Nucleolus). एक या अधिक और भी आकृतियाँ पायी जाती हैं जो बहुत रिफ्रेक्टिव (refractive), अधिकतर गोलाकार, और न्यूक्लियस के आधारभूत पदार्थ से कहीं ज्यादा घनत्ववाली होती हैं। इनको अणु-नाभिकें (nucleoli; एक वचन—अणु-नाभिक, nucleolus) कहते हैं।

रासायनिक रचना (Chemical composition). न्यूक्लियस की रासायनिक रचना करीब-करीब वैसी ही है जैसी कि साइटोप्लाज्म की। यह प्रोटीड्स (proteids) तथा प्रोटीड जैसे पदार्थ का बना होता है। इसमें एक वस्तु होती है, जिसे न्यूक्लीन (nuclein) कहते हैं। न्यूक्लीन की रचना में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और गन्धक के अतिरिक्त फॉस्फोरस भी भाग लेता है। न्यूक्लीन नाभिक-रस में नहीं होती, बल्कि न्यूक्लियस के जाल में रहती है।

नाभिक के कार्य. न्यूक्लियस तमाम जैविक क्रियाओं का नियंत्रण केन्द्र है, विशेष तौर पर भोजन को पचाना और प्रोटोप्लाज्म में एकीभूत करना (स्वीकरण, assimilation), तथा प्रजनन, न्यूक्लियस द्वारा ही नियंत्रित होते हैं। यह कोशा-भाजन और संख्या में वृद्धि के कार्य में बहुत महत्व रखता है (देखिये माइटोसिस पृष्ठ २२८)। यह पित्रागत लक्षणों का वाहक (bearer) माना जाता है। जब

प्रोटोप्लास्ट दो भागों में विभाजित होता है, तो प्रोटोप्लास्ट का वह भाग जिसमें न्यूक्लियस रहता है, अपने चारों ओर दीवार बाँधने और तत्पश्चात् अपनी यथाक्रम क्रियाओं को आरम्भ करने की क्षमता रखता है। दूसरा भाग जिसमें न्यूक्लियस नहीं रहता, मर जाता है। सेल के जीवन के लिए न्यूक्लियस तथा साइटोप्लाज्म दोनों ही जिम्मेदार हैं, और इन्हीं दोनों की अन्तर्क्रियाओं पर पौधे की विविध जैविक क्रियाएँ निर्भर करती हैं।

कोशारस कार्य (Cytoplasmic inclusions). कोशारस में दबी हुई बहुत-सी वस्तुएँ होती हैं जिनमें से कुछ तो निश्चय ही प्ररसीय प्रकृति की होती हैं। ये वस्तुएँ जीवित भी हो सकती हैं और अजीवित भी। कणक (plastids) जैसे चित्र १२.१ में दिखाये गये हैं, सेण्ट्रोसोम्स (centrosomes), कॉण्ड्रियोसोम्स (chondriosomes) इत्यादि इनमें जीवित पदार्थ होते हैं, और वैक्युओल्स (vacuoles), भोजन-कण (food granules), तेल कण (oil globules), गोद, खनिज रवे आदि अजीवित वस्तुएँ होती हैं।

३. कणक (प्लैस्टिड्स, Plastids).

न्यूक्लियस के अलावा, सेल के साइटोप्लाज्म द्वारा घिरे हुए अनेक छोटे-छोटे अंश होते हैं, जो कणक (प्लैस्टिड) कहलाते हैं (चित्र १२.१)। इनकी आकृति तश्तरीनुमा या गोलाकार होती है। प्लैस्टिड की आधार-वस्तु (ground substance) को स्ट्रोमा (stroma) कहते हैं। इसका भी आधार प्ररसीय होता है और इसमें रंग द्रव्य (pigment) होता है। प्लैस्टिड जीवित होते हैं। उनकी उत्पत्ति नई कभी नहीं होती, बल्कि ये पूर्ववर्ती प्लैस्टिडों के विभाजन के फलस्वरूप संख्या में वृद्धि करते हैं। सेल की कुमारावस्था में ये पहचाने नहीं जा सकते—परन्तु वृद्ध कोशाओं में ये विविध रंग अपना लेते हैं। ये उन कोशाओं में पाये जाते हैं जिन्हें विशिष्ट कार्य करने होते हैं, और फजाई तथा जीवाणु (बैक्टीरिया) में ये कभी नहीं होते। प्लैस्टिड तीन प्रकार के होते हैं—नीरंगकणक (leucoplasts), हरिमकणक (chloroplasts) और रंगकणक (chromoplasts)। एक का प्रकार प्लैस्टिड दूसरे प्रकार में बदल सकता है। उदाहरण के तौर पर ल्यूकोप्लास्ट, क्लोरोप्लास्ट में बदल जाते हैं जब वे सूर्य के प्रकाश में काफी देर तक खुले रहते हैं। इसी प्रकार क्लोरोप्लास्ट, ल्यूकोप्लास्ट में बदल जाते हैं जब उन्हें लगातार काफी समय तक सूर्य का प्रकाश नहीं मिलता। क्रोमोप्लास्ट में भी इसी प्रकार के परिवर्तन हो सकते हैं।

(१) नीरंगकणक (ल्यूकोप्लास्ट, **Leucoplasts**; *leucos*—सफेद). ये रंगहीन प्लैस्टिड होते हैं। ल्यूकोप्लास्ट अधिकतर पौधों के भूमिगत (under-ground) भागों में और साथ ही उन भागों में भी जो सूर्य का प्रकाश नहीं देखते, पाये जाते हैं। ये कई प्रकार के होते हैं। अक्सर ये गोलाकार, तश्तरीनुमा या छड़ की तरह होते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—छोटे और बड़े। छोटावाला बड़ेवाले में या क्लोरोप्लास्ट अथवा क्रोमोप्लास्ट में परिवर्तित हो सकता है। बड़ावाला प्रकार एमाइलोप्लास्ट (**amyloplast** या स्टार्च-निर्माता) कहलाता है। पौधों के भूमिगत और सग्रह करनेवाले अन्य भागों में इकट्ठा करने के लिए यह घुलनशील शर्करा की बड़े-बड़े स्टार्च के दानों में परिवर्तित कर देता है।

(२) हरिमकणक (क्लोरोप्लास्ट, **Chloroplasts**; *chloros*—हरा). ये हरे

रंग के प्लैस्टिड होते हैं। इनका हरा रंग इनमें पाये जानेवाले हरे रंगी पदार्थ **पर्णहरिम (chlorophyll)** के कारण होता है। कभी-कभी हरा रंग दूसरे रंगों की मौजूदगी में दब जाता है। क्लोरोप्लास्ट केवल उही भागों में पाये जाते हैं जो प्रकाश में रहते हैं। हरी पत्तियों में ये बहुतायत से पाये जाते हैं और कुछ हद तक तने के हरे भागों में भी मिलते हैं। इनकी आकृति प्रायः गोलाकार अथवा तश्तरीनुमा होती है, लेकिन कुछ ब्रायोफाइटा (bryophyta) और एल्गी (algae) में ये विशिष्ट आकृतियाँ दर्शाते हैं। यह प्रकाश की उपस्थिति में ही केवल कार्य करते हैं और अपने क्लोरोफिल की सहायता से कुछ बहुत आवश्यक कार्य करते हैं। ये हवा से अवशोषित किये हुए कार्बन डाइऑक्साइड को तोड़ देते हैं और ऑक्सीजन को बाहर निकालते हैं। ये शर्करा का निर्माण करते हैं और उसके फौरन बाद ही इसे स्टार्च में बदल देते हैं।

पर्णहरिम (क्लोरोफिल, Chlorophyll). यह कोई अकेला सरल पदार्थ नहीं है, बल्कि यह चार विभिन्न रंगद्रव्यों (pigments) का मिश्रण है। ये रंगीन पदार्थ हैं—क्लोरोफिल 'अ' (नीला-काला), क्लोरोफिल 'ब' (हरा-काला), कैरोटिन (नारंगी-लाल) और जैन्थोफिल (पीला)। क्लोरोप्लास्ट में क्लोरोफिल 'अ' और क्लोरोफिल 'ब' दोनों साथ रहते हैं, किन्तु कैरोटिन और जैन्थोफिल (carotin and xanthophyll) एक साथ पौधे के किसी भाग में बिना क्लोरोप्लास्ट के भी हो सकते हैं। अल्कोहल या क्लोरोफार्म की सहायता से क्लोरोफिल को हम बड़ी आसानी के साथ निचोड़ सकते हैं, और तब पत्तियाँ रंगहीन हो जाती हैं। सीधे (transmitted) प्रकाश में क्लोरोफिल गहरा हरा दिखाई देता है; किन्तु परावर्तित (reflected) प्रकाश में यह रक्त-लाल (blood-red) दिखाई देता है। यह क्लोरोफिल का भौतिक गुण है, और इसको फ्लोरेन्स (fluorescence) कहते हैं। क्लोरोफिल के साथ पाये जानेवाले दोनों रंगीन पदार्थ (pigments)—कैरोटिन और जैन्थोफिल के मिश्रण को हम क्लोरोफिल के घोल से आसानी के साथ निम्न प्रकार से अलग निचोड़ सकते हैं—इन तीनों के घोल को बेन्जीन की थोड़ी मात्रा के साथ अच्छी तरह हिलाइये और घोल को बैठने दीजिये। बेन्जीन क्लोरोफिल लिए हुए ऊपर तैरने लगता है (हरा घोल), और जैन्थोफिल तथा कैरोटिन लिए हुए अल्कोहल पेंदी पर बैठ जाता है (पीला घोल)। बेन्जीन की जगह ईथर या जैतून का तेल (olive oil) भी प्रयोग किया जा सकता है। क्लोरोफिल पानी में अधुलनशील है, चाहे इसे कितनी ही देर तक क्यों न उबाला जाय।

पिगमेण्टों की रासायनिक रचना

क्लोरोफिल 'अ' = $C_{55}H_{72}O_5N_4Mg$

क्लोरोफिल 'ब' = $C_{55}H_{70}O_6N_4Mg$

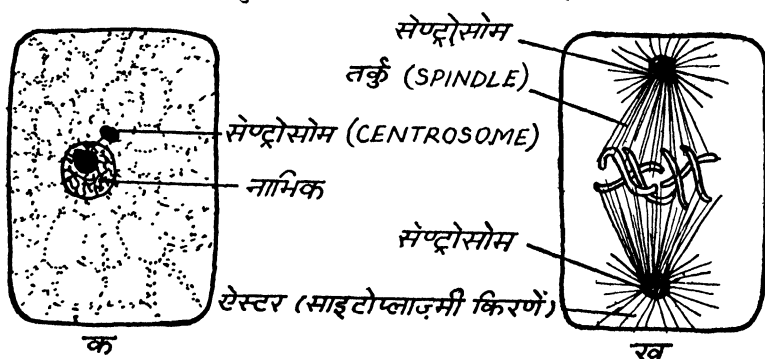
कैरोटिन = $C_{40}H_{56}$

जैन्थोफिल = $C_{40}H_{56}O_3$

(३) **रंगकणक (क्रोमोप्लास्ट, Chromoplasts; chroma—रंग).** ये प्लैस्टिड विभिन्न रंग के होते हैं—पीले, नारंगी और लाल। अधिकतर ये फूलों की पंखड़ियों में और फलों में पाये जाते हैं। इनमें रंगीन पदार्थ **जैन्थोफिल (पीला)** और **कैरोटिन (नारंगी-लाल)** होते हैं। लाल, पीले और हरे के विविध मिश्रणों से

अनेक और रंग बन जाते हैं। फलों में पाये जानेवाले रंग द्रव्यों (पिगमेण्ट्स) का कार्य परागण के लिए कीड़ों को आकर्षित करना है। कैरोटिन हाइड्रो-कार्बन है, अर्थात् इसमें कार्बन और हाइड्रोजन होते हैं। इसका सूत्र (formula) $C_{40}H_{56}$ है। ऐन्थोफिल, कैरोटिन के ऑक्सीकरण (oxidation) से बनती है, अर्थात् इनमें कार्बन और हाइड्रोजन के अतिरिक्त ऑक्सीजन भी होती है। इसका सूत्र $C_{40}H_{56}O_8$ है।

अधिकतर बैंगनी (violet or purple) और नीले फूलों और बहुत-से लाल फूलों के रंग ऐन्थोसायनिन्स (anthocyanins) नामक पिगमेण्टों के कारण होते हैं। यह ऐन्थोसायनिन्स धानीरस (cell-sap) में घुले रहते हैं। ऐन्थोसायनिन, फूलों, रंगीन जड़ों (जैसे चुकन्दर की जड़) और रंगीन तनों (जैसे गुलमहदी का तना) में होते हैं। बहुत-से पौधों, जैसे आम, देशी बादाम आदि की तरुण लाल पत्तियों में भी यह पिगमेण्ट पाये जाते हैं, और क्लोरोफिल को अक्सर छिपा लेते हैं। यह शायद क्लोरोप्लास्ट, प्रोटोप्लाज्म आदि के लिए परदे का काम करते हैं और उनकी सूर्य के तीव्र प्रकाश से रक्षा करते हैं। फूलों में, यह पराग-सेचन के लिए कीड़ों को आकर्षित करते हैं। यह पानी, अल्कोहल तथा ईथर में घुलनशील है। अगर रंगीन पत्तियों को पानी में उबाला जाय तो ऐन्थोसायनिन पत्तियों में से निकल कर पानी में घुल जाते हैं, और पत्तियाँ क्लोरोफिल के कारण हरी दिखाई देती हैं। ऐन्थोसायनिन अपना रंग भी बदल सकते हैं। इनका रंग उन कोशाओं के रस (sap) की प्रकृति पर निर्भर करता है जिन कोशाओं में यह रहते हैं। अगर रस अम्लीय (acidic) है तो इसका रंग लाल होता है, अगर रस क्षारीय (alkaline) है तो रंग नीला होता है। इनके अलावा और भी बहुत-से पिगमेण्ट पौधों में पाये जाते हैं।

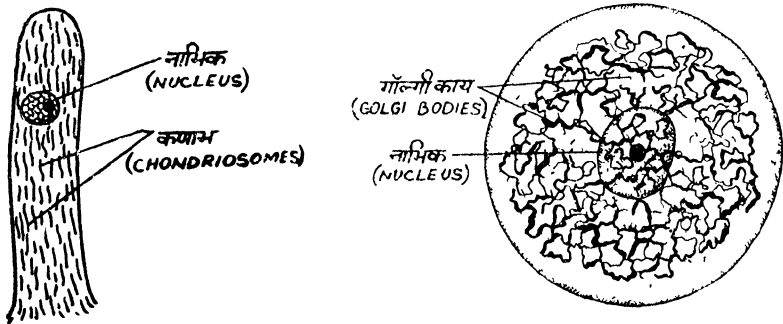


सेण्ट्रोसोम। चित्र १२.९ (क) एक जन्तु-कोशा में नाभिक के समीप सेण्ट्रोसोम।
(ख) नाभिक-विभाजन के समय सेण्ट्रोसोम।

सेण्ट्रोसोम (Centrosome). यह छोटी-छोटी आकृतियाँ हैं जो नियमित रूप से जन्तु-कोशाओं (animal cells) की नाभिकों के समीप पायी जाती हैं। यह आकृतियाँ निम्न श्रेणी के कुछ पौधों, जैसे एल्गी और फंजाई, में भी पायी जाती हैं। न्यूक्लियस के भाजन के समय सेण्ट्रोसोम दो में विभाजित हो जाता है। यह दोनों भाग तर्कु (spindle, स्पिण्डल) के दोनों ध्रुवों (poles) पर चले जाते हैं,

और साइटोप्लाज्मिक किरणों का केन्द्र बनाते हैं। इन किरणों को 'एस्टर' (asters, तारा) कहते हैं।

कॉण्ड्रियोसोम्स या माइटोकॉण्ड्रिया (Chondriosomes or mitochondria, कणाभ या कणाभ-सूत्र)। ये जन्तु और वनस्पति-कोशाओ के कोशारस में उपस्थित बहुत छोटी-छोटी आकृतिया होती हैं (चित्र १२.१०)। ये विभिन्न आकार की, जैसे उण्ड की तरह, दाने की तरह, या फ़िलामेण्ट की तरह, हो सकती हैं और जटिल रासायनिक रचनावाली होती हैं। इनके रंगनेवाले (staining) कुछ विशेष लाक्षणिक गुण होते हैं। यह गुण प्रयोग को केवल विशेष रूप से करने पर ही दिखाये जा सकते हैं। उनकी रचना और उत्पत्ति (origin) के विषय में अनेकानेक सिद्धान्त हैं। कुछ अनसन्धानकर्ताओं (investigators) के हिसाब से ये आकृतियाँ विभिन्न प्रकार के प्लैस्टिडो की आरम्भावस्था (starting points) हैं।

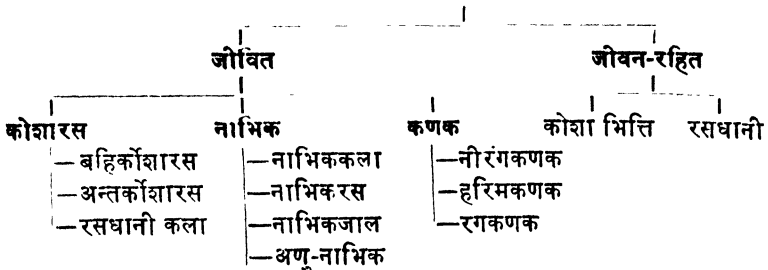


चित्र १२.१० एक वनस्पति कोशा में कणाभ (chondriosomes)।

चित्र १२.११ एक जन्तु कोशा में गॉल्जी काय (golgi bodies)।

गॉल्जी काय (Golgi bodies) विशेष प्रकार से प्रयोग करने पर कोशारस में ये आकृतियाँ दिखाई पड़ती हैं (चित्र १२.११)। ये लगभग उत्कृष्ट (conspicuous) और जाल के समान की आकृतियाँ होती हैं। वे सर्वप्रथम जन्तु-कोशाओ में देखी गयी थी और वनस्पति कोशाओ की अपेक्षा उनमें अत्यधिक पायी जाती हैं। जन्तु-कोशाओं में इन गॉल्जी काय का कार्य स्राव (secretion) करना है, किन्तु पौधों में उनका महत्त्व अभी भी अस्पष्ट है।

कोशा के भाग

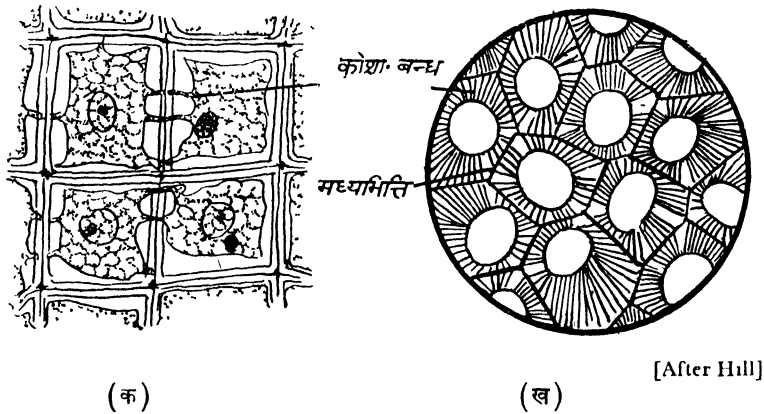


कोशा-भित्ति (Cell-wall)

कोशा-भित्ति का निर्माण (Formation of the cell-wall). एक अकेली छद्मदीन कोशा से जीवन आरम्भ होता है, अर्थात् प्रोटोप्लाज्म के एक छोटे पुंज से, जिसमें एक न्यूक्लियस दबा होता है और जिसमें कोशा-दीवार नहीं होती। प्रोटोप्लाज्म चूँकि बहुत ही मुलायम और नाजुक पदार्थ है, इसलिए इसकी सर्वप्रथम आवश्यकता होती है, आत्म-रक्षा। इस आवश्यकता के ही कारण, इससे पहले कि सेल अधिक वृद्धि करे या विभाजित हो, यह अपने चारों ओर एक दीवार का निर्माण करता है। प्रोटोप्लाज्म की बाहरी सतह पर एक प्रकार के स्राव (secretion) से नन्हे-नन्हे दाने पैदा होते हैं। ये दाने सख्या में बढ़ने जाते हैं और अन्त में आपस में एकरूप (fuse) हो जाते हैं। इस गुथने के परिणाम स्वरूप एक सम्पूर्ण दीवार जो कोशा-भित्ति या कोशा-दीवार कहलाती है, प्रोटोप्लाज्म को चारों ओर से घेर लेती है। प्रोटोप्लास्ट के चारों ओर कोशा-भित्ति एक खोल का काम करती है, उसकी आकृति को, उसके रूप को स्थिर रखती है और बाह्य आक्रमणों से उसकी रक्षा करती है। इसके अतिरिक्त कोशा-भित्तियाँ मिलकर पौधे के शरीर का ढाँचा बनाती हैं और पौधे के शरीर की शक्ति तथा कड़ेपन के लिए जिम्मेदार हैं।

कोशा-भित्ति की वृद्धि (Growth of the cell-wall). कोशा-भित्ति अपने निर्माण के प्रारम्भ में एक बहुत पतली और नाजुक परत रहती है। जैसे-जैसे कोशा की वृद्धि होती है, कोशा-भित्ति में हमें भौतिक और रासायनिक दोनों प्रकार के परिवर्तन मिलते हैं। इसका अर्थ यह है कि कोशा-भित्ति की वृद्धि उसके धरातल के आकार (surface extent) और उसकी मोटाई दोनों में होती है। (१) कोशा-भित्ति के धरातल के आकार में बढाव कोशा की प्रारम्भिक अवस्था में होता है और यह कोशा-दीवार के एक या अधिक दिशाओं में खिंचने या तनने के कारण होता है। इसके साथ ही प्रोटोप्लाज्म के स्राव में बने हुए नवीन ठोम कण सेल-दीवार के खिंचने के साथ-साथ उसके धागे के बीच में फँस जाते हैं। इस प्रकार से बढ़ने की विधि को अन्तर्ग्राही वर्धन (growth by intussusception) कहते हैं। (२) कोशा-दीवार मोटाई में भी बढती है। इस प्रकार की बाढ़ में अधिकतर प्रोटोप्लाज्म के स्राव से बनी हुई विशेष परतें या तह, एक-एक करके कोशा-दीवार के अन्दर की तरफ जमा होती जाती हैं। इस प्रकार की बाढ़ को उपसादी वर्धन (growth by apposition) कहते हैं। जब कोशा-भित्ति काफी मोटी हो जाती है, तो परतदार (stratified) हो जाती है, अर्थात् ऐसा प्रतीत होता है जैसे एक के ऊपर दूसरी तहें क्रमानुसार जमा कर रख दी गई हों। सूक्ष्मदर्शी द्वारा अगर हम देखें तो दो पड़ोसी कोशाओं के बीच में प्रारम्भिक कोशा-दीवार को इस अवस्था में भी पहचान सकते हैं। पहले से मौजूद तथा बीच में पायी जानेवाली उस दीवार को मध्य-भित्ति (middle lamella) कहते हैं (चित्र १२.१२)। इसमें एक पदार्थ होता है जिसे कैल्सियम पेक्टेट (calcium pectate) कहते हैं। यह देखा जाता है कि एक कोशा का प्रोटोप्लाज्म पड़ोसी कोशा के प्रोटोप्लाज्म से प्रोटोप्लाज्मी धागो या तारों द्वारा मिला रहता है। यह तार कोशा-भित्ति में विकसित छोटे-छोटे सुराखों से होकर जाते हैं। इनमें से प्रत्येक तार या पट्टी को कोशा-बन्ध (Plasmodesma, बहुवचन—plasmodesmata) कहते हैं (चित्र १२.१२ क, ख)। यहाँ नोट कर लेना आवश्यक है कि कोशा-भित्ति की

वृद्धि कई अवस्थाओं में गुजरती हुई होती है। वह कोशा-दीवार, जो सबसे पहले प्रोटोप्लाज़्म द्वारा बनी हुई एक बहुत पतली परत के रूप में होती है तथा प्रोटोप्लाज़्म



चित्र १२.१२ (क) क्रिप्टोमीरिया (*Cryptomeria*) के तने की कोशा-भित्तियों में कोशाबन्ध (plasmodesma)। (ख) डायोसपाइरस (*Diospyros*) के भ्रणपोष की दीवारों में कोशाबन्ध और मध्य-भित्ति (middle lamella)।

से मिली हुई और पेक्टोज (pectose) की बनी होती है, प्रथम भित्ति (primary wall) कहलाती है। दो अगल-वगल की कोशाओं की प्रथम-भित्ति, जो दोनों कोशाओं से बनती है, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, मध्य-भित्ति (middle lamella) कहलाती है। उपसादी वर्धन (process of apposition) के द्वारा प्रथम-भित्ति के ऊपर नई तहों के जमने से द्वितीयक-भित्ति (secondary wall) बन जाती है। इसमें पेक्टोज और कोशाधु (सेल्युलोज, cellulose) होता है। शीघ्र ही द्वितीयक-भित्ति पर एक तीसरी दीवार जमा हो जाती है जो शुद्ध सेल्युलोज की बनी होती है; इसे तृतीय भित्ति (tertiary wall) कहते हैं। फिर भी द्वितीय या तृतीय भित्तियाँ हमेशा स्पष्ट पहचानी नहीं जा सकती। ये दोनों दीवारें लिगनिन-युक्त (lignified) हो सकती हैं।

कोशा-भित्ति कैसे मोटी होती है (Thickening of the cell-wall). कोशा-भित्ति उन कोशाओं में मोटाई में वृद्धि करती है जिन्हें अन्त में वाहिनियों (vessels) और जलवाहि-कोशाओं (tracheids) में विकसित होना होता है (देखो पृष्ठ २३६)। जब ऐसी कोशाएँ काफी हद तक बढ़ गयी होती हैं और पूर्ण आकार प्राप्त कर लेती हैं तब उनकी दीवारें मोटी होने लगती हैं। यह मोटापन कोशा-दीवार की भीतरी सतह पर लिगनिन (lignin) नामक एक कठोर पदार्थ के जमा हो जाने के कारण होता है। कोशा-भित्ति के चारों ओर लिगनिन का यह जमाव शायद ही कभी एक समान होता है। अधिकतर यह जमाव कोशा-दीवार के खाम-खास

भागो तक ही सीमित रहता है। साथ ही यह मोटापा कई प्रकार का होता है जो निम्नलिखित हो सकते हैं :



चित्र १२.१३
वलयाकार।

चित्र १२.१४
सर्पिलाकार।

चित्र १२.१५
सोपानवत्।

चित्र १२.१६
जालिकावत्।

कोशा-भित्ति की मोटाई में वृद्धि।

(१) वलयाकार या चक्राकार (ऐनूलर, **Annular or ring-like**). जब लिगनिन का जमाव गोल घेरे की शकल में होता है। यह घेरे या चक्र सेल-दीवार के अन्दर की ओर एक दूसरे के ऊपर थोड़ी-थोड़ी दूर पर होते हैं (चित्र १२.१३)



चित्र १२.१७ चित्र १२.१८
साधारण। प्रान्ती।

गर्त।

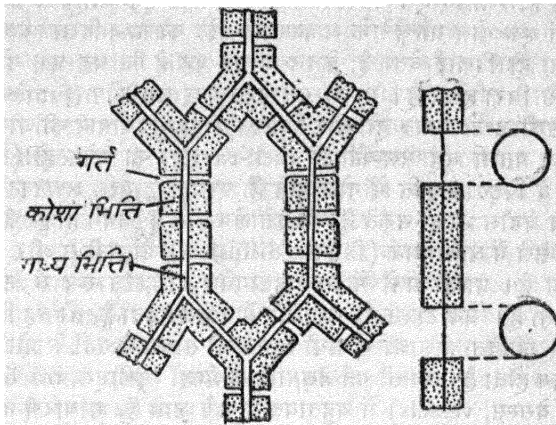
(२) सर्पिलाकार (स्पाइरल, **Spiral**). जब लिगनिन का जमाव कोशा-दीवार के अन्दर की ओर एक पेचदार पट्टी की शकल का होता है (चित्र १२.१४)।

(३) सोपानवत् या सीढ़ीनुमा (स्कैलरी-फॉर्म, **Scalariform or ladder-like**). जब लिगनिन सीढ़ी के डण्डे के रूप में अनुप्रस्थ (transverse) ढग में जमा होता है तो उसे स्कैलरी-फॉर्म या सीढ़ीनुमा जमाव कहते हैं (चित्र १२.१५)।

(४) जालिकावत् या जालीनुमा (रेटीकुलेट, **Reticulate or netted**). जब दीवार की मोटाई जाली की तरह की होती है (चित्र १२.१६)।

(५) गर्ती या छेददार (पिटेड, **Pitted**). जब सेल दीवार की तमाम भीतरी सतह लगभग एक समान मोटी होती है, केवल यहाँ-वहाँ कुछ छोटी-छोटी जगहें या क्षेत्र या कैविटीज़ बच जाती हैं जो मोटाई

ग्रहण नहीं करती। इन मोटाई-रहित क्षेत्रों को गर्त (pits, छेद) कहते हैं (चित्र १२.१७, १२.१८)। ये गर्त दो प्रकार के होते हैं:

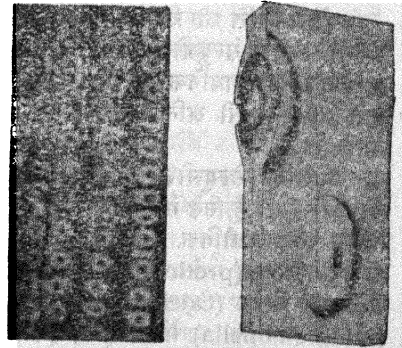


(क)

(ख)

साधारण गर्त। चित्र १२.१९ (क) एक कोशा का छेद जिसकी भित्ति में साधारण गर्त है। (ख) कोशा-भित्ति का एक हिस्सा जिसमें दो गर्त हैं।

(क) साधारण गर्त (simple pits) और (ख) प्रान्ती गर्त या परिवेक्षित गर्त (bordered pits)। पिट्स हमेशा जोड़ों में बनते हैं, और हर जोड़ा आमने-सामने की दीवार पर होता है। कोशा-भित्ति का वह भाग जो आमने-सामने के पिट्स के बीच में होता है, क्लोजिंग मेम्ब्रेन (closing membrane) कहलाता है। प्रान्ती गर्त में जो क्लोजिंग मेम्ब्रेन होती है वह बीच में थोड़ी-सी फूल जाती है या मोटी हो जाती है। इसे टोरस (torus) कहते हैं। जब पिट का समूचा क्षेत्र पूरी गहराई तक एक-सा होता है, तो साधारण गर्त कहलाता है। जब यह क्षेत्र एक-सा नहीं होता, बल्कि सेल-दीवार की ओर चौड़ाई लिये हुए होता है और सेल-कैविटी की ओर संकुचित होता है, तो 'प्रान्ती गर्त'



[After Holman & Robbins]

(क)

(ख)

प्रान्ती गर्त: चित्र १२.२० (क) प्रान्ती गर्त ऊपर से देखने पर (surface view)। (ख) कोशा-भित्ति का एक भाग जिसमें दो प्रान्ती गर्त हैं—काट में (in section) और ऊपर से देखने पर।

कहलाता है। बौर्डर्ड पिट के समीपस्थ कोशा-दीवार का जो भाग मोटाई लिये हुए होता है, पिट के चारों ओर एक मेहराब बनाता है। यह मेहराब या छ्दाद गर्त के दोनों ओर लटका रहता है, इसलिए ऐसे गर्त को प्रान्ती गर्त कहते हैं। बाहर से देखने पर एक साधारण गर्त एक गोल या घेरे के आकारवाले छेद की तरह दिखाई देता है। प्रान्ती गर्त भी वैसा ही दिखाई देता है, केवल अन्तर यह है कि वह एक गोल किनारे (border) से घिरा होता है। प्रान्ती गर्त बहुत कुछ उम कीप (funnel) की तरह होता है जिसकी डण्डी गायब हो, और जिसका चौड़ा मुँह दीवार की ओर रख दिया गया हो और पतला मुँह सेल-कैविटी (cell-cavity) की ओर हो (देखिये चित्र १२.२०)। ये पिट्स आकृति में गोल होते हैं, परन्तु बहुभुजी, अण्डाकार, लम्बे या करीब-करीब बेली भी हो सकते हैं। ये ऐसे क्षेत्र होते हैं जिनमें होकर द्रवों का एक सेल से दूसरे सेल में आवागमन (विसरण, diffusion) आसानी से और अच्छी तरह से हो सकता है। प्रान्ती गर्तों में यह आवागमन अधिकांश रूप से 'टोरस' द्वारा संचालित होता है। जब टोरस पर एक ओर से दबाव पड़ता है, तो वह पिट को बन्द कर देता है। जीवित कोशाओं में पायी जानेवाली साधारण गर्तों के प्रोटोप्लाज्म का भी आवागमन होता है। प्रान्ती गर्त जलवाहि-कोशाओं (ट्रैकोइड्स, tracheids) और वाहिनियों (वेसल्स, vessels) में बहुतायत से पाये जाते हैं। साधारण गर्त भी उनमें होते हैं, परन्तु ये कुछ जीवित कोशाओं में अक्सर पाये जाते हैं। काष्ठ पॅरेकाइमा (wood parenchyma), मध्यक किरणों (medullary rays), फ्लोएम पॅरेकाइमा (phloem parenchyma), सखि कोशाओं (कम्पेनियन सेल्स—companion cells) आदि में भी साधारण पिट्स बहुतायत से पाये जाते हैं। तन्तुओं (fibres) में साधारण टेढ़े गर्त होते हैं और कभी-कभी उनमें प्रान्ती गर्त भी होते हैं। अण्डित कोशाओं (stone cells) में साधारण शाखित (branched) गर्त होते हैं।

कोशा-भित्ति की रासायनिक प्रकृति कोशा-भित्ति में अनेक रासायनिक पदार्थ होते हैं, जिनमें सेल्युलोज (cellulose) मुख्य है। जैसे-जैसे सेल आयु में बढ़ता है, सेल्युलोज में रासायनिक परिवर्तन होता जाता है और कई प्रकार के नये पदार्थ बनते जाते हैं। बहुत-सी खनिज वस्तुएँ भी कोशा-भित्त के अन्दर कभी-कभी प्रवेश पा जाती हैं।

कोशाधु (सेल्युलोज, Cellulose). तरुण कोशा की दीवार जिस पदार्थ की बनी होती है, उसे सेल्युलोज कहते हैं। इसके साथ और भी अनेक पदार्थ होते हैं जिनमें पेक्टिक यौगिक (pectic compounds) प्रमुख हैं। शुरू-शुरू में तो सेल-दीवार पेक्टिन (pectin) नामक पदार्थ की बनती है, जो शीघ्र ही अघुलनशील कैल्सियम पेक्टेट (calcium pectate) में बदल जाती है। ऐसा ही मध्य-भित्ति (middle lamella) में भी होता है। कुछ समय पश्चात् कोशा-दीवार की रचना में केवल पेक्टिन और सेल्युलोज ही रह जाते हैं, और अन्त में केवल शुद्ध सेल्युलोज ही प्रोटोप्लाज्म के स्त्राव के रूप में रह जाता है। फजाई की छोड़कर बाकी सभी पौधों के मूलायम हिस्सों की सेल-दीवार में सेल्युलोज की उपस्थिति पायी जाती है। सेल्युलोज एक मूलायम, लचकदार और पारदर्शक पदार्थ है, जो पानी के लिए प्रवेश्य (permeable) होता है। सेल्युलोज की बनी हुई दीवारें आमतौर पर पतली होती हैं और उन सेलों में जीवित प्रोटोप्लाज्म होता है। रासायनिक रूप से सेल्युलोज एक कार्बो-हाइड्रेट है जिसमें कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन नामक तत्त्व होते हैं। हाइड्रोजन

तथा ऑक्सीजन इसकी रचना मे उसी अनुपात मे भाग लेते है जिस अनुपात मे वे पानी की रचना मे। इसका सूत्र $(C_6H_{10}O_5)_n$ है। n की संख्या का अभी पता नही चला है। सेल्युलोज एक अत्यन्त आवश्यक पदार्थ है। शाकाहारी जन्तुओं का यह भोजन है। कागज, गन-कॉटन (gun-cotton), सेल्युनॉइड (celluloid) और कृत्रिम रेशम (artificial silk) जैसी वस्तुएं इससे बनाई जाती है। कपास (cotton) और रान (linen) शुद्ध सेल्युलोज होते है, और हेम्प (hemp) सेल्युलोज तथा लिगनिन का मिश्रण होता है। वेजिटेबिल आइवरी, सचित सेल्युलोज (reserve cellulose) से बनता है। और यह वेजिटेबिल-आइवरी पाम (vegetable ivory-palm, *Phytelephas*) से प्राप्त किया जाता है। अकुरण करते हुए बीजों के लिए सचित सेल्युलोज अक्सर भोजन का कार्य करता है।

प्रयोग. (क) सेल्युलोज मे पहले आयोडीन का घोल मिलाइये, फिर उसमें ५० प्रतिशत गन्धक के अम्ल (H_2SO_4) की या सान्द्र जिंक क्लोराइड (conc. $ZnCl_2$) की एक बूंद डालिए तो सेल्युलोज की दीवारें नीली या बैंगनी हो जाती है। (ख) क्लोर-जिंक आयोडाइड (chlor-zinc iodide) से सेल्युलोज नीला या बैंगनी हो जाता है, (ग) फॉस्फोरिक एसिड आयोडाइड (phosphoric acid iodide) से सेल्युलोज बैंगनी रंग का हो जाता है।

पेक्टिक यौगिक (Pectic compounds). ये पौधो मे तीन रूपों में पाये जाते है—अघुलनशील पेक्टोज, घुलनशील पेक्टिन और अघुलनशील पेक्टिक एसिड। पौधे के शरीर में ही एक रूप दूसरे रूप मे बदल सकता है। पानी मे डालने पर पेक्टिन फूलकर गोद के लसदार पदार्थ (mucilage) मे बदल जाता है, जैसे स्पाइरोगाइरा (*Spirogyra*), पौधे का सरस के समान चिपचिपा छ्दा (gelatinous sheath)। बहुत-से फलो और तरकारियो मे सेल्युलोज होता है और उनकी जेली (jelly) बनाने में प्रमुख भाग लेता है। पेक्टिन, जो कोशा-दीवार मे होता है, पौधे के शरीर की कोशाओं को आपस मे बाँध कर स्थिर रखने मे सीमेण्ट का काम करता है। सेल मे काफी मात्रा में पेक्टिन होने के कारण सेल अत्यन्त लचकदार होता है, जैसे कि कॉलेन्काइमा (collenchyma) के सेल।

कोशा-दीवार की मोटाई मे जैसे-जैसे वृद्धि होती है, वैसे-वैसे उसमें अनेक प्रकार के रासायनिक परिवर्तन होते रहते है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप अक्सर अनेक खनिज पदार्थ उसमे प्रवेश कर जाते है। कभी-कभी कोशा-भित्ति सेल्युलोज की तरह ही अपने पूर्ण जीवन भर रह सकती है या यह रूपान्तरित (modified) भी हो सकती है। यह परिवर्तन या तो सेल्युलोज के रासायनिक परिवर्तनों के कारण होते है या प्रोटोप्लाज़्म द्वारा दिये गये पदार्थों के कारण, अथवा बाहरी पदार्थों के भीतर घुसने के कारण हो सकते है। अतः कोशा-भित्ति मे लिगनिन, क्यूटिन, सबरिन, म्यूसिलेज या खनिज पदार्थों का जमाव (impregnation) हो सकता है। कोशा-भित्ति मे निम्नलिखित परिवर्तन होते है:

(१) **लग्निफिकेशन (लिगनीफिकेशन, Lignification).** सेल्युलोज की बनी सेल-दीवार मे लिगनिन की तहों के जमा होने या फिर सेल्युलोज के ही लिगनिन (lignin, लग्निड) में बदल जाने को लिगनीफिकेशन कहते है। दोनों ही हालतों में या तो तमाम दीवार लिगनिन-युक्त (lignified) हो जाती है या फिर लिगनीफिकेशन आंशिक रूप में होता है। लिगनिन एक कठोर और गूढ़ रासायनिक पदार्थ है। यह

पौधे के कठोर और काष्ठवत् (woody) ऊतियों में पायी जाती है। लिगनिन-युक्त सेल अधिकतर मोटी दीवारवाले और मृत होते हैं। यद्यपि यह कठोर होती है, फिर भी पानी सोख सकती है, अर्थात् यह पानी के लिये प्रवेश्य (permeable) है। पानी पहुँचानेवाली सभी वाहिनियाँ (water conducting vessels) लिगनिन-युक्त होती हैं। अधिकतर वानस्पतिक (बूने जानेवाले) रेशे भी लिगनिन-युक्त होते हैं, हालांकि रुई के रेशे सेल्युलोज के बने होते हैं। लिगनिनयुक्त ऊतियों का कार्य यांत्रिक होता है, अर्थात् ये पौधे की दृढ़ता कायम रखनेमें सहायक होती है।

प्रयोग. (क) अम्ल ऐनिलीन सल्फेट या ऐनिलीन क्लोराइड (acid aniline sulphate or aniline chloride) का घोल लिगनिन को शोख पीला (bright yellow) रंग देता है। (ख) अम्ल फ्लोरोग्लुसिन (acid phloroglucin) का घोल लिगनिन को बैंगनी लाल रंग देता है। (ग) क्लोर-ज़िंक-आयोडीन (chlor-zinc-iodine) इसे पीला रंग देता है।

(२) बाह्यचर्मोपण (क्यूटिनाइजेशन, Cutinization). सेल्युलोज या थोड़े से पेक्टोजे के क्यूटिन (cutin, बाह्यचर्म) नामक पदार्थ में बदल जाने को क्यूटिनाइजेशन कहते हैं। क्यूटिन की प्रकृति मोम जैसी है। यह निश्चित रूपसे बाह्यचर्म (cuticle) नाम की तह बनाती है। यह क्यूटिकल तने और पत्तियों की त्वचा में बनता है। इसके जमा होने से कोशा-भित्ति अप्रवेश्य (impermeable) हो जाती है, या फिर बहुत थोड़ी मात्रा में पानी उसमें होकर प्रवेश कर पाता है। इसका कार्य है पौधे की सतह से वाष्पन को रोकना।

(३) त्वक्षोपण (सुबराइजेशन, Suberization). सेल-दीवार में कभी-कभी सुबरिन (suberin, त्वक्षि) नामक पदार्थ जमा हो जाता है। सुबराइजेशन कॉर्क कोशिकाओं (cork cells) की दीवारों में होता है। बोतल के कॉर्क (bottle cork) के सेल भी सुबरिनयुक्त होते हैं। सुबरिन चर्बीदार पदार्थ है और सेल दीवार को पानी के लिए अप्रवेश्य बना देता है और इसलिए क्यूटिन की ही भाँति सुबरिन भी पानी के वाष्पन को रोकता है।

क्यूटिन और सुबरिन के प्रयोग.

(क) आयोडीन के घोल और तत्पश्चात् गन्धक के अम्ल का प्रयोग दोनों को पीलापन लिये हुए भूरा बना देता है।

(ख) क्लोर-ज़िंक आयोडीन क्यूटिन और सुबरिन दोनों को भूरापन लिये हुए पीला रंग देती है।

(ग) पोटैश दोनो को पीला या भूरा रंग देता है। इसके बाद अगर क्लोर-ज़िंक-आयोडीन का प्रयोग किया जाय तो दोनों बैंगनी हो जाते हैं। क्यूटिन फिर भी पोटैश की क्रिया का विरोध भली प्रकार करती है।

(घ) तीक्ष्ण क्लोरोफिल घोल के साथ अगर इन्हें एक घण्टे तक रखा जाय तो दोनो गहरी हरी हो जाती है।

(ङ) जब ये दोनो सूडान ३ (Sudan III) से मिलायी जाती है तो वे लाल हो जाती है।

(४) क्लेदीय परिवर्तन (Mucilaginous change). सेल्युलोज एक प्रकार के लसदार पदार्थ में भी बदल जाता है। इस लसदार पदार्थ को म्यूसिलेज (क्लेद, mucilage) कहते हैं। यह पानी लालच के साथ सोखता है,

अपने में रखता है और एक गाढ़े और श्यान (viscous) पदार्थ में बदल जाता है। परन्तु शुष्क अवस्था में यह अत्यन्त सख्त और कटीला होता। अल्कोहल में यह घुलनशील है, घृत-कुमारी (Indian aloe) की मांसल पत्तियों में म्यूसिलेज काफी मात्रा में होता है। चाइना रोज (china rose) के फूलों में, भिण्डो के फलों में, अलसी, ईसबगोल (प्लाण्टेगो, *Plantago*) और (रुएलिया *Ruellia*) के बीज में भी यह काफी मात्रा में होता है। ये बीज पानी में भिगो देने पर फूल जाते हैं और लसदार हो जाते हैं। रेगिस्तानी पौधों की मांसल पत्तियों में भी म्यूसिलेज होता है।

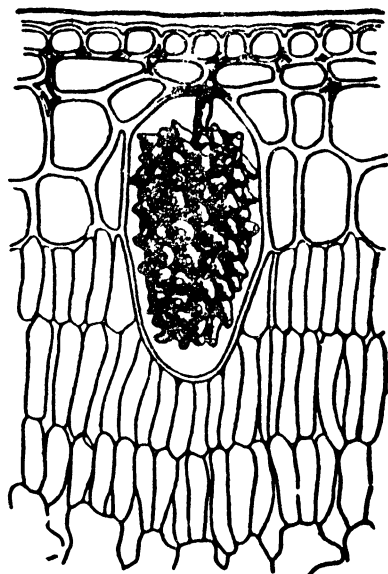
प्रयोग. (क) मेथीलीन ब्ल्यू म्यूसिलेज को गहरा नीला रंग देती है। (ख) आयोडीन का घोल और तत्पश्चात् गन्धक के अम्ल का प्रयोग इसे बैंगनी रंग देता है (देखिये सेल्युलोज)।

(५) खनिजायन (मिनरलाइजेशन, **Mineralization**). सेल-दीवार में अनेक खनिज पदार्थ प्रवेश पा सकते हैं। ये पदार्थ अधिकतर पौधे के शरीर में ही उसमें होनेवाली अनेक रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप निर्मित होते हैं, और रवों की शक्ल में कोशा-दीवार में या और कहीं जमा हो जाते हैं। इसमें सिलिका या रेत के कण और कैल्सियम ऑक्जलेट के दाने अधिक होते हैं। घास की पत्तियों में सिलिका बहुतायत से पायी जाती है। कैल्सियम ऑक्जलेट के दाने पौधों में अधिक मात्रा में पाये जाते हैं।

कैल्सियम कार्बोनेट (Calcium carbonate). यह कुछ

पौधों, विशेष कर इण्डिया रबर प्लाण्ट की पत्तियों की बाहरी परत (एपिडर्मिस, *epidermis*) में छोटे-छोटे रवों के पुंज में पाया जाता है। सतह के करीब की भीतरी दीवार यहाँ-वहाँ एक 'डण्ठल' के रूप में अन्दर की ओर उभर जाती है। डण्ठल पर कैल्सियम कार्बोनेट के छोटे-छोटे रवों के पुंज इकट्ठा हो

जाते हैं और फिर ऐसा प्रतीत होता है जैसे डण्ठल से अंगूर के गुच्छे लटक रहे हों। कैल्सियम कार्बोनेट के इस रवादार पुंज (crystalline mass) को **सिस्टोलिथ (cystolith)** कहते हैं (चित्र १२.२१)। बरगद की पत्तियों तथा बासक-कुल (*Acanthaceae*) के अनेक पौधों में भी सिस्टोलिथ पाये जाते हैं।



[After Brown]

खनिज दाने। चित्र १२.२१ इण्डिया रबर के पेड़ की पत्ती में सिस्टोलिथ।

अनेक फंजाई में और कभी-कभी एल्गी में भी, कोशा-भित्ति एक दूसरे ही पदार्थ की बनी हुई पायी जाती है इसे कठिनी (काइटिन, chitin) कहते हैं। फिर भी काइटिन जन्तुओं की एक विशेषता है।

कोशा-भित्ति के माइक्रो-रासायनिक प्रयोग (Micro-Chemical Tests of the Cell-wall)

रीएजेंट	सेल्युलोज	लिगनिन	क्यूटिन तथा म्यूसिलेज सूबरिन
१. आयोडीन का घोल	फीका पीला	गहरा पीला	गहरा पीला ..
२. क्लोर-जिक-आयोडीन	नीला या बैंगनी	पीला	पीला या भूरा ..
३. आयोडीन-घोल + गन्धक का अम्ल या जिंक-क्लोराइड	नीला	हल्का भूरा	गहरा भूरा बैंगनी
४. ऐनिलीन सल्फेट (अम्ल)	..	चमकीला पीला	
५. फ्लोरोग्लूसिन (अम्ल)	..	चमकीला लाल	
६. पोटैश	..	..	पीला ..
७. पोटैश + क्लोर-जिक आयोडीन	..	..	बैंगनी ..
८. क्लोरोफिल का घोल	..	..	हरा ..
९. सुडान III	..	..	लाल ..
१०. मेथिलीन ब्ल्यू	..	..	.. गहरा नीला

कोशान्तर्घस्तुएं (Cell Inclusions)

वनस्पति कोशा की जीवन-रहित वस्तुओं से जिन रासायनिक यौगिकों का मतलब है वे विविध प्रकार के हैं और सबका वर्णन करना यहाँ सम्भव नहीं है। इसलिए अधिकतर पाये जानेवाले और जो अधिक महत्व के हैं उन यौगिकों का थोड़ा-थोड़ा विवरण ही यहाँ पर दिया जा सकता है। इनमें से कुछ पदार्थ तो प्रोटोप्लाज्म के आहार (nutrition) से सम्बन्धित हैं, कुछ विशेष कार्य सम्पादन करते हैं, कुछ दूसरे हैं जो प्रोटोप्लाज्म के किसी भी काम नहीं आते, फिर भी उसमें रहते हैं। इस क्रम के अनुसार वे सब यौगिक तीन श्रेणियों में बाँटे जा सकते हैं—
(क) संचित पदार्थ (reserve materials), (ख) स्राव-पदार्थ (secretory products) तथा (ग) वज्र्य पदार्थ (waste products)।

(क) संचित पदार्थ (Reserve Materials).

यह प्रोटोप्लाज्म द्वारा निर्मित तथा उसी के द्वारा कोशाओं में संचित होनेवाले पदार्थ हैं। इस प्रकार संचय किये हुए पदार्थ प्रोटोप्लाज्म द्वारा अपने आहार के लिए तथा पौधे के शरीर की रचना में प्रयुक्त होते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संचित पदार्थ ही पौधे के भोजन का काम देते हैं। अनेक ऐसे पदार्थ घानी-रस (cell-

sap) में घोल की अवस्था में पाये जाते हैं, कुछ और पदार्थ ठोस रूप में जमा रहते हैं। सचित्र पदार्थों में अनेक प्रकार के (१) कार्बोहाइड्रेट (carbohydrates), (२) नाइट्रोजन युक्त पदार्थ, और (३) चर्बी तथा तेल (fats and oils) शामिल हैं।

१. कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrates).

ये वे पदार्थ हैं जिनमें कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन होते हैं। इनमें से हाइड्रोजन और ऑक्सीजन उभी अनुपात में होते हैं जिसमें कि वे पानी में होते हैं। ये पदार्थ गर्म किये जाते हैं तो जलने लगते हैं, और एक काले रंग की वस्तु बच रहती है। यह काली वस्तु कार्बन होती है। पानी भाप बनकर उड़ जाता है और कार्बन बच रहता है। कुछ कार्बोहाइड्रेट पानी में घुलनशील होते हैं; दूसरे अधुलनशील। घुलनशील कार्बोज शर्कर (sugars) और इनुलिन (inulin) हैं और वलनशील कार्बोज में सबसे महत्वपूर्ण मण्ड (starch) है।

(१) शर्कर (Sugars). पौधे के शरीर में कई किस्म की शर्कर पायी जाती है। इनमें अंगूरी शर्कर या ग्लूकोज (grape-sugar or glucose) विशेषतया अंगूरों में होती है, और गन्ने की शर्कर या सुक्रोज (cane sugar or sucrose), गन्ने और चुकन्दर में होती है। अंगूरी-शर्कर सबसे साधारण कार्बोहाइड्रेट है और इसका निर्माण सूर्य की रोशनी में, पत्तियों में पाये जानेवाले क्लोरोफ्लास्ट द्वारा होता है। कार्बोहाइड्रेट के दूसरे रूप जीवित पदार्थों की सहायता से या उसके बिना ही ग्लूकोज से बनते हैं। पौधे के शरीर में इसका संचार इसी के रूप में होता रहता है जब तक कि यह भण्डारण का काम करनेवाले भागों में नहीं पहुँच जाता। वहाँ पर यह स्टार्च एक अवलनशील कार्बोहाइड्रेट में बदल जाता है और इस प्रकार कुछ समय तक संचित रहता है। यह स्टार्च पुनः शर्कर में परिवर्तित हो सकता है। अंगूरी शर्कर या ग्लूकोज का रासायनिक सूत्र $C_6H_{12}O_6$ है, और गन्ने की शर्कर या सुक्रोज का सूत्र $C_{12}H_{22}O_{11}$ है। अंगूरों में १२—१५% ग्लूकोज होता है, गन्ने में १५—२०% सुक्रोज होता है, और चुकन्दर में १०—२०% सुक्रोज होता है।

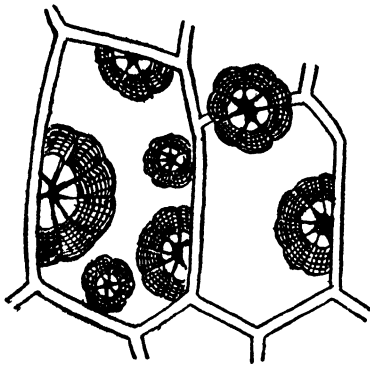
ग्लूकोज के प्रयोग

(i) नीले थोथे ($CuSO_4$ solution) के घोल की दो तीन बूँदे इसमें डालिए, इसके बाद कास्टिक सोडा का घोल इसमें तब तक मिलाइये जब तक कि मिश्रण का रंग स्वच्छ नीला न हो जाय। अब अगर इस घोल को उबाला जाय तो पहले इसका रंग पीला तत्पश्चात् फौरन ही लाल हो जाता है। (ii) फेहलिंग का घोल (Fehling's solution) इसमें मिलाकर इसे उबालिए, नीला फेहलिंग घोल ही लाल रंग का हो जाता है।

सुक्रोज का प्रयोग. सुक्रोज के घोल में एक दो बूँद गन्धक का अम्ल (H_2SO_4) की मिला कर इस घोल को उबालिये, और तब ग्लूकोज का प्रयोग करिए।

(२) इनुलिन (Inulin). इनुलिन घुलनशील कार्बोहाइड्रेट है और धानी-रस में घुला रहती है। स्टार्च की भाँति इनुलिन भी एक प्रकार की शर्कर में आसानी से बदल जाती है। डेहलिया (Dahlia) की गाँठ-जड़ों (साकन्द मूल, tuberous roots) में (चित्र १२.२२) तथा सूरजमुखी कुल (Compositae) के कुछ अन्य पौधों

में इनुलिन पायी जाती है। अगर डेहलिया की जड़ के टुकड़े अल्कोहल या ग्लिसरीन में ६ या ७ दिन या इससे ज्यादा दिनों तक डुबा रखे जायें, तो उनमें मौजूद इनुलिन का अवक्षेप (precipitate) बन जाता है। यह अवक्षेप या प्रेसिपिटेट



चित्र १२.२२ डेहलिया (*Dahlia*) की साकन्दमूल में इनुलिन के दाने।

गोलाकार रवेदार पदार्थ की शकल में होता है। तब जड़ के एक टुकड़े का सेक्शन (section) तैयार करके सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखा जाता है। ताजी जड़ों के मोटे-मोटे सेक्शन काट कर अगर तीव्र अल्कोहल में एक घण्टे रखे जायें तो भी इनुलिन का प्रेसिपिटेट बन जाता है। सूक्ष्मदर्शी से देखने पर इनुलिन के पूर्णनिमित (fully-formed) दाने सितारे के आकार के या चक्राकार दिखाई देते हैं और अर्ध-निमित दाने पखे के आकार के दिखायी देते हैं। ये दाने अधिकतर सेल-दीवार पर जमा होते हैं। ऐसा कम ही होता है कि दाने सेल की कैविटी में पड़े हों। कभी-कभी ये दाने आकार में इतने बड़े होते हैं कि कई-कई कोशाओं तक फैले होते हैं। इनुलिन की

रासायनिक रचना वही है जो स्टार्च की; अर्थात् इसका सूत्र भी $(C_6H_{10}O_5)_n$ है।

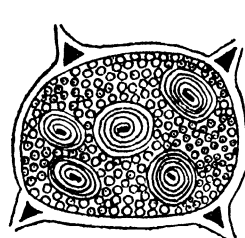
प्रयोग. जब इनुलिन अम्ल फ्लोरोग्लुसिन के घोल के साथ मिलायी जाती है, तो पीलापन लिए हुए भूरी हो जाती है। प्रेसिपिटेट किये जाने पर इनुलिन अपनी विशिष्ट आकृति के कारण आसानी से पहचानी जा सकती है।

(३) मण्ड (स्टार्च, **Starch**). स्टार्च अधुलनशील कार्बोहाइड्रेट होता है। यह नन्हें-नन्हें दानों के रूप में पाया जाता है। फजाई को छोड़कर स्टार्च के दाने पौधों में सर्वत्र पाये जाते हैं। ये पौधे के लगभग सभी अंगों में होते हैं, और

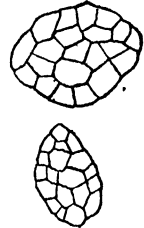


चित्र १२.२३

चित्र १२.२४



चित्र १२.२५



चित्र १२.२६

चित्र १२.२३ आलू के साधारण असंकेन्द्र दाने। चित्र १२.२४ उसी के संयुक्त दाने। चित्र १२.२५ मक्का का साधारण संकेन्द्र दाना। चित्र १२.२६ चावल के संयुक्त दाने।

खासतौर पर भण्डारघर का काम करनेवाली ऊतियों में अधिक होते हैं। अन्न तथा ज्वार-बाजरे में जो मनुष्य-मात्र के मुख्य भोजन है, स्टार्च काफी मात्रा में होता है। जब इसकी शरीर-पोषण के लिये आवश्यकता होती है तो यह शकर में बदल जाता है। स्टार्च के दाने भिन्न-भिन्न आकृतियोंवाले होते हैं—गोल और चपटे, जैसे गेहूँ में; बहुभुजाकार, जैसे मक्का में; करीब-करीब गोलाकार, जैसे मटर और सेम में; अण्डाकार जैसे आलू में; या कभी-कभी मुगदर के आकार के (dumb-bell shaped), जैसे आक्षीरी कोशाओं (latex cells) में। इनका आकार भी काफी विभिन्न होता है। बड़े-से-बड़े दाने $\frac{1}{4}$ इंच लम्बे देखे गये हैं, जैसे कैंना (Canna) के प्रकन्द (rhizome) में, और छोटे से छोटे दाने लगभग $\frac{1}{100}$ इंच लम्बे, जैसे चावल में। आलू में ये भिन्न-भिन्न आकार के होते हैं नियमानुसार जो स्टार्च के दाने भण्डारघर का काम करनेवाले अंगों, जैसे प्रकन्द, ट्यूबर, फ़्यूजीफॉर्म तथा शंकु-आकार (conical) जड़ों आदि में, ल्यूकोप्लास्ट द्वारा प्रेसिपिटेट हो जाते हैं, उन दोनों से आकार में बड़े होते हैं जो सीधे पत्तियों के क्लोरोप्लास्ट द्वारा निर्मित किये जाते हैं।

स्टार्च के दाने के एक सिरे पर एक गहरे रंग का गोल धब्बा देखा जा सकता है। इस धब्बे को हाइलम कहते हैं। यह हाइलम, दाने की उत्पत्ति का केन्द्र होता है, अर्थात् जब दाना बनना होता है तो जिस बिन्दु से उसका निर्माण शुरू होता है, पूर्ण निर्मित दाने में वह बिन्दु हाइलम कहलाता है। हाइलम के चारों ओर विभिन्न घनत्व की अनेक रेखाएँ या धारियाँ एक के बाद एक जमा हो जाती हैं। इस प्रकार स्टार्च के हर दाने की आकृति ऐसी लगती है जैसे एक के ऊपर दूसरी स्टार्च की तह जमा कर रख दी गयी हो। ऐसी आकृति को स्तरित या स्ट्रेटीफाइड (stratified) आकृति कहते हैं। जब ये तहें हाइलम के एक ओर जमा होती चली जाती हैं, जैसा कि आलू में पाया जाता है, तो दाना असंकेन्द्र (एकसेंट्रिक, **eccentric**) कहलाता है। जब ये तहें हाइलम के चारों ओर वृत्ताकार रूप में जमा हो जाती हैं, जैसा कि गेहूँ, मटर, सेम, और अनेक दालों में पाया जाता है, तो दाना संकेन्द्र (कन्सेंट्रिक, **concentric**) कहलाता है। पहले प्रकार के दाने दूसरे प्रकार के दानों की तुलना में बहुतायत से पाये जाये जाते हैं। स्टार्च के दाने जब एक हाइलम के साथ पाये जाते हैं तो साधारण दाने कहलाते हैं; किन्तु कभी-कभी, दो या दो से अधिक दाने एक ठोस समूह के रूप में पाये जाते हैं जिनमें हाइलम की संख्या उतनी ही होती है जितनी कि दानों की। ऐसे समूह को तब संयुक्त दाना कहा जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि ल्यूकोप्लास्ट दो या अधिक दाने पास-पास बना देता है, और फिर उनके चारों ओर कुछ स्टार्च की तहें निर्मित कर देता है और इस प्रकार यह सब एक पुंज के रूप में एक साथ दबे रहते हैं। यह पुंज एक संयुक्त दाना होता है। अक्सर यह पुंज ल्यूकोप्लास्ट द्वारा स्रावित कुछ साधारण तहों द्वारा घिरा रहता है। चावल (चित्र १२.२६) के एण्डोस्पर्म तथा शकरकन्द में जो स्टार्च के दाने होते हैं, वे संयुक्त दाने होते हैं। आलू में कभी-कभी कुछ संयुक्त दाने होते हैं (चित्र १२.२४)। स्टार्च की रासायनिक रचना वही है जो सेल्युलोज और इनुलिन की है। इसका भी सूत्र $(C_6H_{10}O_5)_n$ है। यह पानी और अल्कोहल में अविलनशील है। चावल में ७०-८०% स्टार्च होता है; गेहूँ में लगभग ७०%; मक्का में ६८%; जौ में ६०-६५%; अरारोट में २०-३०%; और आलू में २०%।

प्रयोग. आयोडीन के घोल के साथ प्रयोग करने पर स्टार्च नीला या काला हो जाता है। रंग की गहराई रीएजेंट की तीव्रता (concentration) पर निर्भर करती है।

संचित सेल्युलोज (Reserve cellulose). खजूर और दूसरे ताड़ों के एण्डोस्पर्म की कोशा-भित्तियों को यही पदार्थ मोटा बनाते हैं। जैसे-जैसे ताड़ का पेड़ उगता है, संचित सेल्युलोज एक पाचक पदार्थ की प्रक्रिया से शर्करा में बदल जाता है। यह पाचक पदार्थ कॉटीलीडन के स्राव करने से बनता है। इस शर्करा को भ्रूण अपने प्रयोग के लिए ले लेता है। इस विवरण से हम समझ गये कि संचित सेल्युलोज उन भोज्य-पदार्थों में से एक माना जाता है जो भ्रूण के इस्तेमाल के लिए संचित किये जाते हैं। वेजिटेबिल आइवरी पाम (*Phytelphas*) में जो संचित सेल्युलोज होता है, बहुत सख्त होता है और 'वनस्पति-हाथी-दाँत' (vegetable ivory) कहलाता है। बिलियर्ड की गेंदें (billiard balls) डमी की बनती हैं।

(४) ग्लाइकोजन (**Glycogen**). फर्माई में कार्बोहाइड्रेट ग्लाइकोजन के रूप में मिलते हैं। यह स्टार्च जैसा ही होता और शर्करा में आसानी से परिवर्तित हो जाता है। यह जानवरों में विस्तृत रूप में पाया जाता है, और इसलिए इसे कभी-कभी जन्तु-स्टार्च (animal-starch) भी कहते हैं। यह बिना रब का अकेलासीय (amorphous) सफेद पाउडर है, जो गर्म पानी में घुल जाता है। आयोडीन के घोल के साथ इसका रंग लाली लिये हुए भरा हो जाता है। गर्म करने पर रंग गायब हो जाता है और ठण्डा होने पर फिर प्रकट हो जाता है। इसका भी रासायनिक सूत्र $(C_6H_{10}O_5)_n$ है।

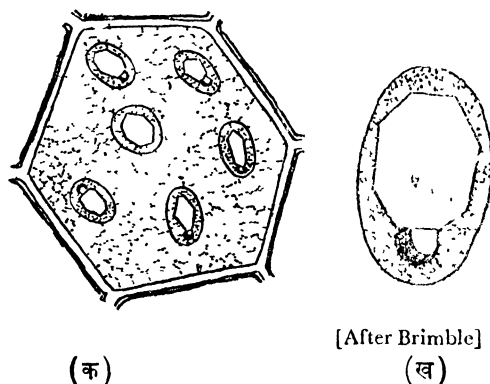
२. नाइट्रोजन-युक्त पदार्थ (Nitrogenous Materials).

नाइट्रोजन-युक्त संचित पदार्थ वे होते हैं जो पौधों में इसलिए संचित किये जाते हैं, ताकि पौधे उन्हें भोजन के रूप में प्रयोग कर सकें। ये विभिन्न प्रकार के प्रोटीड्स (proteids) और एमिनो-यौगिक (amino-compounds)—एमाइड्स और एमिनो एसिड्स, (amides and amino-acids) होते हैं।

(१) प्रोटीड्स (**Proteids**) ये जटिल कार्बनिक, नाइट्रोजन-युक्त पदार्थ हैं जिनकी रचना में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और गंधक* भाग लेते हैं। कुछ प्रोटीड्स में इन तत्वों के साथ-साथ फॉस्फोरस भी होता है। प्रोटीप्लाज्म को छोड़ कर बाकी कार्बनिक यौगिकों में प्रोटीड्स ही ऐसे यौगिक हैं जिनकी रासायनिक रचना अत्यन्त जटिल होती है। कई प्रकार के प्रोटीड्स पौधों के शरीर में पाये जाते हैं। कुछ पानी में घुलनशील होते हैं, लेकिन अधिकतर अघुलनशील ही होते हैं। कुछ नमकीन पानी में घुल जाते हैं। सभी प्रोटीड्स, फिर भी तेज अम्लों और क्षारों में घुल जाते

* प्रोटीड्स की औसत रासायनिक रचना इस प्रकार दी जा सकती है—कार्बन ५१%, हाइड्रोजन ७%, ऑक्सीजन २३%, नाइट्रोजन १८%, गंधक ०.४%, और फॉस्फोरस ०.४%।

है। भण्डारघर का काम करनेवाले अंगो में प्रोटीड्स काफी अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। कार्यशील (जिनमें वृद्धि हो रही हो) ऊतियों में उससे कम सख्या में और परिपक्व तथा अकर्मण्य ऊतियों (inactive tissues) में बिल्कुल नहीं होती। अघुलनशील या थोड़ी घुलनशील प्रोटीड का एक साधारण रूप रेंडी के बीज के एण्डोस्पर्म में पाया जाता है। इसे एल्यूरॉन का दाना (aleurone grain) कहते हैं (चित्र १२.२७)।



[After Brimble]

चित्र १२.२७ (क) रेंडी के भ्रूणपोष (endosperm) में एल्यूरॉन के दाने।
(ख) एक दाना बड़ा करके दिखाया हुआ।

एल्यूरॉन का हर दाना ठोस अण्डाकार या गोल आकार का होता है और इसके अन्दर एक रवे की तरह का पदार्थ बन्द होता है, जिसे क्रिस्टलॉइड (crystalloid) कहते हैं, और एक गोल आकार का खनिज पदार्थ होता है जिसे ग्लोबॉइड (globoid) कहते हैं। क्रिस्टलॉइड दाने के चौड़े भाग में होता है। इसकी प्रकृति प्रोटीड की तरह होती है और ग्लोबॉइड दाने के तग भागो में होता है। यह कैल्सियम और मैग्नीसियम का दोहरा फॉस्फेट (double phosphate) है। एल्यूरॉन के दाने में क्रिस्टलॉइड और ग्लोबॉइड सदा नहीं पाये जाते। ये एक दाने में एक या एक से अधिक भी हो सकते हैं और एक भी नहीं हो सकते। एल्यूरॉन के दाने का आकार भी छोटा-बड़ा होता है। जब ये स्टार्च के साथ होते हैं तो छोटे आकार के होते हैं, जैसे कि मटर में। लेकिन चिकने बीजों, जैसे कि रेंडी में काफी बड़े आकार के होते हैं।

स्टार्चवाले बीजों की अपेक्षा चर्बीवाले बीजों में सामान्य रूप से प्रोटीड्स की मात्रा प्रतिशत के हिसाब से काफी अधिक होती है। उदाहरण के तौर पर चावल में केवल ७% प्रोटीड्स होती है, गेहूँ में १२%, जबकि सूरजमुखी के बीजों में ३०% प्रोटीड्स की मात्रा होती है। दालवाले लेग्यूमिनस (leguminous), पीधे के स्टार्ची बीजों में प्रोटीड्स की मात्रा प्रतिशत उतनी ही होती है जितनी कि चर्बीवाले बीजों में। उदाहरण के तौर पर दालों में प्रोटीड्स औसतन २५% होती है।

प्रयोग. (क) आयोडीन का घोल प्रोटीड्स को पीलापन-युक्त भूरा रंग देता है।
(ख) मिलन का रोएजेंट (मरकरी नाइट्रेट) श्वेत प्रेसिपिटेट देता है, जो उबालने

पर ईंट जैसा लाल हो जाता है। (ग) कास्टिक सोडा अधिक मात्रा में प्रयोग किया जाय, और उसके बाद नीले थोथे (CuSO_4) के घोल की कुछ बूंदें डाली जायें तो बैंगनी रंग हो जाता है जो गर्म करने पर और गहरा हो जाता है (Buret reaction)।

(२) एमीनो यौगिक (Anino-compounds) नाइट्रोजन युक्त भोज्य-पदार्थों में एमीनो-यौगिक सबसे साधारण यौगिक हैं, और धानी-रस (सेल-सैप cell-sap) में घुले रहते हैं। ये पौधों के बढ़नेवाले भागों में बहुतायत से होते हैं, भण्डारघर का कार्य करनेवाली ऊतियों में उससे कम। जब प्रोटीड्स का स्थानान्तरण (translocation) आवश्यक हो जाता है, तब ये एमीनो-यौगिक अन्तिम रूप में एमाइड्स तथा एमीनो-एसिड्स में बदल जाते हैं। ये एमाइड्स और एमीनो-एसिड्स पौधों के बढ़नेवाले भागों में पहुँच जाते हैं, जहाँ प्रोटोप्लाज्म अति कार्यशील रहता है। वहाँ पर ये दोनों प्रोटोप्लाज्म द्वारा पचा लिये जाते हैं। जटिल प्रोटीड्स के निर्माण में एमाइड्स और एमीनो-एसिड्स ही प्रारम्भिक अवस्थाएँ होती हैं। इनमें कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन और कभी-कभी गन्धक होती है।

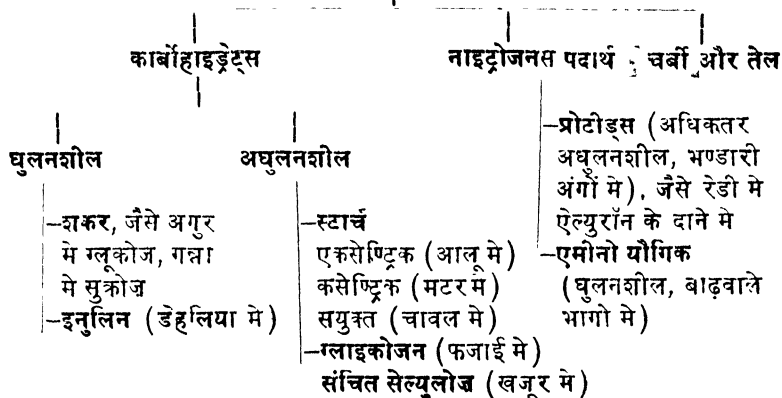
३: चर्बी और तेल (Fats and Oils).

चर्बी या तेल कम या अधिक मात्रा में सभी पौधों में होते हैं। यह प्रोटोप्लाज्म को संपृक्त (saturated) रखते हैं और कभी-कभी सारी कोशा-विबर (cell-cavity) को ही भरे रहते हैं। ऐंजियोस्पर्मस (angiosperms) में ये बीजों और फलों में विशेष रूप से जमा रहते हैं। स्टार्चवाले बीजों और फलों में चर्बी बहुत कम होती है। इनकी रचना कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से होती है; लेकिन हाइड्रोजन और ऑक्सीजन इनमें उसी अनुपात में नहीं होते जिसमें कि पानी में होते हैं। कार्बोहाइड्रेट में ऑक्सीजन की मात्रा जितनी है, इनमें उनमें काफी कम होती है। इनमें नाइट्रोजन नहीं होता। ये पानी में अधुलनशील हैं, लेकिन ईथर, पेट्रोल और क्लोरोफॉर्म (chloroform) में बड़ी आसानी से घुल जाते हैं। इनमें से कुछ ही अल्कोहल में घुल पाते हैं, जैसे रेंडी का तेल। चर्बी, चर्बीदार तेजाब (fatty acids) और ग्लिसरीन (glycerin) से बनती है। ग्लिसरीन सम्भवतः ग्लकोज से बनती है, और चर्बीदार तेजाब शर्करा में उफान लाने के (fermentation product) परिणामस्वरूप प्राप्त होते हैं। ग्लिसरीन और चर्बीदार तेजाब लाइपेज (lipase) नामक एन्जाइम (enzyme) की उपस्थिति में मिलकर चर्बी बनाते हैं। जो चर्बी साधारण ताप पर द्रव की शक्ल में रहती है, 'तेल' के नाम से जानी जाती है। पौधों में भी चर्बी सामान्यतः तेल की ही शक्ल में रहती है। ये तेल दो प्रकार के होते हैं, स्थिर तेल (fixed oils) और शीघ्र-उड़नशील तेल (volatile oils)।

इनमें से बहुत-से तेल, भोजन, साबुन और तेल के पेण्ट बनाने, रोशनी करने, चिकना करने आदि के काम आते हैं, इसलिए आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं। उदाहरण के तौर पर, नारियल का तेल, जैतून का तेल, रेंडी का तेल, मूँगफली का तेल, अलसी का तेल, सरसों का तेल आदि।

प्रयोग. (क) ऑस्मिक अम्ल (Osmic acid) इन्हें काला कर देता है, (ख) ऐल्केनिन (alkannin) का अल्कोहलिक घोल इन्हें लाल रंग का कर देता है।

पौधों का भोजन



(ख) स्राव पदार्थ (Secretory Products).

इसमें वे सब पदार्थ शामिल हैं जो प्रोटोप्लाज्म से बनते हैं, लेकिन उसके द्वारा अपने आहार और अपनी वृद्धि के लिए उपयोग नहीं किये जाते। ये पौधे में कुछ विशेष कार्य करते हैं। इनके नाम और वर्णन निम्नलिखित हैं:

१. **एन्जाइम्स (Enzymes)**. प्रोटोप्लाज्म द्वारा बनाये हुए घुलनशील नाइट्रोजनस पदार्थों को एन्जाइम्स कहते हैं। सामान्यतः इनको पाचनकर्ता (digestive agents) कहते हैं। इनका काम अघुलनशील यौगिकों को घुलनशील बनाना है, जैसे स्टार्च को शकर में बदलना और जटिल यौगिकों को साधारण यौगिकों में बदलना, जैसे शकर को कार्बन-डाइऑक्साइड और पानी में बदलना।

२. **रंगनेवाले पदार्थ (Colouring matters)**. अनेक रंगनेवाले पदार्थों में क्लोरोफिल और ऐन्थोसायनिन ही सबसे प्रमुख हैं। क्लोरोफिल अधिकतर पत्तियों में होती है और क्लोरोप्लास्ट्स से सम्बन्धित है। भोज्य-पदार्थ, जैसे शकर और स्टार्च इसकी सहायता से निर्मित होते हैं। ऐन्थोसायनिन बहुत-से फूलों की पखड़ियों में घुली रहती है और फूलों के विभिन्न रंग इन पर ही निर्भर हैं।

३. **मकरन्द (Nectar)**. बहुत से फूल विशेष प्रकार के सेलो या ग्रन्थियों में एक प्रकार के शहद का निर्माण करते हैं, जिसे मकरन्द कहते हैं। इसका काम परागण के लिए कीड़ों को आकर्षित करना है। कीड़े इसको खाते हैं और अकस्मात् ही पराग के दानों को अपने साथ (विवरण के लिये देखिये पराग-मेचन) एक फूल से दूसरे फूल को ले जाते हैं।

(ग) वर्ज्य पदार्थ (Waste Products).

इस शीर्षक के अन्तर्गत पौधों में पाई जानेवाली वे सब वस्तुएं सम्मिलित हैं जो प्रोटोप्लाज्म के किसी जैविक कार्य में हिस्सा नहीं लेती, न ही वे प्रोटोप्लाज्म द्वारा सीधे तौर पर निर्मित ही होती हैं। ये सब वस्तुएं जो निरर्थक वस्तुओं के नाम से

जानी जानी है, निर्माण और विघ्न को उन सब क्रियाओं के परिणामस्वरूप बन जानी है जो पौधों के शरीर में समय-समय पर होती रहती है। इसलिए इनको बाई-प्रोडक्ट्स (by-products) कहते हैं। चूंकि पौधों में कोई निकाम-व्यवस्था (excretory system) नहीं होता, ये निरर्थक वस्तुएँ या बाई-प्रोडक्ट्स पेड़ की छाल, पुरानी पत्तियों, मृत काष्ठ और दूसरी विशेष कोशाओं में प्रोटोप्लाज्म की क्रियाशीलता के क्षेत्र से दूर इकट्ठी हो जानी हैं। इस प्रकार इन्हें 'मल' (excretions) के नाम से भी सम्बंधित कर सकते हैं। ये दो प्रकार की हो सकती हैं (अ) नाइट्रोजन-रहित (non-nitrogenous) या (ब) नाइट्रोजन-युक्त (nitrogenous)।

(अ) नाइट्रोजन-रहित (Non-nitrogenous).

१. टैनिन (Tannins). पौधों में टैनिन काफी विस्तार के साथ पायी जाती है। ये पानी-रस (cell-sap) में घुली रहती हैं। पौधों के लगभग हर अंगों में टैनिन पाया जाता है, या फिर कोशाओं के छोटे-छोटे समूहों में। नई या पुरानी पत्तियों में, और बहुत-से कच्चे फलों में टैनिन काफी मात्रा में होती है। फलों के पकने के साथ-साथ टैनिन अदृश्य होती जाती है। छाल (bark) या हृद्-काष्ठ (heart-wood) में भी टैनिन होती है। मिरोबलांस (myrobalans) के फलों में भी ये काफी मात्रा में होती हैं, उदाहरण है—हरीतकी, अर्थात् हरं या हड (chebulic myrobalan), बहेडा (beleric myrobalan), आमला या आंवला (emblic myrobalan)। चाय की पत्तियों में लगभग १८% टैनिन होती है। 'गाल्स' (galls) में २५%—७५% तक टैनिन होती है। कट्या (catechu) जो एक प्रकार की टैनिन होती है, अकेसिया कटेसू (*Acacia catechu*) के हृद्-काष्ठ (heart-wood) में प्राप्त की जाती है। यह सुपारी (betel-or areca-nut) में भी मौजूद होती है। टैनिन का स्वाद तीखा होता है और इसलिए मिरोबलांस का फल और 'बहुत तेज' चाय स्वाद में तीखे या कड़वे लगते हैं। यह न सड़नेवाला (एसेप्टिक, aseptic) पदार्थ है, अर्थात् परजीवी फंजाई और कीड़ों के आक्रमणों से सुरक्षित होता है। टैनिन की उपस्थिति लकड़ी को सख्त और टिकाऊ बना देती है। टैनिन के लाभ विविध हैं, लोहे के लवणों के साथ मिलाकर यह स्याही बनाने के काम आती है। उद्योग में यह व्यापक रूप में प्रयुक्त होती है, अर्थात् मुर्दा जानवरों की खाल से चमड़ा बनाने में, और अनेक दवाओं में भी इनका प्रयोग होता है।

प्रयोग. (क) लोहे के लवण (Iron salt) जैसे फेरिक क्लोराइड (ferric chloride) इसे नीला-काला रंग देता है। (अगर एक कच्चा केला चाकू से काटा जाय तो चाकू काला पड़ जाता है। यह केले में मौजूद टैनिन की चाकू के लोहे के साथ होनेवाली क्रिया के कारण होती है)। (ख) क्रोमिक अम्ल (chromic acid) या पोटैसियम-डाइक्रोमेट (potassium dichromate) टैनिन को गहरा भूरा रंग देते हैं।

२. सुगन्धित-तेल (Essential oils). ये तेल शीघ्र उड़नशील (volatile) होते हैं, और तेल ग्रन्थि (oil-glands) नामक ग्रन्थियों में पाये जाते हैं। चकोतर

(shaddock), नीबू, सुगन्धित घास (lemon grass, *Andropogon*), यूकेलिप्टस (*Eucalyptus*) की पत्तियों और नारंगी के छिलके में जो पारदर्शक बिन्दु होते हैं, वे सब तेल-ग्रन्थियाँ हैं। बहुत-से पौधों, जैसे गुलाब, चमेली आदि के फूलों में भी तेल-ग्रन्थियाँ होती हैं। इन फूलों की सुगन्ध इनमें पाये जानेवाले सुगन्धित तेलों के कारण होती है। ये तेल चर्बीदार तेलों से दो बातों में भिन्न हैं, एक तो रासायनिक रचना में, और दूसरे शीघ्र उड़नशील प्रकृति में। ये पानी में इस हद तक घुलनशील हैं कि पानी में इनका स्थायी और गन्ध आ जाता है। शीघ्र उड़नशील होने के कारण सुगन्धित तेल (essential oils) पौधों से आसवन (distillation) की क्रिया द्वारा प्राप्त किये जाते हैं, जबकि स्थिर तेल (fixed oils) केवल दबाव (pressure) द्वारा प्राप्त किये जाते हैं। चर्बीदार तेलों की भाँति ये भी ईथर, पेट्रोलियम आदि में शीघ्र घुल जाते हैं और वही प्रयोग जो उनके साथ किये जाते हैं, इनके साथ भी किये जाते हैं। ये अल्कोहल में घुलनशील हैं, जबकि चर्बीदार तेल अघुलनशील होते हैं। व्यावसायिक महत्त्व के केवल २०० प्रकार के ही आवश्यक तेल हैं। इनमें से कुछ के नाम हैं, नीबू का तेल, यूकेलिप्टस का तेल, लौंग का तेल (clove oil), लेवेंडर का तेल (lavender oil), चन्दन का तेल (sandal-wood oil), बन अजवाइन का तेल (thyme oil) इत्यादि।

प्रयोग. औस्मिक अम्ल (osmic acid) इन्हें काला रंग देता है और ऐल्कैनिन (alkannin) लाल।

३. **रेजिन (Resins).** यह मुख्य तौर से कोनिफर्स (conifers) के तनों में पाया जाता है। यह विशेष नालियों या नाडियों में होता है। इन नालियों को रेजिन-डक्ट (resin-ducts) कहते हैं। रेजिन पीले रंग का ठोस पदार्थ है जो पानी में नहीं घुलता, परन्तु अल्कोहल, तारपीन और स्पिरिट में घुल जाता है। जिस लकड़ी में रेजिन होती है उसकी शक्ति और जीवन-काल बढ़ जाता है। थोड़ी-सी तारपीन भी इसके साथ-साथ होती है जो आसवन (डिस्टिलेशन) से अलग कर ली जाती है और स्वच्छ रेजिन अवशेष रह जाता है।

प्रयोग. ऐल्कैनिन रेजिन को लाल रंग देती है।

४. **गोंद (Gums).** अनेक प्रकार के पौधों में गोद बनते हैं। यह अल्कोहल में अघुलनशील है, परन्तु पानी में घुल जाते हैं। पानी में डालने पर गोद फूल जाता है और चिपचिपा हो जाता है। अनेक फूल-युक्त (phanerogamic) पौधों में गोद पाये जाते हैं और कई प्रकार के होते हैं। अकेसिया सेनेगल (*Acacia senegal*) से हमें व्यापार में काम आनेवाला श्रेष्ठ गोंद—गम अरेबिक (gum-arabic) प्राप्त होता है। रेजिन के साथ घोल के रूप में भी गोद पाये जाते हैं।

प्रयोग. (क) आयोडीन के घोल से गोद भूरे रंग का हो जाता है। (ख) आयोडीन+गन्धक का अम्ल इन्हें नीला रंग देते हैं। (ग) नीले थोथे और कास्टिक पोटाश का घोल (१०% प्रत्येक) गोद को आसमानी-नीला रंग देता है।

५. **खनिज रवे (Mineral crystals).** साधारणतया पौधों में सिलिका, कैल्सियम कार्बोनेट और कैल्सियम ऑक्जलेट के रवे मिलते हैं। ये या तो कोशा-विवर (cell-cavity) में होते हैं या कोशा-भित्ति में। इनमें से कैल्सियम ऑक्जलेट के रवे अधिकांश होते हैं और विभिन्न पौधों में ये बड़े पैमाने पर पाये जाते हैं।

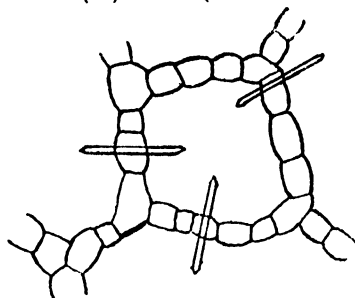
(१) **सिलिका.** यह या तो कोशा-भित्ति (cell-wall) पर तह की शक्ल में

जमी रहती है या फिर उसमें दबी रहती है। घासों की पत्तियों और इक्वीसीटम (*Equisetum*) में सिलिका अधिकतर पायी जाती है। गेहूँ की भूसी में लगभग ७२%, राई की भूसी में लगभग ५०%, और इक्वीसीटम में लगभग ७१% सिलिका होती है।

(२) कैल्सियम कार्बोनेट (**Calcium carbonate**). यह कुछ पौधों, विशेष कर इण्डिया खर प्लाण्ट की पत्तियों की बाह्य त्वचा (epidermis) में खेदार पदार्थ के पुंज की शकल में पाया जाता है (चित्र १२.२७)।

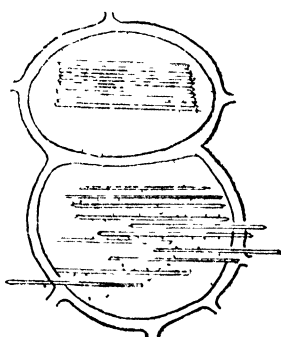
(३) कैल्सियम ऑक्जलेट (**Calcium oxalate**). यह भी रवों की शकल में होता है और ये रवे कई प्रकार के पाये जाते हैं। (क) रेफाइड्स, (ख) कार्ग्लोमरेट रवे या स्फीरो-क्रिस्टल्स और (ग) अष्टभुजी और दूसरी आकृतिवाले रवे।

(क) रेफाइड्स (**Raphides**). यह सुई की आकृति के रवे होते हैं जो

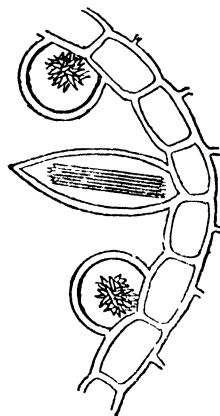


खनिज दाने। चित्र १२.२८
एकाकी रेफाइड्स।

एकाकी (चित्र १२.२८) या गुच्छों में (चित्र १२.२९) पाये जाते हैं। अविकाश पौधों में रेफाइड्स कम या अधिक मात्रा में होते हैं, लेकिन विशेष तौर पर एराण्डम (aroids), पाना या जल गोभी (पिस्टिया, *Pistia*), वाटर हायसिन्थ (water hyacinth), ओल या सूरण (*Amorphophallus*), गुलमेहदी आदि में पाये जाते हैं। रेफाइड्स कभी-कभी कोशा-दीवार में बन्द रहते हैं, ताकि प्रोटोप्लाज्म के स्पश में न आ सके।



चित्र १२.२९



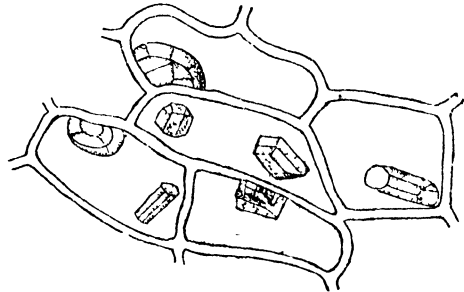
चित्र १२.३०

चित्र १२.२९ रेफाइड्स के गुच्छे, नीचेवाले सेल में भित्ति टूटने के कारण तेजी से बाहर निकलते हुए दिखाई दे रहे हैं। खनिज दाने (क्रमशः)। चित्र १२.३० घुइयाँ में स्फीरो-क्रिस्टल्स और रेफाइड्स का एक गुच्छा।

(ख) कांग्लोमेरेट रवे या स्फ़ीरो-क्रिस्टल्स (Conglomerate crystals or sphaero crystals). यह रवो के ऐसे गुच्छे होते हैं जो एक ही केन्द्र बिन्दु से फैले होते हैं, और इसलिए उनकी आकृति कुछ-कुछ तारे के सदृश होती है। ये जले-कुम्भी (water pettuce), कचालू (taro) आदि में होते हैं।

(ग) अष्ट-भुजी, घनाकार, प्रिस्माकार और इण्डाकार रवे (Octahedral, cubical, prismatic and rod-like crystals).

कैल्सियम ऑक्जलेट के इस प्रकार के रवे पौधों में अक्सर पाये जाते हैं। ये प्याज के सखे छिलकों में आसानी से देखे जा सकते हैं।



खनिज दाने: चित्र १२.३२ प्याज के सूखे शल्कपत्र में विभिन्न प्रकार के कैल्सियम ऑक्जलेट के रवे।

प्रयोग. (क) नमक, शोरे और अम्लो के तेजाबों (HCl, HNO₃ या H₂SO₄) में कैल्सियम कार्बोनेट और कैल्सियम ऑक्जलेट दोनों के रवे घुल जाते हैं।

केवल कार्बोनेट के रवो के घुलने के साथ कार्बन-डाइऑक्साइड गैस के बुलबुले उठते दिखाई देते हैं। (ख) मिरके के अम्लो (acetic acid) में केवल कैल्सियम कार्बोनेट के रवे ही घुलते हैं, ऑक्जलेट के नहीं।

६. आक्षरी (Latex). आक्षरी कोशाओ तथा बाहिनियों में पाये जानेवाले दूध की तरह के रस को लेटेक्स कहते हैं (चित्र १३.१७ १३.१८)। बहुधा यह एक विशेष प्रकार के घोल (एमलशन, emulsion) के रूप में रहता है जिसमें कई प्रकार के रासायनिक पदार्थ हैं। आहारी पदार्थों में शकर, स्टार्च के दाने (rod या dumb-bell shaped), प्रोटीड्स और तेल पाये जाते हैं; तथा निरर्थक पदार्थों में गोंद, रेजिन, टैनिन, ऐल्केलॉइड (alkaloids), रबर इत्यादि, साधारणतया मिलते हैं। इसमें कुछ किस्म के लवण, एन्जाइम और कभी-कभी कुछ जहरीले पदार्थ भी होते हैं। लेटेक्स के कार्य का अच्छी तरह पता नहीं है। सम्भवतः यह आहार, घावों से भरने तथा परजीवियों और जानवरों से बचने के कार्य से सम्बन्धित है। अक्सर लेटेक्स सफेद और दूधिया होता है, जैसे मबार, कनेर (oleander), कटहल, स्पर्जेंज इत्यादि में। कभी-कभी यह रंगीन (पीला, नारंगी या लाल) भी होता है, जैसे अफीम (opium poppy), पीला धतूरा या भरभण्डा इत्यादि में, या कभी-कभी पानी की तरह का जैसे केला में।

७. कार्बनिक अम्ल (Organic acids). जीवन-युक्त कोशाओं का स्वभाव अम्लीय होता है अर्थात् वे नीले लिटमस के घोल को लाल करने की क्षमता रखते हैं। यह सेल-सैप में कार्बनिक अम्लों की उपस्थिति के कारण होता है। ऐसे कई किस्म के अम्ल पौधों में पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए, जैसे इमली, अनन्नास और अंगूर में टार्टरिक अम्ल (tartaric acid), नीबू, नारंगी और चकोतरा में

साइट्रिक अम्ल (citric acid); अमरूत-साक (*Oxalis*) और जगली पालक या खट्टा-मीठा (रिउमेक्स, *Rumex*) में ऑक्सैलिक अम्ल (oxalic acid); और चने तथा पथरचटा या जम्मे-ह्यात (*Bryophyllum*) और कई कच्चे फलों में मैलिक अम्ल (malic acid)। बहुत-से फलों, विशेष कर कच्चे फलों का खट्टा स्वाद इसी कारण होता है कि उनमें ये अम्ल होते हैं।

८. **इटियोलिन (Etiolin)**. क्लोरोफिल के पृथक्करण या टूटने से जो कुछ बनता है उसे इटियोलिन कहते हैं। प्रकाश के अभाव में और कुछ दूसरे कारणों से क्लोरोफिल का पृथक्करण होने लगता है। इसके फलस्वरूप एक फीका पीला पिगमेंट बनता है, जिसे इटियोलिन कहते हैं।

(ब) नाइट्रोजन-युक्त (Nitrogenous).

आराम (Alkaloids). ये जटिल नाइट्रोजन-युक्त यौगिक होते हैं और कुछ कार्बनिक अम्लों के साथ मिले हुए पाये जाते हैं। अधिकतर ये कुछ पौधों के बीजों और जड़ों में मिलते हैं। इनका स्वाद अत्यधिक कड़वा होता है और कई तो काफी जहरीले होते हैं। कुछ द्रव्य होते हैं और बाकी रवेदार ठोस, जो पानी में अधुलनशील या अल्पघुलनशील होते हैं, परन्तु अल्कोहल में आसानी से घुल जाते हैं। पौधों में पाये जानेवाले जो ऐल्केलॉइड हमें ज्ञात हैं उनकी संख्या २०० से भी अधिक है। इनमें से कुछ का जिक्र यहाँ किया जा सकता है। सिनकोना (*Cinchona*) में कुनीन (quinine) और सिनकोनीन (cinchonine), तम्बाकू में निकोटीन (nicotine); अफीम (opium) में मॉर्फीन (morphine); कॉफी (coffee) में कैफीन (caffeine); कुचला (nux-vomica) में स्ट्रिक्नीन (strychnine); प्राणघातक धतूरे (deadly nightshade, *Atropa belladonna*) में एट्रोपीन (atropine); चाय में थीन (thein); धतूरा (*Datura*) में डेटूरीन (धतूरी, daturine); मीठा-विष (bitter-sweet, *Solanum dulcamara*) में सोलेनीन (solanine) आदि-आदि होते हैं।

वर्ज्य पदार्थों की प्राप्ति, उपयोग तथा अन्त (Occurrence, use and fate of waste products). बहुत-से निरर्थक पदार्थ अन्तिम रूप से छाल और आयुप्राप्त पुरानी पत्तियों में जमा हो जाते हैं। वहाँ पर खास तौर पर छाल में, वे परजीवी फंजाई और कीड़ों के आक्रमण से और चरनेवाले पशुओं से पौधों की रक्षा करते हैं। जब छाल और पत्तियाँ गिर जाती हैं, पौधे इन निरर्थक पदार्थों से छुटकारा पा जाते हैं। ये हृद-काष्ठ (heart-wood) में भी बहुतायत से होते हैं, और उसमें स्थायी रूप से संचित रहते हैं। हृद-काष्ठ को वे सख्त और स्थायी बना देते हैं और कीड़ों तथा फंजाई के आक्रमण से उसकी रक्षा करते हैं। बीजों और फलों में ये भ्रूज की रक्षा करते हैं। फलों में मौजूद सुगन्धित तेल (essential oils) कीड़ों को पराग-सेचन के लिए आकर्षित करते हैं। जब उनका काम समाप्त हो जाता है, तो वे पखड़ियों के साथ ही अलहदा हो जाते हैं। बाह्य-ग्रन्थियों और उसनेवाले बालों (stinging hairs) में निरर्थक पदार्थ, चरनेवाले पशुओं से पौधों की रक्षा करते हैं। विशेष आन्तरिक कोशाओं या ग्रन्थियों में ये लगभग स्थायी रूप से पाये जाते हैं, और शायद कोई विशेष काम वहाँ पर ये नहीं करते। जब गोद और रेजिन विशेष

नाडियों (special ducts), नालियों या कंविटीज में आवश्यकता से अधिक मात्रा में होते हैं, तब पौधे के शरीर से कभी-कभी उनका रस बाहर निकला करता है।

धानीरस के मौलिक अंश (Constituents of the cell-sap). धानीरस में घुले हुए कुछ संचित पदार्थ (reserve materials) होते हैं, और कुछ स्राव-पदार्थ (secretory products), और त्याज्य पदार्थ भी होते हैं। यद्यपि सेल-सैप में खासतौर से घुलनशील पदार्थ होते हैं, किन्तु कभी-कभी कुछ ठोस पदार्थ भी पाये जाते हैं जो बेरवेदार या रवेदार रूप में होते हैं। (१) अकार्बनिक लवण (inorganic salts), जैसे क्लोराइड (chlorides), सल्फेट (sulphates), नाइट्रेट (nitrates) और फॉस्फेट (phosphates) सेल-सैप में सदा उपस्थित रहते हैं। (२) कार्बनिक अम्ल (organic acids), जैसे ऑक्जेलिक, मँलिक, साइट्रिक, टार्टरिक आदि और उनके अनेक लवण सेल-सैप में अक्सर पाये जाते हैं। (३) घुलनशील कार्बोहाइड्रेट (soluble carbohydrates) धानीरस में विशेष रूप से होते हैं। इन कार्बोहाइड्रेट्स में अनेक प्रकार के शकर विशेष महत्व रखते हैं, जैसे अगूरो में जंगूरी-शकर, गन्ने में चीनी, डेहलिया (*Dahlia*) में इनुलिन, फ्रंजाई में ग्लाइकोजन इत्यादि। (४) नाइट्रोजनस पदार्थों में से घुलनशील प्रोटीड और एमाइड और एमीनो-एसिड अक्सर सेल-सैप में घुले रहते हैं। यह विशेषकर बढनेवाले हिस्सों की कोशाओं में होते हैं और केवल थोड़ी मात्रा में भण्डारण का काम करनेवाली कोशाओं में रहते हैं। (५) स्राव-पदार्थों में ऐन्थोसायनिन होते हैं जो अक्सर फूलों की पलड़ियों में कुछ पौधों की शिशु पत्तियों (young leaves) में पाये जाते हैं। (६) कुछ पौधों के धानीरस (cell-sap) में लसदार पदार्थ या म्यूसिलेज (mucilage) होते हैं। (७) कुछ विशिष्ट कोशाओं में कुछ मल (excretory) पदार्थ होते हैं। ये टैनिन, लेटेक्स, ऐल्केलॉइड, और ग्लूकोसाइड्स (glucosides) कहलाते हैं। ग्लूकोसाइड्स वे पदार्थ हैं जो टूटने पर कुछ अन्य पदार्थों के साथ-साथ जो सुगन्धित (aromatic) होते हैं, एक प्रकार की शकर को जन्म देते हैं। सहज प्राप्य ग्लूकोसाइड के दृष्टान्त ये हैं—रीठों में सेपोनिन (saponin), नील में इण्डिकन (indican), कडवे बादाम में एमिगडैलिन (amygdalin) आदि। संचित पदार्थ के रूप में इनका प्रयोग इनमें पायी जानेवाली शकर के कारण कुछ ही हद तक निश्चित होता है। कई पौधों के ग्लूकोसाइड जहरीले होते हैं।

कोशारस के अन्तर्गत पदार्थ (Inclusions of the cytoplasm). साइटोप्लाज्म में कई प्रकार के ठोस कण और कुछ घुलनशील पदार्थ सम्मिलित पाये जाते हैं। ये अन्तर्गत पदार्थ जीवित भी हो सकते हैं और जीवन-रहित भी। इसमें प्लैस्टिड, सेण्ट्रोसोम, काण्ड्रियोसोम और गॉल्गी काय, जीवित पदार्थ हैं; जबकि कुछ संचित पदार्थ, स्राव पदार्थ और वर्ज्य पदार्थ जीवन-रहित होते हैं। उनमें से कुछ तो भोजन के रूप में लाभदायक हैं, कुछ अप्रत्यक्ष रूप से लाभदायक हैं; और कुछ किसी काम नहीं आते। इनके नाम हैं—

(१) भोजन के दाने (foodgrains), जैसे स्टार्च और एल्बूरॉन के दाने, (२) तेल के समूह (oil-globules)—चर्बी और तेल, (३) स्राव पदार्थ (secretory products), जैसे एन्जाइम, रंगनेवाले पदार्थ (क्लोरोफिल, कैरोटिन और जैन्थोफिल), (४) वर्ज्य पदार्थ (waste products), जैसे टैनिन, गोंद, रेजिन इत्यादि, (५) खनिज रवे (mineral crystals), जैसे

रेफाइड्स आदि और (६) कार्बनिक रवे (organic crystals), जैसे कैरोटिन, सेपोनिन इत्यादि।

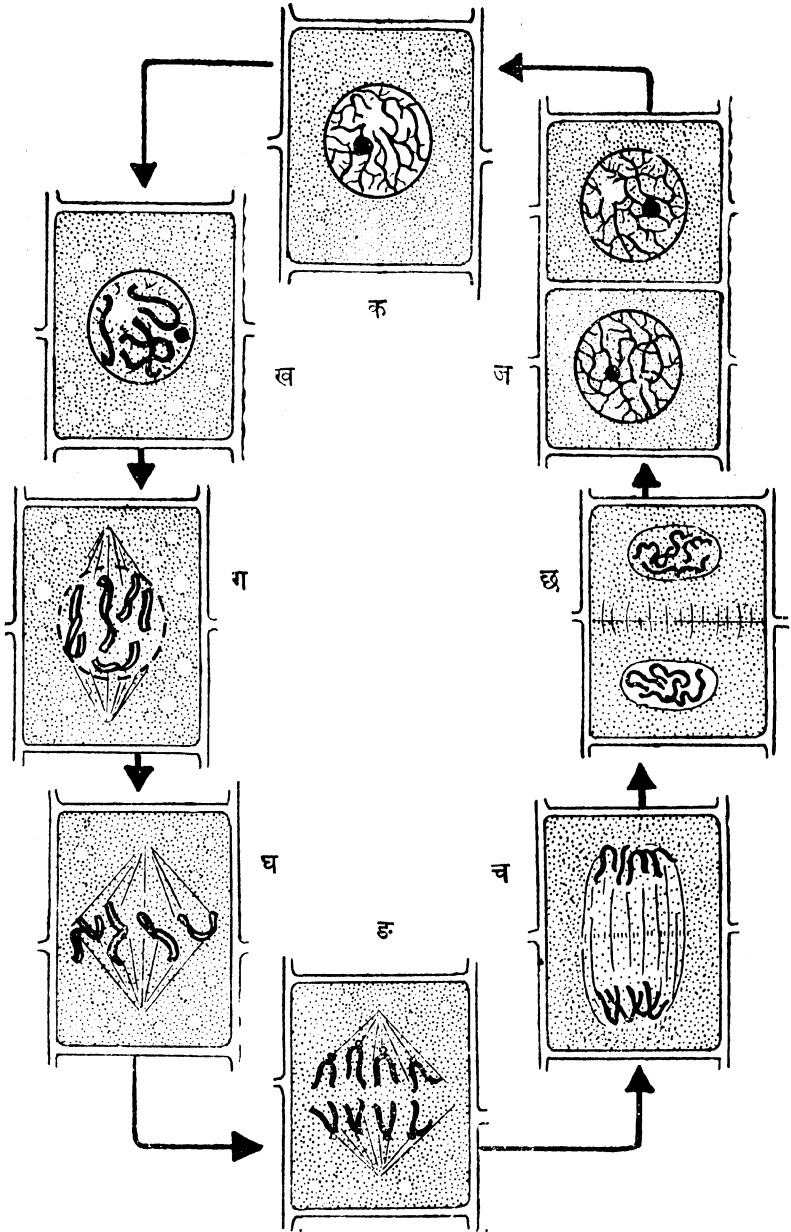
नई कोशाओं का निर्माण (Formation of New Cells)

पेड़-पौधे अपना जीवन केवल एक कोशा के रूप में आरम्भ करते हैं। यह कोशा विभाजित होती है और दो कोशाएँ बन जाती हैं, ये दो फिर विभाजित होती हैं। इस प्रकार यह भिलसिला चलता रहता है जब तक कि हजारों कोशाएँ नहीं बन जाती। इनमें से हर कोशा में एक नाभिक होता है। नाभिक पहले विभाजित होता है और उसके बाद कोशा का विभाजन होता है। और भी अनेक विधियाँ हैं जिनके अनुसार पौधों में नई कोशाओं का निर्माण होता है। ये सब विधियाँ दो श्रेणियों के अन्तर्गत रखी जा सकती हैं—(१) पहले से मौजूद कोशाओं के विभाजन (division) की विधि और (२) दो कोशाओं के सायुज्य (fusion) की विधि।

(१) पहले से मौजूद कोशाओं के विभाजन की विधि (By Division of Pre-existing Cells).

१. सूत्रि-भाजना (माइटोसिस, Mitosis) या केरियोकाइनेसिस (Karyokinesis) या वक्रविधिवत् नाभिक विभाजन (Indirect nuclear division). इस विधि में (चित्र १२.३३) पहले न्यूक्लियस का विभाजन दो नाभिकों में होता है, इस विभाजन के पूर्व ही न्यूक्लियस कई जटिल दशाओं में से होकर गुजरता है, और नाभिक विभाजन की सम्पूर्ण विधि सूत्रि-भाजना (mitosis) कहलानी है। इसके पश्चात् साइटोप्लाज्म का विभाजन (साइटोकाइनेसिस, cytokinesis) दो कोशाओं में हो जाता है। विभाजन की इस जटिल विधि द्वारा क्रोमेटिन (chromatin) के तमाम भाग पुत्री कोशाओं (daughter cells) में बराबर-बराबर बँट जाते हैं। माइटोसिस केवल पोषक भागों (vegetative organs) में ही होता है और बढ़नेवाले प्रदेशों की कोशाओं, जैसे जड़ और तने के शीर्ष (tips) में अच्छी प्रकार देखा जाता है। इस विधि में क्रमवार निम्नलिखित स्थितियाँ आती हैं।

प्रथम-भाजना (प्रोफेज, Prophase). स्थिर (Resting) न्यूक्लियस (क) आकार में बड़ा हो जाता है और नाभिकजाल (nuclear reticulum) धीरे-धीरे मोटा होने लगता है और एक लम्बे और काफी लिपटे हुए धागे का रूप धारण कर लेता है, जिसे स्पाइरीम (spireme) कहते हैं। इसके बाद यह पतले अनियमित धागों (threads) में बँट जाता है, इन टुकड़ों या धागों की संख्या निश्चित होती है और इन्हें पित्र्य-सूत्र (क्रोमोसोम, chromosomes) कहते हैं। ये टुकड़े या तन्तु या क्रोमोसोम लम्बान में विभाजित हो जाते हैं या विभाजित होने की इच्छा दर्शाते हैं। इस प्रकार हर क्रोमोसोम से यह प्रकट होता है कि दो पुत्री-तन्तुओं (daughter filaments) का बना हुआ है, जो एक दूसरे के साथ चिपके हुए हैं, और कभी-कभी एक दूसरे के ऊपर ऐंठे हुए होते हैं। क्रोमोसोम के दोनों में से प्रत्येक तन्तु को क्रोमैटिड



[Redrawn from Hylander and Stanley]

चित्र १२.३३ सूत्रभाजना की स्थितियाँ।

(**chromatid**) कहते हैं। प्रत्येक क्रोमैटिड दानेदार प्रतीत होता है। ये दाने या कण भिन्न-भिन्न आकार के होते हैं। क्रोमोसोम सिकुड़ते हैं और अधिक दृढ़ हो जाते हैं तथा अजीब-अजीब आकृतियाँ धारण कर लेते हैं (ख)। पौधों की एक विशेष जाति के लिए क्रोमोसोम की संख्या 'सदा निश्चित' होती है, और इस संख्या को द्विगुण (**diploid**) या $2x$ कहते हैं। अब नाभिक के दोनों ओर टोपी के रूप में अनेकानेक कोशारसोय तन्तु (**cytoplasmic fibres or fibrils**) प्रत्यक्ष होने लगते हैं। ये तन्तु दो केन्द्रों की ओर एक दूसरे से मिल जाते हैं (**cogverge**)। इन केन्द्रों को ध्रुव (**poles**) कहते हैं। इसी बीच में क्रोमोसोम फिर सिकुड़ते हैं और मोटे हो जाते हैं तथा अपने लक्षणिक रूप (**characteristic form**) धारण कर लेते हैं (ग)। अब नाभिक कला तथा अणु-नाभिके (**nucleoli**) गायब हो जाते हैं; ये तन्तु एक स्पिण्डल (तर्कु या तकुआ) के रूप की आकृति बनाते हैं। इसको **न्यूक्लियर स्पिण्डल (nuclear spindle)** कहते हैं। यह स्पिण्डल न्यूक्लियसवाले प्रदेश में बनती है। इसके बनने की विधि कई प्रकार की हो सकती है। इसकी उत्पत्ति (**origin**) स्वयं नाभिक में हो सकती है, या न्यूक्लियस के साइटोप्लाज्मी सतह में। क्रोमोसोम अब स्पिण्डल के मध्य रेखा (**equator**) की ओर जाने की कोशिश करते हैं। न्यूक्लियर स्पिण्डल का बनना तथा क्रोमोसोमों का मध्य-प्रदेश (**equatorial zone**) की ओर जाना **प्रथम भाजना (prophase)** का अन्त चिह्नित करते हैं।

भाजना (मेटाफेज, Metaphase). मेटाफेज में स्पिण्डल पूर्णरूप से विकसित हो जाती है और क्रोमोसोम पुनः ध्रुवों की ओर जाने को तैयारी करने के पूर्व स्पिण्डल की मध्य रेखीय प्रदेश में विन्यस्त हो जाते हैं (घ)। इस स्थिति में क्रोमोसोम का लम्बान में खण्डन निश्चित और पूर्ण हो जाता है, अगर यह पहले ही प्रोफेज में नहीं हो गया रहता हो। इस तकुआ (**spindle**) के कुछ तार, जिन्हें खिंचाववाले तार या ट्रैक्शन फाइबर (**traction fibres**) कहते हैं, क्रोमोसोमों में जुड़ जाते हैं। ये तार क्रोमोसोम के एक बहुत छोटे संकुचित भाग पर जुड़े रहते हैं। इस भाग को **तर्कुयुज (सेन्ट्रोमियर, centromere)** कहते हैं। कुछ और तार जिन्हें सहारा देनेवाले तार या सपोर्टिंग फाइबर (**supporting fibres**) कहते हैं, एक पोल से दूसरे पोल तक फैले हुए रहते हैं। प्रत्येक क्रोमोसोम के दोनों धागे, अर्थात् पुत्री-क्रोमोसोम ऐसे तारों से जुड़े रहते हैं जो विपरीत ध्रुवों को जाते हैं।

भाजनोत्तरा (एनाफेज, Anaphase). अब खिंचाववाले तार (**traction fibres**) सिकुड़ते हैं, और ऐसा करने के साथ-साथ वे अपने साथ पुत्री क्रोमोसोमों को भी खींचते हैं। पुत्री-क्रोमोसोम एक दूसरे से अलग हो जाते हैं और विपरीत पोल की दशाओं के खिंचाव के तारों के साथ खिंचते चले जाते हैं। स्पष्ट है कि आधे पुत्री-क्रोमोसोम एक पोल की ओर चले जाते हैं और शेष आधे दूसरी पोल की ओर (ङ)।

भाजनान्तिमा (टेलोफेज, Telophase). पोल पर पहुँचने पर वे इकट्ठा हो जाते हैं, एक दूसरे के साथ खूब गुड़मुड़ (**coiled**) हो जाते हैं (च) और नाभिक जाल बनाते हैं। अब तकुआ (**spindle**) अदृष्ट हो जाता है और नाभिक कला चारों तरफ फैले साइटोप्लाज्म में से प्रकट होती है (छ)। अणु-नाभिक और नाभिक-रस (**nuclear plasma**) पुनः प्रकट हो जाते हैं और इस प्रकार एक पुत्री नाभिक (**daughter nucleus**) बनाते हैं।

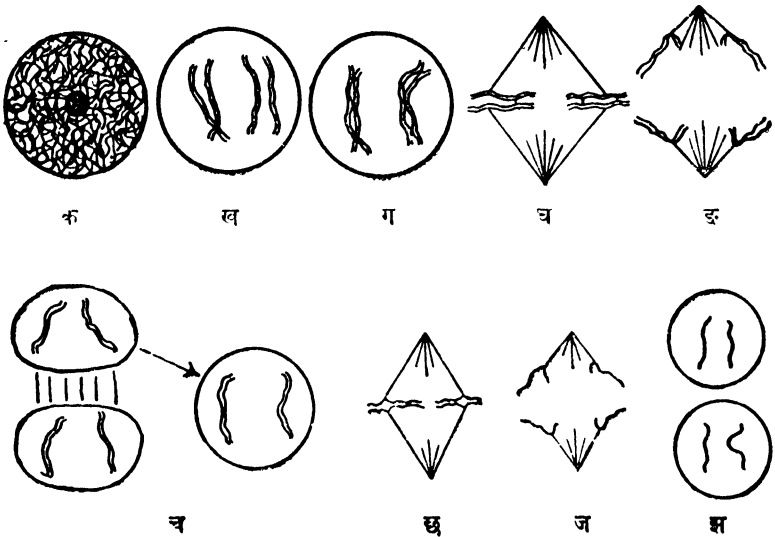
साइटोकाइनेसिस (Cytokinesis) या साइटोप्लाज्म का विभाजन और

कोशा-भित्ति का निर्माण. इधर कुछ समय से साइटोकाइनेसिस अत्यधिक अनुसंधान (investigation) का विषय रहा है। साइटोप्लाज्म का विभाजन दो रीतियों से होता दिखाई पड़ता है—पहली, मध्यरेखा क्षेत्र में एक नई कोशा-भित्ति के बनने से और दूसरी धीरे-धीरे गड्ढा बनना की रीति (furrowing) से। पहले ढंग को सेल-प्लेट की रीति (cell-plate method) कहते हैं जो वानस्पतिक विभाजन (vegetative division) में साधारणतया पायी जाती है। बहुत या यह भाजनोत्तरा (टोलोफेज) में आरम्भ होती है, जबकि मध्यरेखीय प्रदेश में साइटोप्लाज्म के नये-नये कण जमा हो जाते हैं और शीघ्र ही एक मूलायम झिल्ली बनाते हैं। इस प्रकार साइटोप्लाज्म दो नई कोशाओं में बँट जाता है (ज)। दूसरी रीति में, जो कभी-कभी परागकोश (anther) में परागकणों के बनने के समय देखी जाती है, साइटोप्लाज्म के बाहर बहिर्कोशारस (ectoplast) में संकुचन (constrictions) या गड्ढे (furrows) प्रकट होते हैं, और यह धीरे-धीरे भीतर की ओर बढ़ते हैं। इस प्रकार साइटोप्लाज्म दो भागों में विभाजित हो जाता है।

महत्त्व. कैरियोकाइनेसिस का महत्त्व इस बात में है कि नाभिक विभाजन की इस जटिल विधि द्वारा वे क्रोमेटिन के कण, जो पौष्टिक गुणों के वाहक होते हैं, विभाजन के बाद बननेवाली कोशाओं में एक समान रूप से बँट जाते हैं, और इसीलिए पुत्री-कोशाओं में भी वही गुण और विशेषताएँ आ जाती हैं जो मूल मातृ-कोशा में थीं।

२. अर्धसूत्रणा (मिओसिस, Meiosis) या प्रह्लास-भाजन (रिडक्शन डिवीजन, Reduction division). मिओसिस में क्रोमोसोम की संख्या वर्धित कोशाओं (vegetative cells) में पायी जानेवाली संख्या ($2x$) से घट कर उसकी आधी (x) रह जाती है। रिडक्शन डिवीजन बीजाणुओं (spores) के बनने में होता है। ये बीजाणु पौधों की अलिंगी प्रजनन इकाइयाँ (asexual reproductive units) होते हैं, जैसे मॉसेस (mosses) और फर्न के बीजाणु, फल-युक्त पौधों के परागकण (लघुबीजाणु, microspores) और भ्रूणसूत्र (embryo-sac) इत्यादि। इस क्रिया में बीजाणु-मातृ-कोशा दो बार विभाजित होती है जिससे एक समूह में चार बीजाणु बन जाते हैं। इन दो लगातार विभाजनों में से प्रथम मिओसिस होता है, और दूसरा माइटोसिस। अतः इस प्रकार बने हुए चार बीजाणुओं में प्रत्येक में क्रोमोसोम की घटी हुई संख्या (x) होती है। यदि बीजाणु-मातृ-कोशा (spore mother cell) में 12 क्रोमोसोम थे तो चारों बीजाणुओं में से प्रत्येक में केवल 6 क्रोमोसोम ही रह जायेंगे। फिर जब निषेचन (fertilization) होता है, अर्थात् जब लिंगी प्रजनन इकाइयाँ या जन्तु (sexual reproductive units or gametes) जो प्रत्येक x क्रोमोसोम रखती हैं एक दूसरे से मिलकर एक रूप हो जाती हैं, तब युक्ता (जाइगोट, zygote) में मूल-संख्या— $2x$ पुनः प्राप्त हो जाती है ($x+x=2x$)। रिडक्शन डिवीजन की विधि के लिए चित्र १२.३४ देखिये। प्रह्लास भाजन (reduction division) का महत्त्व यह है कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी में क्रोमोसोमों की एक निश्चित संख्या बनी रहती है।

३. असूत्रि-भाजन (एमिटोसिस, Amitosis) या सीधा न्यूक्लियर डिवीजन (Direct nuclear division). विभाजन की इस विधि द्वारा न्यूक्लियस का संकुचन होता है, अर्थात् न्यूक्लियस मध्य में या एक ओर को पतला होने लगता



[After Brown]

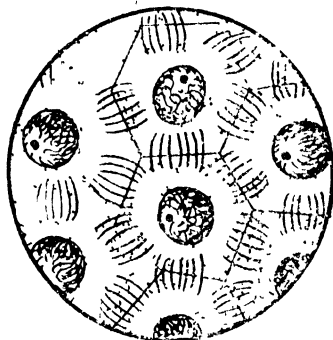
चित्र १२.३४ अर्धसूत्रणा। (क) स्थिर नाभिक। प्रथम-भाजना (prophase)। (ख) एक नाभिक जिसमें २ जोड़ (2x) पित्र्य-सूत्र हैं। (ग) एकसम (identical) पित्र्य-सूत्र जोड़े में सायुज्यित (fused) हो गये हैं। भाजना (metaphase) (घ) जुड़े हुए पित्र्य-सूत्र मध्यपट्ट (equatorial plate) पर हैं और चार जोड़ों में उनका विपाटन (splitting) हो रहा है। भाजनोत्तरा (anaphase) (ङ) जुड़े हुए पित्र्य-सूत्र ध्रुवों (poles) की ओर जा रहे हैं। भाजनान्तिमा (telophase) (नहीं दिखाया गया है) पित्र्य-सूत्र एक-दूसरे के साथ खूब गूड़मुड़ हो जाते हैं और दो नाभिक (जिनमें हरेक में x पित्र्य-सूत्र हैं) और दो कोशाओं का निर्माण होता है। इस विधि से प्रथम विभाजन समाप्त होता है। अब द्वितीय विभाजन आरम्भ होता है। प्रथम भाजना (prophase) (च) दो पुत्री-कोशाएँ, जिनमें हरेक में पित्र्य-सूत्रों की संख्या प्रह्रासित (reduced) है। भाजना (metaphase) (छ) मध्यपट्ट पर पित्र्य-सूत्र और उनका विपाटन। भाजनोत्तरा (anaphase) (ज) पित्र्य-सूत्र ध्रुवों की ओर जाते हुए। भाजनान्तिमा (telophase) (नहीं दिखाया गया है)। (झ) नाभिकों जिनमें हरेक में पित्र्य-सूत्रों की संख्या x (२) है। ऐसी दो नाभिकों चित्र में दिखाई गई हैं वैसे बनती चार हैं। देखिये चित्र (च) हरेक पुत्री कोशा दो नाभिकों बनाती है। यह द्वितीय विभाजन का अन्त है।

इस प्रकार से अर्धसूत्रणा में एक कोशा से चार पुत्री कोशाएँ बनती हैं जिनमें हरेक में पित्र्य कोशा (parent cell) से पित्र्य-सूत्र संख्या में आधे होते हैं।

अर्धसूत्रणा में दो बार विभाजन होता है जिनमें से पहले विभाजन में पित्र्य-सूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। दूसरा विभाजन सूत्रिभाजना (mitosis) की तरह होता है।

है, यहाँ तक कि अन्त में यह दो में टूट जाता है। यह विधि जारी रहती है जब तक कि मातृ-कोशा के अन्दर अनेक नाभिके नहीं बन जाती। इस प्रकार बने हुए नाभिक अक्सर छोटे-बड़े होते हैं। सीधा न्यूक्लियर विभाजन के बाद कोशा का विभाजन हो सकता है और नहीं भी हो सकता। निम्न श्रेणी के जीवों में विभाजन असूत्रिभाजन (amitosis) द्वारा होता है। उच्च श्रेणी के पौधों में पुरानी कोशाओं में ही ऐसा होता पाया जाता है और साथ ही उनमें भी जिनमें नाश (degeneration) के निश्चित चिह्न दृष्टिगोचर होने लगते हैं।

४. मुक्त कोशा-निर्माण (Free cell formation). टेढ़े या वक्रविधिवत् न्यूक्लियर विभाजन (indirect nuclear division) वा यह सपरिवर्तित रूप है (चित्र १२.३५)। वक्रविधिवत् विभाजन से यह इस बात में भिन्न है कि इस विभाजन में न्यूक्लियस के विभाजन के फौरन बाद ही सेल-दीवार (कोशा-भित्ति) नहीं बन जाती। मातृ-कोशा में लगातार विभाजन के परिणाम स्वरूप बहुत सारी नाभिके बन जाती हैं। नाभिक विभाजन के रुक जाने के बाद साइटोप्लाज़म हर न्यूक्लियस के चारों ओर इट्ठा हो जाता है और तब उनके बीच में कोशा-भित्तियाँ बनती हैं। बीजों के एण्डोस्पर्म के विकास में इस प्रकार का कोशा-निर्माण पाया जाता है।



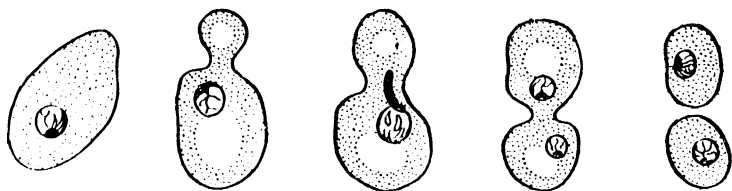
चित्र १२.३५ भ्रमपोष के विकास में मुक्त कोशा-निर्माण।

कुछ उदाहरणों में नाभिके बहुत शीघ्रता से बनती हैं। और इसके बाद उनके बीच कोशा-भित्तियाँ नहीं बनती। परिणाम यह होता है कि देखने पर मातृ-कोशा (mother cell) के अन्दर बहुत सारी नाभिके स्वतंत्र रूप में पड़ी हुई दिखाई देती हैं। इस प्रकार की रचना को बहुनाभिक (मीनोसाइट, coenocyte) कहते हैं। लेटेक्स सेल इसका उदाहरण है (चित्र १३.१७)। लेटेक्स सेल एक अतिविभक्त शाखानुमा सेल होता है जिस में बहुत सारी नाभिकें होती हैं।

कुछ उदाहरणों में मातृ-कोशा में पहले बहुत सारी नाभिके बन जाती हैं और फिर इसके बाद उनके चारों ओर कोशा-भित्तियाँ बन जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप एक मातृ-कोशा में बहुत सारे छोटे-छोटे सेल स्वतंत्र रूप में पड़े हुए हमें मिलते हैं। इस प्रकार का विभाजन अनेक एल्गी और फ़न्ग़ाई के जलजन्य (ज़ूस्पॉर्म, zoospores) और ऐस्कोमाइसिटोज (Ascomycetes, फ़न्ग़ाई का एक वर्ग) के धानी बीजाणुओं (ऐस्कोस्पॉर्स, ascospores) में पाया जाता है।

५. कुडमन (बडिंग, Budding). इस प्रकार का विभाजन एक-कोशीय खमीर (yeast) में (चित्र १२.३६) मिलता है। इस पौधे में कोशा अपने शरीर पर एक या अधिक उद्बोधों (outgrowths) बना लेती है, जो अन्ततः मातृ-कोशा में अलग हो जाती हैं। इस प्रकार के कोशा निर्माण को बडिंग कहते हैं। बडिंग लगातार एक के बाद एक या अधिक श्रेणियों में होती रह सकती है, परिणामस्वरूप

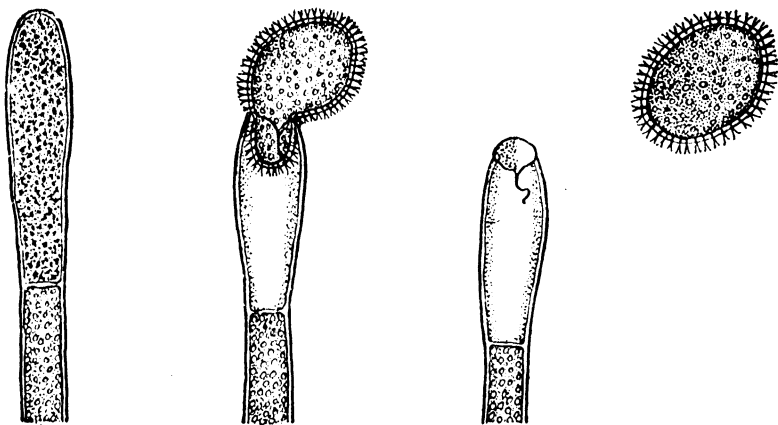
नई उद्वर्ध एक जत्रीर-सी लगने लगती है जिसमे बहुत सारे मोती (beads) जुड़े हुए हो। अन्त मे ये 'मोती' एक दूसरे से अलग हो जाते है, और इस प्रकार नई स्वतंत्र कोशाए या पौधे बन जाते है।



चित्र १२.३६ खमीर में कुड्मन (budding)।

२. दो कोशाओं के परस्पर मिलने की विधि या इसका उलटा (*By Fusion of Two Cells or Otherwise*).

१. पुनर्यौवन प्राप्ति (रिजुवीनेसेस, **Rejuvenescence**). इस विधि द्वारा वृद्धावस्था प्राप्त प्रोटोप्लाज्म का पुनः फिर यौवन प्राप्त कर लेता है। यह हरे



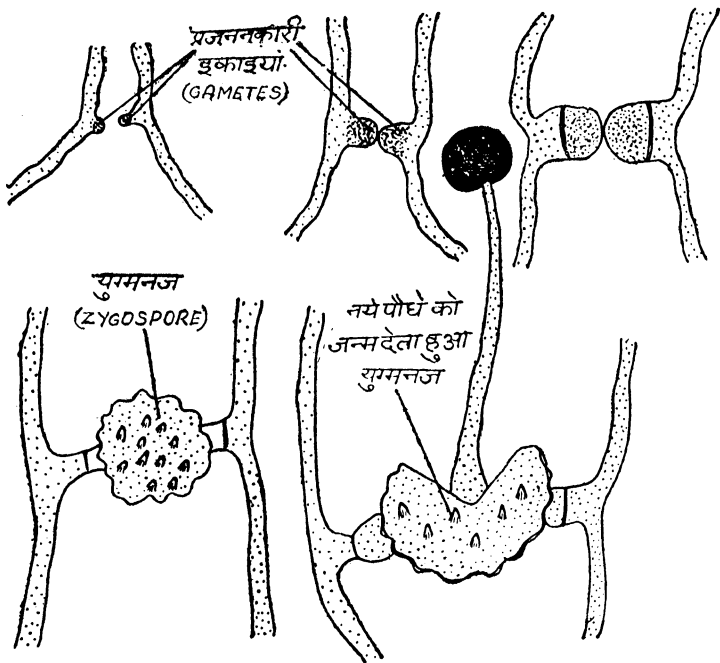
[After Brown]

चित्र १२.३७ वाँचेरिया में पुनर्यौवन प्राप्ति।

एल्गा (alga), जिसे वाँचेरिया (*Vaucheria*) कहने है, के चलजन्तु (zoospore) के व्यवहार मे देखा जा सकता है (चित्र १२.३७)। जब जूस्पोर बनता है तो कोशा की प्रोटोप्लाज्मी वस्तुए कोशा-दीवार से अलग हो जाती है, और सिकुड़ कर एक पुंज बनाती हैं तथा मातृ-कोशा के फटने से दीवार के ऊपर के भागो मे बन जानेवाले छेद या द्वार से बाहर आ जाती हैं। बाहर आते ही चलजन्तु अपने शरीर पर चारों

और अनगिनत बाल-सदृश पक्ष्म (सिलिया, cilia) बना लेते हैं और उनकी कम्पन से पानी में कुछ देर तक तेजी से तैरते रहते हैं। शीघ्र ही यह शान्त हो जाते हैं अर्थात् तैरना बन्द करके स्थिर हो जाते हैं। स्थिर होते ही तमाम सिलिया जो तैरने के साधन थे वापस खींच लिये जाते हैं। और एक व्यवस्थित कोशा-भिन्नि बन जाती है। कुछ समय तक यह 'आराम का समय' गुजारता है, और तब उगता है। चूँकि प्रोटोप्लाज्म पुनर्यौवन प्राप्त करता है, अर्थात् युवा और फुर्तीला हो जाता है और नवीन जीवन-क्रम अपना लेता है, इसलिए, इस विधि को पुनर्यौवन प्राप्ति कहते हैं।

२. संयुग्मन (कौजुगेशन, **Conjugation**). यह विधि दो प्रजननकारी इकाइयों, जो गैमीट्स कहलाती हैं और सब प्रकार से एक दूसरे के समान होती हैं, के परस्पर मिलन का नाम है, जैसे स्पाइरोगाइरा (*Spirogyra*) और म्यूकर



चित्र १२.३८ म्यूकर (*Mucor*) में संयुग्मन (conjugation)।

(*Mucor*) में (चित्र १२.३८)। इस मिलन के परिणामस्वरूप एक नई कोशा, जिसे युग्मनज (जाइगोस्पोर, **zygospore**) कहते हैं, बन जाती है। यह जाइगोस्पोर एक नये पौधे को जन्म देता है।

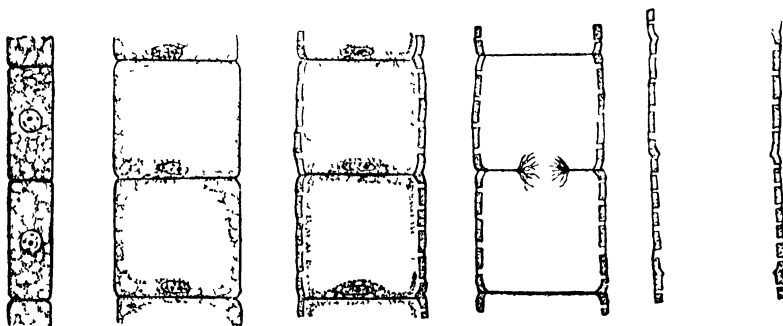
३. निषेचन या गर्भाधान (**Fertilization**). इस विधि द्वारा दो असमान प्रजननकारी इकाइयों या गैमीट्स का मिलन होता है। इन गैमीट्स को नर और मादा गैमीट्स कहते हैं। परिणामस्वरूप एक नई प्रकार की कोशा जो असमान

मिलन या निषेचन का फल है अण्डबीजाणु (ऊसोर, oospore) कहलाती है। यह अण्डबीजाणु नवीन पौधे को जन्म देता है। निषेचन पौधों में प्रजनन की सामान्य लिंगी (sexual) विधि है।

यह ध्यान देने की बात है कि दो प्रजननकारी इकाइयों या गैमीट्स के परस्पर मिलन का फल युक्ता (जाइगोट zygote, कहलाता है। संयुग्मन (conjugation) में जाइगोट युग्मनज (zygospore) कहलाता है, जैसे निम्न श्रेणी के प्लगी और फजाई में और निषेचन में अण्डबीजाणु (oospore), जैसे उच्च श्रेणी के पौधों में।

कोशा मिलन और अन्तर्कोशीय अवकाश (Cell-fusion and Intercellular spaces).

वाहिनियाँ (वेसल्स, Vessels). कभी-कभी बेलनाकार (cylindrical) कोशाओं की पक्षियों में बीच की दीवारें (cross-walls) ही टूटती और घुलती हैं, और इस प्रकार एक बड़ा छिद्र बन जाता है (चित्र १२.३९)। किनारों की या लम्बानवाली दीवारें वैसे की वैसे बनी रहती हैं। इस प्रकार कोशाओं की वह पक्षि एक नालीनुमा आकृति धारण कर लेती है। इस नालीनुमा रचना को वाहिनी (vessel) कहते हैं। इसके अन्तर्गत कोशाएँ, या वाहिनियों के टुकड़े अधिकतर पतले होते हैं और उनमें पड़नेवाले छिद्र तिरछे (oblique) होते हैं (चित्र १२.१७, १२.१८)।



चित्र १२.३९ वाहिनी के विकास की अवस्थाएँ।

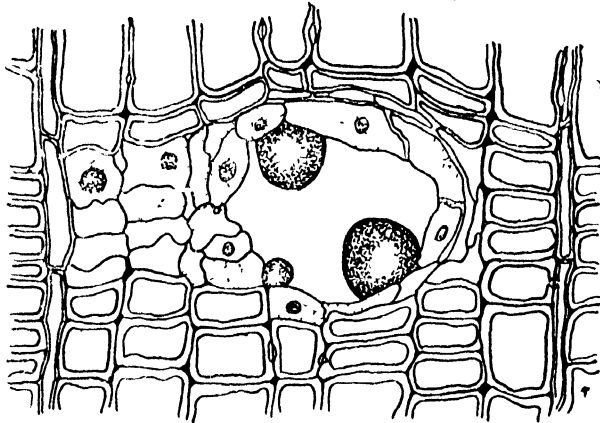
वाहिनियाँ कई प्रकार की होती हैं। वे मोटी दीवारवाली, लिगनिन-युक्त और मृत होती हैं। लिगनिन मोटा करनेवाले पदार्थ के रूपमें किनारों की दीवारों (side-walls) के अन्दर की ओर कई प्रकार में जमा होते हैं। मोटाई के अनुसार वाहिनियाँ निम्न प्रकार की हो सकती हैं—बलयाकार (annular), सर्पिल (spiral), सोढ़ीनुमा या सोपानवत् (scalariform), जालीनुमा (reticulate) और गती (pitted)। वाहिनियाँ जलवाहक और कच्चा भोज्य-पदार्थ ले जाने का काम करती हैं, अर्थात् वे इन पदार्थों को जड़ से लेकर पत्तियों तक पहुँचाती हैं। मोटी दीवारवाली और लिगनिन-युक्त होने के कारण वे पौधे के शरीर को शक्ति देने का काम भी करती हैं।

अन्तर्कोशीय अवकाश (Intercellular spaces). जब कोशाएँ अल्पवयस्क

(young) होती है तो वे बिना किसी खाली जगह या कैविटी के एक दूसरे के साथ काफी समीप और सटी रहती हैं। किन्तु ज्यों-ज्यों कोशाएँ बढ़ती हैं, उनकी दीवारें कुछ बिन्दुओं पर टूट जाती हैं और छोटी-छोटी कैविटीज़ या खाली जगहों का जन्म देती हैं। इन जगहों को अन्तर्कोशीय अवकाश (**intercellular spaces**) कहते हैं। वे हवा या पानी से भरे रहते हैं।

शाइजोजीनस कैविटीज़ (Schizogenous cavities). कभी-कभी सेल-दीवारें काफी दूर तक फट जाती हैं जिससे अनेक कोशाओं के पुंज एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। इस प्रकार उनके बीच में बड़ी-बड़ी कैविटीज़ बन जाती हैं। इनको शाइजोजीनस (*schizein*—फटना) कैविटीज़ कहते हैं, और ये कैविटीज़ एक अन्तर्सम्बन्धित व्यवस्था (inter-communicating system) का निर्माण करती हैं, ताकि गैस और द्रव पौधे के शरीर के एक भाग से दूसरे भाग में आसानी से विसरण (*diffuse*) कर सके। पौधों की अधिकतर रेजिन-नालियाँ शाइजोजीनस कैविटीज़ ही होती हैं (चित्र १२.४०)।

भंगजात विवर (लाइसीजीनस कैविटीज़, Lysigenous cavities). कभी-कभी कोशाओं के एक समूह के विकास के समय ऐसा होता है कि उनकी दीवारें



[After Holman and Robbins]

चित्र १२.४० पाइन (pine) की रेजिन नाली (resin-duct)।

टूट जाती हैं और घुल जाती हैं; और इसके परिणामस्वरूप बड़ी और अनियमित कैविटीज़ उत्पन्न हो जाती हैं, जिन्हें भंगजात (**lysigenous; lysein**—टूटना) विवर कहते हैं। ये कैविटीज़ पानी, गैसों, सुगन्धित तेल आदि को जमा रखने का काम करती हैं। इस प्रकार ये ग्रन्थियों के सदृश कार्य करती हैं (चित्र १३.१९)।

ऊति (The Tissue)

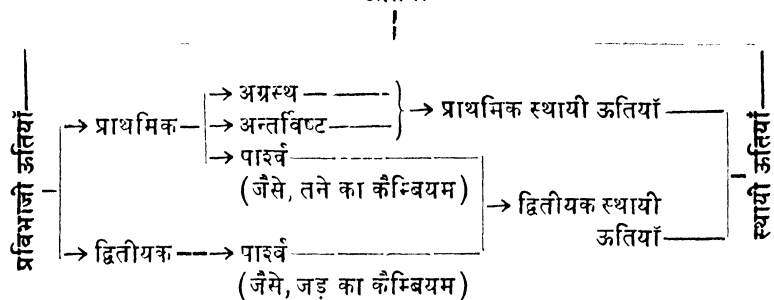
कोशाए वृद्धि करती है और एक निश्चित कार्य करने के लिए एक विशिष्ट आकार ग्रहण कर लेती है। एक ही आकार की कोशाए एक साथ वृद्धि करती है और एक समान कार्य (common function) करने के लिए एक समूह में इक्ठ्ठा हो जाती है। परिपक्व कोशाओं का प्रत्येक समूह एक ऊति को जन्म देता है। अतः 'एक ऊति कोशाओं या वाहिनियों (vessels) का एक ऐसा समूह है जो रूप, कार्य और उत्पत्ति में समान होती है।' प्रधानतया ऊतियों का दो वर्गों में विभाजन किया जा सकता है.—प्रविभाजी (meristematic) और स्थायी (permanent)।

प्रविभाजी ऊतियाँ (Meristematic tissues; meristos—विभाजन करना). यह ऐसी कोशाओं की बनी होती है जो विभाजित होनेवाली हों या हो रही हो या उनमें विभाजन की क्षमता हो। ये कोशाए आकार में गोल, अण्डाकार या बहुभुजी होती हैं, इनमें अन्तर्कोशीय अवकाश (intercellular space) नहीं होता, इनकी दीवारें पतली और एक समान होती हैं, इनमें प्रोटोप्लाज़्म अधिक मात्रा में होता है और सक्रिय होता है तथा इसमें बड़ी-बड़ी नाभिकें होती हैं; वैकुओल या तो छोटे होते हैं या होते ही नहीं। उत्पत्ति के अनुसार मेरिस्टेम या तो प्राथमिक (primary) हो सकते हैं या द्वितीयक (secondary)। प्राथमिक मेरिस्टेम पौधे के किसी अंग के विकास की आरम्भिक अवस्थाओं से रहता है और अपनी स्थिति के अनुसार यह अग्रस्थ (apical), पार्श्व (lateral) या अन्तर्विष्ट (intercalary) हो सकता है। (१) जब वह जड़ या तना के छोर पर होता है तब उसे अग्रस्थ प्रविभाजी (apical meristem) कहते हैं। (२) अन्तर्विष्ट प्रविभाजी (intercalary meristem) जब मौजूद रहता है, तो यह स्थायी ऊतियों के समूह के बीच में रहता है। यह पत्ती के आधार पर हो सकता है, जैसे चीड़ में या पर्व (internode) के आधार पर, जैसे फुल्ल घासों में और इक्वीसेटम (*Equisetum*) आदि में, या कभी-कभी पर्व-सन्धि (node) के नीचे, जैसे पोदीना में; यह अग्रस्थ मेरिस्टेम का ही अलग हुआ भाग है जो अंग की वृद्धि के कारण अग्रस्थ मेरिस्टेम से पृथक् हो गया है। (३) पार्श्व प्रविभाजी (lateral meristem) तना और जड़ के किनारों (sides) पर होता है। यह केवल एक ही तल (plane) में पार्श्व दिशा में विभाजित होता है और परवर्ती वृद्धि (secondary growth) कराता है, जैसे कैम्बियम, कॉर्क-कैम्बियम इत्यादि। अग्रस्थ मेरिस्टेम, और साथ ही अन्तर्विष्ट मेरिस्टेम भी, जब यह उपस्थित रहते हैं तो प्राथमिक स्थायी ऊतियों (primary permanent tissues) को जन्म देते हैं और पौधे के शरीर की लम्बाई में वृद्धि इन्हीं के ऊपर निर्भर है। इसके विपरीत द्वितीयक प्रविभाजी पौधे

के अंग के विकास की किसी अवस्था के समग्र बाद में विशेष दिखायी पड़ता है। यह देखा जाता है कि कुछ प्राथमिक स्थायी ऊतियाँ मेरिस्टेमेटिक हो जाती हैं, अर्थात् उनमें विभाजन की शक्ति आ जाती है, वे द्वितीयक मेरिस्टेम को बनाती हैं— उदाहरणतया जड़ की मूलएधा (cambium) और तना की अन्तरापूलएधा (इण्टर-फैसीकुलर कैम्बियम, interfascicular cambium) तथा कॉर्क कैम्बियम। द्वितीयक मेरिस्टेम सदैव पार्श्व होता है। सब द्वितीयक मेरिस्टेम द्वितीयक स्थायी ऊतियों (secondary permanent tissues) को बनाते हैं और ये पौधे के शरीर की मोटाई में वृद्धि के लिए उत्तरदायी हैं।

स्थायी ऊतियाँ (Permanent tissues). ये ऐसी कोशाओं की बनी होती हैं जिन्होंने विभाजन की क्षमता खो दी है और जिनका रूप और आकार निश्चित हो गया है। ये जीवित भी हो सकती हैं और मृत भी, पतली दीवारवाली भी और मोटी दीवारवाली भी। मेरिस्टेम की कोशाओं के विभिन्न (differentiation) से स्थायी ऊतियाँ बनती हैं और ये स्थायी ऊतियाँ प्राथमिक हो सकती हैं अथवा द्वितीयक। प्राथमिक स्थायी ऊतियाँ बढ़ते हुए भागों के अग्रस्थ प्रविभाजी (apical meristems) से बन सकती हैं और द्वितीयक स्थायी ऊतियाँ पार्श्व प्रविभाजी से।

ऊतियाँ



नोट. केवल ऐसी प्राथमिक स्थायी ऊतियों के बड़े हो जाने से प्राथमिक वृद्धि (primary growth) होती है जो कि अग्रस्थ मेरिस्टेमों (मूल-शीर्ष और स्तम्भ-शीर्ष) से भिन्नित किये गये हैं। यह एक-बीजपत्रियों और द्वि-बीजपत्रियों दोनों में एक-सा होता है। इसके विपरीत, द्वितीयक वृद्धि या परवर्ती-वृद्धि (secondary growth) उन नई (द्वितीयक) स्थायी ऊतियों के बनने से होती है जो कि पार्श्व मेरिस्टेमों द्वारा काटे जा चुके हो—उदाहरणतया कैम्बियम की भिन्न-भिन्न परतें। द्वि-बीजपत्रियों और जिम्नोस्पर्मस (नग्न बीजवाले पौधों) में कैम्बियम मौजूद होता है और इसकी क्रिया के फलस्वरूप परवर्ती-वृद्धि होती है किन्तु एक-बीजपत्रियों में कैम्बियम नहीं होता और इसलिए परवर्ती-वृद्धि भी नहीं होती।

स्थायी ऊतियों का वर्गीकरण

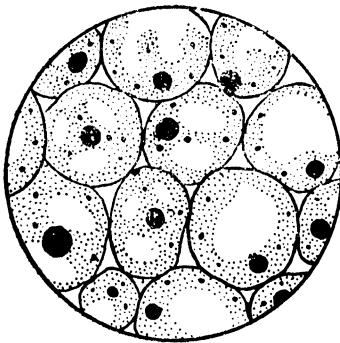
(Classification of Permanent Tissues)

प्रारम्भिक अवस्था में कोशाओं की बनावट लगभग एक-सी होती है, किन्तु जैसे-

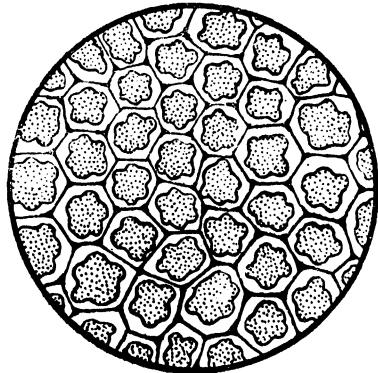
जैसे अलग-अलग काम बँटते जाते हैं, कोशाएँ भी भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण करती जानी हैं और तब वे अपने हिस्सेवाले कार्य को दक्षतापूर्वक करती हैं। चूँकि एक ही प्रकार की कोशाएँ अथवा वाहिनियाँ मिलकर विशेष प्रकार की ऊति बनाती हैं इसलिए स्पष्ट है कि पौधों के शरीर में पायी जानेवाली भिन्न-भिन्न ऊतियाँ पौधों में भिन्न-भिन्न कोशाओं और वाहिनियों (vessels) के समान होती हैं। प्राथमिक स्थायी ऊतियों का कोशाओं या वेसलों (जिनसे मिलकर वे बनती हैं)* के रूपों के अनुसार चार वर्गों में बाँटा जा सकता है।

१. जीवितक (Parenchymatous): कोशाएँ लगभग सम-व्यास.

(क) जीवितक (पैरेंकाइमा, **Parenchyma**). पैरेंकाइमेटस ऊति ऐसी कोशाओं का समूह है, जिनके व्यास लगभग एक ही (isodiametric) होते हैं, अर्थात् वे सब ओर समान रूप से विस्तृत होती हैं। साधारण रूप से जीवितक कोशाएँ (parenchymatous cells) आकार में अण्डाकार, गोल अथवा बहुभुजी होती हैं। उनकी दीवारें पतली होती हैं और सेल्युलोज की बनी होती हैं, ये साधारणतया जीवित होती हैं। जीवितक ऊति पौधों के सब मुलायम भागों में सदैव पायी जाती



चित्र १३.१



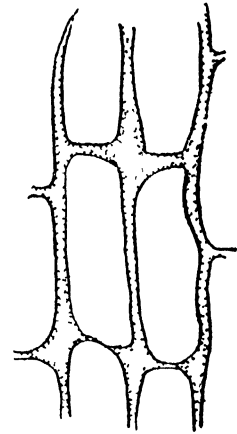
चित्र १३.२

ऊतियों के प्रकार। चित्र १३.१ जीवितक। चित्र १३.२ स्थूलकोणक, अनुप्रस्थ काट में।

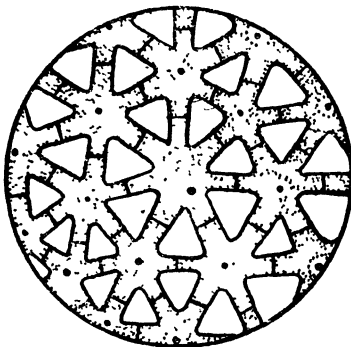
* सरल और जटिल ऊतियाँ (Simple and complex tissues). ऊतियों का दूसरा वर्गीकरण सरल और जटिल ऊतियों में किया जा सकता है। जब ऊति एक ही प्रकार की कोशाओं से बनी होती है जिससे वह सम-रचनात्मक (homogeneous) या समान रूप से विस्तृत (uniform) पूज होती है, तब वह सरल कहलाती है। पैरेंकाइमा, कॉलनकाइमा, स्क्लेरनकाइमा आदि साधारण रूप से पायी जानेवाली सरल ऊतियाँ हैं। जटिल ऊति एक से अधिक प्रकार की कोशाओं की बनी होती है, किन्तु ये सब ऊतियाँ एक इकाई की तरह संगठित रूप से कार्य करती हैं; जैसे ज़ाइलम या फ्लोएम।

है। प्रधानतः इसका कार्य भोज्य-पदार्थों को जमा करना है, जब जीवितक ऊँति मे क्लोरोप्लास्ट होता है तब उसे पर्णशादी ऊँति (क्लोरेनकाइमा, *chlorenchyma*) कहने है। इसका कार्य भोज्य-पदार्थों को बनाना है। जब तक पौधे की प्रधान साधारण ऊँतियाँ (supporting tissues) नहीं विकसित होती तब तक अस्थायी रूप से पैरंकाइमा सपोर्टिंग टिशू का भी कार्य करता है।

(ख) स्थूलकोणक (कॉलनकाइमा, *Collenchyma*)। इसमें पैरंकाइमा की कुछ लम्बी कोशाएँ होती हैं जो अन्तर्कोशीय स्थानों में कोनों पर काफी मोटी हो जाती हैं (चित्र १३.२ १३.३)। वे तने की अनुप्रस्थ काट (transverse section) में गोल या अण्डाकार दिखाई देती हैं। पेक्टिन सहित सेल्युलोज का किनारों पर जम जाना इस मोटाई का कारण है। यद्यपि ये मोटी होती हैं, किन्तु कभी भी लिगनिन-युक्त (lignified) नहीं होती। इनकी दीवारों पर इधर-उधर साधारण गर्त (simple pits) होते हैं। कॉलनकाइमा शाकीय द्वि-बीजपत्रियों (herbaceous dicotyledons) के छोटे पौधों, जैसे सूरजमुखी, लौकी आदि की खाल (एपिडर्मिस) के नीचे पाया जाता है। यह कई पर्तों में पाया जाता है और उठावों (ridges) में विशेष तौर से विकसित होता है, जैसे लौकी के तने में। कॉलनकाइमा जड़ में नहीं होता। इनकी कोशाएँ जीवित होती हैं और इनमें कुछ क्लोरोप्लास्ट भी होते हैं। पेक्टिन की उपस्थिति के कारण ये लचीले होते हैं और इस प्रकार कॉलनकाइमा जहाँ कहीं भी होता है उन भागों को शक्ति प्रदान (tensile strength) करता है। इसके साथ-साथ यह शकर और स्टार्च को भी बनाना है। अतः इसके कार्य यांत्रिक और जीवनावश्यक (mechanical and vital) दोनों हैं।



चित्र १३.३ स्थूलकोणक, अनुलम्ब काट में।



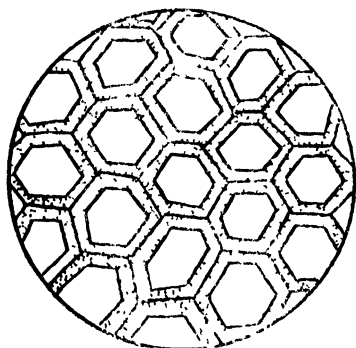
चित्र १३.४ ताराकार ऊँति।

(ग) ताराकार ऊँति (स्टीलेट टिशू, *Stellate tissue*)। स्टीलेट ऊँति (*stella*—तारा) ऐसी कोशाओं से मिलकर बनती है जो साधारण रूप में तारे के समान दिखाई पड़ती हैं (चित्र १३.४)। प्रत्येक कोशा की दीवार कई स्थानों पर बढ़ जाती है, जैसे तारों से किरणें निकलती हैं। ताराकार ऊँतियाँ जलीय पौधों में प्रायः पायी जाती हैं और कैना (*Canna*), केला आदि के पर्णवृन्तों (petioles) में भी। इन कोशाओं के बीच में काफी वायु-विवर (air cavities) छूट जाते हैं। इनमें हवा जमा हो जाती है।

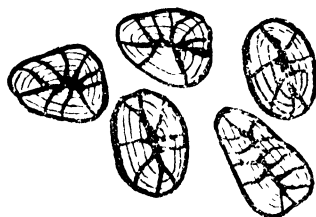
२. दीर्घोत्तक (*Prosenchymatous*). कोशाएँ जो लम्बी अधिक होती हैं और चौड़ी कम.

प्रोजनकाइमेटस ऊति. यह ऐसी कोशाओं की बनी होती है जो लम्बी अधिक होती हैं और चौड़ी कम। ये कोशाएँ या तो पतली दीवार की होती हैं या मोटी दीवार की, और साधारणतया दोनों सिरों पर नकीली होती हैं। ये जीवित या मृत हो सकती हैं, और इनकी दीवारें सेल्युलोज या लिगनिन की बनी होती हैं। नमूने की प्रोजनकाइमेटस ऊतियाँ स्क्लेरनकाइमा (*sclerenchyma*) और ट्रैकीड्स (*tracheids*) हैं।

(क) **दृढोत्तक (स्क्लेरनकाइमा, Sclerenchyma)** स्क्लेरनकाइमा (*scleros*—सख्त) बहुत लम्बी, सकरी, मोटी और लिगनिनयुक्त दीवारोवाली कोशाओं की बनी होती है। ये कोशाएँ साधारणतया दोनों सिरों पर नुकीली होती हैं। ये देखने में रेशे (*fibre*) के समान लगती हैं, इसलिए इनको स्क्लेरनकाइमा के फ़ाइबर या केवल फ़ाइबर कहते हैं। इनकी दीवार कभी-कभी इतनी मोटी हो जाती है जिससे कोशा-विवर (*cell cavity*) लगभग समाप्त हो जाती है।



चित्र १३.५



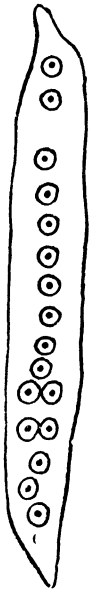
चित्र १३.६

दृढोत्तक (स्क्लेरनकाइमा)। चित्र १३.५ दृढोत्तक। चित्र १३.६ अष्टि-कोशाएँ।

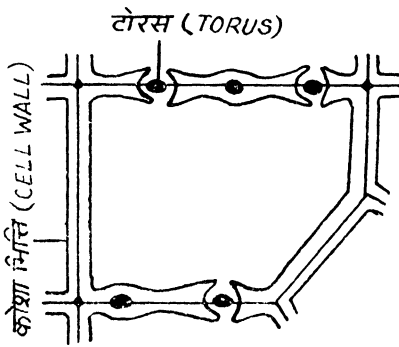
प्रायः इनकी दीवारों पर साधारण गर्त होते हैं। स्क्लेरनकाइमा की कोशाएँ पौधों में अधिकता से पाई जाती हैं। यह समूहों अथवा निश्चित परतों के रूप में होती है। ये परतें अनुलम्ब काट (*longitudinal section*) में एक दूसरे से बिल्कुल मिली हुई जान पड़ती हैं। कभी-कभी यह दूसरी कोशाओं के बीच में अकेले ही हो सकती हैं। इनकी औसत लम्बाई १ से २ मिलीमीटर है, किन्तु कभी-कभी ये २२ सेण्टीमीटर तक लम्बी हो जाती हैं। रिया (*rhea*, *Boehmeria nivea*) में रेशों की लम्बाई लगभग ४५ सेण्टीमीटर तक हो जाती है। ऐसी ही लम्बी, मोटी दीवारवाली कोशाएँ बहुत अच्छे सूती रेशे बनाती हैं; उदाहरणतया गोंजा या भोंग (*hemp*, *Cannabis*), पटसन या सन (*Indian hemp*, *Crotalaria juncea*), मद्रासी सन (*Hibiscus cannabinus*), पटुवा (*rozelles*, *Hibiscus Sabdariffa*), सीसल सन (*Agave sisalana*), मारूल या मुर्ग (*bow-string hemp*, *Sansevieria*), रिया, जूट,

नारियल, सन, अलसी आदि में मृत कोशाएँ होती हैं और इनका कार्य केवल यांत्रिक (mechanical) होता है, अर्थात् वे पौधे के शरीर को मजबूत और संलत बनाती हैं।

कभी-कभी पौधे के शरीर पर यहाँ-वहाँ विशेष प्रकार के स्कलेरोनकाइमा सेल विकसित हो जाते हैं। इनको अष्टि (stone) या **स्कलेरोटिक सेल** (sclerotic cells), और **स्कलेरोइड्स** (sclereids) भी कहते हैं (चित्र १३.६)। इन कोशाओं की दीवारें काफी मोटी होती हैं और ये बहुत लिगनिन-युक्त होती हैं। ये लम्बी और नुकीली नहीं होती, किन्तु अधिकतर एक ही व्यास की ओर आकार में अनिश्चित रूपवाली या थोड़ी लम्बी होती हैं। ये मृत होती हैं, और इनमें कोशा-विवर (cell-cavity) बहुत सकरी होती है। दीवारों में बहुत से शाखादार या बिना शाखा के साधारण गर्त (simple pits) होते हैं। अष्टि कोशाएँ (stone cells) छितरे या घने इकट्ठा रहते हैं; ये सख्त बीजों, कड़े खोलवाले (nuts) और गुठलीदार फलों में पाये जाते हैं। तना या पत्ती या फल के पैरकाइमा के पुंज में भी अष्टि कोशाओं के के समूह पाये जाते हैं।



चित्र १३.७



चित्र १३.८

जलवाहि कोशाएँ। चित्र १३.७ पाइन (pine) की एक जलवाहि कोशा जिसमें प्रान्ती गर्त हैं।

चित्र १३.८ प्रान्ती गर्त काट में।

(ख) जलवाहि ऊर्ति (Tracheal tissue). इनमें

जलवाहि कोशाओं (ट्रेकीड्स, tracheids) का समूह होता है (चित्र १३.७, १३.८)। ये लम्बी, मोटी दीवारवाली लिगनिन-युक्त कोशाएँ हैं। इनकी दीवारों पर बहुत से प्रान्तीगर्त (bordered pits) होते हैं। मोटाई की विधि के अनुसार ट्रेकीड वलयाकार (annular), सर्पिलाकार (spiral), जालनुमा (reticulate) और गर्ती या गड्ढेदार (pitted) हो सकती हैं।

सेक्शन में ये अधिकतर कोण के रूप में (angular), या तो बहुभुजी या आयताकार दिखाई देती हैं। इनके सिरे पतले हो जाते हैं, ये या तो गोल या छेनी की भाँति होते हैं, किन्तु नुकीले बहुत कम ही पाये जाते हैं। ट्रेकीड्स मृत कोशाएँ हैं और ये जलवाहि (water-conducting) वेसलों के साथ-साथ होती हैं। ये कोनीफरो (conifers) और फर्नों में बहुत अधिक पायी जाती हैं, जहाँ लकड़ी या जाइलम केवल इन्हीं में मिलकर बनती है। पौधों के इन दो समूहों में प्राथमिक काष्ठ केवल वलयाकार और सर्पिलाकार (पेंचनुमा) ट्रेकीड से मिलकर बनती है;

आयताकार दिखाई देती हैं। इनके सिरे पतले हो जाते हैं, ये या तो गोल या छेनी की भाँति होते हैं, किन्तु नुकीले बहुत कम ही पाये जाते हैं। ट्रेकीड्स मृत कोशाएँ हैं और ये जलवाहि (water-conducting) वेसलों के साथ-साथ होती हैं। ये कोनीफरो (conifers) और फर्नों में बहुत अधिक पायी जाती हैं, जहाँ लकड़ी या जाइलम केवल इन्हीं में मिलकर बनती है। पौधों के इन दो समूहों में प्राथमिक काष्ठ केवल वलयाकार और सर्पिलाकार (पेंचनुमा) ट्रेकीड से मिलकर बनती है;

कॉनीफ़रों की द्वितीयक काष्ठ में केवल गर्ती ट्रैकीड्स होती है (गर्त प्रान्ती होते हैं)। मोटी दीवारवाली और लिग्निन-युक्त होने के कारण ये ट्रैकीड पोथे को मजबूत बनाती है, किन्तु इनका मुख्य कार्य जल का संवाहन (conduction) है।

३. वाहि (वैस्कुलर, Vascular).

वाहक ऊति भिन्न प्रकार की वाहिनियों (vessels), ट्रैकियाओं (tracheae; एकवचन—trachea), और चालनी-नाल (sieve-tube) की बनी होती है। इस प्रकार वाहक ऊति दो प्रकार की होती है:—ट्रैकियल ऊति और चालनी ऊति (sieve tissue)।

(क) ट्रैकियल ऊति (Tracheal tissue). इसमें अनेक ट्रैकिया (tracheae) या सत्य वाहिनियाँ (true vessels) होती हैं (चित्र १३.९-१३.१२)। ये वाहिनियाँ बेलनाकार, नलीनुमा होती हैं; ये एक के ऊपर एक रखी हुई कोशाओं की कतारों से बनती हैं, जिनका अनुप्रस्थ दीवार घुल गई हों। इस प्रकार एक वाहिनी



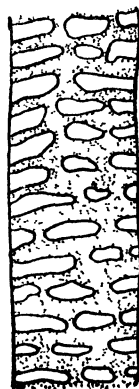
चित्र १३.९
बलयाकार।



चित्र १३.१०
सर्पिलाकार।



चित्र १३.११
सोपानवत्।

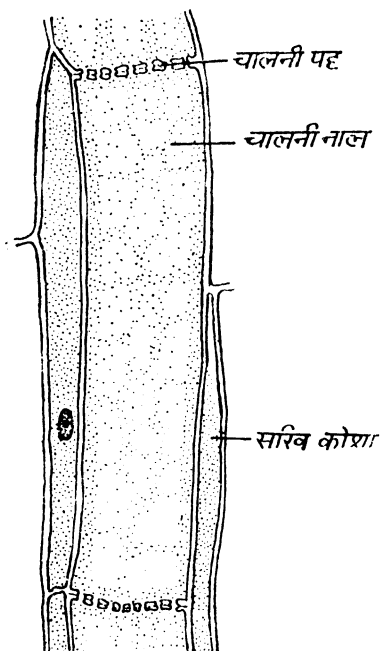
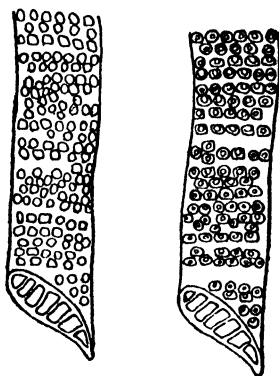


चित्र १३.१२
जालिकावत्।

वाहिनियों के प्रकार।

कोशाओं की नलीनुमा पंक्ति है, जैसे एक पाइप लाइन (pipe line) नलों के टुकड़ों को जोड़-जोड़कर बनती है वैसे ही यह भी बनती है। उनकी दीवार कई प्रकार से मोटी होती है और इसी मोटाई की विधि के अनुसार उनके नाम रखे जाते हैं, जैसे बलयाकार या छल्लेनुमा (annular), सर्पिलाकार या पेचनुमा (spiral), सोपानवत् या सीढ़ीनुमा (scalariform), जालिकावत् (reticulate) और गर्ती या गड्ढेदार (pitted)। इन जलवाहि वेसलों (वाहिनियों) के साथ-साथ कुछ जलवाहि कोशाएँ (tracheids) भी होती हैं। वेसल और ट्रैकीड मिलकर वाहपूल (vascular bundle) के ज़ाइलम या लकड़ी को बनाते हैं (चित्र १४.६)। वे जड़ों

से पत्तियों तक पानी तथा खनिज लवणों के संचालन का कार्य करते हैं। वे मृत्, मोटी दीवारवाले और लिगनिन-युक्त होते हैं, अतः वे पादप-शरीर (plant body) को मजबूती देने का यांत्रिक कार्य भी करते हैं। (ध्यान दो कि ट्रैकीड एक सेल है जिसमें पार्श्व और अनुप्रस्थ दीवारें उसी प्रकार रहती हैं, किन्तु ट्रैकिया एक सच्ची वेसल है अर्थात् उसके बीच की दीवार (transverse wall) घुल गई है और इसलिए वे देखने में नली-समान दिखाई देती हैं। दोनों ही मोटी दीवारवाली और लिगनिन-युक्त हैं और दोनों वलयाकार, मणिलाकार, सोढ़ेनुमा, जालनुमा या गर्नी हो सकते हैं।)



[After Smith]

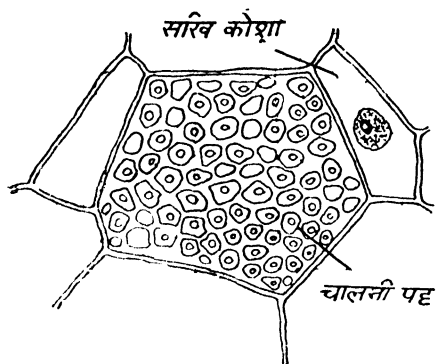
चित्र १३.१५ अनुलम्ब काट में चालनी ऊति।

चित्र १३.१३ चित्र १३.१४
गर्ती वाहिनियाँ। चित्र १३.१३ एक
वाहिनी जिसमें साधारण गर्त है।
चित्र १३.१४ प्राग्नी गर्तवाली
एक वाहिनी।

(ख) चालनी ऊति (Sieve tissue). यह चालनी नालों (sieve-tubes) के समूह की बनी होती है (चित्र १३.१५)। सीव-ट्यूब पतले और नली के समान होते हैं और ये एक दूसरे पर जुड़ी हुई लम्बी कोशाओं से मिल कर बनते हैं। इनकी दीवारें पतली और सेल्युलोज की बनी होती हैं और इनके बीच की दीवारों में अनेक छेद होते हैं। इस प्रकार इनके बीच की दीवार चालनी या छद्मी की भाँति दिखाई पड़ती है, और इसे चालनी-पट्ट (sieve plate) कहते हैं। कभी-कभी चालनी-पट्ट कोशा की किनारेवाली लम्बी दीवार (longitudinal) में भी बन जाती है। कुछ दशाओं में सीव-प्लेट बीच में क्षैतिज (horizontal) नहीं होती, किन्तु यह थोड़ी-सी टेढ़ी झुकी होती है, इस दशा में इसके भिन्न-भिन्न भाग छिद्र-युक्त (perforated) हो जाते हैं। इस प्रकार की

में इसके भिन्न-भिन्न भाग छिद्र-युक्त (perforated) हो जाते हैं। इस प्रकार की

चालनी-पट्ट को संयुक्त चालनी-पट्ट (compound plate) कहते हैं। वर्षी ऋतु (growing season) के अन्त में चालनी-पट्ट रंगहीन, चमकदार पदार्थ की तह से ढक जाती है। इसको कैलस (callus) या कैलस तह (callus pad) कहते हैं।



[After Smith]

चित्र १३.१६ अनुप्रस्थ काट में चालनी ऊति।

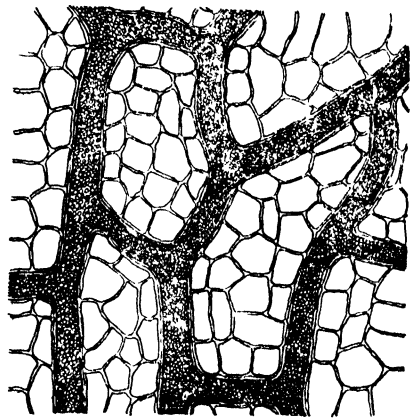
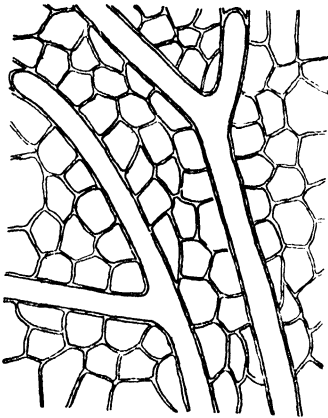
इसमें एक कार्बोहाइड्रेट, कैलोज (callose) होता है। शरद ऋतु में कैलस से सारे छेद रुन्ध-से (clog) जाते हैं, किन्तु वसन्त में जब सक्रिय ऋतु आरम्भ होती है, यह घुल जाता है। पुरानी चालनी-प्लेटो में कैलस स्थायी रूप से जमा हो जाता है। चालनी-नाल में कोई भी न्युक्लियस नहीं होता, किन्तु इसके अन्दर की ओर एक साइटोप्लाज्म की परत होती है जो कि छेदों से होकर एक दूसरे से मिली होती है। चालनी ऊति वैस्कुलर बण्डल के फ्लोएम के

भाग में पायी जाती है (चित्र १४.६)। प्रत्येक चालनी-नाल के साथ और इससे छिद्रों द्वारा मिली हुई एक पतली दीवारोवाली, लम्बी कोशा होती है जिसे सखि कोशा (companion cell) कहते हैं। यह जीवित होती है और इसमें प्रोटोप्लाज्म तथा एक लम्बी नाभिक होती है। फर्न और जिम्नोस्पर्म में सखि कोशाएँ नहीं होती, किन्तु ऐन्जियोस्पर्म में यह सर्वदा पायी जाती है। चालनी-नालों द्वारा, बने हुए भोज्य-पदार्थ प्रोटीड और कार्बोहाइड्रेट को लम्बाई के रूप में (longitudinally) पत्तियों से संग्रह करनेवाले अंगों और पौधे के वृद्धि करते हुए भागों की ओर भेजा जाता है। चालनी-पट्ट की दोनों ओर (एक बीच के भाग को रख कर) भोज्य-पदार्थों की मोटी तह जम जाती है।

४. विशेष प्रकार (Special).

(क) आक्षीरी ऊतियाँ (Laticiferous tissues). इसमें पतली दीवारवाली, काफ़ी लम्बी और अनेक शाखाओं सहित नलिकाएँ (ducts) होती हैं (चित्र १३.१७, १३.१८)। जिनमें दूध-सा रस भरा होता है। इस रस को आक्षीर (latex) कहते हैं। आक्षीरी नलिकाएँ दो प्रकार की होती हैं—आक्षीरी वाहिनियाँ (latex vessels) और आक्षीरी कोशाएँ (latex cells)। इनमें अनेक नाभिके होती हैं जो कि कोशा-भित्ति के किनारे-किनारे प्रोटोप्लाज्म की पतली परत में दबी हुई (embedded) होती हैं। दीवार साधारणतया पतली और सेल्युलोज की बनी होती है। वे अनियमित रूप से पैरकाइमा की कोशाओं में बिखरे रहते हैं। आक्षीरी नलिकाओं का कार्य स्पष्ट रूप से नहीं समझा जा सकता है। उनका कार्य भोजन-संग्रह अंगों का हो सकता है या वर्ज्य पदार्थों (waste products) के आशय (reservoirs) का। उनका कार्य सवाहक ऊतियों (translocatory tissues) का भी हो सकता है।

आक्षीरी वाहिनियाँ (Latex vessels). ये अनेक कोशाओं के मिल जाने से बनती है (चित्र १३.१८)। लम्बी मेरिस्टेमेटिक कोशाओं की पंक्तियों की दीवारों के लकड़ी के वेसल्स (wood vessels) की भाँति बीच में घुल जाने से ये बन जाती है।



[Adapted from Brown]

चित्र १३.१७ आक्षीरी कोशाएँ।

चित्र १३.१८ आक्षीरी वाहिनियाँ।

आक्षीरी ऊतियाँ।

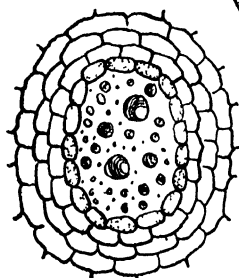
ये लगभग समानान्तर नलिकाओं के रूप में बढ़ती है, और पौधे की प्रौढावस्था में एक शाखा के दूसरे शाखा में मिल जाने पर ये जाल-सा बनाती है। आक्षीरी वाहिनियाँ कुछ कम्पोजिटी (Compositae), जैसे सॉकस (*Sonchus*) और पैपावरेसी (Papaveraceae) के सदस्यों (जैसे अफीम, उद्यान अफीम और भरभण्डा) में पायी जाती है।

आक्षीरी कोशाएँ (Latex cells). आक्षीरी कोशाएँ आक्षीरी वाहिनियों की तरह शाखा-युक्त तो होती है, किन्तु वास्तव में वे एक-सी स्वतंत्र इकाइयों के रूप में हो रहती है (चित्र १३.१७)। पहले वे छोटी-छोटी रचनाओं के रूप में बनती है, किन्तु पौधे की वृद्धि के साथ-साथ वे लम्बी हो जाती हैं। उनमें प्रत्येक दिशा में पौधे की ऊतियों में से होकर अनेक शाखाएँ निकलती है, किन्तु ये कभी भी एक दूसरे से मिलकर जाल नहीं बनाती। ये बहुनाभिक (coenocytic) होती हैं। लैटेक्स कोशाएँ स्पर्जेंज (*Euphorbia*), उदाहरणतया सीज (*Euphorbia nivulia*), मंशासीज (*Euphorbia neriiifolia*) और आक या मदार (*Calotropis*), पीला कनेर (yellow oleander, *Thevetia*), कनेर (*Nerium*) आदि में पायी जाती हैं।

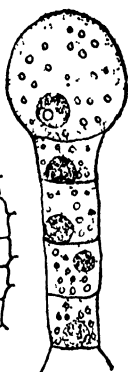
(ख) ग्रन्थिमय ऊति (Glandular tissue). यह ऊति ग्रन्थियों की बनी होती है। ये विशेष प्रकार की आकृतियाँ हैं जिनमें कुछ स्राव (secretory) पदार्थ या उत्सर्ग (excretory) पदार्थ होते हैं। ग्रन्थि पृथक रूप से अकेली कोशाओं से बन सकती है या मध्यवर्ती विवर (cavity) सहित या उसके बिना कोशाओं के छोटे-छोटे समूहों से भी बन सकती है। ये कई प्रकार की होती हैं। या तो यह पौधे

की खान (एपिडर्मिस) के ऊपर बाहर की ओर हो सकती है (external gland), या पौधे के आन्तरिक ऊतकों में ये जमी हुई हो सकती है। ये पैरकाइमा की प्रकृति की होती हैं ; इनमें प्रोटोप्लाज्म अधिक मात्रा में होता है, एक बड़ा न्यूक्लियस भी होता है। इनमें भिन्न-भिन्न पदार्थ होते हैं और इनके अनेक प्रकार के कार्य होते हैं। जैसा ऊपर कहा जा चुका है ग्लैंड आन्तरिक और बाह्य दोनों प्रकार की हो सकती है।

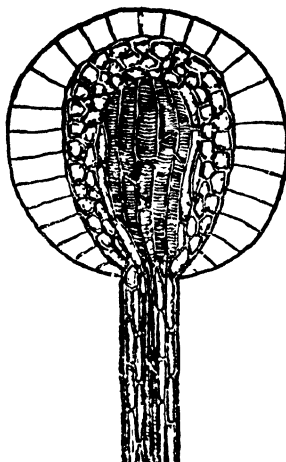
आन्तरिक ग्रन्थियाँ (Internal glands) हैं: (१) तेल की ग्रन्थि (चित्र १३.१९) जो सुगन्धित तेलों (essential oils) का स्राव करती है, जैसे नीबू की पत्ती में ; (२) म्यूसिलेज (mucilage) स्राव करनेवाली ग्रन्थि, जैसे पान की पत्ती में ;



चित्र १३.१९



चित्र १३.२०



चित्र १३.२१

[Adapted from Holman and Robbins]

ग्रन्थियाँ। चित्र १३.१९ संतरे के छिलके की एक तेल-ग्रन्थि।

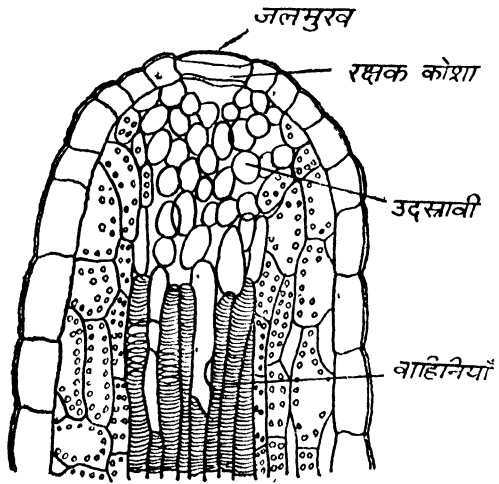
चित्र १३.२० बोरहैविया (*Boerhaavia*) के फल का एक ग्रन्थिरोम।

चित्र १३.२१ सनड्यू (*sundew*) की एक पाचक-ग्रन्थि।

(३) ग्रन्थियाँ जो गोंद, रेजिन और टैनिन आदि का स्राव करती हैं, (४) पाचक ग्रन्थियाँ जो एन्जाइम और पाचक पदार्थों का स्राव करती हैं, (५) जल का स्राव करनेवाली ग्रन्थियाँ जिनको जलोत्सर्गी (हायडैथोड, **hydathode**) कहा जाता है।

जलोत्सर्गी (Hydathodes) यह विशेष प्रकार की आकृतियाँ हैं जिनके द्वारा द्रव रूप में पानी बाहर निकलता है। ये मुख्यतया पानी में रहनेवाले पौधों और नम स्थानों में उगनेवाले कुछ शाकीय (herbaceous) पौधों में पाये जाते हैं। ये पत्ती के छोर पर या पत्ती के 'किनारे' पर नाड़ियों के शीर्षों पर स्थित होते हैं। यह जीवित कोशाओं के समूह से बने होते हैं जिनमें पानी से भरे हुए बहुत-से अन्तर्कोशीय अवकाश (intercellular spaces) होते हैं। इन कोशाओं में केवल कुछ क्लोरोप्लास्ट (हरिमकणक) होते हैं, या बिल्कुल नहीं होते। ये सपरिवर्तित बण्डल के सिरों को दर्शाते (represent) हैं। इन कोशाओं को एपिथीलियल

कोशाएं कहते हैं। ये एपिडर्मिस के नीचे स्थित एक या अधिक कमरों (sub-epidermal chambers) में खुलती हैं। ये फिर स्वयं बाहरी वायुमण्डल से एक खुले हुए जलमुख (water stoma) द्वारा सम्बन्धित रहती हैं। वाटर स्टोमा और एक साधारण मुख (stoma) की बनावट एक-सी होती है, किन्तु जलमुख साधारण मुख से बड़ा होता है और इसमें गति की क्षमता नहीं होती। हायडैथोड अधिकतर पाना या जलगोभी (*Pistia*), कचूरी पाना (*water hyacinth*), गाडैन नैस्ट-शियम, एरॉएंडस, बहुत-सी घासों इत्यादि में पाया जाता है।



[Redrawn from Haberlandt]

चित्र १३२२ पिस्टिया (*Pistia*) का जलोत्सर्ग।

बाह्य ग्रन्थियाँ
(*External Glands*).

ये बाहर की ओर उद्गर्ध

के रूप में निकल आती हैं। ये छोटे-छोटे बालों के ऊपर छोटी-छोटी ग्रन्थियों के रूप में होती हैं; इनको ग्रन्थि-रोम (glandular hairs) कहते हैं। बाहरी ग्रन्थियाँ हैं—(१) जल स्राव करनेवाले बाल या ग्रन्थियाँ, इनको हायडैथोड भी कहा जाता है; (२) ग्रन्थिरोम (चित्र १३.२०) जो गोंद सदृश्य पदार्थों का स्राव करते हैं, जैसे तम्बाकू (*tobacco*), चित्रक (*Plumbago*) और पुनरनवा (*Boerhaavia*) में, (३) ग्रन्थिरोम जो जहरीले, उत्तेजक पदार्थों का स्राव करते हैं, जैसे बिच्छू या बढन्ता (*nettles*) में (चित्र ५.१); (४) शहद-ग्लैण्ड या मकरन्द ग्रन्थि (*nectary*), जैसा कि बहुत-से पुष्पों में होता है, और (५) एन्जाइम स्राव करनेवाली ग्रन्थियाँ (चित्र १३.२१), जैसा मास-भक्षक (*carnivorous*) पौधों में होता है।

स्थायी ऊतियाँ

जीवितक	दीर्घोत्तक	वाहि	विशेष
—जीवितक	—दृढोत्तक, रेशे, अर्ष्टि कोशाएं	—ट्रेकियल ऊति ट्रेकिई या वाहिनियाँ	—आक्षीरी, आक्षीरी वाहिनियाँ, आक्षीरी कोशाएं
—स्कूल कोणिक			
—ताराकार ऊति	—जलवाहि ऊति जलवाहि कोशाएं	—चालनी ऊति चालनी नाल और सखि कोशाएं	—ग्रन्थिमय आन्तरिक बाह्य

यांत्रिक या मजबूती देनेवाली ऊतियों का वितरण (Distribution of Strengthening or Mechanical Tissues)

मजबूती देनेवाली ऊतियों का पौधे के शरीर में वितरण कई बातों पर निर्भर रहता है। केवल यांत्रिक दृष्टिकोण से वितरण का सिद्धान्त निम्नलिखित है: तनों की ऊपर के भागों का बोझ सहना पड़ता है और वे हवा से इधर-उधर हिलते-डुलते भी रहते हैं। इसलिए कभी वे खिंच जाते हैं और कभी दब जाते हैं। अतः मजबूती देनेवाली ऊतियों को तनों की परिधि (periphery) के पास बेलनाकार या छोटे-छोटे समूहों के रूप में होना चाहिए। इसके विपरीत, जब तना हिलता है तो जड़ें बाहर की ओर खिंचती हैं और उसके चारों ओर की मिट्टी उस पर दबाव डालती है। इन खिंचावों का मुकाबला करने के लिए जड़ में केन्द्र या केन्द्र के चारों ओर ठोस लकड़ी के बेलन का विकास हो जाता है।

फाइबरों, लकड़ी के फाइबरों (wood fibres) और बास्ट फाइबरों (bast fibres) सहित कॉलनकाइमा और स्कलेरनकाइमा पौधे को मजबूती देनेवाली दो प्रधान ऊतियाँ हैं। इनमें कॉलनकाइमा के वितरण का वर्णन किया जा चुका है। तनों में स्कलेरनकाइमा भिन्न-भिन्न भागों में वितरित रहता है। यह ऐसे हो सकता है:

(१) अधःत्वचा (हाइपोडर्मिस) के रूप में, विशेषकर के लकड़ीदार द्वि-बीज-पत्रियों में, बहुत-से एक-बीजपत्रियों और फर्न के तनों में; (२) कॉर्टेक्स में भिन्न-भिन्न पृथक समूहों में, जैसा ताड़ के तनों में होता है, (३) पेरिसाइकल में इसकी कुछ निश्चित परतें हो सकती हैं, जैसे कद्दू (*Cucurbita*) के तने में, (४) पेरिसाइकल में अनिश्चित समूहों के रूप में; (५) वैस्कुलर बण्डल के साथ-साथ फ्लोएम में कुछ समूहों के रूप में, ये समूह हार्ड बास्ट को बनाते हैं, जैसा सूरजमुखी के तने में होता है; (६) एक वैस्कुलर बण्डल से लेकर दूसरे तक विस्तृत समूहों के रूप में, जैसा कि अक्सर लिलिएसी (*Liliaceae*) की फेमिलो में होता है; (७) लकड़ी या जाइलम के ससर्ग में लकड़ी के फाइबरों के रूप में; (८) बास्ट फाइबरों, विशेषकर सेकण्डरी फ्लोएम में; और (९) वैस्कुलर बण्डल के चारों ओर वाली झिल्ली (bundle sheath) के रूप में, जैसा अनेक एक-बीजपत्रियों में होता है।

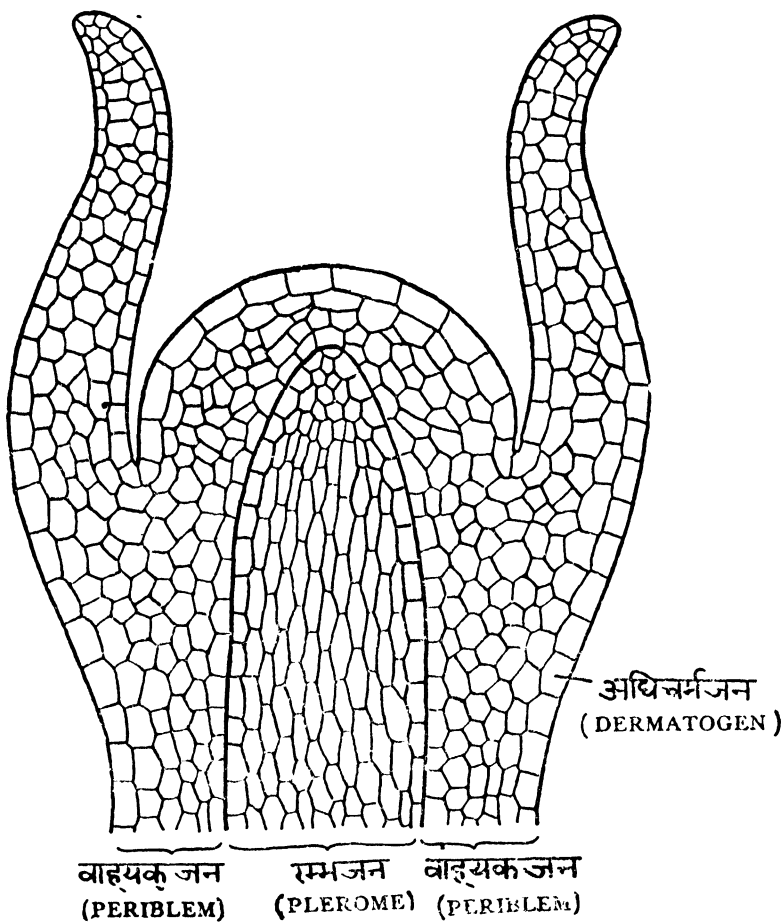
जड़ों में स्कलेरनकाइमा कम ही विकसित होता है और कॉलनकाइमा का तो सर्वथा अभाव होता है। यहाँ लिंगनिन-युक्त काष्ठ वाहिनियाँ (wood vessels) और जलवाहि कोशाएँ (tracheids) ही आवश्यक मजबूती प्रदान करती हैं। बाद में काष्ठ तन्तु (wood fibres) द्वितीयक काष्ठ (secondary wood) में विकसित हो जाते हैं और यांत्रिक रूप से मजबूती प्रदान करते हैं। कुछ द्वि-बीजपत्री जड़ों में जैसा कि चौड़ी सेम (विसिया, *Vicia*) में होता है, हार्ड बास्ट उपस्थित हो सकता है। बहुत-सी एक-बीजपत्री जड़ों में, जैसे एरॉण्डम में, पिय (pith) स्कलेरनकाइमेटस होता है। कभी-कभी जैसे ऑर्किडम में, कन्जंक्टिव ऊति (conjunctive tissue) भी दृढ़ोत्तक (sclerenchymatous) होती है।

पत्तियों में स्कलेरनकाइमा के वितरण का वर्णन आगे किया गया है।

प्राथमिक (अग्रस्थ) प्रविभाजी
[Primary (Apical) Meristem]

१. स्तम्भ शीर्ष (Stem Apex).

तने के छोर का बीच से लम्बान में सेक्शन (median longitudinal section) जब सूक्ष्मदर्शी में देखा जाता है (चित्र १३.२३) तो ज्ञात होता है कि



[Modified after Hill]

चित्र १३.२३ स्तम्भ शीर्ष।

अग्रस्थ मेरिस्टेम या बढ़ता हुआ भाग साधारणतया गोल कोशाओं के छोटे समूह का बना होता है। यह कोशाएँ वस्तुतः एक ही प्रकार की होती हैं और विभाजन की दशा में होती हैं। ये मेरिस्टेमेटिक कोशाएँ बाल प्रविभाजो (प्रोमेरिस्टेम, **promeristem** या प्राथमिक मेरिस्टेम, **primordial meristem**) को बनाती हैं। प्रोमेरिस्टेम की कोशाएँ शीघ्र ही तीन प्रदेशों में पहचानी जा सकती हैं—अधिचर्मजन (डर्मेटोजन, **dermatogen**), बाह्यकजन (पेरिब्लेम, **periblem**) और रम्भजन (प्लीरोम, **plerome**)। इन तीनों क्षेत्रों की कोशाएँ बढ़ती हैं और तना के प्रौढ़ भाग में प्राथमिक स्थायी ऊतियों को बनाती हैं। सेक्शन में दोनों ओर बाहर निकले हुए कई भाग दिखाई देते हैं ये कली की नन्हीं पत्तियाँ (young leaves) हैं जो स्तम्भ के बढ़ते हुए कोमल छोर को रक्षा करती हैं।

(क) अधिचर्मजन (डर्मेटोजन, **Dermatogen**; *derma*—त्वचा, *genes*—उत्पन्न करना). इसमें सबसे बाहरी कोशाओं की एक अकेली परत होती है। यह परत शिखर के ऊपर से होनी हुई नीचे की ओर बाहर-बाहर ही जारी रहती है और इस प्रकार तना की सबसे बाहरी खाल अथवा बाह्यत्वचा (*epidermis*) बनाती है। इसकी कोशाएँ केवल रेडियल दीवारों (radial walls) से ही तने की सतह पर समकोण बनाती हुई विभाजित होती हैं, और परिधि (circumference) में वृद्धि करती हैं। इस प्रकार वे भीतरी ऊतियों की वृद्धि के साथ-साथ चलती हैं।

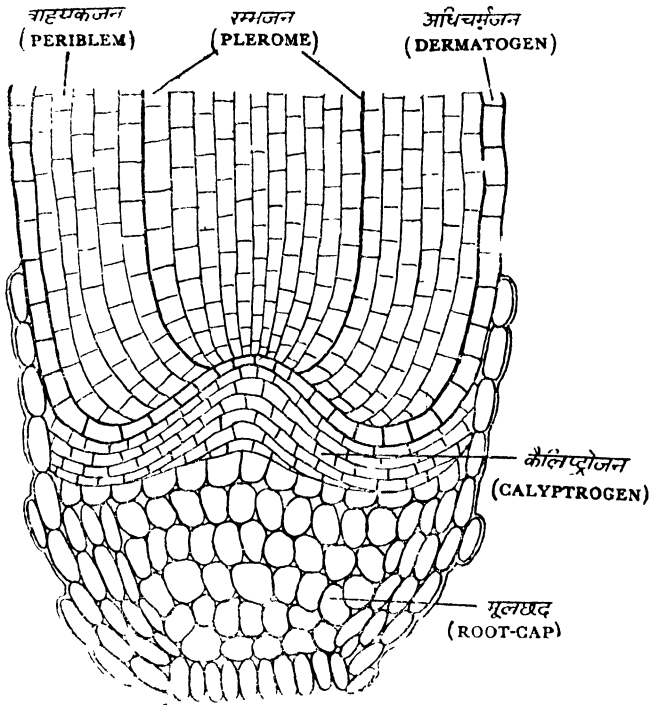
(ख) बाह्यकजन (पेरिब्लेम, **Periblem**; *peri*—चारों ओर, *blema*—पहनावा या छाद). यह डर्मेटोजन के नीचे होता है। छोर पर इसकी केवल एक परत होती है किन्तु उसके नीचे इसकी कई परतें हो जाती हैं। यह हाइपोडर्मिस, प्राइमरी कॉर्टेक्स और एण्डोडर्मिस, में भिन्नित होता है, और तना के मध्य प्रदेश (middle region) को बनाता है।

(ग) रम्भजन (प्लीरोम, **Plerome**; *pleres*—भरा हुआ). यह पेरिब्लेम के अन्दर की ओर होता है और तना का केन्द्रीय भाग (central part) बनाता है। छोर के कुछ पीछे प्लीरोम की कोशाओं के समूहों की लम्बी हो जाने की प्रवृत्ति होती है। ऐसी लम्बी कोशाओं या स्ट्रैण्डों के समूह को बाहिकर (प्रोकैम्बियम, **procambium**) कहते हैं। ये प्रोकैम्बियम स्ट्रैण्ड अन्त में वेसलो और सीव-ट्यूब के बण्डलों, अर्थात् वैस्कुलर बण्डलों के रूप में पहचाने जा सकते हैं। फिर भी इसका एक भाग वैसे का वैसे ही अभिन्नित रह जाता है और यह वैस्कुलर बण्डल की कैम्बियम को बनाता है। प्लीरोम, पेरिसाइकल, मेडुलरी या पिथ करणें, पिथ और वैस्कुलर बण्डलों (प्रोकैम्बियम स्ट्रैण्ड से बनी हुई) में भिन्नित हो जाता है और तने का केन्द्रीय बेलन (central cylinder) या स्टील (stele) बनाता है।

२ मूलशीर्ष (Root Apex).

जड़ के छोर (चित्र १३.२४) का बीच से लम्बान में सेक्शन (median longitudinal section) अनेक परतवाली ऊति, जो मूलछद (root-cap) बनाती है, से ढका दिखाई देता है। अग्रस्थ मेरिस्टेम या वर्धी बिन्दु जड़ टोपी के पीछे होता है। तना की भाँति प्रोमेरिस्टेम आरम्भिक अवस्था में तीन प्रदेशों में भिन्नित हो जाता

है—(१) डर्मेटोजन, (२) पेरिब्लेम और (३) प्लीरोम। फिर भी बहुत-सी जड़ों में ये तीनों भाग स्पष्ट रूप से नहीं पहचाने जा सकते।

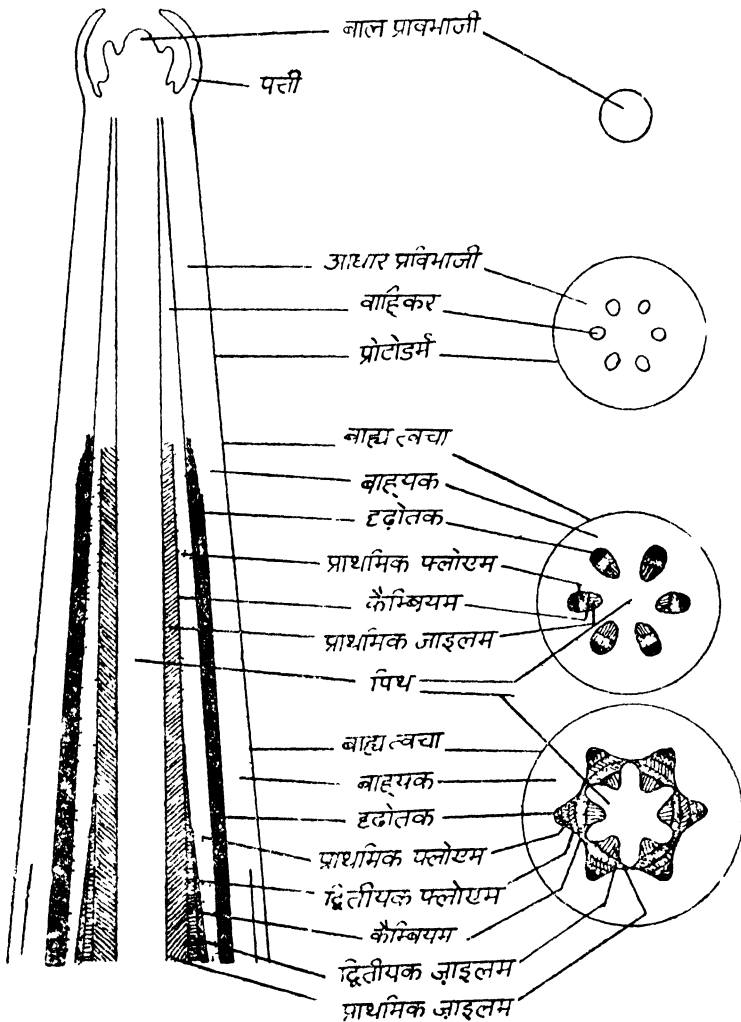


[Modified after Hill]

चित्र १३.२४ मूलशीर्ष।

(क) डर्मेटोजन. तने की भाँति इसकी भी एक परत हूँती है, किन्तु छोर पर यह पेरिब्लेम से मिल जाता है। इसके फौरन ही बाद डर्मेटोजन कुछ नई कोशाओं का समूह बनाता है जो छोटी कोशाओवाली ऊति, कैलिप्ट्रोजन (**calyptrogen**; *calyptra*—टोपी, *genes*—उत्पन्न करना) बन जाती है। यह भी मेरिस्टेमेटिक होता है और मूलछद (**root cap**) को बनाता है, जो कि बार-बार घिसती जाती है; कैलिप्ट्रोजन इसको बदल देता है। कुछ पौधों में बिना कैलिप्ट्रोजन के बीच में आये ही डर्मेटोजन सीधे मूलछद को जन्म देता है। मूलछद की बाहरी कोशाओं की दीवारें म्यूसिलेज में परिवर्तित हो जाती है जो कि जड़ को मिट्टी में सरलता से

आगे ढकेलने में सहायता देती है। मूलछद जलीय पौधो मे नही होती यद्यपि इसकी सर्दृश रचना (analogous structure) जिसको जड़ जेब्र या मूलछद (root

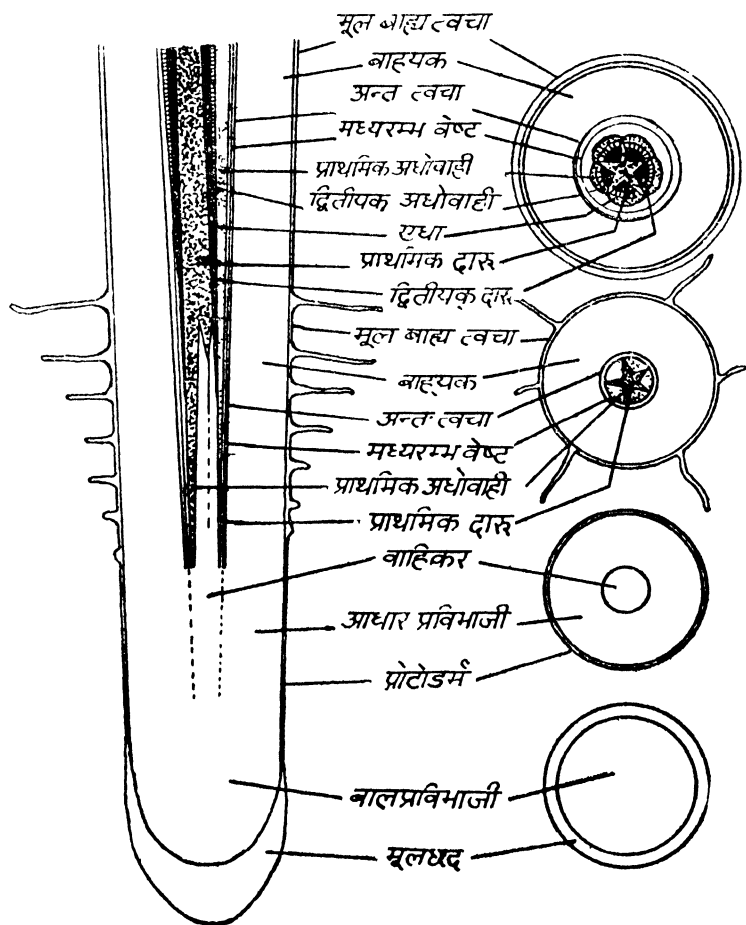


[Adapted from Hill]

चित्र १३.२५ प्राथमिक प्रविभाजियाँ और ऊतियों का भिन्न (differentiation of tissues) दिखाते हुए स्तम्भ शीर्ष।

इनमे से बहुतों मे स्पष्ट होती है। जैसा साधारणतया डाइकॉटी-

लीडनों में होता है, डमेंटोजन कभी-कभी जड़ के ऊपरी भाग पर बाहर की ओर केवल एक परत में होता है, किन्तु मोनोकोटोलीडनों में साधारणतया डमेंटोजन मूलच्छद बनाने में समाप्त हो जाता है, अतः जड़ का सबसे बाहरी भाग पेरिब्लेम की सबसे



[Adapted from Hill]

चित्र १३.२६ प्राथमिक प्रविभाजियों और ऊतियों का भिन्न दिखाते हुए मूल शीर्ष।

बाहरवाली परत से बनता है। जड़ के छोर से थोड़ा-सा हटकर जड़ की सबसे बाह्य वाली परत में अनेक एक कोशीय मूलरोम होते हैं। मूलरोम (root hairs) साधारणतया जलीय पौधों में नहीं होते।

(ख) **पेरिब्लेम**. तनों की भाँति जड़ में भी यह छोर पर एक परत का होता है, किन्तु और ऊँचे स्थानों पर उसकी कई परतें हो जाती हैं। एक-बीजपत्रियों में साधारणतया पेरिब्लेम की सबसे बाहरवाली परत जड़ की सबसे बाहरवाली परत को बनाती है। पेरिब्लेम जड़ के बीच के भाग (middle region) को बनाती है।

(ग) **प्लीरोम**. इसकी रचना और कार्य लगभग तने के प्लीरोम की रचना और कार्य की भाँति होते हैं।

ऊपर दिये हुए अग्रस्थ मेरिस्टेम का डर्मेटोजन, पेरिब्लेम और प्लीरोम में वर्गीकरण सर्वप्रथम **हैन्सटोन (Hanstein)** द्वारा दिया गया था। उनके अनुसार प्राथमिक मेरिस्टेम (primary meristem) तीन स्पष्ट प्रदेशों या **हिस्टोजेन्स (histogens)** में बाँटा जा सकता है। किन्तु यह वर्गीकरण सर्वत्र मान्य नहीं है विशेषकर जड़ों और बहुत-से तनों में, जहाँ पर तीनों प्रदेश नहीं पहचाने जा सकते।

इसलिए एक नई प्रणाली रखी गई है। इस प्रणाली के अनुसार प्राथमिक मेरिस्टेम तीन प्राथमिक मेरिस्टेमेटिक ऊतियों में भिन्नित हो जाता है—(१) **प्रोटोडर्म**, जो सबसे बाहरी ऊति है और डर्मेटोजन की जगह है; (२) **प्रोकैम्बियम**, जो केन्द्र में या उसके समोप लम्बी-कोशाओं के पृथक-पृथक स्ट्रैण्ड बनाता है, अनुप्रस्थ काट (cross section) में प्रोकैम्बियम कोशाएँ ग्राउण्ड मेरिस्टेम से छोटी प्रतीत होती हैं, किन्तु वे लम्बी होती हैं और उनमें बहुत-सी किनारों पर नुकीली होती हैं; धीरे-धीरे वैस्कुलर वण्डलो में भिन्नित हो जाती हैं; और (३) **आधार प्रविभाजी (ground or fundamental meristem)**, जो सम्पूर्ण बची हुई जगह को भर देता है; अपेक्षाकृत ये कोशाएँ बड़ी, पतली दीवारवाली और समव्यास (isodiametric) होती हैं, और हाइपोडर्मिस, प्राइमरी कॉर्टेक्स, एण्डोडर्मिस, पेरिसाइकिल, मेडुलरी या पिथ किरणें और मेडुला अथवा पिथ में भिन्नित हो जाती हैं (चित्र १३.२५, १३.२६)।

ऊति संहति (The Tissue System)

उच्च वर्ग के पौधों में श्रम का विभाजन होता है, अतः ऊतियाँ तीन संहतियों या प्रणालियों में बँटी रहती हैं और इसमें से प्रत्येक पौधे के साधारण जीवन कार्य में एक निश्चित हिस्सा बँटाती है। प्रत्येक संहति केवल एक ऊति की भी हो सकती है और ऊतियों के समूह की भी, जो रचना में एक-दूसरे के समान भी हो सकते हैं और विभिन्न भी, परन्तु इनका कार्य और मूल उत्पत्ति स्थान (origin) एक ही होता है। यह तीनों संहतियाँ हैं—(१) बाह्यत्वचीय ऊति संहति (epidermal tissue system), (२) आधारोति संहति (ground or fundamental tissue system) और (३) वाहि ऊति संहति (vascular tissue system)।

१. बाह्यत्वचीय ऊति संहति (Epidermal Tissue System).

यह संहति अग्रस्थ प्रविभाजी (apical meristem) की डर्मेटोजन में उत्पन्न होती है और बाह्यत्वचा (epidermis; *epi*—ऊपर या बाहरी, *derma*—खाल) या सबसे बाहरी छाल या खाल बनाती है जो पौधे के स्टोमेटल और लेण्टिसिलेट छिद्रों को छोड़ कर समस्त खुले हुए भागों पर छाद के रूप में रहती है। बाहर से देखने पर एपिडर्मिस की कोशाएँ आकार में कुछ-कुछ अनियमित-सी होती हैं। उनका आकार और रूप भिन्न-भिन्न होता है, किन्तु वे एक-दूसरे से सटी हुई जड़ी रहती हैं और इनके बीच में कोई अन्तर्कोशीय अवकाश नहीं होता। फिर भी अनुप्रस्थ काट में वे लगभग आयताकार दिखाई पड़ती हैं। बहुधा एपिडर्मिस एक परत की होती है, किन्तु कभी-कभी जैसा कि इण्डिया रबर प्लाण्ट, बरगद इत्यादि में यह कई परतों-वाली हो जाती है; तब इसे बहुगुण बाह्यत्वचा (multiple epidermis) कहते हैं। एपिडर्मल कोशाएँ पैरेंकाइमेटस होती हैं जिनमें अपेक्षाकृत साइटोप्लाज्म कम होता है जो कोशा-भित्ति से लगा रहता है, और एक बड़ा वैक्यूओल होता है जिसमें रंगहीन धानीरस (cell-sap) भरा रहता है। कुछ पौधों की कोशाओं में ऐन्थोसायनिन और क्रोमोप्लास्ट होते हैं, किन्तु रक्षक कोशाओं (guard cells), फर्न, पानी में डूबे हुए पौधों और कुछ अन्य पौधों को छोड़कर, इनमें क्लोरोफिल नहीं पाया जाता। पत्तियों और नन्हें हरे तनों में, फिर भी, एपिडर्मिस में बहुत से मुख (stomata) होते हैं जिनके द्वारा वायुमण्डल और पौधे के बीच गैसों का आदान-प्रदान होता है। बाह्यत्वचा की कोशाएँ (epidermal cells) शीघ्र ही मर जाती हैं और बहुत-से पदार्थों, जैसे टैनिन, सिलीका का कण, गोंद, म्यूसिलेज, रबे इत्यादि, से भर जाती हैं। एपिडर्मल कोशाओं की भीतरी और रेडियल दीवारें पतली होती हैं, किन्तु बाहरी दीवारें मोटी और बहुत क्यूटिन या सबरिन से जड़ी रहती हैं।

कभी-कभी क्यूटिनाइजेशन या सूवराइजेशन रेडियल दीवारों तक भी पहुँच जाता है। क्यूटिनाइज्ड परत या क्यूटिकिल भीतरी कोशाओं की पानी के उड़ने और यांत्रिक चोटों से रक्षा करती है। सलाकों (rods), शल्को (scales), दानों इत्यादि के रूप में मोम का उत्सर्ग (excretion) भी पानी को उड़ने से रोकता है। बहुत-से पौधों में एपिडर्मल कोशाएँ अक्सर अतिवृद्धि रखती हैं जिन्हें रोम (hairs) या ट्राइकोम (trichomes) कहते हैं। ये एक-कोशीय हो सकती हैं या बहु-कोशीय, साधारण हो सकती हैं या शाखित, और ये मलायम या तेज तथा कठे हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त एपिडर्मिस में दशलोम (stinging hairs) हो सकते हैं, जैसे नेटिल्स में, ग्रन्थीय रोम, जैसे पुनरनवा (*Boerhaavia*) में (चित्र १३.२०), चित्रक (*Plumbago*), तम्बाकू इत्यादि में। घने रोमों का छाद, या शल्कों, सलाकों इत्यादि का विकास, बहुत-से पौधों की एपिडर्मिस के दूसरे लक्षण है।

जड़ की सबसे बाहरी परत को मूल बाह्यत्वचा (एपिब्लेमा, *epiblema*) कहते हैं या पिलिफेरस स्तर (*piliferous layer*) भी कहते हैं। यह मुख्य रूप से मिट्टी से पानी और खनिज लवण सोखने के काम आती है। सोखने की क्रिया की सहायता करने के लिए इसमें एक एक-कोशीय रोम होते हैं। एपिब्लेमा न तो क्यूटिन-युक्त ही होती है और न ही उसमें स्टोमेटा होते हैं।

कार्य.

(१) एपिडर्मिस का प्राथमिक कार्य भीतरी ऊतियों की यांत्रिक चोटों, (अत्यधिक गर्मी या सर्दी और परजीवी फंजाई तथा बैक्टीरिया के आक्रमणों से रक्षा करना है; यह क्यूटिकिल, टैनिन, गोदर इत्यादि की उपस्थिति से हो पाता है।

(२) एपिडर्मिस का दूसरा मुख्य कार्य, मोटे क्यूटिकिल, मोम और दूसरे जमाव, क्यूटिकिल-युक्त रोम, शल्क और बहुगुण एपिडर्मिस का विकास करके, पानी के अत्यधिक वाष्पन को रोकना है।

(३) शाकाहारी जीवों के आक्रमण से पौधों की रक्षा करना भी एपिडर्मिस का कार्य है। यह कार्य एपिडर्मिस तेज और कड़े बालों, दशलोमों, जैसे नेटिल्स में, ग्रन्थीय रोमों, जैसे पुनरनवा या सत (*Boerhaavia*) में (चित्र १३.२०) और सिलिका के कणों, जैसे बहुत-सी घासों, इक्वीसेटम (*Equisetum*) इत्यादि में।

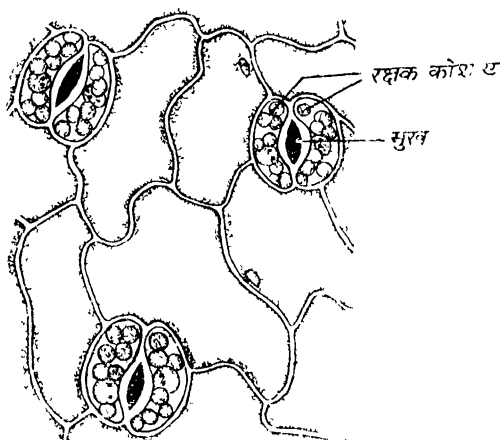
(४) एपिडर्मिस पानी के भण्डारघर का कार्य भी करती है, जैसे मरुस्थलीय पौधों में।

(५) कभी-कभी एपिडर्मिस कुछ छोटे-मोटे कार्य भी करती है, जैसे प्रकाश-संश्लेषण (photosynthesis), स्राव (secretion) इत्यादि।

मुख (स्टोमेटा, Stomata).

रचना और व्यवहार—मुख (स्टोमेटा, Stomata) बहुत छोटी दरारें या छिद्र होते हैं जो पौधों की एपिडर्मल परत में हवा में खुले भागों, विशेष रूप से पत्तियों में पाये जाते हैं। प्रत्येक मुख (stomata) दो अर्ध-चन्द्राकार कोशाओं से घिरा रहता है, जिन्हें रक्षक कोशाएँ (guard cells) कहते हैं। 'स्टोमा' शब्द प्रायः रक्षक कोशाओं सहित स्टोमेटा के छिद्र के लिए प्रयोग किया जाता है। रक्षक कोशाएँ जीवित होती हैं और इनमें सर्वदा क्लोरोप्लास्ट पाया जाता है। यह स्टोमा या पथ (passage)

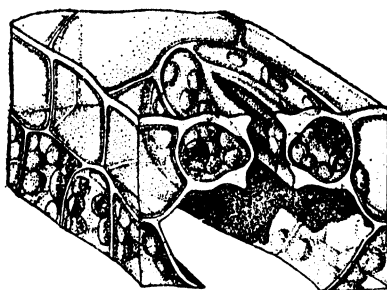
की रक्षा करते हैं, अर्थात् यह ओठों के समान उसके खुलने और बन्द होने को क्रम में रखते हैं। रात्रि के समय, अर्थात् प्रकाश की अनुपस्थिति में स्टोमेटा बन्द रहते हैं। यह उस समय भी बन्द हो जाते हैं जब पत्तियों की सतह से बहुत तीव्र ट्रान्सपिरेशन (पानी का भाप बनकर उड़ना) होता रहता है या जब सूखी हवा चलती है, या जब मिट्टी में पानी की पर्याप्त मात्रा नहीं रहती। साधारण दशा में स्टोमेटा दिन के समय हमेशा खुले रहते हैं, अर्थात् जब सूर्य का प्रकाश उपस्थित रहता है; और उस समय बन्द हो जाते हैं जब प्रकाश लुप्त हो जाता है। प्रकाश की तेजी का स्टोमेटा के खुलने की मात्रा पर काफी प्रभाव पड़ता है। स्टोमेटा खुलने और बन्द होने की यत्र



चित्र १४.१ बाह्यत्वचा में मुख (बाहर से देखने पर)।

रचना (mechanism) निम्नलिखित है: रक्षक कोशाओं में क्लोरोप्लास्ट होता है जो सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में शर्करा का निर्माण करता है, और इस प्रकार रक्षक कोशाओं के अन्दर का घोल अधिक गाढ़ा और रसाकर्षण (ऑसमॉसिस, osmosis) के लिए तीव्र हो जाता है। इस प्रकार वे पड़ोसी एपिडर्मल कोशाओं से पानी सोखते हैं और टर्जिड (turgid) हो जाते हैं, अर्थात् पानी से भर जाते हैं और फैलकर बाहर की ओर उभर जाते हैं, और इस प्रकार स्टोमा खोल देते हैं। रात में, सूर्य के प्रकाश की अनुपस्थिति में, दूसरी ओर धानी-रस (सेल-सैप) की शर्करा स्टार्च में परिवर्तित हो जाती है। स्टार्च अधुलनशील पदार्थ है और इस प्रकार रक्षक कोशाओं के धानी-रस (cell-sap) का गाढ़ापन पड़ोसी एपिडर्मल कोशाओं के गाढ़ापन से कम होता है। इस प्रकार रक्षक कोशा अपना पानी खो देने के कारण ढीली या फ्लैसिड हो जाती हैं, और स्टोमा बन्द हो जाता है। रक्षक कोशाएँ दिन के समय टर्जिड हो जाती हैं, जब उनमें चीनी इकट्ठी हो जाती है और रात्रि में फ्लैसिड हो जाती हैं जब चीनी स्टार्च में बदल जाती है। रात्रि के समय, सूर्य के प्रकाश की अनुपस्थिति के कारण प्रकाश-संश्लेषण न होने से, रक्षक कोशाओं में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड इकट्ठी हो जाती है और इस प्रकार कोशान्तर्वस्तुएं थोड़ी अम्लीय हो जाती हैं। इस

दशा में शकर स्टार्च में परिवर्तित हो जाती है। दिन के समय कार्बन-डाइ-ऑक्साइड प्रकाश-संश्लेषण में काम आ जाती है, और इस प्रकार कोशान्तर्वस्तुएं (cell-



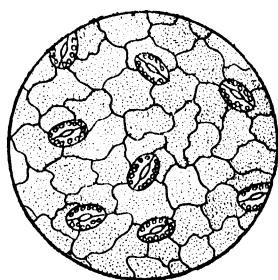
[After Holman and Robbins]

चित्र १४.२ एक प्रारूपिक (typical) मुख और साथ की बाह्यत्वचा की कोशाएं बाहर से देखने पर और अनुप्रस्थ काट में।

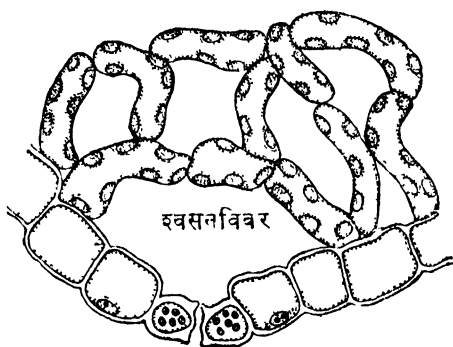
कार्बोहाइड्रेट पर जो सूर्य के प्रकाश का प्रभाव होता है, वह तो होता ही है। इस मत

contents) थोड़ी क्षारीय (weakly alkaline) हो जाती है। ऐसी दशा में स्टार्च शकर में परिवर्तित हो जाती है। कोशान्तर्वस्तुओं का अम्लीय और क्षारीय होना इस सिद्धान्त की पुष्टि करता है कि स्टोमा के खुलने और बन्द होने की यन्त्र-रचना में कार्बोहाइड्रेट का परिवर्तन (transformation) होता है।

एक दूसरा भी मत है जिसे कलिलीय मत (colloidal hypothesis) कहते हैं। इसके अनुसार सभी कोशान्तर्वस्तुएं, सूर्य के प्रकाश का रक्षक-कोशाओं पर पड़े प्रभाव के ही कारण, क्षारीय हो जाती हैं। इससे रक्षक कोशाओं में मौजूद 'कोलॉएड' फूलने लगते हैं। इस क्रिया के अतिरिक्त



(क)

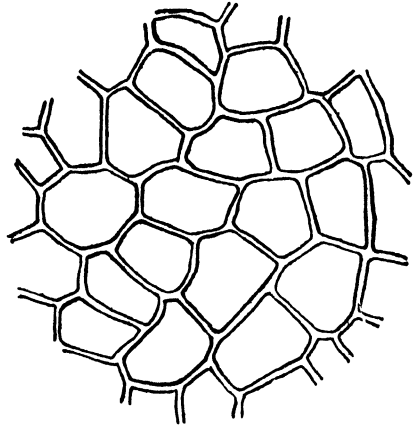


(ख)

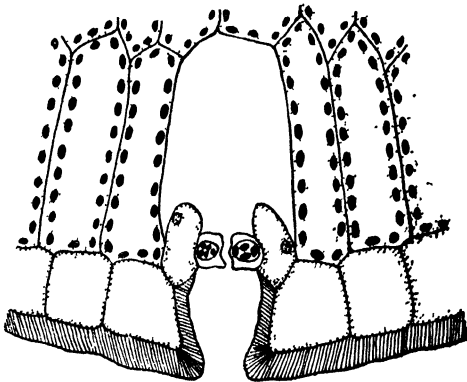
एक प्रारूपिक पत्ती के मुख (stomata)। चित्र १४.३ (क) निचली बाह्यत्वचा जिसमें बहुत-से मुख हैं। (ख) पत्ती का सेक्शन (नीचे का एक हिस्सा)।

के अनुसार कोलॉएड (colloids) के फूलने से रक्षक कोशाएं बाहर की ओर उभर जाती हैं; रात में अम्लता (acidity) अत्यधिक बढ़ जाने से कोलॉएड फिर से सिकुड़ जाते हैं और इस प्रकार स्टोमा बन्द कर देते हैं।

कार्य और वितरण. स्टोमेटा पौधे और वायुमण्डल के बीच गैसों के आदान-प्रदान में काम आते हैं—ऑक्सीजन श्वसन के लिए और कार्बन-डाइऑक्साइड कार्बोहाइड्रेट के निर्माण के लिए काम आती है। इन गैसों के विसरण की सुविधा के लिए प्रत्येक स्टोमा अन्दर की ओर एक छोटे से विवर में खुलता है जिसे श्वसनविवर (respiratory cavity) कहते हैं (चित्र १४.३ ख), जो स्वयं अन्त-कॉशीय अवकाश और वायु विवरों (air cavities) से सम्बन्धित रहती है। स्टोमेटा वे अग भी है जिनसे होकर पानी भाप बनकर उड़ता है, इस प्रकार पौधे को अत्यधिक पानी से छुटकारा मिल जाता है। स्टोमेटा पृष्ठाक्षीय (डॉर्सोवेंट्रल, dorsiventral) पत्तियों की निचली एपिडर्मिस में (चित्र १४.३क) बहुत अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। ऊपरी एपिडर्मिस में कोई स्टोमेटा नहीं होता (या कभी-कभी थोड़े से होते हैं; चित्र १४.४)। आइसोवाइलेट्रल (isobilateral, समद्विपार्श्व) और सेण्ट्रिक (centric) पत्तियों में स्टोमेटा सब ओर करीब-करीब बराबर बँटे हुए होते हैं। तैरनेवाली पत्तियों में, जैसी कि वाटर-लिली में पायी जाती है, स्टोमेटा केवल ऊपरी एपिडर्मिस पर ही होते हैं; डूबी हुई पत्तियों में कोई भी स्टोमा नहीं होता है। मरुभूमि के पौधों, और उन पौधों में जिनमें रेगिस्तानी अनुरूपन या जीरोफिटिक एडैप्टेशन (xerophytic adaptations) होता है, जैसे कि चीड़ (pine), विलायती कैत (Agave),



चित्र १४.४ ऊपरी बाह्यत्वचा जिसमें मुख नहीं है।



[Redrawn from Brown]

चित्र १४.५ एक प्रारूपिक जीरोफिटिक पत्ती (xerophytic leaf) में गड्ढे में दबा हुआ मुख।

कनेर (*Nerium*) इत्यादि में, एक या अधिक स्टोमेटा पत्तियों के अन्दर झिरियों या गड्ढोमें दबे होते हैं (चित्र १४.५)। भाप बनकर पानी के उड़ने की क्रिया को

कम करने के लिए यह एक विशेष अनुकूलन है, क्योंकि गड्ढों में दब रहने के कारण स्टोमेटा हवा के झोको से बचे रहते हैं। प्रति इकाई क्षेत्रफल में स्टोमेटा की संख्या काफी भिन्न पायी जाती है। साधारण भूमि के पौधों में २५० से ३०० स्टोमेटा प्रति वर्ग मिलीमीटर का औसत रहता है। कभी-कभी औसत इससे बहुत कम होता है और कभी-कभी बहुत ज्यादा होता है। मरुभूमि के पौधों में, उदाहरण के रूप में, केवल १० या १५ स्टोमेटा प्रति वर्ग मिलीमीटर में हो सकते हैं; जबकि बहुत से ऐसे भी उदाहरण हैं जहाँ उतने ही स्थान में करीब-करीब १,३०० स्टोमेटा पाये जाते हैं।

२. आधारोति संहति (The Ground or Fundamental Tissue System).

इस संहति से ही पौधे के शरीर का मुख्य भाग बनता है, और यह एपीडर्मिस के नीचे से लेकर केन्द्र तक चली जाती है (वैस्कुलर बण्डलो को छोड़कर) यह थोड़ा पेरिब्लेम और थोड़ा प्लोरोम से बनती है। इस प्रणाली के प्राथमिक कार्य भोज्य-पदार्थों का निर्माण और उन्हीं का संग्रह है। यह यांत्रिक कार्य भी कर सकती है। यह संहति अनेक प्रकार की ऊतियों से मिलकर बनी है जिनमें से जीवितक (पैरेंकाइमा) सबसे अधिक होता है; अन्य ऊतियाँ दृढोतक (स्क्लेरनकाइमा, sclerenchyma) और स्थूलकोणक (कॉलनकाइमा, collenchyma) और कभी-कभी दूधदार ऊति या आक्षीरी ऊति (laticiferous tissue) और ग्रन्थिदार ऊति होती हैं। यह निम्नलिखित प्रदेशों में भिन्नित होती है:

१. बाह्यक (कॉर्टेक्स, **Cortex**). यह एपिडर्मिस के नीचे रहता है और भीतर एण्डोडर्मिस से घिरा होता है। इसकी मोटाई एक परत से लेकर कई परतों तक होती है। कॉर्टेक्स की कोशाएँ विशेषतया पैरेंकाइमेटस होती हैं, किन्तु इनमें कॉलनकाइमा, स्क्लेरनकाइमा, अष्टि कोशाएँ (stone cells) और कई प्रकार की स्नायव एवं संग्रहीय रचनाएँ होती हैं। द्वि-बीजपत्री तनों (चित्र १५.२) में बाह्यक (cortex) बहुधा निम्नलिखित में भिन्नित रहता है—(क) कॉलनकाइमा या स्क्लेरनकाइमा की कुछ परतें जो अधःत्वचा (हाइपोडर्मिस, **hypodermis**) बनाती हैं; (ख) हरे या रंगहीन, समीप या ढिलाई से विन्यस्त पैरेंकाइमेटस कोशाओं की कुछ परतें—सत्य बाह्यक (**cortex proper**), और (ग) अन्तःत्वचा (**endodermis**) या स्टार्च-छाव (**starch sheath**, मण्ड कंचुक) की एक अकेली लहरदार परत जो अक्सर बहुत स्पष्ट नहीं होती। एक-बीजपत्री तनों (चित्र १५.५) में, वैस्कुलर बण्डलों के बिखरे हुए विन्यास के कारण बाह्यक (cortex), सत्य बाह्यक (cortex proper) और अन्तःत्वचा में अच्छी प्रकार चिह्नित नहीं होता। स्क्लेरनकाइमा, फिर भी अक्सर हाइपोडर्मिस (अधःत्वचा) के रूप में उपस्थित होता है। जड़ों में (चित्र १६.२) कॉर्टेक्स कई परतों का होता है जो पैरेंकाइमेटस कोशाओं का बना होता है जिनके बीच-बीच में बहुत सारे अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं। इसमें एण्डोडर्मिस (अन्तःत्वचा) की एक स्पष्ट चक्रीय परत होती है।

कार्य. तनों में कॉर्टेक्स मुख्य तौर पर एक रक्षक ऊति का कार्य करता है। इसके दूसरे कार्य संग्रह, प्रकाश-संश्लेषण (photosynthesis) आदि हैं। जड़ों में कॉर्टेक्स मुख्य तौर पर एक संग्रह अंग है। यह एक दबाव डालनेवाले केन्द्र (pumping

station) का भी कार्य करता है, जिसकी व्यक्तिगत कोशाएं एक नल की भांति कार्य करती हैं जिससे मूलरोमों द्वारा अवशोषण किया हुआ पानी, काष्ठ-वाहिनियों (xylem vessels) में दबाव से भेज दिया जाता है।

२. अन्तः त्वचा (एण्डोडर्मिस **Endodermis**). यह कॉर्टेक्स की सबसे भीतरी परत है, जो इसकी सीमा बनाती है। यह लम्बवत् रूप में लम्बी हुई कोशाओं (vertically elongated cells) की बनी होती है, जिनकी दोनों ओर की दीवारें अनुप्रस्थ (transverse) होती हैं। अनुप्रस्थ-काट में एण्डोडर्मिस बिना अन्तर्कोशीय अवकाशवाली ढोलक के आकार (barrel shaped) की कोशाओं की एक अकेली परत दिखाई देती है। तनों में यह परत लहरदार होती है और अक्सर अस्पष्ट या बिल्कुल ही नहीं होती है; किन्तु जड़ों में यह चक्राकार और स्पष्ट होती है। इसकी कोशाएं जीवित होती हैं इनमें काफी मात्रा में प्रोटोप्लाज्म, बड़ी-बड़ी नाभिकें (nuclei) और अवसर स्टार्च के बड़े-बड़े दाने होते हैं। इसीलिए इसको **स्टार्च का छाद (starch sheath, मण्ड कचुक)** भी कहते हैं। एण्डोडर्मिस की कुछ कोशाएं म्यूसिलेज, टैनिन, गोद इत्यादि भी रखती हैं। अन्तः त्वचीय कोशाओं (endodermal cells) की बाहरी दीवारें पतली होती हैं, जब कि रेडियल (अगल-बगल की) और भीतरी दीवारें अक्सर मोटी होती हैं। ये दीवारें क्यूटिन-युक्त, सुबरीन-युक्त, और अवसर लिगनिन-युक्त होने के कारण ही मोटी हो जाती हैं। मोटी हुई दीवारों में बहुत सारे साधारण गर्त होते हैं। कभी-कभी यह मुटाव (thickening) एक पट्टी या फीते का रूप धारण कर लेती है जो प्रत्येक कोशा को घेरे रहती है। इस पट्टी को **कैस्पेरियन स्ट्रिप (Caspasian strip)** कहते हैं। एण्डोडर्मिस की मोटी-दीवारोवाली कोशाओं के बीच-बीच में, जैसे कि बहुत-सी जड़ों में, प्रोटोजाइलम तत्वों (protoxylem elements) के अभिमुख या विपरीत, अवसर कुछ छोटी, पतली दीवारोवाली कोशाएं भी होती हैं; इनको **मार्ग कोशाएं (passage cells)** कहते हैं। मूलरोमों द्वारा अवशोषण किया गया रस इनके द्वारा जाइलम की नलियों में घुसता है। सभी पौधों की जड़ों में टेरिडोफाइट्स और शाकोय पौधों (herbaceous plants) के तनों में, प्रकन्द (राइजोम, rhizomes) में, और जिम्नोस्पर्म की पत्तियों में एण्डोडर्मिस भली प्रकार विकसित होती है। यह फिर भी, लकड़ीदार पौधों के तनों में और एन्जियोस्पर्म की पत्तियों में नहीं होता या अस्पष्ट होता है।

कार्य. एण्डोडर्मिस के कार्य कुछ अस्पष्ट हैं। लोग इसे जाइलम और अन्य चारों ओर की ऊतियों के बीच का पानी से कसा हुआ छाद (water-tight jacket) मानते हैं। यह हवा की बांध (air-dam) के रूप में कार्य कर सकता है, जो वाहिनियों में हवा का विसरण नहीं होने देता और इस प्रकार उन्हें बन्द किये रहता है। यह एक विसरण-परत (diffusion layer) हो सकता है जो वैस्कुलर-बण्डलों से पानी, खनिज लवणों और भोजन की कमी (loss) होने से बचाता है। यह एक संग्रहण अंग हो सकता है जो बहुत-से पौधों में स्टार्च के दाने इकट्ठा रखता है। यह जड़ के कॉर्टेक्स में विकसित ऑसमोटिक दबाव (osmotic pressure) से भी सम्बन्धित हो सकता है। यह एक मार्ग का भी कार्य कर सकता है जिससे होकर पानी जड़ के कॉर्टेक्स से प्रोटोजाइलम में जाता है।

३. **मध्यरम्भ-वैष्ट (पेरिसाइकल, Pericycle)**. यह एण्डोडर्मिस और वैस्कुलर बण्डलों के बीच एक या अनेक परतों की होती है। एक खोखले बेलन के रूप में यह

वैस्कुलर बण्डलों के चारों ओर, और तने के केन्द्रीय भाग या पिथ का घेरा करती हुई पायी जाती है। कुछ जड़ों में यह घेरा टूट जाता है जिससे एण्डोडर्मिस प्रोटोजाइलम के निकट आ जाती है। कुछ जलीय पौधों की जड़ों और तनों में यह नहीं पायी जाती और एक-बीजपत्री तनों में यह अच्छी प्रकार नहीं पहचानी जा सकती। जड़ों में पेरिसाइकल केवल एक परतवाली होती है और सामान्य तौर पर यह पैरंकाइमेटस होती है, किन्तु द्वि-बीजपत्री तनों में यह काफ़ी मोटी होती है और स्कलेरनकाइमा पूर्ण या अपूर्ण रूप से या तो एक लगातार क्षेत्र बनाता है, जैसे कि कद्दू (*Cucurbita*) में, या अलग-अलग टुकड़ों में पाया जाता है। ये स्ट्रैण्ड या टुकड़े प्रत्येक वैस्कुलर बण्डल की फ़्लोएम (अधोवाही) या बास्ट के साथ-साथ हो सकते हैं और इस प्रकार एक कठिन अधोवाही (**hard bast**), जैसे सूरजमुखी के तनों में, बनाते हैं, या पेरिसाइकल, में इधर-उधर बिखरे हो सकते हैं। ये व्यापार के बुननेवाले रेशे बनाते हैं।

कार्य. सभी जड़ों में पेरिसाइकल ही पार्श्वमूलों (*lateral roots*) की उत्पत्ति का स्थान है। इसके अलावा द्वि-बीजपत्रियों में यह द्वितीयक प्रविभाजी (*secondary meristem*) को भी जन्म देती है। द्वितीय मेरिस्टेम कैम्बियम का एक भाग है और बाद में सम्पूर्ण कॉर्क-कैम्बियम होना है। तनों में पेरिसाइकल से ही अस्थानिक जड़ों की उत्पत्ति होती है। इसके अतिरिक्त इसके कार्य यांत्रिक, संग्रह, साव इत्यादि हैं।

४. मज्जा और मज्जा किरणें (Pith and pith rays). पिथ या मेडुला तने और जड़ का केन्द्रीय भाग बनाता है और बहुधा बड़ी-बड़ी पैरंकाइमेटस कोशाओं का बना हुआ होता है जिनके बीच बहुत सारे अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं। द्वि-बीजपत्री तनों में पिथ अक्सर बड़ा और पूर्णरूप से विकसित होता है, किन्तु एक बीजपत्री तनों में, वैस्कुलर बण्डलों के बिखरे हुए वितरण के कारण, यह स्पष्ट पहचाना नहीं जा सकता। द्वि-बीजपत्री जड़ों में पिथ या तो छोटा है या बिल्कुल ही नहीं होता, केन्द्र में बड़ी-बड़ी वाहिनियाँ पायी जाती हैं, जबकि एक-बीजपत्री जड़ों में एक स्पष्ट पिथ पाया जाता है। यह अक्सर पैरंकाइमेटस होता है, किन्तु कभी-कभी स्कलेरनकाइमेटस भी होता है। वैस्कुलर बण्डलों के बीच यहाँ-वहाँ पिथ पेरिसाइकल तक बढ़ा होता है। प्रत्येक बढ़ाव जो पैरंकाइमेटस होता है, **मज्जा किरण (pith ray)** या **मध्यक किरण (medullary ray)** कहलाता है। पिथ और पिथ किरण की कोशाएं कॉर्टेक्स की कोशाओं की अपेक्षा बहुत अधिक बड़ी होती हैं और उनके बीच बहुत सारे अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं।

कार्य. वे भोज्य-पदार्थों के संग्रह का कार्य करती हैं, स्कलेरनकाइमेटस पिथ का कार्य यद्यपि यांत्रिक होता है।

३. वाहि ऊति संहति (Vascular Tissue System).

यह प्रणाली बहुत-से वैस्कुलर बण्डलों से मिलकर बनती है जो जड़ और तनों (और पाइन की पत्तियों) की मध्यरम्भ (स्टील, *stèle*) में बँटे रहते। प्रत्येक बण्डल ट्रेकिअल ऊति (**tracheal tissue**) और चालनी ऊति और कुछ अन्य ऊतियों से मिलकर बनता है। इस प्रणाली का कार्य पानी और कच्चे भोज्य-पदार्थों

को जड़ से पत्ती तक पहुँचाना है, और तैयार भोज्य-पदार्थों को पत्तियों से संग्रहकर्ता अंगों और उगते हुए भागों में पहुँचाना है। वैस्कुलर बण्डल के तत्त्व प्लीरोम की प्रोकैम्बियल स्ट्रैंड (procambial strand) से मिलते हैं जिनमें छोटी उम्र से ही लम्बे होने की प्रवृत्ति होती है। वैस्कुलर बण्डल एक निश्चित रूप से छल्लेदार क्रम में भी लगे रह सकते हैं, जैसे कि द्वि-बीजपत्री तनों और जिम्नोस्पर्म के तनों और सभी जड़ों में पाये जाने हैं या यह आधार-ऊति में बिखरे हुए भी पाये जाते हैं, जैसे कि एक-बीजपत्री तनों में।

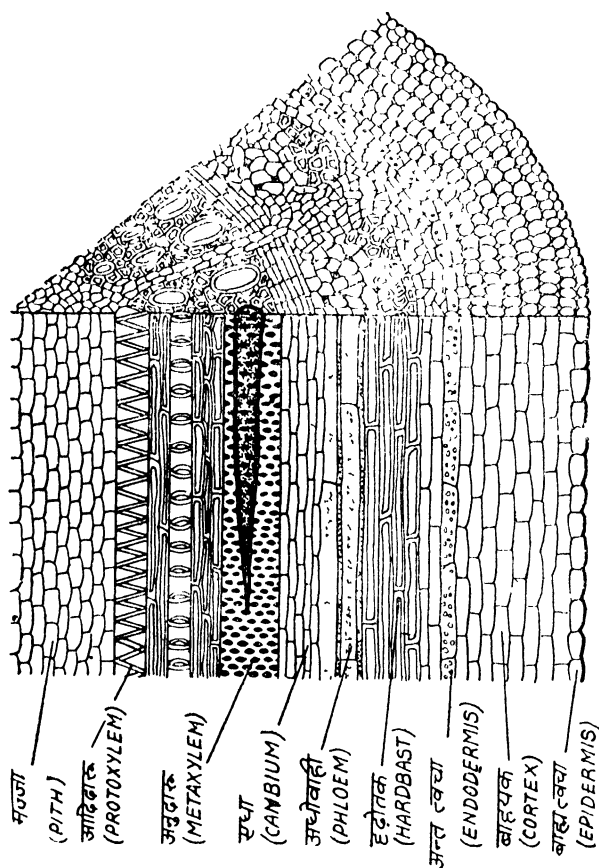
वाहिपूल के तत्त्व (Elements of a Vascular Bundle).

एक द्वि-बीजपत्री तने का वैस्कुलर बण्डल जब पूर्ण रूपसे विकसित होता है तो इसमें तीन स्पष्ट भाग पाये जाते हैं—(१) दारू (जाइलम, xylem) या लकड़ी, (२) अधोवाही (फ्लोएम, phloem) या बारट, और (३) एधा (कैम्बियम, cambium)। इनमें विभिन्न प्रकार के ऊति-तत्त्व होते हैं।

१. दारू या लकड़ी (Xylem or wood). यह केन्द्र की ओर होता है और निम्नलिखित तत्त्वों से मिलकर बनता है: (१) ट्रैकियल टिशू ((tracheal tissue), (२) कुछ जलवाहि कोशाएँ (tracheids), (३) कुछ काष्ठ तन्तु (wood fibres) और (४) काष्ठ पैरकाइमा का एक छोटा धब्बा या चकत्ता। ट्रैकियल टिशू में अनेक प्रकार की लकड़ीदार नालियाँ होती हैं, जैसे कि सर्पिलाकार (spiral), वलयाकार (annular), सोपानवत् (scalariform), जालिकावत् (reticulate) और गर्ती (pitted)—साधारण या प्रान्ती गर्त-युक्त। कुछ ट्रैकीड वाहिनियों के साथ-साथ रहती हैं। काष्ठ तन्तु और काष्ठ पैरकाइमा साधारण स्कलेरनकाइमा और पैरकाइमा की कोशाएँ होते हैं जो लकड़ी या जाइलम से मिलते रहते हैं। इनकी दीवारों में साधारण गर्त होते हैं। कभी-कभी द्वितीयक काष्ठ (secondary wood) में जाइलम के पैरकाइमा मोटी दीवारवाले और लिग्नीफाइड हो जाते हैं। जाइलम की वाहिनियाँ और ट्रैकीड भी पानी और खनिज लवणों को जड़ों से पत्तियों और पौधे के अन्य भागों तक पहुँचाने के काम आते हैं; जाइलम पैरकाइमा इनके काम में इनकी सहायता करते हैं और भोजन संग्रह का कार्य भी करते हैं, और काष्ठ तन्तु जाइलम को उचित कड़ापन देते हैं। काष्ठ पैरकाइमा के अतिरिक्त जाइलम के सभी तत्त्व मरे हुए और लिग्निन-युक्त होते हैं और इस प्रकार इनका दूसरे दर्जे का कार्य पौधे को यांत्रिक शक्ति देना है।

पहले बना हुआ जाइलम या आवि दारू (प्रोटोजाइलम, protoxylem) वलयाकार, सर्पिलाकार और सोपानवत् वाहिनियों का बना होता है; यह तने के केन्द्रीय भाग की ओर रहता है और इसकी नलियों (वाहिनियों) में छोटे गड्ढे होते हैं। बाद में बना हुआ जाइलम या अनुदारू (मेटाजाइलम, metaxylem) गर्ती और जालिकावत् वाहिनियों और कुछ ट्रैकीडों का बना हुआ होता है; यह केन्द्रीय भाग से दूर रहता है और इसके तत्त्वों में अधिक बड़े गड्ढे होते हैं। यथार्थ रूप से परिवर्तन की सारी स्थितियाँ (transitional stages) प्रोटोजाइलम और मेटाजाइलम के बीच ही मिलती हैं। तने में जाइलम की उत्पत्ति सेण्ट्रीप्रैगल होती

है या दूसरे शब्दों में इसे अन्तरारम्भ (एण्डार्क, endarch) (भीतर की ओर से उत्पन्न) कहते हैं।



[After Brown]

चित्र १४.६ द्वि-बीजपत्रीय तने का एक हिस्सा, अनुप्रस्थ और अनुलम्ब काट में।

२. अधोवाही (फ्लोएम या बास्ट, **Phloem or bast**). यह परिधि की ओर होता है और (१) चालनी-नालों (sieve-tubes), (२) सखि कोशाओ (companion cells) और (३) अधोवाही जीवितक (phloem parenchyma) से मिलकर बनता है। सखि कोशाओं और फ्लोएम पैरेंकाइमा में साधारण गर्त होते हैं, विशेष रूप से उन दीवारों पर जो चालनी नालों के विमुख रहती हैं।

सम्पूर्ण फ्लोएम पके हुए भोज्य-पदार्थों को पत्तियों से संग्रह अंगों और अन्य विभिन्न वर्धी भागों तक स्थानान्तर का कार्य करता है। चालनी-नालों (sieve-tubes), प्रोटीड और बहुत-से कार्बोहाइड्रेट ले जाती है; फ्लोएम पैरंकाइमा, एमाइड्स, एमीनोएसिड और घुलनशील कार्बोहाइड्रेट, और सखि कोशाएं बहुत-से घुलनशील भोज्य-पदार्थ किनारे-किनारे चारों ओर की ऊतियों तक पहुंचाती है। फ्लोएम के सारे तत्त्व सेल्यूलोज के बने होते हैं और जीवित होते हैं। फ्लोएम, स्कलेरनकाइमा के एक चकत्ते से ढका हुआ (capped) भी हो सकता है।

फ्लोएम का बाहरी भाग जो सकीर्ण चालनी नालों से मिलकर बनता है आदि अधोवाही (प्रोटोफ्लोएम, **protophloem**) बनाता है और भीतरी भाग जो बड़ी चालनी-नालों से बनता है, अनुअधोवाही (मेटाफ्लोएम, **metaphloem**) बनाता है।

३. एषा (कैम्बियम, **Cambium**). यह प्राथमिक मेरिस्टेम की एक पतली पट्टी के रूप में होता है, और जाइलम और फ्लोएम के बीच में स्थित रहता है। यह एक या कई एक परतों का बना होता है जिसकी कोशाएं पतली दीवारवाली और करीब-करीब समकोण चतुर्भुज के आकार की होती हैं। यद्यपि कैम्बियम की कोशाएं अनुप्रस्थ काट में समकोण चतुर्भुजाकार दिखाई पड़ती हैं, फिर भी यह काफी लम्बी होती है और इनके किनारे प्रायः तिरछे होते हैं। यह स्पर्श रेखा की दिशा में चपटी होती है, अर्थात् तने के अर्धव्यास के समकोण पर चपटी रहती है।

टिप्पणी. जिम्नोस्पर्म और फर्न की काष्ठ में केवल जलवाहि कोशाएं (tracheids) होती हैं; उनमें वाहिनियाँ (vessels) नहीं होती। प्राथमिक काष्ठ में बलयाकार और सपिलाकार ट्रैकीड होती हैं और द्वितीयक काष्ठ में (जिम्नोस्पर्म में) गतीं ट्रैकीड होती हैं (प्राग्ती गतीं सहित)। पौधों के इन दो विभागों में सखि कोशाएं भी नहीं बनती हैं। एक-बीजपत्री पौधों में शायद ही कभी फ्लोएम पैरंकाइमा मिलता हो; इनमें कैम्बियम भी नहीं होता है। जड़ों में जाइलम एक बण्डल बनाता है, और फ्लोएम दूसरा बण्डल।

वाहिपूलों के प्रकार (Types of Vascular Bundles).

जाइलम और फ्लोएम के विन्यास के अनुसार बण्डल निम्नलिखित प्रकार के होते हैं:

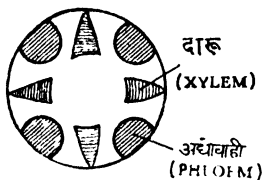
१. अरीय (रेडियल, **Radial**). जब जाइलम और फ्लोएम अलग-अलग बण्डल बनाते हैं और भिन्न-भिन्न अर्धव्यासों (radii) में स्थित रहते हैं तो उन्हें अरीय कहते हैं, जैसे कि जड़ों में पाये जाते हैं (चित्र १४.७)।

२. सहस्थ (कंज्वाएण्ट, **Conjoint**). जब जाइलम और फ्लोएम एक ही बण्डल में संयुक्त हो जाते हैं और एक ही अर्धव्यास पर स्थित रहते हैं, तो उन्हें जुड़े हुए या सहस्थ कहते हैं। जुड़े हुए बण्डलों के विभिन्न रूप होते हैं।

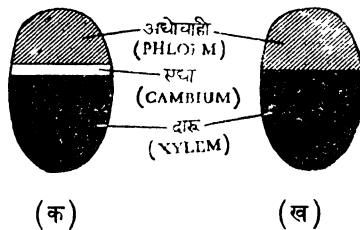
(क) एक पार्श्वस्थ (कोलैटरल, **Collateral**). जब जाइलम और फ्लोएम एक साथ एक ही अर्धव्यास पर रहते हैं—जाइलम भीतर की ओर रहता है और फ्लोएम बाहर की ओर—तो उसे एक पार्श्वस्थ कहते हैं। जब एक कोलैटरल बण्डल में कैम्बियम उपस्थित रहता है, जैसा कि समस्त द्वि-बीजपत्री तनों में पाया जाता है

तो बण्डल को 'खुला' (open) कहते हैं (चित्र १४.८ क); और जब कैम्बियम नहीं रहता तो उसे 'बन्द' (closed) कहते हैं (चित्र १४.८ ख), जैसा कि एक-बीजपत्री तनों में पाया जाता है।

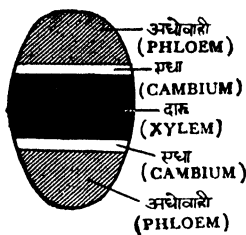
(ख) उभय-पार्श्वस्थ (बाइकोलैटरल, **Bicollateral**)। जब एक कोलैटरल बण्डल में फ्लोएम और कैम्बियम जाइलम के दोनों ओर होते हैं, तो उस बण्डल को बाइकोलैटरल कहते हैं। ऐसे बण्डल में स्थिति इस प्रकार होती है:



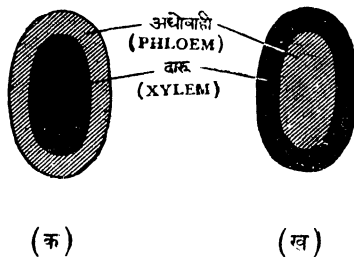
चित्र १४.७



चित्र १४.८



चित्र १४.९



चित्र १४.१०

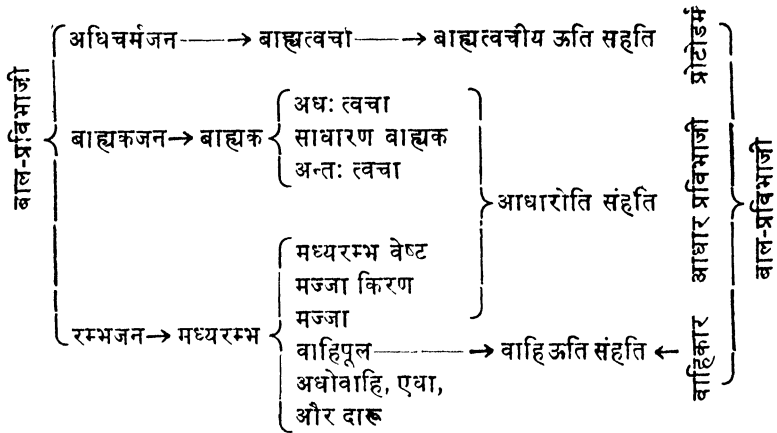
वाह्यपूलो के प्रकार। चित्र १४.७ अरीय। चित्र १४.८ एक पार्श्वस्थ (क) 'खुला' (ख) 'बन्द'। चित्र १४.९ उभय पार्श्वस्थ। चित्र १४.१० संकेन्द्र। (क) जाइलम बीच में (ख) फ्लोएम बीच में।

बाहरी फ्लोएम, बाहरी कैम्बियम, जाइलम, भीतरी कैम्बियम और भीतरी फ्लोएम। बाइकोलैटरल बण्डल कद्दू की जाति या कुकरबिटेसी (Cucurbitaceae) का एक लक्षण है। यह कभी-कभी आलू की फेमिली या सोलेनेसी (Solanaceae) में भी मिलता है। बाइकोलैटरल बण्डल हमेशा खुला होता है।

(ग) संकेन्द्र (कॉसंट्रिक, **Concentric**)। जब जाइलम बीच में रहता है और फ्लोएम से घिरा रहता है (चित्र १४.१० क) जैसा कि बहुत-से फनों और जल वाले पौधों में मिलता है, या फ्लोएम बीच में रहता है और जाइलम से घिरा होता है (चित्र १४.१० ख), जैसा कि कुछ एक-बीजपत्रियों में मिलता है, जैसे ड्रैगन प्लाण्ट

(*Dracaena*) और डैगर प्लाट (*Yucca*) में। सकेन्द्र बण्डल हमेशा बन्द होता है।

प्राथमिक प्रविभाजी और ऊति संहतियाँ (Primary Meristems and Tissues Systems).



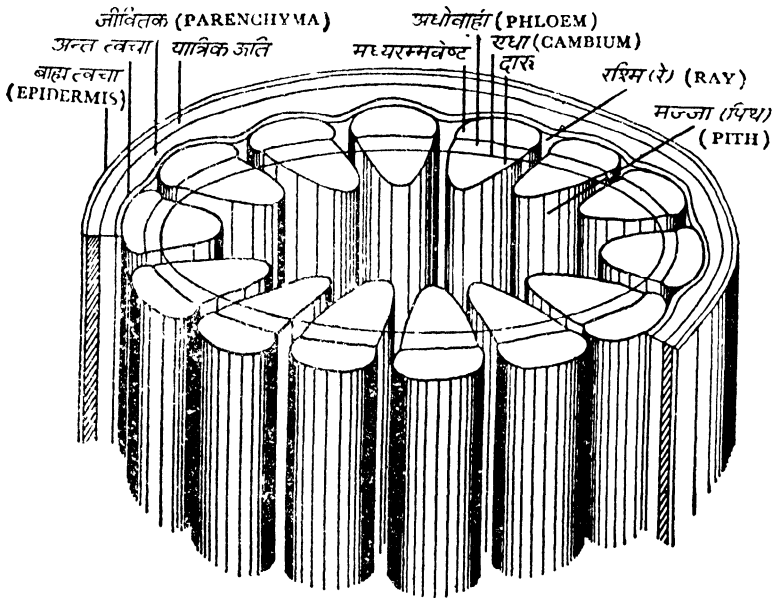
स्तम्भ की आन्तरिक रचना (Internal Structure of the Stem)

द्वि-बीजपत्री स्तम्भ

१. सूरजमुखी का शिशु स्तम्भ.

जब शिशु सूरजमुखी के तने के गहीन अनुप्रस्थ काट (transverse section) को सूक्ष्मदर्शी (चित्र १५.१, १५.२) में देखा जाता है तो उसमें नीचे लिखी बनावट स्पष्ट होती है :

१. बाह्यत्वचा (Epidermis). यह सबसे बाहर की परत होती है। इसमें

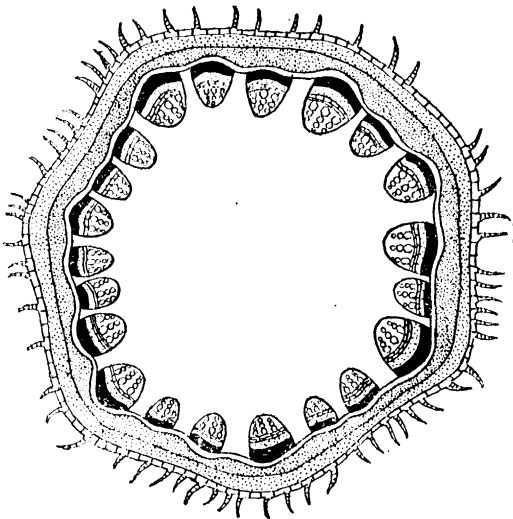


[After Smith]

चित्र १५.१ (क) एक द्वि-बीजपत्रीय तने का त्रिविमा-चित्र (three dimensional diagram) प्राथमिक ऊतियाँ दिखाते हुए।

कोशाओ की एक कतार होती है जो कि स्पर्श रेखाओं पर (tangentially) चपटी होती है और जिनकी अर्धव्यासीय (radial, अरीय) दीवारें एक दूसरे से विलकुल मिली होती है। इनके ऊपर बाह्यचर्म (क्यूटिकल, cuticle) की एक स्पष्ट परत होती है। कहीं-कहीं पर बहुकोशीय रोम होते हैं और कुछ स्टोमेटा (stomata) भी, किन्तु उनमें हरिमकणक (chloroplasts) नहीं होते। फिर भी स्टोमेटा की रक्षक कोशाओ (guard cells) में क्लोरोप्लास्ट होते हैं।

(२) बाह्यक (Cortex). यह एपिडर्मिस के नीचे होता है और इसमें बाहर की ओर कॉलनकाइमा (collenchyma, स्थूल कोणक), बीच में पैरेंकाइमा (parenchyma, जीवितक) और अन्दर स्टार्च का छ्वाद (starch sheath) या अन्तःत्वचा (एण्डोडर्मिस, endodermis) होता है। (क) कॉलनकाइमा—यह एपिडर्मिस के विलकुल नीचे होता है और इसमें कोशाओ की ४ या ५ परतें होती हैं। कॉलनकाइमा की कोशाओ के कोने, अन्तर्कोशीय अवकाश (intercellular

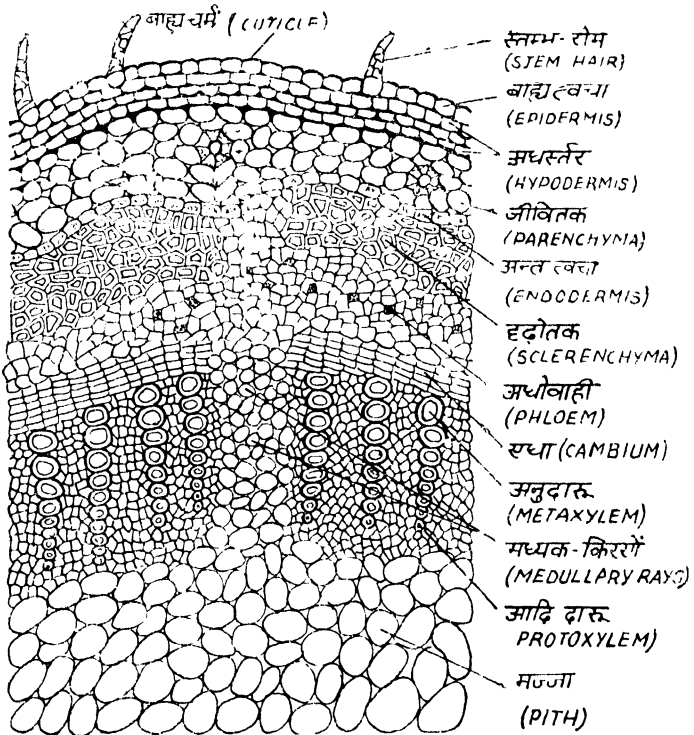


चित्र १५.१ (ख) अनुप्रस्थ काट में सूरजमुखी का तना; (diagrammatic)।

spaces) के सामने विशेष रूप से मोटे हो जाते हैं। पेक्टिन सहित सेल्युलोज का जम जाना इस मोटाई का कारण है। यह कोशाएं जीवित होती हैं और इनमें कई क्लोरोप्लास्ट भी होते हैं। (ख) कॉर्टेक्स का पैरेंकाइमा—कॉर्टेक्स के बीचवाले स्थान में पतली दीवारवाली, बड़ी, गोल अण्डाकार पैरेंकाइमा की कोशाओ की कुछ परतें होती हैं। वैस्कुलर बण्डल (vascular bundle) के बाहर ये परतें केवल एक या दो ही होती हैं। इन कोशाओ के बीच में स्पष्ट अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं। कुछ छिटपुट स्रावक नालियाँ भी इधर-उधर दिखाई देती हैं; ये नालियाँ छोटी, पतली दीवारवाली कोशाओं द्वारा चारों ओर से घिरी होती हैं। (ग) एण्डोडर्मिस—यह कॉर्टेक्स की सबसे अन्दरवाली परत है जो कि मध्यरम्भ (stele) से कॉर्टेक्स को

अलग करती है। इसमें कोशाएं लगभग ढोलक के आकार की होती हैं, और बिना अन्तर्कोशीय स्थानों के आपस में बिल्कुल मिली होती हैं। एण्डोडर्मिस स्क्लेरनकाइमा के चकत्ते के ऊपर स्पष्ट अस्तित्व रखती है, और उसके डधर-डधर वह दूसरे अंगों में खो जाती है। इसमें लगभग सदैव ही स्टार्च के दाने होते हैं और इसलिए इसको स्टार्च का छाद या मण्ड कचुक (starch sheath) भी कहते हैं।

(३) मध्यरम्भवेष्ट (Pericycle) यह स्क्लेरनकाइमा की कोशाओं के अर्धचन्द्राकार समूहों और बीच-बीच में पैरकाइमा की कोशाओं से मिलकर बनती है। प्रत्येक समूह के साथ वैस्कुलर बण्डल का फ्लोएम (phloem) होता है और इस समूह को कठिन अधोवाही या हार्ड बास्ट (hard bast) कहा जाता है। इस ऊति में मध्यभिन्ति (middle lamella) काफी स्पष्ट होती है।



[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १५.२ अनुप्रस्थ काट में सूरजमुखी के तने का एक भाग।

(४) मध्यक किरणें (Medullary rays). वैस्कुलर बण्डल के बीच में स्थित काफी बड़ी, बहुभुजी, अर्धव्यासीय लम्बी कोशाओं की कुछ परतों से मिलकर मेडुलरी किरणें बनती हैं।

(५) **मज्जा (Pith)**. यह सूरजमुखी के तने में काफ़ी विकसित होता है और उसका मुख्य भाग बनाता है। यह वैस्कुलर बण्डलों के नीचे से आरम्भ होकर केन्द्र तक जाता है और बहुभुजी (polygonal) पतली दीवारवाली कोशाओं से मिलकर बनता है।

(६) **वाहि-पूल (Vascular bundles)**. ये कोलैटरल (colliateral) और खुले (open) होते हैं और एक घेरे में विन्यस्त होते हैं। प्रोटोजाइलम (proto-xylem) केन्द्र की ओर होता है और इसलिए काष्ठ की वृद्धि केन्द्रादग (centrifugal) होती है। प्रत्येक वैस्कुलर बण्डल के ऊपर पेरिसाइकलवाले स्कलेरनकाइमा की कोशाओं का एक समूह या चकता होता है। प्रत्येक बण्डल (१) **अधोवाही (phloem)** या **बास्ट (bast)**, (२) **एधा (cambium)** और (३) **बारू (xylem)** या **काष्ठ (wood)** से मिलकर बना होता है।

१. **अधोवाही (Phloem)**. यह बाहर की ओर होता है और सेल्युलोज की पतली दीवारवाली कोशाओं का बना होता है। इसमें नीचे लिखी चीज़ें होती हैं—
(क) **चालनी-नाल (sieve-tubes)**—इसके विवर (cavities) बाकी फ़्लोएम की अपेक्षा बड़े होते हैं। पूरी तौर पर सूरजमुखी के तनों के चालनी नाल बहुत सकरे होते हैं। सीव-ट्यूब के साथ एक छोटी कोशा भी होती है, यह है (ख) **सखि कोशा (companion cell)**। बाकी फ़्लोएम छोटी-छोटी कोशाओंवाले पैरकाइमा से भरा होता है और इसको (ग) **अधोवाही जीवितक (phloem parenchyma)** कहा जाता है। फ़्लोएम की सब कोशाएँ जीवित होती हैं और इसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के भोज्य-पदार्थ होते हैं।

२. **एधा (Cambium)**. सेक्शन में अन्दर की ओर चलने पर पतली दीवारवाली कोशाओं की ऊत्ति (tissue) की एक पट्टी दिखाई देती है। इसकी कोशाएँ अर्धव्यासीय (radial) कतारों में भली-भाँति व्यवस्थित होती हैं और लगभग आयताकार होती हैं; ये आकार में बहुत छोटी और पतली दीवारवाली होती हैं। [यदि सेक्शन को अपेक्षाकृत तने के पुराने भागों में से काटा जाय तो कैम्बियम एक वैस्कुलर बण्डल से दूसरे तक फैला हुआ दिखाई देता है और उसकी कोशाओं का विभाजन वैस्कुलर बण्डल के भीतर और बाहर दोनों ओर दिखाई देता है।]

३. **बारू (Xylem)**. यह भीतर की ओर होता है और इसमें निम्नलिखित चीज़ें होती हैं—(क) **काष्ठ वाहिनियाँ (wood vessels)**—अर्धव्यासीय कतारों में व्यवस्थित कुछ बड़े विवर (cavities) आसानी से पहचाने जा सकते हैं। ये काष्ठ वाहिनियाँ हैं। छोटे वेसल आदिदारू (protoxylem) बनाते हैं और ये केन्द्र की ओर होते हैं; बड़ेवाले अनुदारू (metaxylem) बनाते हैं और ये केन्द्र से दूर स्थित होते हैं। प्रोटोजाइलम में वलयकार (annular), सर्पिलाकार (spiral) और सोपानवत् (scalariform) वाहिनियाँ होती हैं और मेटाजाइलम में जालिकावत् (reticulate) और गर्ती (pitted)। इनकी दीवारें मदैव मोटी और लिगनिनयुक्त (lignified) होती हैं। (ख) **जलवाहि कोशाएँ (tracheids)**—वाहिनियों को घेरे हुए या उनके बीच में कुछ मोटी दीवारवाली कोशाएँ देखी जा सकती हैं, ये जलवाहि कोशाएँ हैं। तने के अनुप्रस्थ काट में काष्ठ तन्तुओं से इनका भेद करना कठिन है, क्योंकि ये उनसे मिले हुए होते हैं। (ग) **काष्ठ तन्तु (wood fibres)**—यह सेक्शन में टेढ़े-मेढ़े और बहुभुजी दिखाई देते हैं। यह मोटी दीवारवाले और लिगनिन-युक्त होते हैं।

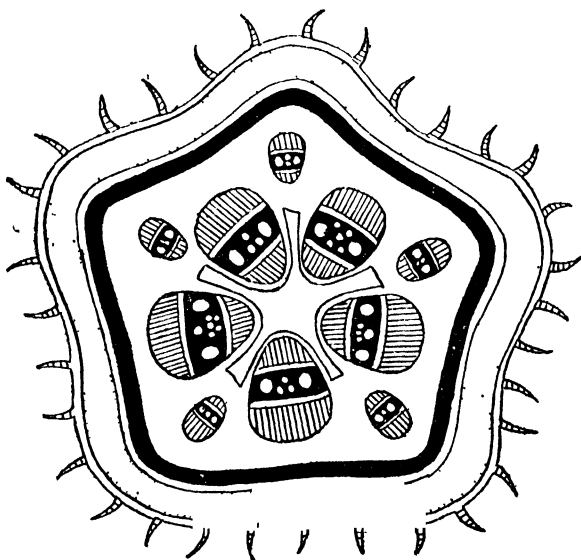
ये काष्ठ-वाहिनियों की भाँति रगे होते हैं। काष्ठ-वाहिनियों को छोड़ कर लकड़ी का लगभग सम्पूर्ण भाग इन्हीं से बना होता है। (घ) काष्ठ जीवितक (**wood parenchyma**)—बण्डल के भीतरी भाग में पैरकाइमा की कोशाओं का कुछ समूह प्रोटो-जाइलम को घेरे हुए दिखाई देता है, यही काष्ठ पैरकाइमा है। काष्ठ पैरकाइमा की कोशाओं में उनका प्रोटोप्लाज्म रहता है।

शिशु कद्दू (*Cucurbita*) का स्तम्भ.

तने का एक महीन सेक्शन काटिये और छोटे लेस द्वारा ध्यान से देखिए कि यह पोला है, इसमें पाँच उठे हुए (ridges) और पाँच दबे हुए भाग (furrows) होते हैं; साधारणतया वैस्कुलर बण्डलों की संख्या दस होती है जो दो कतारों में व्यवस्थित होते हैं, बाहरी कतारवाले बण्डल उठे हुए भागों के नीचे होते हैं और अन्दरवाले दबे हुए भागों के नीचे। तब सूक्ष्मदर्शी के नीचे, निम्नलिखित ऊतियों को देखिये (चित्र १५.३, १५.४) :

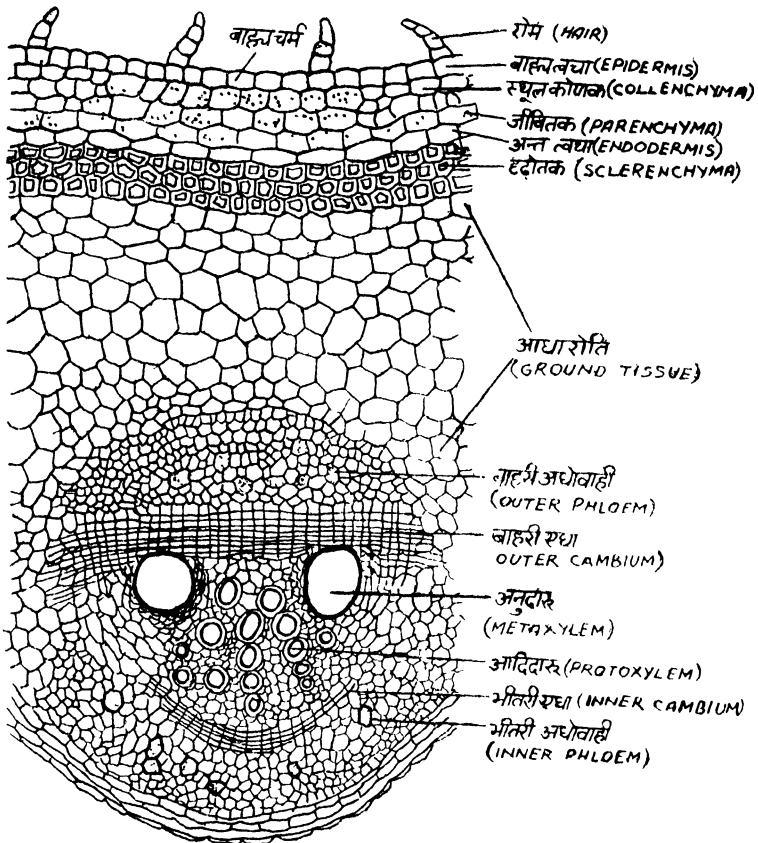
१. एपिडर्मिस. इसकी केवल एक परत है जो उठे हुए और दबे हुए भागों के ऊपर से जाती है; इसमें प्रायः लम्बे और सकरे बहुकोशीय रोम होते हैं।

२. कॉर्टेक्स. यह बाहर की ओर कॉलनकाइमा, बीच में पैरेंकाइमा और अन्दर की ओर एण्डोडर्मिस से मिलकर बनता है। (क) कॉलनकाइमा—यह एपिडर्मिस के तुरन्त नीचे होता है और उठावों (ridges) में कॉलनकाइमेट्स कोशाओं की ६ या ७ (कभी-कभी और अधिक) परतों से मिलकर बनता है; दबे हुए भागों में



चित्र १५.३ अनुप्रस्थ काट में कद्दू का तना; (diagrammatic)।

परतों की संख्या घटकर २ या ३ रह जाती हैं, दबे हुए भागों में इधर-उधर कॉलन-काइमा के बीच में नीचेवाला पैरंकाइमा आ जाता है और यह कभी-कभी एपिडर्मिस तक चला जाता है। कॉलनकाइमा में क्लोरोप्लास्ट होते हैं। (ख) पैरंकाइमा—कॉर्टेक्स का पैरंकाइमा थोड़ा-सा होता है, केवल दो-तीन कतरों का। इधर-उधर यह कॉलनकाइमा में से होकर एपिडर्मिस तक चला जाता है। कॉर्टेक्स में क्लोरोप्लास्ट अधिकता से होते हैं। (ग) एण्डोडर्मिस—यह कॉर्टेक्स की सबसे अन्दरवाली परत है जो स्क्लेरनकाइमा के तुरन्त बाहर होती है। यह परत लहरदार होती है और इसमें स्टार्च के दाने होते हैं।



[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १५.४ अनुप्रस्थ काट में कद्दू के तने का एक भाग।

३. पेरिसाइकल. एण्डोडर्मिस के नीचे स्क्लेरनकाइमा की कोशाओं का एक

प्रदेश होता है जो पेरिसाइकल बनाता है। इसमें लिंगनिन-युक्त कोशाओं की चार-पाँच परतें होती हैं। ये कोशाएँ आकार में बहुभुजी होती हैं।

४. **आधारोति.** स्कलेरनकाइमा में लेकर पिथ तक पतली दीवारवाली कोशाओं का एक लगातार समूह होता है, जो आधारोति (ग्राउण्ड टिश) बनाता है। इस ऊति में वैस्कुलर बण्डल जमा होते हैं।

५. **वैस्कुलर बण्डल.** ये बाइकोलैटरल (bicollateral) होते हैं, तथा साधारणतया संख्या में दस और दो कतारों में व्यवस्थित होते हैं। प्रत्येक बण्डल में (१) जाइलम, (२) कैम्बियम की दो कतारें (strips) और (३) फ्लोएम के दो समूह होते हैं।

१. **जाइलम.** यह बण्डल के बीच में होता है। इसके बाहरी भागों में बहुत चौड़ी गर्तियाँ (pitted) वाहिनियाँ होती हैं जो मेटाजाइलम बनाती हैं और भीतरी भाग में संकीर्ण वाहिनियाँ होती हैं जो प्रोटोजाइलम बनाती हैं। इनमें कुछ ट्रेकीड और काष्ठ तन्तु भी होते हैं और काष्ठ पैरकाइमा भी। वाहिनियाँ (vessels) अर्धव्यासीय कतारों में इतनी निश्चित रूपसे व्यवस्थित नहीं होती, जैसी कि सूरज-मुखी के तने में।

२. **कैम्बियम** यह ऊति जाइलम के दोनों ओर दिखाई देती है, यह अन्दर की ओर फ्लोएम और जाइलम के बीच में लम्बी कतार बनाती है और बाहर की ओर फ्लोएम के बीच में। इसकी कोशाएँ पतली दीवारवाली और आयताकार होती हैं और अर्धव्यासीय कतारों में व्यवस्थित होती हैं। बाहरी कैम्बियम में कई कतारें होती हैं और यह करीब-करीब चपटा होता है। भीतरी कैम्बियम में थोड़ी-सी कतारें होती हैं और यह टेढ़ी होती है। कैम्बियम की प्रत्येक लम्बी कतार क्रमशः फ्लोएम और जाइलम से मिलती जाती है।

३. **फ्लोएम** यह दो समूहों में होता है—बाहरी और भीतरी। ध्यान में देखिये कि बाहर का फ्लोएम समतल-उन्नतोदर (plano-convex) और भीतर का अर्ध-चन्द्राकार होता है। फ्लोएम के प्रत्येक समूह में चालनी-नाल, सखि कोशाएँ और पलोएम पैरकाइमा होता है। **कुकुरबिटा (Cucurbita)** के तने के फ्लोएम में चालनी-नाल (सीव ट्यूब) बहुत स्पष्ट होते हैं। इनमें छिद्र-युक्त चालनी-पट्ट (sieve-plates) भी इधर-उधर दिखाई देते हैं। बाकी फ्लोएम छोटी, पतली दीवारवाली कोशाओं से मिलकर बना होता है, जिसे फ्लोएम पैरकाइमा कहते हैं।

एक-बीजपत्री स्तम्भ

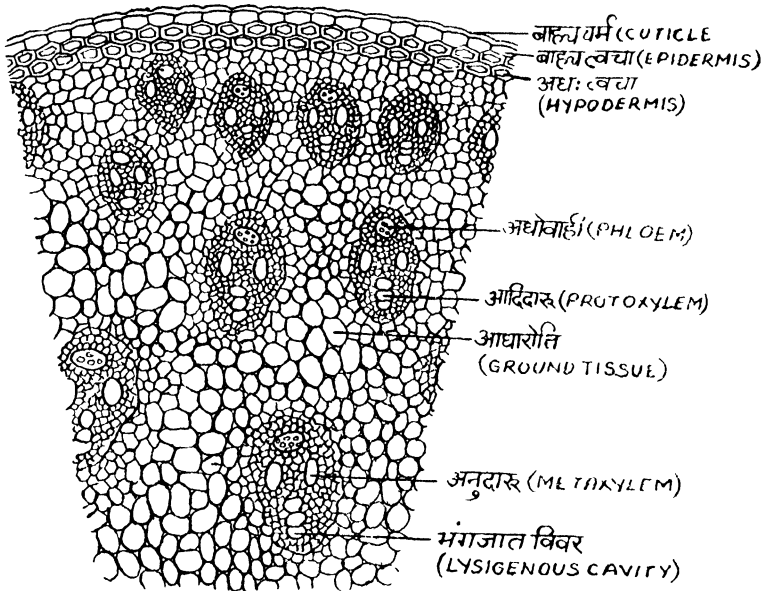
१. मक्के का तना.

एक महीन सेक्शन काटिये और इसमें सूक्ष्मदर्शी के नीचे निम्नलिखित चीजें ध्यान से देखिये (चित्र १५५)। सेक्शन को सैफ्रेनीन (safranin) से रंगा जा सकता है।

१. **एपिडर्मिस.** यह सबसे बाहर की केवल एक कतार है जिसके बाहरी भाग पर क्यूटिकल की एक मोटी परत है। एपिडर्मिस में यहाँ-वहाँ कुछ स्टोमेटा देखे जा सकते हैं।

२. स्क्लेरनकाइमा. यह हाइपोडर्मिस का संकीर्ण भाग बनाता है और एपिडर्मिस के नीचे लगभग दो या तीन परतों का होता है।

३. आधारोति. यह पतली दीवारवाली पैरेंकाइमा की कोशओं का बराबर फैला हुआ भाग है जो स्क्लेरनकाइमा से लेकर केन्द्र तक जाता है। इसको कॉर्टेक्स, एण्डोडर्मिस, पेरिसाइकल आदि भागों में नहीं पहचाना जा सकता। ग्राउण्ड टिशू की कोशओं में काफी अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं। कुछ एक-बीजपत्रियों में स्क्लेरनकाइमा के कुछ समूहों की कतारें पेरिसाइकल के भाग में विकसित हो जाती हैं।



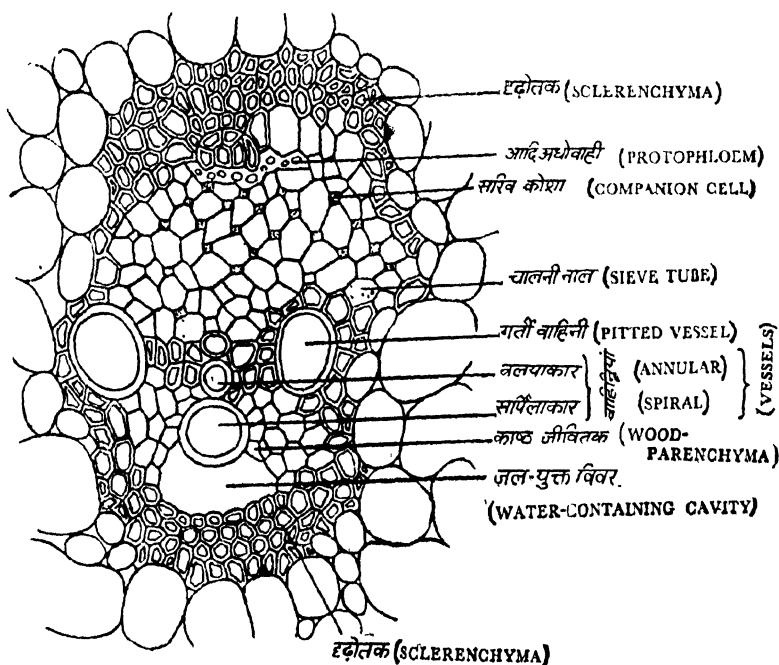
[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १५.५ अनुप्रस्थ काट में मक्के के तने का एक भाग।

४. वैस्कुलर बण्डल (चित्र १५.६). ये कोलैटरल और बन्द (closed) होते हैं और आधार-ऊति में इधर-उधर बिखरे रहते हैं। ये संख्या में अधिक होते हैं और केन्द्र की अपेक्षा बाहर की ओर अधिक पास-पास होते हैं। बाहरवाले, केन्द्रवालों की अपेक्षा आकार में कुछ छोटे भी होते हैं। प्रत्येक वैस्कुलर बण्डल लगभग पूर्णतया स्क्लेरनकाइमा के आवरण से ढका होता है और बाह्य आकृति में कुछ अण्डाकार होता है। इसमें दो भाग हैं—जाइलम और फ्लोएम।

(१) जाइलम. इसमें साधारणतया स्पष्ट रूप से चार वाहिनियाँ होती हैं जो अंग्रेजी के Y के आकार में विन्यस्त होती हैं। बहुत-सी और छोटी-छोटी इधर-उधर बिखरी रहती हैं। दो छोटी वाहिनियाँ (वनयाकार और सपिनाकार) एक ही अर्ध-

व्यास पर केन्द्र की ओर होती हैं और प्रोटोजाइलम बनाती है। दो बड़ी वाहिनियाँ (गर्ती) छोटी वाहिनियाँ और उनमें स्थित जलवाहि कोशाओं के साथ मेटाजाइलम बनाती है। प्रोटोजाइलम के भीतरी ओर एक जल-युक्त विवर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। यह भंग जात रीति से (lysigenously) बनाता है, अर्थात् यह तने के विकास के समय प्रोटोजाइलम की एक या अधिक वाहिनियों (vessels) को तोड़-फोड़ कर बनता है। पतली दीवारवाले काष्ठ जीवितक का एक चकत्ता भी प्रोटोजाइलम में रहता है, किन्तु काष्ठ तन्तु स्क्लेरनकाइमा के छाप से पृथक् नहीं पहचाने जा सकते।



[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १५.६ मक्के के तने का एक वाहि-पूल (vascular bundle)।

(२) फ्लोएम. इसमें केवल चालनी-नाल और सखि कोशाएँ होती हैं। एक-बीजपत्री तनों में फ्लोएम परिरंकाइमा नहीं होता। फ्लोएम का सबसे बाहरी भाग जो कि टूटा हुआ होता है, आदि-अधोवाही (प्रोटोफ्लोएम, protophloem) कहलाता है, और उसका भीतरी भाग अनु-अधोवाही (मेटाफ्लोएम, metaphloem)। पहलेवाला शीघ्र ही नष्ट हो जाता है और बादवाले में स्पष्ट रूप से चालनी-नाल और सखि-कोशाएँ दिखाई पड़ती हैं।

एक-बीजपत्री और द्वि-बीजपत्री तनों में अन्तर.

	द्वि-बीजपत्री तना (जैसे, सूरजमुखी)	एक-बीजपत्री तना (जैसे, मक्का)
१. हाइपोडर्मिस	कॉलनकाइमेटस।	स्क्लेरनकाइमेटस।
२. कॉर्टेक्स	पैरेंकाइमा की कुछ परते।	स्पष्ट ऊतियों में भिन्न (differentiation) के बिना ही केन्द्र तक पैरेंकाइमा का एक लगातार पुंज (ground tissue)।
३. एण्डोडर्मिस	एक लहरदार परत।	
४. पेरिसाइकल	पैरेंकाइमा और स्क्लेरनकाइमा का एक प्रदेश।	
५. मध्यक किरणें	वैस्कुलर बण्डलो के बीच पैरेंकाइमा की परत।	
६. मज्जा	केन्द्रीय वेनल।	
७. वैस्कुलर बण्डल	(क) कोलैटरल ओर खुला हुआ (open)। (ख) एक घेरे में विन्यस्त। (ग) समान आकार के। (घ) फ्लोएम पैरेंकाइमा उपस्थित। (ङ) साधारणतया 'वेज' के आकार के (wedge-shaped)। (च) बण्डल-शीथ अनुपस्थित।	कोलैटरल और बन्द (closed)। बिखरे हुए। बड़े केन्द्र की ओर। अनुपस्थित। साधारणतया अण्डाकार। अच्छी प्रकार से विकसित।

२. काना का (पत्तीरहित) पुष्पन-स्तम्भ (Flowering Stem [Scape] of Canna).

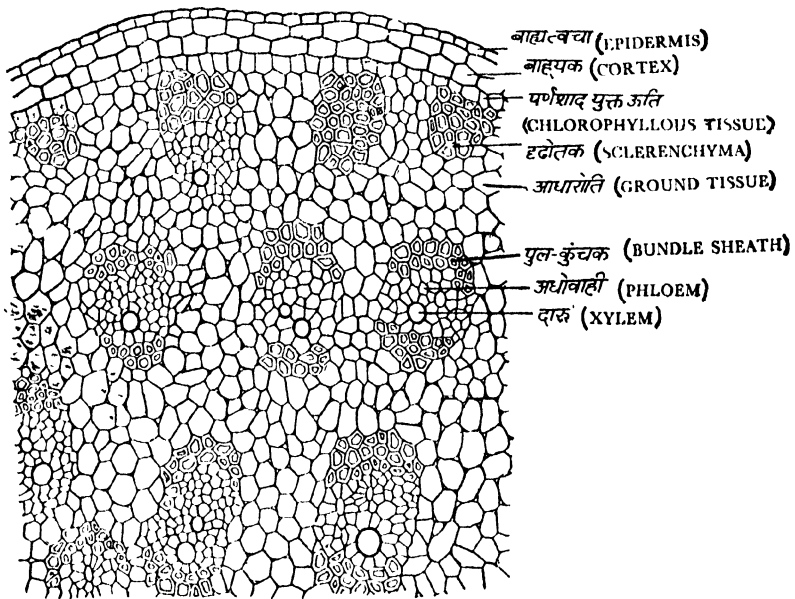
एक महीन अनुप्रस्थ काट में निम्नलिखित रचनाएं देखने को मिलती हैं:

१. बाह्यत्वचा (Epidermis). यह सबसे बाहर की परत है; इसमें कोशाओं की केवल एक कतार होती है। ये कोशाएं बहुत छोटी, बहुभुजी और स्पर्श-रेखाओं पर चपटी (flattened tangentially) होती हैं।

२. आधारोत्ति संहति (Ground tissue system). वैस्कुलर बण्डल को छोड़कर एपिडर्मिस के नीचे से लेकर केन्द्र तक सम्पूर्ण ऊतियों का पुंज आधारोत्ति संहति बनाता है। यह निम्नलिखित में भिन्न होता है—(क) बाह्यक (cortex)—इसमें काफी बड़ी, बहुभुजी कोशाओं की दो कतारें होती हैं, (ख) पर्णहरिम-युक्त ऊति (chlorophyllous tissue)—इसमें क्लोरोप्लास्ट सहित कोशाओं की एक या

दो कतारें रहती हैं जो इधर-उधर निकली रहती हैं, (ग) दृढोत्तक (**sclerenchyma**) के भिन्न-भिन्न आकारों के समूह जो कि क्लोरोफिल-युक्त ऊत के साथ होते हैं, और (घ) आधारोति (**ground tissue**), जिसमें पतली दीवारवाली बड़ी पैरंकाइमा की कोशाएँ हैं जिनमें स्टार्च होता है और जिनके बीच में बहुत सारे अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं।

३. वाहि-पुल (**Vascular bundles**). ये संख्या में अधिक और भिन्न-भिन्न आकार के होते हैं। ये आधारोति में इधर-उधर बिखरे रहते हैं। प्रत्येक बण्डल बन्द (**closed**) और एक पार्श्वस्थ (**collateral**) होता है। यह स्कलेरन-



[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १५.७ अनुप्रस्थ काट में कौंग के (पत्तीरहित) पुष्पन-स्तम्भ का एक हिस्सा।

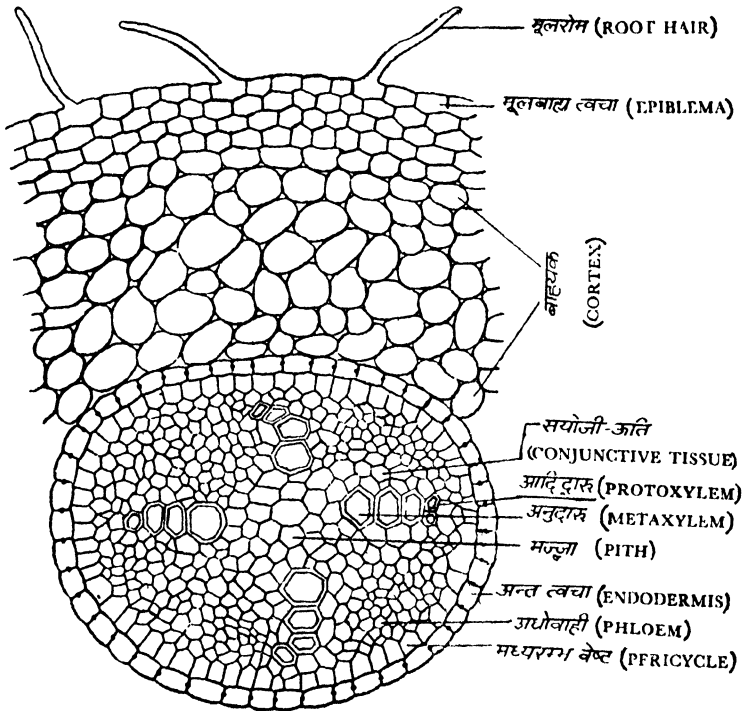
काइमा के एक छ्द (पुल-छ्द, **bundle sheath**) से अपूर्ण रूप से ढका होता है, बाहर की ओर स्पष्ट रूप से इसकी एक टोपी-सी होती है, और अन्दर की ओर एक पतली लम्बी कतार। बहुत कम दशाओं में छ्द पूरे बण्डल के चारों ओर होता है। प्रत्येक बण्डल में (क) अन्दर की ओर दारु (**xylem**), और (ख) बाहर की ओर अधोवाही (**phloem**) होता है। जाइलम में एक बड़ी स्पष्ट सर्पिलाकार वाहिनी (**spiral vessel**) होती है। अक्सर एक या दो छोटी वाहिनियाँ भी होती हैं जो स्वयं भी सर्पिलाकार होती हैं और बहुधा पहले के बाहर की ओर होती हैं। जाइलम में थोड़ा-सा पैरंकाइमा भी होता है। फ्लोएम, चालनी-नालों (**sieve-tubes**) और सखि-कोशाओं (**companion cells**) से बना होता है।

जड़ की आन्तरिक रचना (Internal Structure of the Root)

१. द्वि-बीजपत्री शिशु जड़.

द्वि-बीजपत्री जड़ के महीन सेक्शन में परिधि से लेकर केन्द्र तक ऊतियों की निम्नलिखित प्रकार से व्यवस्था होती है (चित्र १६१)। इन ऊतियों के कार्य का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है।

१. रोमिस्तर या मूल बाह्य त्वचा (Piliferous layer or epiblema). यह पतली दीवारवाली कोशिकाओं की सबसे बाहरी परत है। इन कोशिकाओं में से कुछ की बाहरी दीवारें बाहर की ओर निकली रहती हैं और एक-कोशीय रोम बनाती हैं।

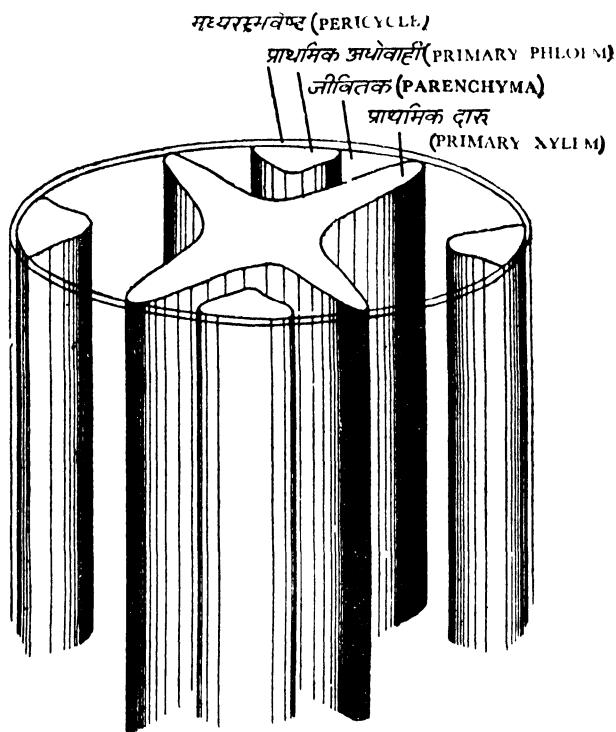


[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १६.१ अनुप्रस्थ काट में द्वि-बीजपत्री जड़ का एक हिस्सा।

यह परत मिट्टी से जल और दूसरे घुलित (solutes) के सोखने के काम में आती है और इसलिए इसमें बाह्यचर्म (क्यूटिकल) नहीं होती।

इस सतह को रोमिस्तर या पिलिफेरस परत (pilus—रोम ; forma—बनाना) कहा जाता है, क्योंकि इसकी अधिकतर कोशाएँ मूल रोमों को बनाती हैं। इसका



[After Smith]

चित्र १६.२ एक जड़ का त्रिविमा चित्र।

दूसरा नाम है मूल बाह्यत्वचा या एपिब्लेमा (epi—ऊपरी या बाहरी, blema—छाद), क्योंकि यह सबसे बाहर की सतह को बनाती है, जिसकी उत्पत्ति एपिडर्मिस की भाँति स्थिर नहीं होती ; कभी-कभी यह डर्मेटोजन (dermatogen) से निकलती है (साधारणतया द्वि-बीजपत्रियों में) और कभी-कभी यह पेरिब्लेम (periblem) की सबसे बाहरी परत से निकलती है (साधारणतया एक-बीजपत्रियों में)। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इसका कार्य भी एपिडर्मिस से भिन्न होता है।

२. कॉर्टेक्स. यह पतली दीवारवाली बहुत-सी गोल कोशाओं से मिलकर बनता है। इनमें काफी अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं। कॉर्टेक्स की कोशाओं में स्टार्च के दाने और ल्यूकोप्लास्ट (leucoplast) होते हैं। किन्हीं दशाओं में एपिब्लेमा

केवल थोड़े ही काल तक जीवित रहती है ; यह जल्दी मर जाती है और तब कॉर्टेक्स की कुछ परतें क्यूटिन-युक्त (cutinized) हो जाती है ; और इस प्रकार वे जड़ के बहिर्त्वचा (एक्सोडर्मिस, *exodermis*) को बनाती है।

३. **एण्डोडर्मिस**. यह पास-पास मिली हुई, स्पष्ट रूपसे दिखाई देनेवाली, अर्ध-व्यासीय मोटी दीवारोंवाली कोशाओ की एक तह है। कभी-कभी यह मोटाई अन्दर की दीवारों तक चली जाती है, और प्रायः प्रोटोजाइलम से मिलनेवाली दीवारों में गर्त (pits) होते हैं। यह कॉर्टेक्स की सबसे अन्दरवाली परत है। एण्डोडर्मिस की कोशाएँ ढोलक के आकार की होती हैं और पेरिसाइकल के चारों ओर एक घेरा बनाती हैं। एण्डोडर्मिस में पतली दीवारवाली कुछ कोशाएँ पायी जाती हैं ; इनको मार्ग कोशाएँ (passage cells) कहते हैं ; और ये प्रोटोप्लाज्म के विरुद्ध स्थित होती हैं।

४. **पेरिसाइकल**. यह एण्डोडर्मिस के नीचे होती है और उसकी भाँति यह भी एक परत की होती है। इसकी कोशाओ की दीवारें बहुत पतली होती हैं और इनमें काफी मात्रा में प्रोटोप्लाज्म रहता है।

५. **संयोजी ऊति (Conjunctive tissue)**. बण्डल के बीच में और चारों ओर वाला पैरंकाइमा संयोजी ऊति बनाता है।

६. **मज्जा (Pith)**. यह जड़ के केन्द्र में थोड़ा-सा भाग बनाता है। कभी-कभी काष्ठ-वाहिनियों के केन्द्र पर मिलने के कारण पिथ करीब-करीब समाप्त (obliterated) हो जाता है।

७. **वैष्कुल बण्डल**. ये एक घेरे में विन्यस्त होते हैं, जैसा कि द्वि-बीजपत्री तनों में होता है, किन्तु यहाँ पर जाइलम और फ्लोएम बराबर सख्या में अलग-अलग बण्डल बनाते हैं और उनकी व्यवस्था अर्ध-व्यासीय (*radial*, अरीय) होती है। प्रोटो-जाइलम केन्द्र से दूर होता है जिससे कि लकड़ी की वृद्धि केन्द्राभिग (centripetal) होती है। दूसरे शब्दों में जाइलम को बहिरारम्भ (एक्जार्क, *exarch*) कहा जाता है। जाइलम या फ्लोएम के बण्डलों की सख्या दो से लेकर छः तक होती है (di-, tri-, tetra, penta-, or hexarch), और बहुत ही कम दशाओ में सख्या ६ से अधिक होती है। द्वितीयक मेरिस्टेम (secondary meristem) के रूप में कैम्बियम बाद में ही दिखाई पड़ता है। फ्लोएम बण्डल में चालनी-नाल, सखि-कोशाएँ और पैरंकाइमा होते हैं। जाइलम बण्डल में प्रोटोजाइलम पेरिसाइकल से मिला हुआ परिधि की ओर होता है ; और मेटाजाइलम केन्द्र की ओर। प्रोटोजाइलम छोटी वाहिनियों (वलयाकार और सपिलाकार) से मिलकर बनता है और मेटाजाइलम बड़ी वाहिनियों (जालिकावत् और गर्ती) से मिलकर बनता है। मेटाजाइलम के समूह अक्सर केन्द्र पर मिलते हैं और तब पिथ गायब हो जाता है (वह नष्ट हो जाता है)।

२. एक-बीजपत्री जड़.

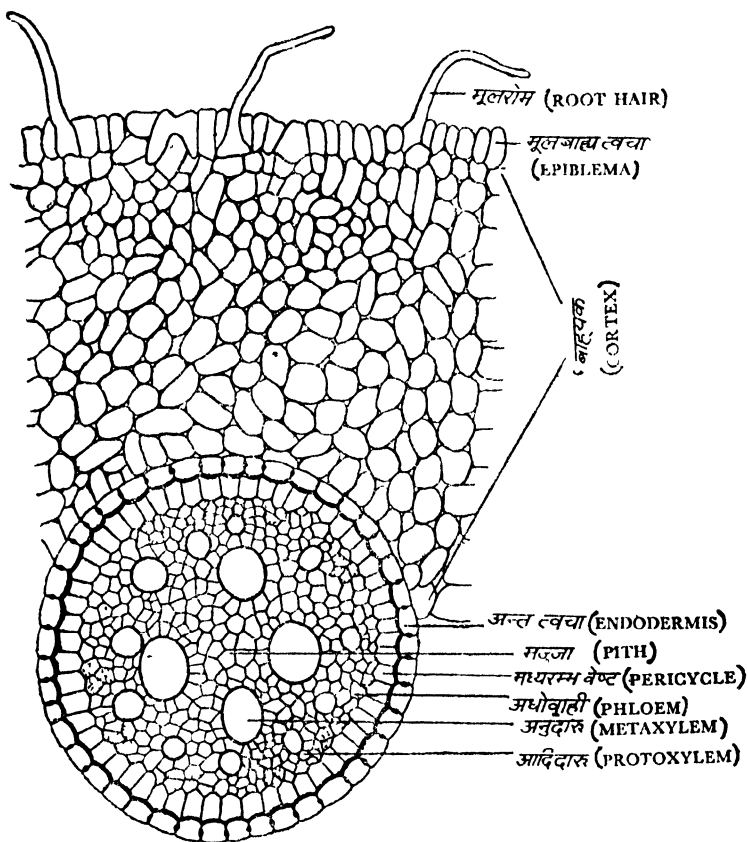
सूक्ष्मदर्शी के नीचे एक-बीजपत्री जड़ के महीन सेक्शन में नीचे लिखी ऊतियाँ दिखाई देती हैं (चित्र १६.३)। इनके कार्यों का उल्लेख पहले किया जा चुका है।

१. **पिलोफेरस सतह या एपिब्लेमा**. यह सबसे बाहर की एक परत है जिसमें बहुत से एक-कोशीय रोम होते हैं।

२. **कॉर्टेक्स.** यह गोल या अण्डाकार कोशाओं की कई तहों का बना होता है, जिसमें अन्तर्कोशीय अवकाश होते हैं। जैसे ही एपिब्लेमा नष्ट होती है, कॉर्टेक्स की कुछ बाहरी कोशाएँ क्यूटिन-युक्त हो जाती हैं और बहिर्वर्चा (exodermis) बनाती हैं।

३. **एण्डोडर्मिस.** यह कॉर्टेक्स की सबसे भीतरवाली परत है और स्टील (मध्य-रम्भ) के चारों ओर यह एक पूर्ण घेरा बनाती है। एण्डोडर्मिस की अर्धव्यासीय दीवारें और अवसर अन्दर की दीवारों काफी मोटी हो जाती हैं। एण्डोडर्मिस की कोशाएँ ढोलक के आकार की होती हैं। इस तह में अक्षर मार्ग कोशाएँ भी उपस्थित रहती हैं। ये कोशाएँ प्रोटोजाइलम के विरुद्ध स्थित होती हैं।

४. **पेरिसाइकल.** यह एण्डोडर्मिस के नीचेवाली घेरेदार परत है।



[After Mukherji & Ganguly]

चित्र १६.३ अनुप्रस्थ काट में एक-बीजपत्री जड़ का एक भाग।

५. **संयोजी ऊति** (कजन्काटिव टिशू). वैस्कुलर बण्डलो के बीच और चारो ओर वाला पैरकाइमा संयोजी ऊति कहलाता है।

६. **मज्जा**. जड़ के केन्द्रीय भाग में पैरकाइमा की कोशाओ के समूह को मज्जा कहते हैं। यह अधिकतर एक-बीजपत्री जड़ों में अच्छी प्रकार विकसित होता है।

७. **वैस्कुलर बण्डल** जाइलम और फ्लोएम समान सख्या में भिन्न-भिन्न बण्डलों को बनाते हैं और ये एक बरे में व्यवस्थित होते हैं। इनकी व्यवस्था अर्ध-व्यासीय (radial) होती है। बण्डल सख्या में बहुत अधिक होते हैं। केवल कुछ अपवाद स्वरूप (exreptional) जड़ों में इनकी सख्या सीमित होती है। काण्ट की वृद्धि केन्द्राभिग (centripetal) होती है। फ्लोएम बण्डल में चालनी-नाल, सखि कोशाएँ और फ्लोएम पैरकाइमा होते हैं। जाइलम बण्डल में बाहर प्रोटोजाइलम होता है जो पेरिसाइकल से मिला होता है, और केन्द्र की ओर मेटाजाइलम होता है। प्रोटोजाइलम में वलयाकार और सर्पिलाकार वाहिनियाँ होती हैं और मेटाजाइलम में जालिकावत् और गर्ती। व भी-कभी पृथ में अलग से कुछ बड़ी वाहिनियाँ भी दिखाई देती हैं।

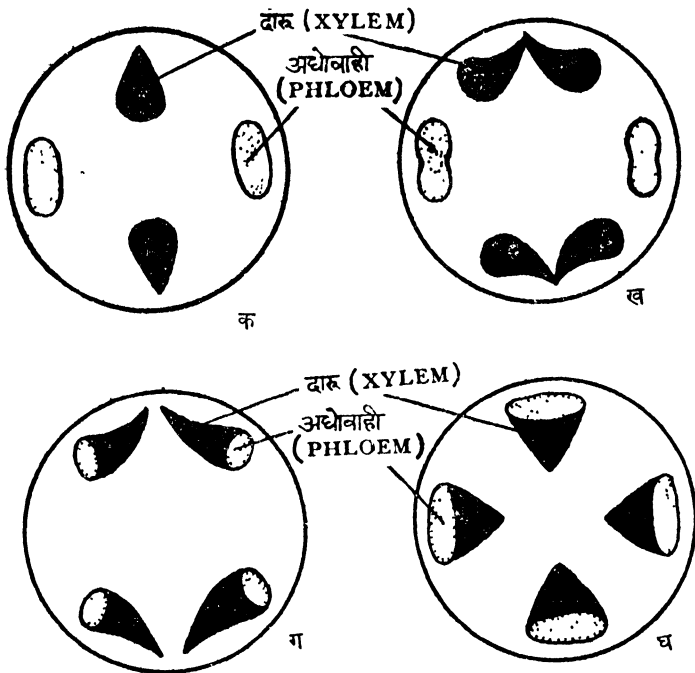
द्वि-बीजपत्री और एक-बीजपत्री जड़ों में अन्तर.

	द्वि-बीजपत्री जड़	एक-बीजपत्री जड़
१. जाइलम बण्डल	सख्या में २ से ६ तक (di-to, hexarch), बहुत कम दशाओं में अधिक।	बहुत अधिक सख्या में (polyarch), बहुत कम दशाओं में ही सीमित सख्या में, जैसे प्याज में।
२. मज्जा	छोटा या अनुपस्थित।	बड़ा और भली प्रकार विकसित।
३. पेरिसाइकल	यद्यपि इनकी भी रचना उसी (एक-बीजपत्री के) प्रकार है, किन्तु यह पार्श्व-मूलों (lateral roots) और द्वितीयक प्रविभाजियों (secondary meristems) को जन्म देती है।	यह केवल पार्श्वमूलों को ही जन्म देती है।
४. कैम्बियम	द्वितीयक मेरिस्टेम के रूप में बाद में दिखाई देता है	विल्कुल ही अनुपस्थित होता है

जड़ से तना में परिवर्तन (Transition from the Root to the Stem).

जड़ से लेकर तने तक वैस्कुलर बण्डल एक समान रूप में जारी रहते हैं, किन्तु हम दोनों दशाओं में भिन्न-भिन्न व्यवस्था पाते हैं। तने में वे कोलैटरल होते हैं, किन्तु जड़ों में रेडियल। यह परिवर्तन कहाँ और कैसे हुआ है? यदि हम वैस्कुलर बण्डल

के साथ-साथ जड़ से लेकर तने तक चलें, तो हम पायेंगे कि प्रत्येक जाइलम और फ्लोएम का बण्डल अर्धव्यासीय तल में (radially) दो में विभाजित हो जाता है। फ्लोएम बण्डल लगभग उसी स्थान पर रहते हैं, किन्तु जाइलम बण्डल अपना स्थान बदल देते हैं और प्रत्येक बण्डल घूमता है जब तक कि वह अपने पासवाले फ्लोएम के भीतरी ओर न आ जाय। जैसे ही जाइलम बण्डलों में यह परिवर्तन होता है वे गोल मुड़ते जाते हैं (twist round) जिससे कि जड़ का सेण्ट्रीपीटल (बहिरारम्भ, exarch) जाइलम तने में आकर सेण्ट्रीफ्यगल (अन्तरारम्भ, endarch) बन जाता है। यह परिवर्तन एक विशेष भाग में होता हुआ पाया जाता है। यह भाग न तो स्पष्ट रूप से तना है और न जड़; इसको हाइपोकोटिल (hypocotyl, अधोबीजपत्र) कहते हैं।

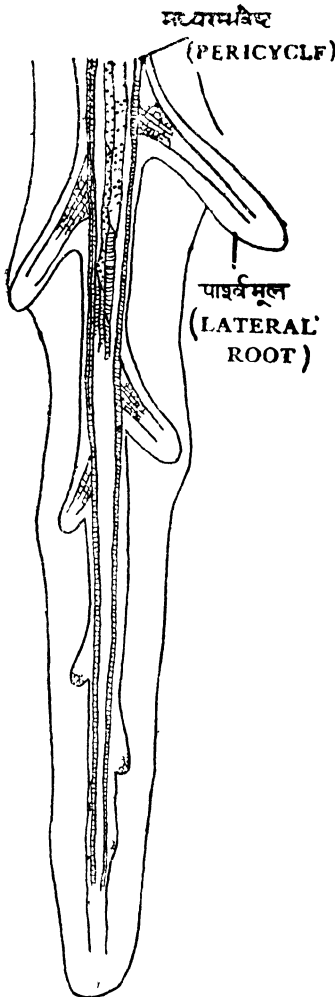


चित्र १६.४ जड़ से तने में परिवर्तन होने की अवस्थाएं।

पार्श्व मूलों की उत्पत्ति (Origin of Lateral Roots).

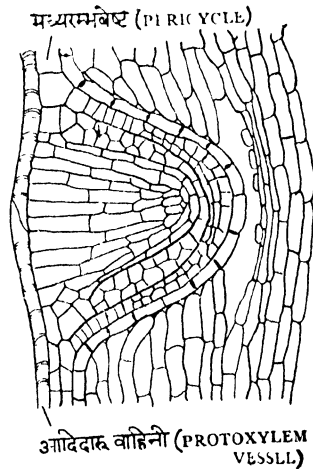
पार्श्व जड़े अन्दर की परत में से निकलती हैं, इसलिए इनको आन्तरजात (एण्डोजीनस, endogenous) कहा जाता है। यह अन्दर की परत पेरिसाइकल होती है। प्रोटोजाइलम के विरुद्ध स्थित पेरिसाइकल की कोशाएं स्पर्श रेखा पर (tangentially) विभाजित होने लगती हैं, और इस प्रकार कुछ परतें कट जाती हैं। ये कोशाएं एण्डोडर्मिस को बाहर की लोर ढकेलती हैं और कॉर्टेक्स के बीच में से

होकर वृद्धि करने लगती है। इस अवस्था में मूल-शीर्ष (root-apex) के तीन भाग, डर्मोटोजन (या कैलिप्टोजन, calyp-trogen), पेरिब्लेम (periblem) और प्लीरोम (plerome), काफी स्पष्ट हो जाते हैं। एण्डोडर्मिस और कॉर्टेक्स की कुछ कोशाएँ मूलच्छद (root-cap) के एक भाग को बनाती हैं, किन्तु जैसे जड़ मिट्टी के अन्दर घुसती जाती है, यह भाग जल्दी ही घिस जाता है और जड़-टोपी कैलिप्टोजन के द्वारा फिर से नई बन जाती है।



(क)

[After Hill]



(ख)

[After Holman and Robbins]

चित्र १६.५ पार्श्व मूलों की उत्पत्ति।

मूलिका और मूलरोमों में अन्तर (Differences between Rootlets and Root-hairs).

रचनात्मक (Structural). (१) मूलरोम सदैव एक-कोशीय होते हैं ;

जब कि मूलिका (rootlets) अथवा जड़-शाखाएं सदैव बहु-कोशीय और जटिल होती हैं, और उनमें वाहिनियों के भाग (vascular strands) तथा मूलछद (root-cap) होते हैं।

(२) मेकेशन में एक मूलिका सभी प्रकार एक सच्ची जड़ के समान होती है ; जब कि मूलरोम केवल एक अकेली कोशा होता है।

(३) अपनी उत्पत्ति में मूलिका आन्तरजात (endogenous) होती है और पेरिसाइकल में विकसित होती है, किन्तु मूलरोम बहिर्जात (exogenous) होते हैं और एपिब्लेमा की व्यक्तिगत कोशाओं के केवल उद्बर्ध (outgrowth) स्वरूप विकसित होते हैं।

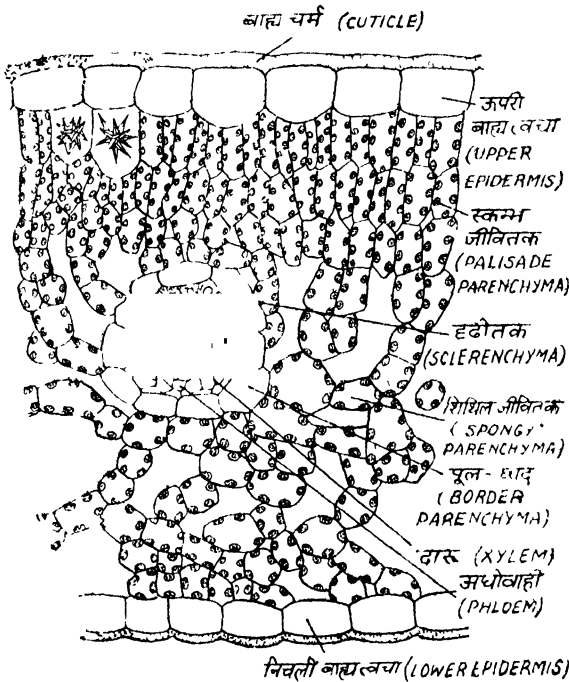
(४) मूलरोम जड़ के मूल छद के कुछ पीछे नाजुक भागों में वितरित होते हैं ; किन्तु मूलिका मूलरोम-प्रदेग के ऊपर जड़ के किसी भाग से विकसित हो सकती है।

कार्यिकीय (Physiological). कार्यात्मक दृष्टिकोण से मूलरोम रसाकर्षण (ऑस्मोसिस, osmosis) की विधि से पानी और घुले हुए खनिज लवणों को सोखते हैं, जबकि मूलिका अवशोषण किये हुए घोल को मुख्य जड़ तक पहुँचाते हैं और वहाँ से वह घोल तने में पहुँचता है। साथ ही साथ ये (मूलिका) पौधे को जमीन के अन्दर स्थिर रखने में सहायता करते हैं।

पत्ती की आन्तरिक रचना (Internal Structure of the Leaf)

१. पृष्ठाक्षीय प्रकार (Dorsiventral Type).

पत्तियाँ साधारणतया क्षैतिज (horizontal) दिशा में उगती हैं, और इसलिए इनके ऊपर की सतह पर नीचेवाली सतह की अपेक्षा अधिक प्रकाश पड़ता है। ऐसी पत्तियों को डॉर्सीवेन्ट्रल या पृष्ठाक्षीय (dorsum—पीठ, venter—पेट या आक्षीय) कहा जाता है। पत्ती के दोनों ओर प्रकाश की समान मात्रा न रहने के कारण पत्ती की आन्तरिक रचना में (ऊपरी और निचली सतह में) अन्तर पड़ जाता है। किसी नाड़ी



[After Brown]

चित्र १७.१ काट में एक पृष्ठाक्षीय प्रकार की पत्ती ।

(vein) के समकोण पर लिया गया पत्ती का सेक्शन निम्नलिखित बनावट को स्पष्ट करता है (चित्र १७१) :

१. ऊपरी बाह्यत्वचा (Upper epidermis). इसमें कोशाओं की एक अकेली कतार होती है और इसके ऊपर मोटी बाह्यचर्म (क्यूटिकल) की परत होती है जो पानी के अत्यधिक वाष्पन को रोकती है। इसमें क्लोरोप्लास्ट या स्टोमेटा नहीं होते।

२. निचली बाह्यत्वचा (Lower epidermis). ऊपर की भाँति यह भी एक परत की होती है, किन्तु इसमें अनेक स्टोमेटा होते हैं जिनकी दो रक्षक कोशाओं (guard cells) में कुछ क्लोरोप्लास्ट होते हैं। एपिडर्मिस की कोशाओं में कोई भी क्लोरोप्लास्ट नहीं होते। प्रत्येक स्टोमा के भीतर एक बड़ा विवर (cavity) देखा जा सकता है; इसको श्वसन-विवर (respiratory cavity) कहते हैं। नीचेवाली एपिडर्मिस का कार्य वायुमण्डल और पौधे के शरीर के बीच गैसी (ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड) का आदान-प्रदान है। यदि पौधे में कुछ अधिक जल होता है तो वह नीचेवाली एपिडर्मिस के स्टोमेटा में से वाष्प बनकर उड़ जाता है।

३. मध्यपर्णोत्ति (मीजोफिल, Mesophyll). ऊपरी और नीचेवाली एपिडर्मिस के बीचवाली आधारात्ति को मध्य-पर्ण-ऊत्ति (मध्यपर्णोत्ति) या मीजोफिल कहते हैं। इसको (क) स्क्वम जिवितक (पैलीसेड पैरकाइमा, palisade parenchyma), और (ख) शिथिल जिवितक (स्पंजी पैरकाइमा, spongy parenchyma), में भिन्नित किया जा सकता है।

(क) स्क्वम जिवितक (Palisade parenchyma). इसमें लम्बी, लगभग आयताकार, एपिडर्मिस के समकोणवाली अक्षों के साथ-साथ पास-पास गुथी हुई कोशाओं की एक से दो या तीन परतें होती हैं। इनमें क्लोरोप्लास्ट बहुत अधिक होते हैं जो कि कोशा-भित्तियों (cell-walls) के साथ-साथ व्यवस्थित होते हैं। पूर्णरूपेण, पैलीसेड पैरकाइमा का कार्य है—सूर्य के प्रकाश में शर्करा और स्टार्च को बनाना, अर्थात् अपने क्लोरोप्लास्ट की सहायता से दिन में भोजन बनाना।

(ख) शिथिल जिवितक (Spongy parenchyma). यह अण्डाकार, गोल या अधिकतर टेढ़ी-मेढ़ी कोशाओं से मिलकर बनता है। यही नीचेवाली एपिडर्मिस तक बहुत-से और बड़े-बड़े अन्तर्कोशीय अवकाशों और वायु-विवरों (air cavities) सहित ढीले रूप में फैला रहता है। ये कोशाएँ फिर भी, नाड़ी या वंस्कुलर बण्डल के समीप काफी पास-पास हो जाती हैं। कोशाओं में थोड़े से क्लोरोप्लास्ट होते हैं। स्पंजी कोशाएँ अपने बीच में छोड़े गये अन्तर्कोशीय अवकाशों द्वारा गैसों के विसरण में सहायता देती हैं और शर्करा तथा स्टार्च को भी बनाती हैं।

४ वाहि-पूल (Vascular bundles). जैसे-जैसे ये पर्णाधार (leaf base) से पत्ती के शीर्ष (apex) या किनारे तक पहुँचते जाते हैं, वैसे-वैसे ये आकार में क्रमशः छोटे होते जाते हैं और इनके विभिन्न तत्त्वों में भी कमी हो जाती है। प्रत्येक वंस्कुलर बण्डल (नाड़ी) में ऊपरी एपिडर्मिस की ओर दारू, और नीचेवाली एपिडर्मिस की ओर फ्लोएम होता है। दारू (xylem) में भिन्न प्रकार की वाहिनिया (विशेष करके बलयाकार और सर्पिलाकार), जलवाहि कोशाएँ (tracheids), काष्ठ तन्तु और काष्ठ पैरकाइमा होते हैं। नाड़ी के छोर की ओर वाले ज़ाइलम में केवल कुछ बलयाकार (annular) और सर्पिलाकार (spiral) जल-

वाहि-कोशाएं होती हैं, कभी-कभी तो एक ही स्पाइरल ट्रैकीड होती है, और बाकी सब तत्त्व गायब हो जाते हैं। जाइलम जल और कच्चे भोज्य-पदार्थों की पर्णफलक के भिन्न-भिन्न भागों में ले जाता है और वितरित करता है। अधोवाही (phloem) में कुछ संकीर्ण हुए चालनी-नाल और सति-कोशाएं और कुछ फ्लोएम पैरेंकाइमा भी होते हैं। छोर की ओर सखि कोशाओं सति कुछ अविकसित चालनी-नाल भी देखे जा सकते हैं। फ्लोएम पर्णफलक से बने हुए भोजन को पीधे के बढ़ते हुए और संग्रह करनेवाले भागों में ले जाते हैं।

पर्णवृत्तों (petioles) और बड़ी-बड़ी नाड़ियोंवाले वैस्कुलर बण्डल स्क्लेरनकाइमा के छाद (sclerenchyma sheath) से ढके होते हैं। यह छाद कुछ अधिक मोटी दीवारवाली फाइब्रस कोशाओं का बना होता है। इससे वैस्कुलर बण्डलों की मजबूती बढ़ जाती है। स्क्लेरनकाइमा प्रत्येक वैस्कुलर बण्डल को या तो पूर्णरूप से ढक सकता है या ऊपर या नीचे अथवा दोनों ओर तक ही सीमित रह सकता है। वैस्कुलर बण्डल के आकार के घटने के साथ-साथ स्क्लेरनकाइमा भी उसी मात्रा में घटता जाता है जब तक कि वह छोटे-छोटे बण्डलों में गायब नहीं हो जाता। प्रत्येक बण्डल रंगहीन पैरेंकाइमा की कोशाओं के छाद से ढका हुआ होता है। इसको साधारणतया बॉर्डर पैरेंकाइमा (border parenchyma) या पूल छाद (bundle sheath) कहते हैं।

पत्तियों में स्क्लेरनकाइमा का वितरण व्यवस्थित होता है, कभी-कभी इसके समूह आधरोति में इधर-उधर बिखरे हुए होते हैं, कभी-कभी यह दो वैस्कुलर बण्डलों को मिलाते हुए एक लम्बी-सी परत बना लेता है। और ऊपरी या नीचे वाली एपिडर्मिस से लेकर वैस्कुलर बण्डलों तक फैला रहता है। अधिकतर यह जाइलम और फ्लोएम के साथ एक समूह में होता है अथवा यह वैस्कुलर बण्डल के छाद के रूप में होता है और यह छाद ऊपर और नीचे मोटा होता है।

२. समद्विपार्श्व प्रकार (Isobilateral Type).

अनेक एक-बीजपत्रियों में पत्तियाँ लगभग उच्छीर्ष (erect) रहती हैं और इसलिए उनके दोनों ओर प्रकाश लगभग एक समान रूप से पड़ता है। ऐसी पत्तियों को समद्विपार्श्व या आइसोबिलैटरल (isos—सरावर, bi—दो, lateris—तरफ) कहा जाता है। इसमें दोनों ओर बनावट एक प्रकार की होती है। दोनों ओर एपिडर्मिस में स्टोमेटा होते हैं और मीजोफिल को प्रायः स्पाजी और पैलीसेड पैरेंकाइमा में अलग-अलग नहीं पहचाना जा सकता; इसमें केवल स्पाजी कोशाएं होती हैं जिनमें क्लोरोप्लास्ट समान रूप से वितरित होते हैं। फर्न की पत्तियाँ भी इसी प्रकार की होती हैं। शिथिल कोशाओं (spongy cells) के स्थान पर केवल पैलीसेड पैरेंकाइमा हो सकता है जैसा कि छाया में उगनेवाले पीधों में। कभी-कभी मीजोफिल को केन्द्र में स्पाजी पैरेंकाइमा के रूप में और दोनों ओर पैलीसेड पैरेंकाइमा में भिन्नित किया जा सकता है।

मोटाई के लिए परवर्ती-वृद्धि (Secondary Growth in Thickness)

१. द्वि-बीजपत्री स्तम्भ.

चिरलग्न द्वि-बीजपत्रियों (क्षुण्णो और वृक्षो) में प्राथमिक ऊतियों के पूर्णरूप से बनने के पश्चात् एधा (कैम्बियम) अधिक सक्रिय हो जाता है और वह स्टील के भाग में नई (द्वितीयक) कोशाओं को बनाना आरम्भ कर देता है। जल्दी ही परिधि के भागों में मेरिस्टेम (meristem) की एक लम्बी कतार, जिसे काग-एधा (cork-cambium) कहते हैं, दिखाई पड़ती है और उस भाग में द्वितीयक ऊतियाँ, जैसे काग (cork), बनाना आरम्भ करती हैं। ये सब द्वितीयक ऊतियाँ (secondary tissues) प्राथमिक ऊतियों के साथ जुड़ जाती हैं, और इसके फलस्वरूप तना मोटा हो जाता है। स्टील (Stele) और स्टील के बाहर के भागों में (क्रमशः) कैम्बियम और कॉर्क कैम्बियम के द्वारा द्वितीयक ऊतियों के बनने के कारण तना मोटा हो जाता है, और इसको उसकी परवर्ती-वृद्धि कहते हैं।

(क) एधा की सक्रियता (Activity of the Cambium).

एधा वलय (Cambium ring). परवर्ती-वृद्धि फ़लीयएधा (fascicular cambium, *fascicle*—बण्डल) की सक्रियता से आरम्भ होती है, जो कि मेरिस्टेमेटिक (meristemetic) होने के कारण अन्दर और बाहर दोनों ओर नई कोशाएँ काटना आरम्भ कर देता है। लगभग इसके साथ ही साथ फैसीकुलर कैम्बियम के कतार-वाली कुछ मध्यक किरण की कोशाएँ भी मेरिस्टेमेटिक हो जाती हैं और ये अन्तराफ़लीय एधा (interfascicular cambium) बनाती हैं। यह दोनों ओर फ़लीय एधा (fascicular cambium) के साथ मिलता है और एक पूर्ण घेरा बनाता है जिसको एधा वलय या कैम्बियम का घेरा कहते हैं।

द्वितीयक ऊतियाँ (Secondary tissues). सम्पूर्ण कैम्बियम का घेरा सक्रिय हो जाता है और इससे भीतरी और बाहरी दोनों ओर नवीन कोशाएँ बनने लगती हैं। जो कोशाएँ बाहर की ओर कटती हैं वे फ़लोएम के तत्त्वों में परवर्तित हो जाती हैं; ये द्वितीयक अधोवाही (secondary phloem) को बनाती हैं। इसमें चालनी-नाल, सखि-कोशाएँ और फ़लोएम पैरकाइमा होते हैं, जैसा कि प्राथमिक अधोवाही (primary phloem) में होता है। बहुत-सी दशाओं में बास्ट (bast) के फाइबर्स (fibres) भी बन जाते हैं, किन्तु अष्टि कोशाएँ (stone cells) कम पायी जाती हैं। बहुत-से बुनने योग्य (textile) फाइबर, जो औद्योगिक महत्व के होते हैं, इसी द्वितीयक अधोवाही और मध्यरम्भ वेष्ट से पाये जाते हैं। परवर्ती-वृद्धि

के कारण कोशाओं में बराबर बढ़ती (addition) होती है और दबाव पड़ता है। इस कारण प्राथमिक अधोवाही साधारणतया कुलल-सा जाता है और कार्यहीन हो जाता है।

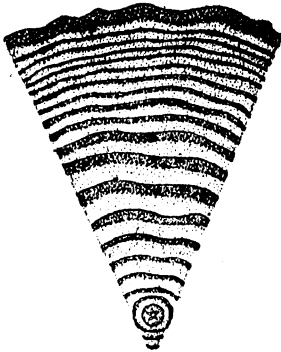
अन्दर की ओर जो नई कोशाएँ कट आती हैं, वे धीरे-धीरे जाइलम के तत्त्वों में परिवर्तित हो जाती हैं और द्वितीयक दारू (secondary xylem) बनानी है। इसमें सोपानवत् और गर्ती (scalariform and pitted) वाहिनियाँ, जलवाहि कोशाएँ (tracheids), अर्धव्यासीय कतारों में व्यवस्थित बहुत से काष्ठ-तन्तु और कुछ काष्ठ पैरंककाइमा की कोशाएँ होती हैं। कैम्बियम सदैव बाहर की अपेक्षा अन्दर की ओर अधिक सक्रिय होता है। ऐसा होने के कारण फ्लोएम की अपेक्षा जाइलम अधिक बढ़ता है और शीघ्र ही यह गूथा हुआ स्वरूप बना लेता है। यह पौधे के शरीर का मुख्य भाग बनाता है। जैसे-जैसे यह बढ़ता जाता है, कैम्बियम और फ्लोएम केन्द्र से दूर होते चले जाते हैं। प्राथमिक फ्लोएम लगभग कुचल-सा जाता है; इसके बाकी भाग द्वितीयक फ्लोएम के बाहर स्पर्श रेखाओं पर फैल जाते हैं, किन्तु प्राथमिक जाइलम लगभग वैसा ही रहता है और इसको पिथ के बाहर पहचाना जा सकता है।

कहीं-कहीं पर कैम्बियम द्वारा बनायी गयी कोशाएँ, अन्दर की ओर या बाहर की ओर या दोनों ओर, जाइलम और फ्लोएम के तत्त्वों के रूप में स्पष्ट नहीं होती, किन्तु वे पैरंककाइमा की कोशाओं की भाँति ही रहती हैं। ये समूह द्वितीयक दारू से लेकर द्वितीयक अधोवाही तक कैम्बियम के बीच में रहते हैं। ये अर्धव्यावसीय समूह द्वितीयक मध्यक किरणों (secondary medullary rays) को बनाते हैं। वे मोटाई में एक या कुछ थोड़े परत के ही होते हैं, किन्तु ऊँचाई में काफी परतें (कभी-कभी पन्द्रह तक) बनाते हैं। द्वितीयक अधोवाही में वे प्रायः कोशाओं के विभाजन से फैलते हैं और एक कीप (funnel) के आकार के दिखाई देने हैं। मध्यक किरणों की कोशाएँ अधिकतर अर्धव्यासीय स्थिति पर लम्बी होती हैं।

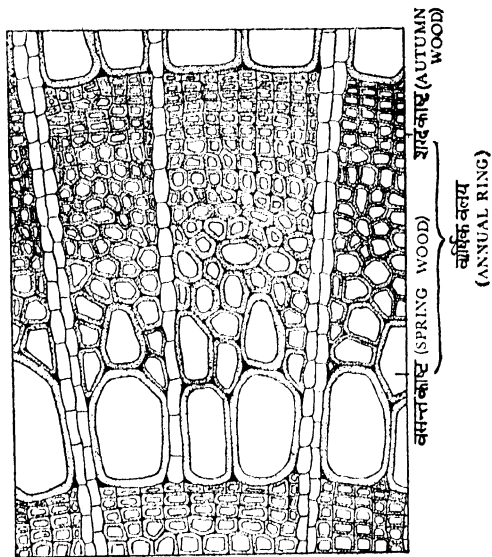
[ध्यान में रखिये कि द्वितीयक मध्यक किरणें कैम्बियम से विकसित होती हैं और वे द्वितीयक दारू और द्वितीयक अधोवाही तक सीमित रहती हैं। प्राथमिक मध्यक किरणें अग्रस्थ (apical) मेरिस्टेम से आरम्भ होती हैं और पिथ से लेकर पेरिसाइकल तक फैली होती हैं। दोनों ही का कार्य बाहर की ओर परिधि की ऊतियों तक जल और भोज्य-पदार्थों को ले जाना है।]

वार्षिक चलय (Aunal rings). उन भागों में जहाँ जलवायु में काफी अन्तर होता है, वर्ष भर तक कैम्बियम की सक्रियता एक समान नहीं रहती। वसन्त में या सक्रिय वानस्पतिक ऋतुओं में जब कि हरी पत्तियों की उत्पत्ति और सक्रियता अधिक होती है, रस (sap) के संवाहन (transport) की काफी आवश्यकता होती है। इस कारण वर्ष के इस भाग में कैम्बियम अधिक सक्रिय होता है और इस कारण यह बड़े घेरेवाली बहुत-सी वाहिनियों (बड़ी गर्ती वाहिनियाँ) को बनाता है। फिर भी शरद् ऋतु या असक्रिय काल में, जब कि रस के संवाहन की माँग कम होती है, कैम्बियम कुछ कम सक्रिय होता है और संकीर्ण आकार (narrow-dimensions) के तत्व बनाता है (साधारणतया संकीर्ण गर्ती वाहिनियाँ, जलवाहि कोशाएँ, और काष्ठतन्तु)। वसन्त ऋतु में बनी लकड़ी को वसन्त काष्ठ (spring wood) कहते हैं, और शरद् ऋतु में बनी लकड़ी को शरद् काष्ठ (autumn wood) या बाद की लकड़ी कहते हैं। ये दोनों प्रकार की लकड़ियाँ साथ-साथ प्रकट होती हैं, तने के अनुप्रस्थ काट में ये एक सकेन्द्र (concentric) घेरे के रूप में

दिखाई देती है (चित्र १८.१, १८.२) और इसको वार्षिक वलय (annual ring) अथवा वृद्धि वलय (growth ring) कहते हैं। और वर्ष प्रतिवर्ष ये वार्षिक घेरे कैम्बियम की सक्रियता से बनते चले जाते हैं। देर की शरद् काष्ठ और प्रारम्भिक वसन्त काष्ठ मे



चित्र १८.१



चित्र १८.२

[After Brimble]

चित्र १८.१ वार्षिक वलय दिखाते हुए अनुप्रस्थ काट मे एक तना। चित्र १८.२ एक वार्षिक वलय सेक्शन मे (बड़ा कर दिखाई हुई)।

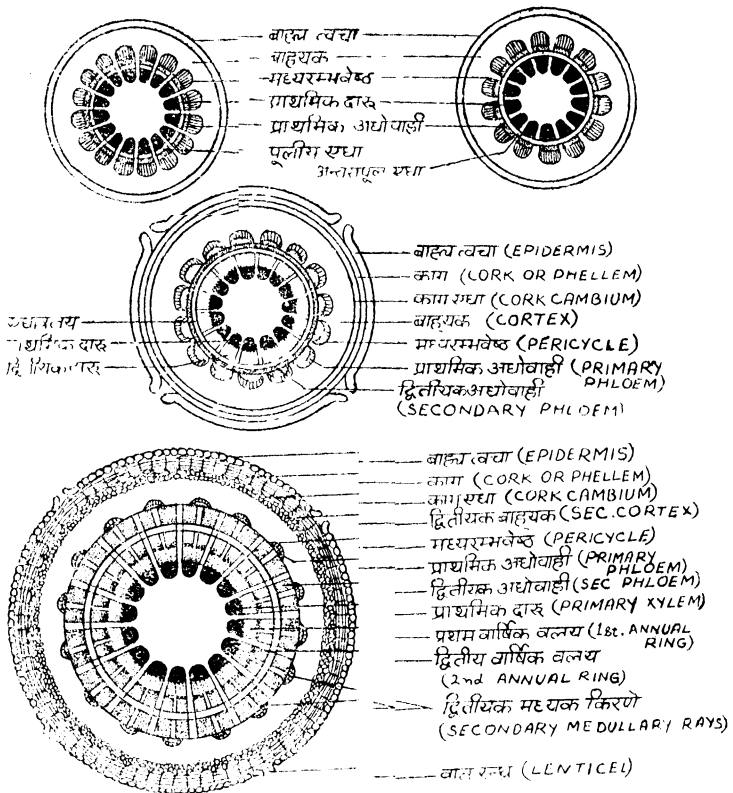
स्पष्ट भेद होता है और यह बाद में बनने वाले घेरों को इस योग्य बना देता है जिससे वे केवल नगी आख से ही स्पष्ट दिख जाती हैं। एक वृक्ष के तने में, जो अनुप्रस्थ काट के रूप में काटा गया हो वार्षिक घेरे बहुत जल्दी ही देखे जा सकते हैं (चित्र १८.१)। प्रत्येक वार्षिक घेरा एक वर्ष की वृद्धि बताता है और इसलिए वार्षिक घेरों को गिन कर पौधों की आयु का लगभग अनुमान लगाया जा सकता है, जैसे चीड़ (pine) में। किन्तु बहुत-से पौधों में वार्षिक घेरों की संख्या में अन्तर हो सकता है। कुछ वृक्षों में वसन्त को वाहिनियाँ लगभग एक घेरे में होती हैं; जबकि कुछ में वे लगभग समान रूप से सम्पूर्ण वसन्त काष्ठ में वितरित होती हैं। प्रत्येक आगामी वर्ष का घेरा पिछले घेरे से चौड़ाई में काफी बड़ा हो सकता है। चौड़े घेरे वृक्ष की वृद्धि की सहायक या अनुकूल परिस्थितियों में बनते हैं, और यदि परिस्थिति प्रतिकूल होती है तो संकीर्ण घेरे बनते हैं।

हृद्-काष्ठ और रस-काष्ठ (Heart-wood and sap-wood). पुराने वृक्षों में द्वितीयक काष्ठ या केन्द्रीय भाग टैनिन और दूसरे पदार्थों से भरा रहता है, जिससे कि यह सख्त और स्थायी बन जाता है। इस भाग को हृद्-काष्ठ या हृद्-बारू (heart-wood or duramen) कहा जाता है। यह भाग टैनिन,

तेलों, गोंद, रेजिन इत्याद की उपस्थिति के कारण काला दिखाई पड़ता है। वाहिनियों प्रायः गुहारूध (टाइलोसेज, tyloses) से रुध (plug) जाती है। ये टाइलोसेज गुब्बारे की तरह मे अन्दरवाले भाग से निकलते हैं और निकटवर्ती पैरकाइमा मे से गुब्बों के बीच मे से होकर विकसित होते हैं। अब इस हृद्-काष्ठ का काम पानी को पहुँचाना नहीं रहता, बल्कि इससे केवल नने को यांत्रिक मजबूती मिलती है। द्वितीयक काष्ठ के बाहरवाले भाग का रंग हल्का होता है और इसको रस काष्ठ या ऐलबर्नम (sap-wood or alburnum) कहा जाता है। केवल यही जल और लवण के घोलों को जड़ से लेकर पत्ती तक पहुँचाता है।

(ख) काग-एधा की सक्रियता (Activity of Cork-cambium).

काग-एधा (Cork-cambium). कैम्ब्रियम द्वारा बनाये गये नवीन ऊतियों द्वारा परिधि की ऊतियों पर काफी दबाव पड़ता है; इससे एपिडमिस काफी फैल



[After Mukherji and Ganguly]
[After Holman and Robbins]

चित्र १८.३ एक द्वि-बीजपत्री तने की परवर्ती-वृद्धि की अवस्थाएं।

जाती है, कही-कही पर फट जाती है और शीघ्र ही समाप्त हो जाती है। किन्तु अधिकतर दशाओं में कॉर्टेक्स काफी समय तक वर्तमान रहता है, क्योंकि इसकी कोशाओं की दीवारें लचीली होती हैं और दबाव को बर्दाश्त कर सकती हैं। स्क्लेरन-काइमा और कॉलनकाइमा स्पर्श रेखाओं पर काफी चपटे हो जाते हैं। परिधि की ऊतियों को, जो रक्षा के हेतु होती हैं, फिर से बनाने के लिए एक द्वितीयक मेरिस्टेम की लम्बी कतार कॉर्टेक्स के भाग में उत्पन्न हो जाती है। इसको काग एधा या फ़ेलोजन (*phellos*—काग, *genes*—बनाना) कहते हैं। इस प्रकार कॉर्टेक्स की सबसे बाहरी सतह मेरिस्टेमेटिक हो जाती है और कॉर्क-कैम्बियम को जन्म देती है। यह स्वयं एपीडर्मिस में भी उत्पन्न हो सकता है या कॉर्टेक्स के भीतरी परतों में। कैम्बियम की भाँति यह विभाजित होना और बाहर तथा अन्दर दोनों ओर कोशाएँ काटना प्रारम्भ कर देता है।

द्वितीयक बाह्यक (Secondary cortex). जा कोशाएँ कॉर्क-कैम्बियम द्वारा अन्दर की ओर काटी जाती हैं, वे पैरंकाइमा की प्रकृति की होती हैं। इससे द्वितीयक बाह्यक या फ़ेलोडर्म (*phelloderm*) बनता है। द्वितीयक कॉर्टेक्स की कोशाओं में साधारणतया क्लोरोप्लास्ट होते हैं और ये प्रकाश-संश्लेषण (*photosynthesis*) करते हैं। कभी-कभी ये मोटी दीवारवाली होती हैं, किन्तु ये सेल्युलोज़ की बनी होती हैं और इनमें गर्त होते हैं। द्वितीयक कॉर्टेक्स की कोशाएँ प्रायः निश्चित रूप से अर्धव्यासीय कतारों में व्यवस्थित होती हैं।

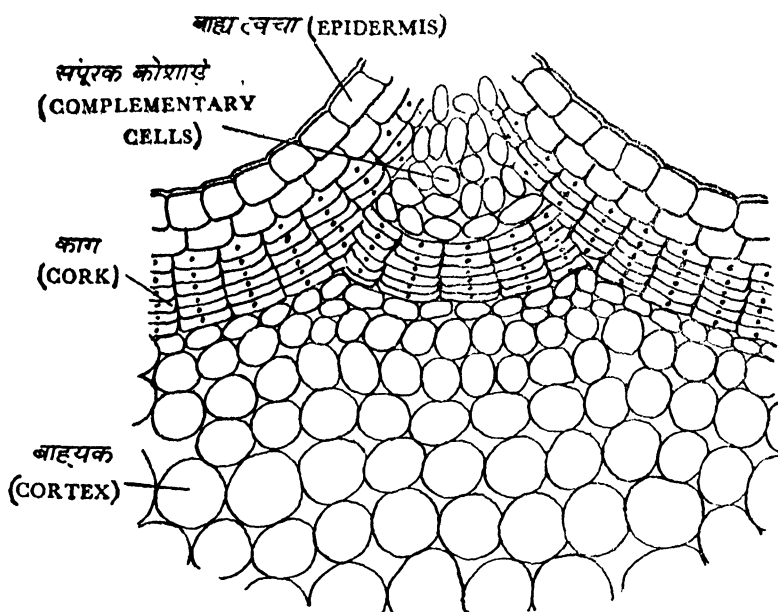
काग (कॉर्क, Cork). कॉर्क-कैम्बियम द्वारा बाहर की ओर काटी गयी नयी कोशाएँ करीब-करीब आयताकार होती हैं और ये शीघ्र ही सूबरिन-युक्त (*suberized*) हो जाती हैं। ये पोथे काग या पैरिडर्म (*cork or periderm*)* को बनाती हैं। कॉर्क-ओक (*cork-oak, Quercus suber*, जा कि भूमध्यसागर में पाया जाता है) काफी मोटा होता है और इससे बोतल की कॉर्क बनायी जाती हैं। जब इस कॉर्क को पेड़ से निकाल लिया जाता है तो यह नीचेवाली कॉर्क कैम्बियम द्वारा फिर से बन जाती है। कॉर्क कोशाएँ मृत सूबरिन-युक्त और मोटी दीवारवाली होती हैं। ये कुछ अर्धव्यासीय कतारों में व्यवस्थित रहती हैं और इनके बीच में अन्तर्कोशीय अवकाश नहीं होते। ये साधारणतया भूरे रंग की होती हैं; सूबरिन-युक्त होने के कारण पानी के लिए अप्रवेश्य (*impermeable*) होती हैं, और इसी कारण बाहर की कोशाओं को जल और भोज्य-पदार्थ नहीं मिल पाता है। फलतः वे शीघ्र ही मर जाती हैं और इस प्रकार ये कोशाएँ पेड़ की छाल (*bark*) को बनाती हैं।

छाल (बार्क, Bark). सक्रिय कॉर्क—कैम्बियम के बाहर की सभी मृत कोशाएँ मिलकर पोथे की छाल को बनाती हैं। अतः एपीडर्मिस, हाइपोडर्मिस और कॉर्क और कभी-कभी कॉर्टेक्स का एक भाग छाल को बनाते हैं। यह कॉर्क कैम्बियम की स्थिति पर निर्भर होता है; अर्थात् कॉर्क-कैम्बियम की उत्पत्ति जितनी ही गहरी होती है उतनी ही छाल अधिक मोटी होती है।

* कुछ लेखकों के अनुसार पारिणाह (पेरिफेरल, *peripheral*) प्रदेश की सब नयी ऊतियाँ अर्थात् काग (कॉर्क, *cork*), काग-एधा (*cork cambium*), द्वितीयक बाह्यक (*secondary cortex*), सब मिल कर काग या पैरिडर्म कहलाते हैं।

जब कॉर्क-कैम्बियम एक घेरे में बनता है तब छाल एक चद्दर ऐसी उतर आती है। ऐसी छाल को बलय-छाल या घेरेवाली छाल (ring-bark) कहते हैं; जैसे भुर्ज-पत्र (*Betula*) में; और जब कॉर्क कैम्बियम छोटी-छोटी-सी कतारों में बनता है तब छाल की पपड़ी (scale) सी उतरती है। इसको शल्क-छाल या पपड़ी की छाल (scale-bark) कहा जाता है, जैसा कि अमरूद में। छाल का कार्य रक्षा करना है।

वातरन्ध्र (लेंटिसेल्स, **Lenticels**)। ये छाल में विकसित हवा देनेवाले रन्ध्र (aerating pores) होते हैं जिनके द्वारा गैसों का आदान-प्रदान होता है। बाहर से वे दाग के से या तने पर कुछ उठे हुए भाग मालूम पड़ते हैं। यदि किसी एक दाग से होता हुआ एक सेक्शन काटा जाय तो यह पतली दीवारवाली ढीली तरह से भरी हुई कोशाओं का बना मालूम पड़ता है, इन कोशाओं को सम्पूरक



चित्र १८.३ वातरन्ध्र।

कोशाएं (complementary cells) कहते हैं। प्रत्येक लेण्टिसेल के स्थान पर कॉर्क-कैम्बियम, पास-पास गुथी हुई कोशाओं के बनाने के बजाय, साधारणतया, अण्डाकार, या अनिश्चित आधार की कोशाओं की, जो बहुत ही ढीले तरीके से व्यवस्थित होती हैं, बनाता है। लेण्टिसेल, साधारणतया, एक स्टोमा के नीचे विकसित होता है; और ज्यों ही उसको कोशाएं सख्या और आकार में बढ़ जाती हैं, एपिडर्मिस फट जाती है। इस प्रकार पीछे की आन्तरिक ऊतियों और वायुमण्डल के बीच सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। तब लेण्टिसेल से गैसों सरलता से अन्दर-बाहर आ जा

सकती हैं। गैसों के आदान-प्रदान को सरल बनाने के लिये कॉर्क और कॉर्क-कैम्बियम की भिन्न-भिन्न कतारों के बीच में, ऊपर और नीचे, खाली स्थान छूट जाते हैं। शरद् ऋतु में कॉर्क के बनने के कारण लेण्टिसेल बन्द हो सकता है; किन्तु नई सक्रिय ऋतु के आरम्भ के साथ-साथ यह फट जाती है।

द्वि-बीजपत्री तनों में, जिनमें परवर्ती-वृद्धि हो चुकी हो, निम्नलिखित ऊतियाँ पहचानी जा सकती हैं:

- | | |
|--|---|
| १. छाल (bark)। | ७. मध्य-रम्भवेष्ट [pericycle (sclerenchyma)]। |
| (क) बाह्यत्वचा (epidermis)। | |
| (ख) वातरन्ध्र (lenticel)। | ८. द्वितीयक अधोवाही (secondary phloem)। |
| (ग) काग (cork)। | |
| २. काग-एधा (cork-cambium)। | ९. एधा (cambium)। |
| ३. द्वितीयक बाह्यक (secondary cortex)। | १०. द्वितीयक काष्ठ (secondary wood)। |
| ४. स्थूल-कोणक (collenchyma)। | (वार्षिक बलय, annual ring)। |
| ५. सामान्य बाह्यक (general cortex)। | ११. द्वितीयक मध्यक किरणें (secondary medullary rays)। |
| ६. अन्तःत्वचा (endodermis)। | १२. प्राथमिक काष्ठ (primary wood)। |
| (उपस्थित हो सकती है और नहीं भी)। | १३. मज्जा (pith)। |

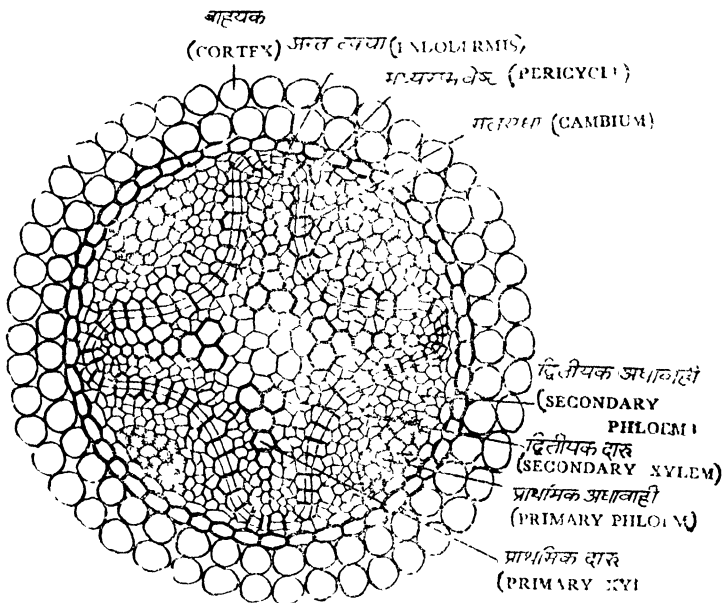
२. द्वि-बीजपत्री जड़ (Dicotyledonous Root).

तने की भाँति जड़ में भी मोटाई में परवर्ती-वृद्धि (secondary growth) कैम्बियम और कॉर्क-कैम्बियम द्वारा काटी गयी नई ऊतियों के जुड़ने से होती है; ये ऊतियाँ जड़ के भीतर की ओर या परिधि की ओर हो सकती हैं। जड़ में परवर्ती-वृद्धि छोर के कुछ सेटीमीटर पीछे आरम्भ होती है, और तने में आरम्भ होने के थोड़ा-सा बाद में।

(क) कैम्बियम की उत्पत्ति और सक्रियता.

फ्लोएम के बिल्कुल किनारेवाली संयोजी ऊति (conjunctive tissue) अन्दर की ओर मेरिस्टेमेटिक हो जाती है और विभाजन द्वारा कैम्बियम की एक लम्बी कतार को जन्म देती है। यह स्पष्ट है कि जितने फ्लोएम के समूह होंगे उतनी ही कॉर्क-कैम्बियम की कतारें होंगी। जाइलम और फ्लोएम बण्डलों की बीचवाली संयोजी ऊति की कोशाएँ भी मेरिस्टेमेटिक हो जाती हैं, अतः जाइलम और फ्लोएम के बीच में कैम्बियम की लम्बी कतारें बाहर की ओर फैलती हुई दिखाई देती हैं। तब प्रोटोजाइलम के पासवाली पेरिसाइकल भी मेरिस्टेमेटिक हो जाती है, वह वहाँ विभाजित होकर कैम्बियम की एक लम्बी कतार बनाती है और यह कतार दोनों ओर से पहले से विकसित कैम्बियम से मिल जाती है। इस प्रकार कैम्बियम की एक

लगातार लहरदार पट्टी जाइलम के ऊपर और फ्लोएम के नीचे बन जाती है। इस कैम्बियम परत की सक्रियता से परवर्ती-वृद्धि तब आरम्भ होती है। भीतरी फ्लोएम के पासवाला कैम्बियम पहले सक्रिय होता है। ये दोनों ओर कोशाणु काटना आरम्भ करता है, किन्तु अधिकतर कोशाणु अन्दर की ओर बनती है। इन अधिकाधिक कोशाणुओं के कैम्बियम के अन्दर की ओर के बनने के कारण फ्लोएम बाहर की ओर ढकेल दिया जाता है। कैम्बियम अब लहरदार न रहकर एक घेरा बना लेता है। तब

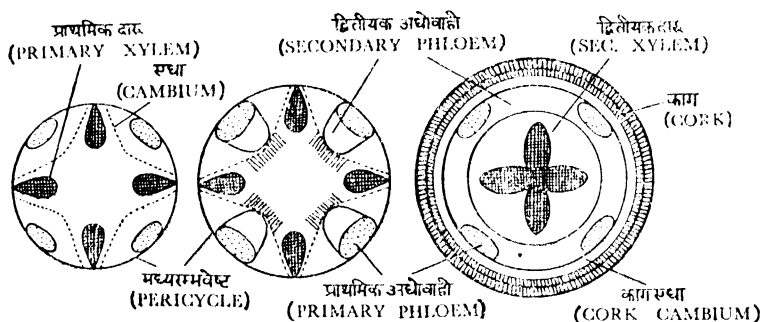


चित्र १८.४ एक द्वि-बीजपत्री जड़ में परवर्ती-वृद्धि।

फिर सम्पूर्ण कैम्बियम की ऊति सक्रिय रूप से मेरिस्टेमेटिक हो जाती है, और यह वैसे ही व्यवहार करता है जैसा तने में अन्दर की ओर द्वितीयक दारु बनाता है और बाहर की ओर द्वितीयक अर्धवाही।

द्वितीयक दारु (Secondary xylem). कैम्बियम द्वारा काटी गयी अन्दर की ओर नयी कोशाणु धीरे-धीरे जाइलम के तत्त्वों में विकसित हो जाती है और ये सब तत्त्व मिलकर द्वितीयक दारु बनाते हैं। कैम्बियम बाहर की अपेक्षा अन्दर की ओर सदैव अधिक सक्रिय होता है; फलतः द्वितीयक दारु द्वितीयक अर्धवाही की अपेक्षा मात्रा में अधिक तेजी से बढ़ता है। वास्तव में द्वितीयक काष्ठ ही सम्पूर्ण पौधे के शरीर के मुख्य भाग को बनाता है। यह बड़ी-बड़ी अनेक वाहिनियों, जिनमें अपेक्षाकृत पतली दीवारें होती हैं, और अधिकतर काष्ठ परंकाइमा से बनता है। इसमें काष्ठ तन्तु (wood fibres) होते हैं। जैसे-जैसे लकड़ी बढ़ती जाती है, कैम्बियम और फ्लोएम बाहर ढकेलते जाते हैं। चूँकि जड़ मिट्टी के नीचे दबी

रहती है, वायु-दशा के परिवर्तनों से यह बची रहती है, अतः वार्षिक घेरे जो लकड़ी वाले तनों के इतने अच्छे लक्षण हैं, जड़ में बहुत कम ही बनते हैं। जब जड़ काफी मोटी हो जाती है तब भी प्राथमिक दारू की वण्डले वैसे ही रहती हैं और कई दशाओं में उनको सूक्ष्मदर्शी के नीचे पहचाना जा सकता है। प्रोटोजाइलम के पास-पास कैम्बियम स्पष्ट रूप से पैरकाइमा के अर्धव्यासीय समूहों को बनाता है जो प्राथमिक मध्यक किरणें (primary medullary rays) बनाते हैं। ये द्वितीयक अधोवाही



चित्र १८.५ एक द्वि-बीजपत्री जड़ में परवर्ती-वृद्धि की अवस्थाएं।

तक बढ़ जाती है। बाद को दूसरी छोटी मध्यक किरणें भी कैम्बियम द्वारा बननी हैं। मध्यक किरणें जड़ में तने की अपेक्षा अधिक बड़ी और स्पष्ट होती हैं।

द्वितीयक अधोवाही (Secondary phloem). कैम्बियम द्वारा बाहर की ओर काटे गये नवीन तत्व धीरे-धीरे फ्लोएम के तत्वों में परिवर्तित होने जाते हैं, और ये सब मिलकर द्वितीयक अधोवाही बनाते हैं। इसमें सखि कोशाओं सहित चालनी-नाल और अधिक मात्रा में पैरकाइमा होते हैं किन्तु (कुछ अपवादों को छोड़कर) बाइस्ट फाइबर कम होते हैं। द्वितीयक अधोवाही द्वितीयक दारू की अपेक्षा, अधिक पतला होता है। प्राथमिक फ्लोएम शीघ्र ही कुचल जाता है।

(ख) कॉर्क-कैम्बियम की उत्पत्ति और सक्रियता.

जब थोड़ी परवर्ती-वृद्धि हो जाती है तो एक परतवाली सम्पूर्ण पेरिसाइकल मेरिस्टेमेटिक हो जाती है और पतली दीवारवाली लगभग आयताकार कोशाओं की कुछ कतारों में विभाजित हो जाती है। ये काग-एधा या फ़ेलोजन (cork cambium or phellogen) बनाती है। फ्लोएम में कभी-कभी कॉर्क-कैम्बियम उत्पन्न हो जाता है। तने की भाँति यह बाहर की ओर कॉर्क की कुछ भूरी कतारों को और अन्दर की ओर द्वितीयक बाह्यक या फ़ेलोडर्म (secondary cortex or phelloderm) को बनाती है। जड़ के द्वितीयक कॉर्टेक्स में क्लोरोप्लास्ट नहीं होते। जड़ की छाल (bark) अधिक नहीं होती, वह केवल एक पतला छद्म बनाती है। कॉर्टेक्स की कोशाएं पतली दीवारवाली होने के कारण बहुत अधिक दब जाती हैं और अन्ततः वे नष्ट हो जाती हैं। एण्डोडर्मिस के साथ भी ऐसा ही होता

है। एपिडर्मिस तो इसके पहले ही मर चुकी होती है। तने की भाँति इधर-उधर वातरन्ध्र (लेंटीसेल) भी विकसित हो जाते हैं।

काग और छाल के कार्य (Function of Cork and Bark).

काग और छाल पौधे की रक्षक ऊतियाँ हैं। उनका कार्य पानी के वाष्पन को रोकना, बाह्य ऊष्मा के परिवर्तनों से पादप-शरीर की रक्षा करना, और परजीवी फजाई तथा कीड़ों के आक्रमण से इनको बचाना है।

१. काग (Cork). क्षुण्ण और वृक्षों में जल्दी या बाद में एपिडर्मिस के साथ-साथ या उसके स्थान पर काँक आ जाती है और तब काँक एपिडर्मिस का कार्य करने लगती है। यह प्रधानतः एक रक्षा करनेवाली ऊति है। काँक एपिडर्मिस की अपेक्षा सदा अधिक मोटी होती है, और इसलिए एपिडर्मिस की अपेक्षा वह अधिक रक्षा करती है। इस प्रकार नीचेवाली काँक-कैम्बियम द्वारा एपिडर्मिस का बदल जाना इस दृष्टिकोण से निश्चित रूप में लाभदायक है। काँक की सब कोशाएँ सूवरित-युक्त होती हैं, इसलिए उनके अन्दर जल आ जा नहीं सकता। इस प्रकार जल का वाष्प रूप में उड़ना रुक जाता है या बहुत कम हो जाता है। परजीवी फजाई और कीड़ों के आक्रमण से भी काँक ऊति पौधे की रक्षा करती है। काँक कोशाएँ मृत और खाली होती हैं, इनमें केवल हवा रहती है, और इसलिए ये ऊष्मा के कुचालक होते हैं। ऐसा होने के कारण जब पौधे के वातावरण ऊष्मा के में अचानक परिवर्तन हो जाता है तो उससे पौधे की ऊतियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। काँक पौधे के जख्मों को भरने के काम में भी आती है।

२. छाल (Bark) एक मृत, सूखी परत की भाँति छाल मरी हुई कोशाओं की पौधे की बाह्यवाली ऊति है, और इसका कार्य है रक्षा। यह अन्दर वाली ऊतियों की, फजाई और कीड़ों के आक्रमण से रक्षा करती है। इससे पानी का वाष्प रूप में उड़ना कम हो जाता है और बाहरी ऊष्मा के परिवर्तन से पौधे की रक्षा हो जाती है। बहुत-से पौधों में छाल निकल जाती है और तब ये सब कार्य केवल काँक द्वारा ही किये जाते हैं।

रक्षक ऊतियाँ (Protective Tissues).

यह नोट करने की बात है कि पौधों में तीन ऊतियाँ होती हैं, (१) एपिडर्मिस, (२) काँक और (३) छाल, जो विशिष्ट रूप से पौधे की रक्षा करती हैं। पौधे की आरम्भिक अवस्था में केवल एपिडर्मिस ही तने की रक्षा करती है, किन्तु कुछ क्षुण्णों (shrubs) और वृक्षों में बाद में एपिडर्मिस के साथ-साथ या उसके स्थान पर काँक और छाल उसी कार्य के लिए उत्पन्न हो जाती है। एपिडर्मिस और काँक तथा छाल के कार्यों का वर्णन पहले किया जा चुका है।

घावों का भरना और पत्तियों का झड़ना (Healing of Wounds and Fall of Leaves)

घावों का भरना

छांटे जल्मी मे जल्मी कोशाए मर जाती है और सूख जाती है, जबकि बाहरी दीवारे अथवा जल्मी कोशाओं के नीचेवाली स्वस्थ ऊतियों मे कुछ रक्षक पदार्थ जम जाते हैं।

बड़े घावो मे पैरकाइमा की जीवित ऊतियों की सबसे बाहरवाली बिना जल्म वाली परत मेरिस्टेम (फेलोजन) को बनाती है, जो कॉर्क की एक या अधिक परतों को बना देती है। इस कॉर्क को जल्मवाली कॉर्क (wound cork) कहते हैं। अब कॉर्क जल्मी सतहों की रक्षा करती है।

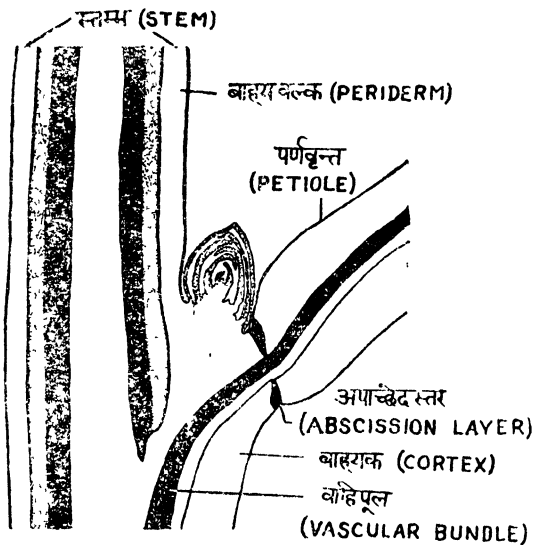
लकड़ीदार पौधो मे प्रायः घाव के पासवाली बिना घाव की कोशाए सीधे ही कॉर्क को नहीं बनाती, बल्कि वे पैरकाइमा की कोशाओं के रसदार (succulent) समूह को बनाती हैं, इसको किण्क (कैलस, callus) कहते हैं। यह कैलस जल्म को भर देता है और उसको घेर लेता है। कुछ पौधो मे पड़ी गाँठों (knots) की व्याख्या इससे की जा सकती है। यदि कैम्बियम जल्मी हो जाता है तो कैलस की कोशाए प्रायः एक नई कैम्बियम की कतार को बनाती है और यह पहलीवाली कैम्बियम से मिल जाती है।

कभी-कभी कैम्बियम की नवीन परत बनने के स्थान पर ट्रेकिया (tracheae) या काष्ठ वाहिनियाँ, ट्रेकियल प्लग्स (tracheal plugs) का निर्माण करती हैं; इनको टाइलोसेज (tyloses) कहते हैं, ये गर्तों (pits) मे से होकर पासवाले पैरकाइमा से गुब्बरो की भाँति अन्दर से निकले हुए भाग हैं। टाइलोसेज वाहिनियों के भीतरी घेरे को रूँध देते हैं, जबकि और दूसरे भाग सूख जाते हैं। यदि लेटेक्स होता है तो वह जम जाता है। इस प्रकार बाहर खुला हुई सतह से पानी के उड़ने को रोका जाता है।

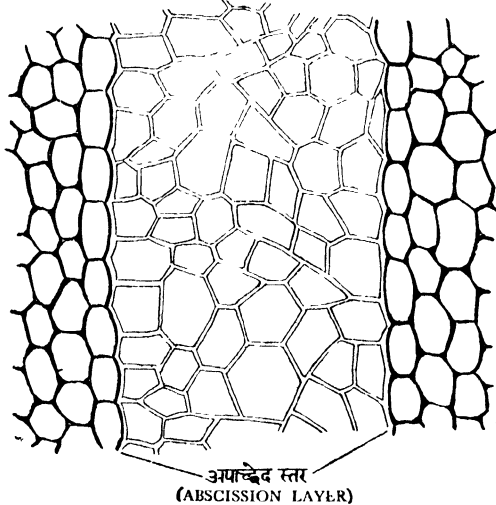
पत्तियों का झड़ना

पर्णपाती (deciduous) क्षुण्ण या वृक्षों में पत्तियाँ सूखी ऋतु मे झड़ जाती हैं, जबकि जड़ द्वारा सोखे गये पानी की मात्रा तो कम हो जाती है, किन्तु पत्तियों की सतह से जल का वाष्पीकरण अधिक हो जाता है। ये दोनों अवस्थाएँ शरद् ऋतु में, या बहुत दिनोंवाली सूखी ग्रीष्म ऋतु मे होती है, और इसलिए, इन ऋतुओं मे पत्तियाँ गिर जाती हैं। बनावट के दृष्टिकोण से अचानक पत्ती के गिर जाने का कारण यह है—पत्ती के वृत्त के आधार के आरपार कॉर्क की एक परत बन जाती है और कॉर्क के ठीक बाहर एक स्पष्ट रूप से 'पृथक करनेवाली परत' (separation layer),

जिसको अपाच्छेद स्तर (ऐबसिस लेयर, **absciss-layer**) कहते हैं, बन जाती है। पत्ती के वृन्त के आरपारवाली पर-कादमा की जीवित कोशाएँ और साथ ही वृंस्कूलर बण्डल की जीवित कोशाएँ मेरिस्टेमेटिक हो जाती हैं और कॉर्क की एक परत को बनाती हैं। अथवा ये जीवित कोशाएँ सीधे ही सूबरिन-युक्त हो जाती हैं और बिना विभाजन के ही कॉर्क की परत बना देती हैं। दोनों दशाओं में नीचे वाली कॉर्क के भिन्न-भिन्न से इस कॉर्क के पास कॉर्क की एक नई परत उत्पन्न हो जाती है। कुछ उदाहरणों में पत्ती के वृन्त के आधार पर कॉर्क-कैम्बियम सीधे ही कॉर्क की कुछ परतों को बना देता है। कॉर्क सूबरिन युक्त होती है और कॉर्क द्वारा अगल-बगल से दबाव पड़ने पर वाहिनियों को चोड़ाई में सिकुड़ती जाती है, इस प्रकार पत्ती को जल मिलना बन्द हो जाता, वह सूख जाती है और मर जाती है। पृथक करनेवाली परत या ऐबसिस स्तर जो कि कॉर्क के ठीक बाहर होती है, पीली पड़ जाती है और नष्ट हो जाती है। इस परत का सेल्यूलोज पेक्टिन में परिवर्तित हो जाता है, और इस प्रकार कोशाएँ एक दूसरे से अलग हो जाती हैं। तब पत्ती केवल वाहिनियों पर ही ठहरी रहती है और फिर हवा के



चित्र १९.१ पत्ती के आधार पर अपाच्छेद स्तर बनना।



चित्र १९.२ अपाच्छेद स्तर का एक भाग पत्ती झड़ने से कुछ समय पूर्व (बाहर से देखने पर)।

चित्र १९.१ पत्ती के आधार पर अपाच्छेद स्तर बनना।

झोके से अथवा अपने भार से ही वह ऐबसिस परत से अलग हो जाती है और टूट करे गिर पड़ती है। वाहिनियाँ गोद और टाइलोसेज से रुंध जाती है और कॉर्क खुली हुई सतहों को ढक लेती है। इस प्रकार रस का बाहर निकलना बन्द हो जाता है। जब पत्ती गिरती है तो तने पर दाग पड़ जाता है, और इस दाग को **पत्ती का दाग (leaf-scar)** कहते हैं।

प्रश्न

भाग १. आकारिकी

अध्याय १

१. एक चने या मटर के बीज की रचना तथा अंकुरण की विधि का वर्णन करिए। आवश्यक चित्र दीजिये।
२. एक भ्रूणपोषी बीज की रचना का वर्णन करिए और एक अभ्रूणपोषी बीज से उसकी तुलना करिए।
३. किसी द्वि-बीजपत्री बीज की रचना और अंकुरण की विधि की तुलना एक-बीजपत्री बीज की रचना और अंकुरण की विधि से करिए।
४. किसी साधारण मौमल फल के बीज और उसके अंकुरण की विधि का वर्णन करिए। अंकुरण के लिए आवश्यक दशाएँ कौन-कौन हैं?
५. उपरिभूमिक (Epigeal) अंकुरण से आप क्या समझते हैं? किसी प्रारूपिक (typical) बीज को लेकर इस विधि का वर्णन करिए।

अध्याय २-३

१. जड़ की लाक्षणिक विशेषताएँ क्या हैं? यह तने से किस प्रकार भिन्न पहचानी जा सकती है? उदाहरण और चित्र दीजिये।
२. अस्थानिक मूल कौन हैं? उनका अच्छी प्रकार वर्णन करिए और प्रत्येक दशा में उनके कार्यों का वर्णन करिए।
३. जड़ के क्या-क्या कार्य हैं? बताइये कि उन कार्यों को करने के लिए यह अंग किस प्रकार अनुरूपित (adapted) होता है।
४. किसी साधारण पेड़ की कली की रचना का वर्णन करिए। उन विभिन्न तरीकों का वर्णन करिए जिनके द्वारा पर्णकलिकाएँ रक्षित रहती हैं। उनमें कौन-से रूपान्तर होते हैं। निकल-पारस्पर्य (vernation) पर एक टिप्पणी लिखिये।
५. उन विविध विधियों का वृत्तान्त लिखिये जिनके द्वारा आरोही पौधे अपने आधारों से चिपक जाते हैं।
६. एक परजीवी क्या है? इसको एक उपरिरोही (epiphyte) और एक मृतोपजीवी से भिन्न पहचानिये। सहजीविता (symbiosis) का क्या अर्थ है? उदाहरण दीजिये।
७. विविध प्रकार के भूमिगत (underground) तनों के नाम लिखिए और उनका वर्णन करिए। उनको जड़ क्यों नहीं माना जाता? उनके क्या कार्य हैं? उदाहरण और चित्र दीजिये।
८. स्वच्छ चित्रों सहित एक आलू के आकन्द का वर्णन करिए और इसकी आकारिकीय प्रकृति को सिद्ध करने के लिए सबूत दीजिये।

९. एक मूलाकन्द (root-tuber) क्या है? एक स्तम्भाकन्द से इसको किस प्रकार भिन्न पहचानेंगे? चित्रो सहित अपने उत्तर का स्पष्टीकरण करिए और प्रत्येक का एक-एक उदाहरण दीजिये।

१०. वर्धी-प्रजनन (vegetative propagation) के लिए तनों के विविध सपरिवर्तनों का, चित्रो और उदाहरणों सहित, वर्णन करिए।

११. सजनी (tendrils) क्या है? चित्रो और उदाहरणों सहित इसका पूर्ण रूप से वर्णन करिए। पौधे के कौन-कौन से भाग सजनियों में रूपान्तरित हो सकते हैं?

१२. काटा किसे कहते हैं? इसकी आकारिकीय प्रकृति की व्याख्या करिए।

१३. पर्ण-कार्य स्तम्भ (phylloclade) क्या है? यह एक पर्णायितवृन्त (phyllode) से किस प्रकार अलग पहचाना जाता है? अपने उत्तर का स्पष्टीकरण चित्रों तथा उदाहरणों सहित करिए।

अध्याय ४-५

१. एक प्रारूपिक पत्ती के विभिन्न भागों का वर्णन करिए और इसमें पाये जाने वाले विविध रूपान्तरों का वृत्तान्त लिखिए।

२. नाडी-विन्यास क्या है? भारतीय पौधों के उदाहरण लेकर इसके मुख्य रूपों का वर्णन करिए।

३. एक साधारण पत्ती और एक सयुक्त पत्ती में, तथा एक सयुक्त पत्ती और एक छोटी शाखा में भेद बताइये। सयुक्त पत्तियों के मुख्य प्रकार कौन-कौन हैं? उनका वर्णन करिए और उदाहरण दीजिये।

४. पौधों में रूपान्तर (metamorphosis) से आप क्या समझते हैं? निम्नलिखित में पाये जानेवाले रूपान्तरों का संक्षिप्त वर्णन करिए (क) जलीय पौधे, (ख) मरुस्थलीय पौधे, (ग) कीट भक्षक पौधे और आरोही पौधे।

५. कलश-पादप (Pitcher plant) की पत्ती की आकारिकी का वर्णन करिए। स्वच्छ और नामांकित चित्र दीजिये।

६. तने और शाखाओं पर पत्तियों के विन्यास का एक संक्षिप्त विवरण दीजिये, और स्पष्ट रूप से समझाइये कि आप उदग्र पक्ति (orthostichy) और विकास कुन्तल (genetical spiral) से क्या समझते हैं। पर्णकुट्टिम (leaf mosaics) क्या है?

७. पत्ती के सामान्य कार्य क्या हैं? किन दूसरे और कार्यों के लिए यह उपयोग में लायी जाती है?

८. शाकाहारी जीवों द्वारा हानियों से पौधे किस प्रकार अपनी रक्षा करते हैं?

९. काटों, शिताग्रों (prickles), शल्यो (spines) और उपोद्बर्धों (emergences) को एक दूसरे से किस प्रकार पहचानेंगे? वे पौधों के किस महत्व के हैं?

अध्याय ६

१. एक प्रारूपिक फूल के विभिन्न भागों का वर्णन करिए और इन भागों के कार्यों का उल्लेख करिए। स्वच्छ और नामांकित चित्र दीजिये।

२. पुष्पाक्ष (thalamus) पर पुष्प-पत्रों के निवेश (insertion) की विविध रीतियों का, तथा दलपुज के मुख्य प्रकारों का विवरण दीजिये।

३. उदाहरणों सहित अधोजाय (hypogynous), परिजाय (perigynous) और उपरिजाय (epigynous) फूलों की रचना का वर्णन करिए। पुष्पाक्ष (thalamus) क्या है? श्वेत हुरहुर (Gynandropsis) और झुमका (passion-flower) के पुष्पाक्षों का वर्णन करिए।

४. 'पुष्प प्ररोह का एक सपरिवर्तित रूप है' पर एक संक्षिप्त लेख लिखिये।

५. पुष्प-क्रम (inflorescence) क्या है? साधारण एकवर्ष्यक्षीय (racemose) पुष्प-क्रमों के प्रारूपिक रूपों का वर्णन करिए। सुपरिचित उदाहरण दीजिये।

६. निम्नलिखित में आप किस प्रकार के पुष्प-क्रम पाते हैं: गुचमोहर, सरसों, सूरजमुखी, अंजीर, बनिया, रगन (Ixora), हतीसुर (Heliotropium), एरांड, मक्का, केला, ईस्टर लिली (Amaryllis) और घास? इनमें से किन्हीं पाँच का सचित्र वर्णन करिए।

७. पुष्प-क्रम क्या है? एक मुण्डक (capitulum) की चपक (cyathium) से तुलना करिए, और स्वच्छ चित्रों सहित प्रत्येक का एक-एक उदाहरण दीजिये।

८. तुलसी (Ocimum), अजीर (Ficus) और यूफोर्बिया (Euphorbia) में आप किन प्रकार के पुष्प-क्रम पाते हैं? चित्रों की सहायता से उनका वर्णन करिए।

९. पत्रपारस्पर्य (vernation) और पुष्पदल-विन्यास (aestivation) में भेद बताइये। प्रत्येक के प्रमुख रूपों का वर्णन करिए। या फूलों में अभिलाग (adhesion) और संलाग (cohesion) की व्याख्या करिए और उदाहरण दीजिये।

१०. परागकण क्या है? एक परिपक्व परागकण और भ्रूणसूत (embryo-sac) का वर्णन करिए। जब एक परागकण अंकुरण करता है तो क्या होता है?

११. जरायु (placenta) क्या है? विभिन्न प्रकार के जरायु-न्यासों (placentation) का वर्णन करिए। प्रत्येक प्रकार की परीक्षा के लिए आप अण्डाशय का किस प्रकार का सेक्शन काटेंगे? प्रत्येक प्रकार में भारतीय उदाहरण दीजिये।

१२. एक चित्र की सहायता से एक बीजाण्ड (ovule) के भागों का, जैसे कि वे एक अनुलम्ब काट में देखे जाते हैं, वर्णन करिए। बीजाण्ड के अन्दर भ्रूणसूत का विकास बताइये।

अध्याय ७-८

१. पर-परागण क्या है? यह कैसे होता है?

२. कीट-परागित पुष्पों की लाक्षणिक विशेषताएँ क्या हैं? वायु द्वारा किये गये परागण से क्या-क्या लाभ और हानियाँ हैं?

३. सूरजमुखी कुल (Compositae) के एक पौधे में पर-परागण की रीति का वर्णन करिए। किसी सुपरिचित उदाहरण से स्वच्छ चित्रे दीजिये।

४. पर-परागण चाहनेवाले फूलों में कौन-कौन से उपयोजन (contrivances) पाये जाते हैं? इन उपयोजनों का क्या महत्त्व है?

अध्याय ९-१०

१. उन परिवर्तनों का वर्णन करिए जो बीज के निर्माण तक बीजाण्ड में होते रहते हैं, और बताइये कि भ्रूणपोषी और अभ्रूणपोषी बीजों में क्या अन्तर है?

२. फल क्या है? सत्य फल (true fruit) और कूट फल (spurious fruit) में किस प्रकार भेद करियेगा? उदाहरणों द्वारा अपने उत्तर का स्पष्टीकरण करिए।

३. फलों के वर्गीकरण का एक सक्षिप्त विवरण दीजिये।

४. निम्नलिखित फलों का वर्णन एवं उनकी आपस में तुलना करिए—आम, बैंगन, सेब, लीची, रेडी, सूरजमुखी और मूंग (*Phaseolus radiatus*)।

५. औद्भिदीय शब्दों (botanical terms) में लीची, अंजीर, अनन्नास, आम, नारियल, अमरूद और केला के भक्ष्य भागों का वर्णन करिए।

६. उन विविध युक्तियों का वर्णन करिए जिनके द्वारा बीजों का विकिरण होता है। भारतीय पौधों के उदाहरण दीजिये। जातियों (species) के लिए बीजों का वितरण किस महत्व का है?

भाग २. श्रौतिकी

अध्याय १२

१. प्ररस (प्रोटोप्लाज्म) क्या है? पौधों में यह कहाँ पर पाया जाता है? यह कौन-कौन-सी गतियाँ दिखाता है?

२. हरी कोशा की जीवित कोशान्तर्वस्तुओं का वर्णन करिए, और उनके कार्य बताइये। पर्णहरिम (chlorophyll) क्या है? यह किस प्रकार निचोड़ी जाती है?

३. एक प्रारूपिक वनस्पति कोशा (vegetable cell) के भागों का वर्णन करिए, और विभिन्न भागों के कार्यों का सक्षिप्त विवरण दीजिये।

४. स्टार्च और ऐल्यूरॉन के दाने क्या हैं? सूक्ष्मदर्शी द्वारा दिखाई देनेवाले उनके रूप का वर्णन करिए। पौधे की ऊर्ति में उनकी उपस्थिति किस प्रकार दिखलाइयेगा? उस विधि का सविस्तार वर्णन करिए। वे किस प्रकार के भोजन का प्रतिनिधित्व करते हैं?

५. पौधों में पाये जानेवाले सबसे महत्वपूर्ण संचित पदार्थों के नाम लिखिये। किस रूप में और पौधे के किन भागों में ये उपस्थित रहते हैं? उनको आप किस प्रकार पहचानेंगे?

६. पौधों में खनिज लवणों की उपस्थिति का चित्र एवं उदाहरणों सहित विवरण दीजिये।

७. वर्ज्य पदार्थ (waste products) क्या हैं? उनका नाम और विवरण दीजिये। उनकी अन्तिम गति (fate) क्या होती है?

८. पौधों का भोजन किन-किन पदार्थों का होता है? उनका वर्गीकरण और वर्णन करिए।

९. सेल्युलोज क्या है? इसमें कौन-कौन से संपरिवर्तन हो सकते हैं? सेल्युलोज लिगनिन से किम प्रकार भिन्न है? पौधों में लिगनिनयुक्त रचनाओं के उदाहरण दीजिये। सेल्युलोज और इसके रूपान्तरों की उपस्थिति की जाच के लिए कौन-कौन से प्रयोग हैं?

१०. नाभिक क्या है? एक वर्धी कोशा (vegetative cell) के विभाजन के समय होनेवाले विविध परिवर्तनों का सचित्र वर्णन करिए।

अध्याय १३-१४

१. एक ऊति क्या है? वानस्पतिक रचनाओं में पायी जानेवाली प्रमुख प्रकार की ऊतियाँ कौन-कौन हैं? स्वच्छ चित्रों सहित उनके सूक्ष्मदर्शी दृश्य रूप (microscopic appearance) का वर्णन करिए। प्रत्येक के कार्य बताइये।

२. आप चालनी-नाल (sieve-tube) कहाँ पाते हैं? इसकी रचना का वर्णन करिए। पौधों में वाहि ऊतियों का क्या महत्व है? पौधों में पाये जानेवाले विविध प्रकार के वाहिपूलों का वर्णन करिए।

३. तने की अग्रस्थ प्रविभाजी (apical meristem) का, जैसा कि यह अनुलम्ब काट में दिखाई देती है, वर्णन करिए। यह जड़ की अग्रस्थ प्रविभाजी से किस प्रकार भिन्न है?

४. पौधों के शरीर में पायी जानेवाली यांत्रिक ऊतियों (mechanical tissues) की प्रकृति और उनके वितरण का विवरण दीजिये।

५. यांत्रिक ऊतियाँ क्या हैं? (क) सूरजमुखी के तने और (ख) मक्का के तने के अनुप्रस्थ-काटों (cross-sections) में उनके वितरण का वर्णन करिए।

६. स्टोमेटा क्या हैं? उनकी रचना और कार्य का वर्णन करिए। चित्र दीजिये। जब वायुमण्डल सूखा होता है तो स्टोमेटा किस प्रकार का व्यवहार करते हैं?

७. आधारोति सहति (ground tissue system) का वर्णन करिए जैसा कि यह एक द्विबीजपत्री बीज के अनुप्रस्थ काट में दिखाई देता है।

८. चित्रों सहित, निम्नलिखित ऊतियों की औतिकी का वर्णन करिए, और प्रत्येक का कार्य बताइये—चालनी-नाल, वाहिनी, आक्षीरी ऊति, जलवाहि कोशा (tracheid), स्क्लेरनकाइमा और कॉलनकाइमा।

९. एक द्वि-बीजपत्री तने के फ़ाइब्रो-वैस्कुलर बण्डल के ऊति-तत्त्वों (tissue-elements) का वर्णन करिए, और एक एक-बीजपत्री तने के ऐसे बण्डल से उसकी तुलना करिए।

१०. एक वाहिपूल (vascular bundle) क्या है? इसका क्या कार्य है? विविध प्रकार के वैस्कुलर बण्डलों का वर्णन करिए।

अध्याय १६-१७

१. ऊति क्या है? एक द्वि-बीजपत्री तने में पायी जानेवाली प्रमुख ऊतियों का वर्णन करिए। चित्र दीजिये।

२. परवर्ती-वृद्धि शुरू होने के समय एक द्वि-बीजपत्री तने की आन्तरिक रचना का वर्णन करिए।

३. मक्का के तने की सूक्ष्मदर्शी दृश्य रचना का वर्णन करिए, जैसा कि एक अनु-प्रस्थ काट में देखने को मिलता है।

४. द्वि-बीजपत्री और एक-बीजपत्री तनों की शारीरीय रचना की तुलना करिए।

५. द्वि-बीजपत्री पौधे की जड़ की शारीरीय रचना (anatomical structure) की तुलना एक एक-बीजपत्री पौधे की जड़ की शारीरीय रचना से करिए।

६. चित्रों की सहायता से, एक एक-बीजपत्री तने की शारीरीय रचना की तुलना एक एक-बीजपत्री जड़ की शारीरीय रचना से करिए।

७. मूलरोम और मूलिका (rootlet) में भेद बताइये, जहाँ तक कि उनकी (क) रचना और (ख) कार्य का सम्बन्ध है।

८. एक प्रारूपिक पत्ती की ऊतियों का वर्णन करिए, और उन विशेष कार्यों का उल्लेख करिए जो वे वहाँ करती हैं।

अध्याय १८-१९

१. कॉर्क-कैम्बियम के बनने के प्रारम्भ में एक द्वि-बीजपत्री तने की रचना का वर्णन करिए।

२. एक द्वि-बीजपत्री तना किस प्रकार मोटाई में वृद्धि करता है। क्या द्वि-बीजपत्री और एक-बीजपत्री तनों में मोटाई में वृद्धि एक ही तरह से होती है? आप किसी वृक्ष की आयु किस प्रकार ज्ञात करेंगे?

३. द्वि-बीजपत्री पेड़ की लकड़ी में घेरे जैसे चिह्नों के बनने का स्पष्टीकरण करिए। एक एक-बीजपत्री तने में वे क्यों अनुपस्थित हैं?

४. पेरिडर्म (periderm) क्या है और यह किस प्रकार बनता है, तथा पौधे के शरीर के किस भाग में पाया जाता है?

५. द्वि-बीजपत्री जड़ में कैम्बियम की उत्पत्ति और सक्रियता का स्वच्छ चित्रों सहित वर्णन करिए।

६. छाल (bark) और काग (cork) क्या है? क्या वे सभी पौधों में पाये जाते हैं? उनके निर्माण की विधि का वर्णन करिए और उनके कार्य बताइये।

७. वातरन्ध्र (lenticels) क्या हैं? वे किस प्रकार बनते हैं?

८. चित्रों सहित पतझड़ का वर्णन करिए। पौधे के शरीर में घाव किस प्रकार भरते हैं?

यू० पी० बोर्ड इण्टरमीडिएट परीक्षा तथा प्रीमेडिकल टेस्ट, लखनऊ

में पूछे गये प्रश्न

आकारिकी

बीज और अंकुरण

(अ) बीज-पत्रों (cotyledons) के क्या कार्य हैं?

(ब) मटर (pea) और रेंडी (castor oil seed) के बीजों के उगन

के समय बीजपत्रों (cotyledons) तथा अधोबीजपत्र (hypocotyl) के व्यवहार का विवरण दीजिये। (उ० प्र० १९४६)

२. (अ) स्वच्छ और अच्छी प्रकार से नामांकित मक्के के बीज के उदग्र काट (vertical section) का चित्र खींचिये और सक्षिप्त में इन बीजों के उगने की दशाओं का वर्णन करिए। (उ० प्र० १९४७)

(ब) बीजों के उगाने (अंकुरण) के लिए किन-किन बातों की आवश्यकता होती है? (उ० प्र० १९४७)

३. किसी द्वि-बीजपत्री बीज (dicotyledonous seed) की रचना एवं अंकुरण की विधि को चित्रों द्वारा दिखाइये। (प्री० में० लखनऊ १९४५)

४. किसी एक-बीजपत्री बीज की रचना एवं अंकुरण की विधि को दिखाने के लिए नामांकित चित्र दीजिये। (प्री० में० लखनऊ १९४६)

५. द्वि-बीजपत्री और एक-बीजपत्री बीजों की रचना की और उनके अंकुरण की तुलना करिए।

६. किसी मृदेदार फल और उसके बीज और अंकुरण का वर्णन करिए।

७. उरिभूमिक अंकुरण में आप क्या समझते हैं? एक बीज का उदाहरण लेकर इस विधि को स्पष्ट करिए।

८. भ्रूणपोषी और अभ्रूणपोषी बीजों का वर्णन करिए और उनकी तुलना करिए।

९. चने के बीज की रचना का वर्णन करिए और बताइये कि उसका अंकुरण किस प्रकार होता है?

१०. ताड़ (palmyra-palm) अथवा खजूर (date-palm) के बीज के भागों का वर्णन करिए और उसके अंकुरण की विधि बताइये।

जड़

१. जड़ों के विभिन्न संपरिवर्तित रूपों (modifications) का उदाहरण सहित वर्णन करिए। ये पौधों के किस कार्य आती है? (उ० प्र० १९४८)

२. चित्र बनाइये—

एक मूल-आकन्द (root-tuber) का।

(प्री० में० १९४७)

३. टिप्पणी लिखिए—

(क) आगन्तुक या अस्थानिक (adventitious)।

(प्री० में० लखनऊ १९४८)

(ख) परजीवी चूषक-मूल (haustoria)।

(प्री० में० १९४९)

४. जड़ के क्या कार्य होते हैं? इन कार्यों को करने के लिए इस अंग में क्या परिवर्तन हुए हैं?

५. जड़ के विशेष लक्षण क्या हैं? उसको वृन्त से पृथक् किस प्रकार पहचाना जा सकता है?

६. अस्थानिक मूल (adventitious roots) किन्हे कहते हैं? उनका पूर्ण वर्णन करिए और प्रत्येक दशा में उनके कार्यों का वर्णन करिए।

७. जिन विधियों से लताएं (climbing plants) फैलती हैं और आधारों का भ्रंश लेती हैं, उनका वर्णन करिए।

स्तम्भ (तना)

१. दुर्बल तनेवाले पौधे जिन-जिन युक्तियों (mechanisms) द्वारा अपने आधारों पर बढ़ते हैं उनका उल्लेख करिए और अपने उत्तर के स्पष्टीकरण में उपयुक्त उदाहरण दीजिये। (उ० प्र० १९४६)

२. स्तम्भ के विभिन्न संपरिवर्तित रूप क्या हैं? ऐसे पौधों के उदाहरण चित्र-सहित दीजिये जिनसे आप सुपरिचित (familiar) हों। (प्री० मे० लखनऊ १९४६)

३. चित्र बनाइये—

(क) एक स्तम्भ-आकन्द (stem-tuber) का। (प्री० मे० १९४७)

(ख) आलू के विभिन्न अंगों के। (प्री० मे० १९४६)

(ग) नाग-फनी (*Opuntia stem*) के विभिन्न अंगों के।

(प्री० मे० १९४६)

४. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—

(क) कॉर्म (कन्दिका—corm)। (प्री० मे० लखनऊ १९४८)

(ख) फिलोक्लेड (Phylloclade)। (उ० प्र० १९४५)

५. परजीवी (parasite) किसे कहते हैं? उसको ऊपरिरोही (epiphyte) और मृतोपजीवी (saprophyte) से पृथक् किस प्रकार पहचाना जायगा?

६. एक साधारण वृक्ष की कली का वर्णन करिए। उन विधियों का भी वर्णन करिए जिनसे कलियाँ रक्षित होती हैं। वर्नेशन (vernation) पर एक छोटी टिप्पणी लिखिये।

७. संजनी (tendrils) किसे कहते हैं? चित्रों और उदाहरणों द्वारा इसका पूर्ण वर्णन करिए। पौधे के कौन-कौन से भाग टेण्ड्रिल में रूपान्तरित हो सकते हैं?

८. कांटे (thorn) किसे कहते हैं? अपने उत्तर के लिए इसके उदाहरण और चित्र सहित कारण दीजिये।

९. थॉर्न और प्रिकिल में कैसे भेद करिएगा?

१०. भूमि के अन्दर रहनेवाले, अर्थात् भूमिगत तनों के कौन-कौन से प्रकार होते हैं? उनको जड़ क्यों नहीं समझा जाता? उनके कार्य क्या हैं? उदाहरण और चित्र दीजिये।

११. तने के हवाई संपरिवर्तन (aerial modifications) कौन-कौन से हैं? चित्रों और उदाहरण सहित उनका पूर्ण वर्णन करिए।

१२. वर्धी-प्रजनन (vegetative propagation) के लिए तनों के भिन्न-भिन्न परिवर्तनों का चित्रों और उदाहरण सहित वर्णन करिए।

१३. आलू के आकन्द (tuber) का साफ चित्रों के साथ वर्णन करिए और उसकी आकारिकीय प्रकृति को पुष्ट करनेवाले प्रमाण दीजिये।

पत्ती या पर्ण

१. चित्र बनाइये—

(अ) दो विभिन्न प्रकार के अनुपत्रों (stipules) के।

(प्री० मे० लखनऊ १९४७)

(ब) दो विभिन्न प्रकार के संजनियों (tendrils) के ।

(प्री० मे० लखनऊ १९४७)

(स) मटर के पौधे की पत्ती ।

२. एक प्रारूपिक (typical) पत्ती का रूप एवं उसकी रचना उसके विभिन्न कार्यों को करने के लिए किस प्रकार रूपान्तरित (modified) होते हैं ?

३. टिप्पणी लिखिये—

(अ) हरी पत्तियों के कार्य । (प्री० मे० १९४४)

(ब) स्वसन-मुख (stomata) की रचना । (प्री० मे० १९४४)

(स) एक कीट-भक्षक पौधा (insectivorous plant) । (उ० प्र० १९५६)

(द) रेट्यूज (retuse) । (उ० प्र० १९५०)

(य) पर्णहरिम (chlorophyll) । (प्री० मे० लखनऊ १९५६)

(र) आक्रिया (Ochrea) । (प्री० मे० लखनऊ १९४९)

४. एक नमूने की पत्ती के भागों का वर्णन करिए और उसके जो भिन्न-भिन्न परिवर्तन हो सकते हैं, उनका वर्णन लिखिये ।

५. पत्ती के साधारण कार्य क्या हैं ? किन और दूसरे कार्यों के लिए उसका प्रयोग हो सकता है ?

६. नाड़ी-विन्यास क्या है ? भारतीय पौधों पर विशेष ध्यान देते हुए उसके मुख्य रूपों का वर्णन करिए । नाड़ियों की व्यवस्था का क्या कार्य है ?

७. तने और शाखाओं पर पत्तियों की व्यवस्थाओं का संक्षिप्त विवरण दीजिये । स्पष्ट रूप से बताइये कि ऑर्थोस्टिची (orthostichy) और विकास कुन्तल (genetic spiral) से क्या तात्पर्य है ? पर्ण-कुट्टिम (leaf mosaic) किसे कहते हैं ?

८. साधारण (simple) पत्ती, संयुक्त (compound) पत्ती में और एक छोटी शाखा में क्या अन्तर है ? संयुक्त पत्ती के मुख्य प्रकारों का वर्णन करिये और उदाहरण दीजिये ।

९. पौधों में रूपान्तर (metamorphosis) से आप क्या समझते हैं ? निम्न-लिखित पौधों के रूपान्तर का वर्णन करिए—(क) जलीय पौधे (aquatic plants), (ख) मरुस्थलीय पौधे (xerophytic plants), (ग) कीट-भक्षक पौधे (insectivorous plants) और (घ) आरोही पौधे (climbing plants) ।

१०. शाकाहारी (herbivorous) पशुओं से पौधे अपनी रक्षा किस प्रकार करते हैं ?

११. पौधे के आर्मचर (armature) से आप क्या समझते हैं ? चित्र सहित उदाहरण दीजिये ।

१२. कांटे, प्रिकिल, स्पाइन और एमर्जेन्स (emergences) में आप कैसे भेद करेंगे ? पौधों के लिए उनका क्या महत्व है ? रोमों की क्रिस्मो और उनके कार्यों का वर्णन करिए ।

१३. पिचर पौधे (pitcher plant) की पत्ती की आकारिकी का वर्णन करिए । साफ और अंकित चित्रों को बनाइये ।

१४. पत्ती के भिन्न-भिन्न भागों को बताइये और मुख्य आकारों का संक्षिप्त वर्णन करिए ।

पुष्प

१. संवृत बीजा (angiosperms) में कितने तरह के बीजाण्ड (ovules) होते हैं? इनमें से किसी एक प्रकार के बीजाण्ड का, निषेचन (fertilization) के समय का, एक बड़ा चित्र बनाकर उसका विवरण दीजिये। (उ० प्र० १९४७)

२. सूर्यमुखी के पुष्प एवं पुष्प-क्रम (inflorescence) का नामांकित चित्र बनाइये। और इस पौधे को इसकी प्राकृतिक स्थिति (natural order) में रखिये तथा इसके कारण दीजिये।

३. चित्र सहित एक अधोमुख (एनाट्रोपस, anatropous) बीजाण्ड की, निषेचन के समय की, रचना दीजिये। (प्री० मे० लखनऊ १९५१)

४. एक प्रारूपिक संवृत बीजा (typical angiosperm) के परिपक्व परागकण (mature pollen grain) तथा परिपक्व भ्रूणसूय (mature embryo-sac) की कोशा-रचना (cell structure) का विवरण दीजिये और लिगी-निषेचन के विधि की व्याख्या करिए। (प्री० मे० आगरा १९५२)

५. टिप्पणी लिखिए—

(क) सायथियम (cyathium)। (उ० प्र० १९४५) ;

(प्री० मे० लखनऊ १९४८, १९५०)

(ख) निषेचन के पूर्व बीजाण्ड की रचना। (प्री० मे० लखनऊ १९४४)

(ग) अभिलग्न (adnate)। (प्री० मे० लखनऊ १९४८)

(घ) वक्रावर्त (campylotropous)।

(प्री० मे० लखनऊ १९४८, १९५०)

(च) छद्मशूकी (spadix)। (प्री० मे० लखनऊ १९४९)

(छ) अधोमुख या उदावर्त (anatropous)।

(प्री० मे० लखनऊ १९४९)

(ज) परिजाय (perigynous)। (प्री० मे० लखनऊ १९५०)

(झ) चतुर्दीपी (टेट्राडाइनेमस, tetradynamous)।

(प्री० मे० लखनऊ १९५०)

६. किसी एक-बीजपत्री के फूल का चित्र बनाइये और उसे नामांकित (label) करिए तथा अण्डाशय (ovary) से होता हुआ एक काट (section) खींचिये और इसके विभिन्न भागों को नामांकित करिए। (प्री० मे० लखनऊ १९४५)

७. एक विशेष उदाहरण ले करके एक प्रारूपिक (typical) फूल का वर्णन करिए। स्पष्ट रूपसे बताइये कि अभिलाग (adhesion) और संलाग (cohesion) से आप क्या समझते हैं? चित्र बनाइये और उदाहरण दीजिये।

८. पुष्पाक्ष (thalamus) पर पुष्प-पत्रों (floral leaves) के भिन्न प्रकार के निवेश (insertion) का और दलपुजों के विविध रूपों का वर्णन करिए।

९. चम्पा (*Michelia*), आक (*Calotropis*), केला (*Musa*) और जाबा (*Jaba*) अथवा चाइना रोज (*China rose*) का वर्णन करिए। पराग-दाने (pollen grains) किन्हे कहते हैं और उनके कार्य क्या हैं? और उनकी रचना का भी वर्णन करिए।

परागण एवं निषेचन

१. स्वयं-परागण (self-pollination) और पर-परागण (cross-pollination) की व्याख्या (explain) करिए। पौधों को इनसे क्या-क्या लाभ और हानियाँ हैं? (उ० प्र० १९५०)

२. विविध पौधों (various plants) में पर-परागण (cross-pollination) किस प्रकार हो पाता है? इस उद्देश्य में फूलों के विविध अनुकूलनों (adaptations) का विवरण दीजिये। (उ० प्र० १९५३)

३. एक प्रारूपिक संवृत बीजा (typical angiosperm) के परिपक्व परागकण (mature pollen grain) एवं परिपक्व भ्रूणसूत (mature embryo-sac) की कोशा-रचना (cell-structure) का विवरण दीजिये। और लिंगी-निषेचन (sexual fertilization) की व्याख्या करिए। (प्री० मे० आगरा १९५२)

४. केवलनामाकित चित्रों द्वारा कीट-परागित (insect pollinated) पौधों के पुष्पीय-संपरिवर्तनों (floral modifications) का विवरण दीजिये। उचित उदाहरण दीजिये। (प्री० मे० लखनऊ १९५६)

५. दोहरा निषेचन (double fertilization) पर टिप्पणी लिखिये।

बीज

१. उन मुख्य परिवर्तनों का संक्षिप्त विवरण दीजिये जो द्वि-बीजपत्री पौधों के बीजाण्ड (ovule) में, निषेचन (fertilization) के पश्चात् बीज के निर्माण होने (formation of seed) तक होती है। (उ० प्र० १९४६)

२. संक्षिप्त रूप से संवृत बीजा (angiosperm) के जीवन-इतिहास का वर्णन करिए। (उ० प्र० १९५१)

३. उन परिवर्तनों का विवरण दीजिये जो बीजाण्ड (ovule) में परागण (pollination) के बाद बीज-निर्माण तक होती है। (उ० प्र० १९५४)

४. स्वच्छ-अकित चित्रों की सहायता से, किसी भी संवृत बीजा (angiosperm) में जिसका आपने अध्ययन किया हो निषेचन (fertilization) एवं बीज-निर्माण (seed formation) की विधि को समझाइये। (उ० प्र० १९५६)

फल (Fruit)

संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिये—

(क) उदुम्बरक (syconus)।

(प्री० मे० लखनऊ १९५०)

(ख) सरसाक्ष (सोरोसिस—sorosis)।

(प्री० मे० लखनऊ १९४८)

(ग) उत्कोलक (पोम—pome)।

(प्री० मे० लखनऊ १९४९)

(घ) पुंज फल (aggregate fruits)।

(उ० प्र० १९५०)

(च) अष्टि फल (drupe)।

(उ० प्र० १९५६)

फलों और बीजों का विकिरण

१. पौधों में फलों और बीजों के विकिरण (डिसेमिनेशन—dissemination या dispersion) पर एक लेख लिखिये। (उ० प्र० १९५२)

२. पौधों में फलों और बीजों के विकिरण (dissemination) का चित्र सहित विवरण दीजिये। इससे जो लाभ हो उन्हें लिखिये। (उ० प्र० १९५५)

औतिकी

कोशा

नाभिक (nucleus) की रचना का वर्णन करिए। तथा केवल नामांकित चित्रों (labelled diagrams) द्वारा पित्र्य-सूत्र परिवर्तनों (chromosome changes) की विविध अवस्थाओं (various stages) को दिखाइये जो सूत्र-समभाजन (mitosis) एवं अर्ध सूत्रणा (meiosis) के समय होती है। (प्री० में० लखनऊ १९५६)

ऊति

१. पौधों में पाये जानेवाले विविध प्रकार के ऊतियों (tissues) का वर्णन करिए और उनके कार्य बताइये। (उ० प्र० १९५३)

२. प्रविभाजी ऊतियाँ (meristematic tissues) क्या हैं? और द्वि-बीजपत्री स्तम्भों (dicotyledonous stems) में वे क्या-क्या बनाती हैं? (उ० प्र० १९४६)

३. प्रविभाजी (meristem) क्या है? यह किस प्रकार कार्य करता है? चित्रों सहित उदाहरण दीजिये।

स्तम्भ की आन्तरिक रचना

१. उचित चित्र की सहायता से एक-बीजपत्री स्तम्भ की आन्तरिक रचना (internal structure) का वर्णन करिए। यह किस प्रकार द्वि-बीजपत्री स्तम्भ से भिन्न है? (उ० प्र० १९४७)

२. (अ) केवल चित्र द्वारा, एक द्वि-बीजपत्री स्तम्भ के परवर्ती-वृद्धि (secondary growth) के पहले तथा बाद की रचना दिखाइये।

(ब) किस प्रकार एक द्वि-बीजपत्री स्तम्भ किसी एक-बीजपत्री स्तम्भ से भिन्न है? (उ० प्र० १९४९)

३. आवश्यक चित्रों की सहायता से, एक द्वि-बीजपत्री स्तम्भ की रचना की तुलना पर्णांग (fern) के शिफावृन्त (rhizome) से करिए, जैसी ये अनुप्रस्थ काट में दिखाई पड़ती है। (उ० प्र० १९५२)

४. एक द्वि-बीजपत्री पौध के स्तम्भ (परवर्ती-वृद्धि—secondary growth के पूर्व) का अनुप्रस्थ काट और पर्णांग (fern) के स्तम्भ को अनुप्रस्थ काट के नाम

सहित चित्र खींचिये। उनके भेद सूचक लक्षण (distinguishing characters) बताइये। (उ० प्र० १९५३) तथा (प्रि० मे० लखनऊ १९५०)

५. एक द्वि-बीजपत्री स्तम्भ के वाहिनी-मूल (vascular bundle) से होता हुआ अनुप्रस्थ काट खींचिये तथा इसके विभिन्न तत्वों (different elements) को अलग-अलग बनाइये। चित्रित भागों (parts) को नामांकित (label) करिए।

(प्रि० मे० लखनऊ, १९४६)

६. एक एक-बीजपत्री की शारीरीय-रचना (anatomy) के मुख्य लक्षणों (main features) का वर्णन करिए। तथा इस वर्ग में पाये जानेवाले परवर्ती-वृद्धि के किसी विधि का संक्षिप्त विवरण दीजिये। (प्रि० मे० आगरा १९५२)

जड़ की आन्तरिक रचना

१. (अ) एक बाल मूल (young root) (परवर्ती-वृद्धि प्रारम्भ होने के पूर्व) तथा (ब) एक वृद्ध मूल (old root) से होते हुए अनुप्रस्थ काट बनाइये। सभी ऊतियों (tissues) को नामांकित (label) करिए। (प्रि० मे० लखनऊ १९४७)

२. एक द्वि-बीजपत्री पौधे के बाल मूल (young root) तथा वृद्ध मूल (old root) के अनुप्रस्थ काटों के एक-एक सुन्दर चित्र बनाइये। तथा इनमें स्थित विविध ऊतियों के कार्य लिखिये। (प्रि० मे० १९४९)

पत्ती की आन्तरिक रचना

१. उचित चित्रों सहित एक प्रारूपिक हरी पत्ती (typical green leaf) के बाह्यत्वचीय (epidermal) तथा स्कम्भ (palisade) ऊतियों (tissues) की रचना का वर्णन करिए। उनके क्या कार्य हैं? (उ० प्र० १९४८)

२. एक प्रारूपिक सवृत बीजा पत्ती (typical angiosperm leaf) की रचना का विवरण दीजिये जैसा कि एक अनुप्रस्थ काट में दिखाई पड़ता है। और उन विभिन्न ऊतियों के, जो कि उसमें दिखाई देती हैं, कार्य लिखिये। (उ० प्र० १९५२)

३. किसी प्रारूपिक पृष्ठाक्षीय पत्ती (typical dorsiventral leaf) के अनु-प्रस्थ काट (transverse section) का एक बड़ा तथा ठीक-ठीक नामांकित चित्र बनाइये और उसके भीतर स्थित विविध ऊतियों (tissues) के कार्यों का उल्लेख करिए। (उ० प्र० १९५५) तथा (प्रि० मे० लखनऊ १९५१)

४. एक प्रारूपिक द्वि-बीजपत्री पत्ती के मध्य नाडी (mid rib) सहित अनुप्रस्थ काट का सुन्दर चित्र दीजिये तथा प्रत्येक भाग के कार्य लिखिये। किस प्रकार ये रचनाएँ (structures) सपरिवर्तित हो जाती हैं (क) शुष्क परिस्थितियों में (dry situations), (ख) समान रूप तथा काफी अच्छे प्रकाश में (uniform and fairly good illuminations) तथा (ग) नम परिस्थितियों में (wet situations)।

(प्रि० मे० १९४८)

सामान्य प्रश्न (प्रथम भाग)

१. पौधों के आरोही अंग (climbing organs) का सचित्र विवरण

(illustrated account) लिखिये और उन पौधों का उदाहरण दीजिये जिनसे आप सुपरिचित (familiar) हों। (उ० प्र० १९४९)

२. एक मवृत-बीजा (angiosperm) के जीवन-इतिहास का सक्षिप्त रूप से वर्णन करिए। (उ० प्र० १९५०)

३. “पौधों से मनुष्य को लाभ” पर एक निबन्ध लिखिये। (उ० प्र० १९५१)

४. नामांकित चित्रों द्वारा जड़ (root) तथा स्तम्भ (stem) के वाहिनी-ऊतियों (vascular tissues) के विन्यास (arrangement) की विभिन्नता को दिखाइये तथा यह समझाइये कि किस प्रकार मूल-रचना (root structure) का प्ररोह-रचना (shoot structure) में सक्रमण (transition) होता है।

(प्री० में० लखनऊ १९५५)

मोटाई के लिये परवर्ती-वृद्धि

१. केवल चित्रों की सहायता से दिखाइये कि द्वि-बीजपत्री पौधों का स्तम्भ किस प्रकार मोटाई (girth) में बढ़ता है। (उ० प्र १९५१)

२. बड़े पैमाने की एक चित्र-माला (series of large scale diagrams) बनाइये—एक प्रारूपिक द्वि-बीजपत्री स्तम्भ में उन परिवर्तनों को दिखाते हुए जो कि इसकी मोटाई में परवर्ती-वृद्धि (secondary growth in thickness) तक होती है। उनको ठीक-ठीक नामांकित करिए तथा उनमें पाये जानेवाले मुख्य ऊतियों (principal tissues) के कार्य सक्षिप्त रूप में बताइये। (उ० प्र० १९५६)

३ टिप्पणी लिखिए—

परवर्ती-वृद्धि (secondary growth)

(उ० प्र० १९५५)

